

श्रीगणेशायनमः॥ श्रीविठ्ठले नमः॥

यदंघ्रिकं जविलसदलित्वं प्राप्तये नमः

तुवितुलमहं वदेशी वृद्धमतनुद्ग

॥१॥

॥ श्रीगणेशायनमः श्रीविठ्ठले नमः ॥ यति
यदंघ्रिकं जविलसदलित्वं प्राप्तये नमः
तुवितुलमहं वदेशी वृद्धमतनुद्ग ॥ १ ॥
यंता मतावमास्त्वनवाब्धि मतरन्ति जाः
तस्याहं संप्रवक्ष्यामि नाम्नामष्टोत्तरशतं
छंदोनुष्टुप् कृषिकर्ता देवो गोपीजनप्रि
यः कामातो बीजमेकांत तिष्ठो गोपाल
नेदतः ३ शक्तिः श्रीरधिका कांतो नील
मेघातिसुंदरः सर्वेष्टफलसिद्धिर्ष्यवि
नियोगः प्रकाशितः ४ श्रीवृद्धमतनुद्ग
मात् श्रीकृष्णप्रेमपूरकमहालक्ष्मीगर्भ
पयः सिंधुतारागणधियः ५ श्रीमद्गोव
र्द्धनाधीशुदशीनालागकांतरः श्रीवृद्ध
कर्णो जलालित श्रीमुखो ब्रजः ६ व्रज
वासी जनानंददायकः सकलाघट्टतुपु
डारीकविशालाक्षोरुणपकेहाननः ७ ॥
जगदार्तिहरी दीनपालकः करुणंति
धिः पूजितावनिगीर्वाणपादुकस्तथ्यु
तिप्रदः ८ श्रीलक्ष्मणनटो छदिरस्मात्

कुलदीपकः गिरिधारिमुखं भोजमनस्को वि
दुलेश्वरः गोकलेशपदं नोजमाध्वीको
नमोऽष्टपदः विशदीकृततद्गतिस्तन्नाम्ना
मृतपानकृत १० कुंडलाकोतगह्वरीस्तं
दुहस्रष्टापिताकृतिः तत्पादविलसत्यंकसां
द्रीक्षतद्गदो वुजः ११ विद्वज्जनौ धमानौ क
र्तुर्विदो तयारगः न व न कि प्रचारैककर्ता
ब्रह्मनकारकः १२ अस्वधर्मनिराकर्ताः स्व
धर्मप्रतिपालकः मायावामनः पुंजनिराक
रणनास्करः १३ सर्वेष्टसिद्धिदाता च कमनी
यकलेवरः सर्वविद्याप्रविणश्च सर्वसंसार
दुरवहा १४ अतिगोनीरतात्पर्यो न वतीत
प्रियः प्रिय श्रीमहंदावनाशकस्तच्छितप्रा
णिकामदः १५ सोमयागप्रतिष्ठाता सोम
वंशोद्भवाश्च यः प्रचंडदास्ययुक्तात्मा पवि
त्रीकृत्मानवः १६ पंचास्यः सुखसेव्यश्च सु
खराशिप्रपंचकृतकालिंदीपुलिनावि
ष्टचितः पतितपावनः १७ वृजनायुप्रश
क्त्यर्पकत श्रीगोकुलालयः श्रीकृष्णभोग
समये गो नमानुजडय १८ जिताखिला
जगत्प्राद्यपंडितः श्रीकरान्वयः समानशी
लदसितः पतितोद्धारकारकः १९ गुंजा
बलिलंसद्वै गोपितायोसहोदरः स्वर्ग
पालकि नानंगयशंशक्तिप्रदश्रीकः २०
सेवार्थविब्रतेः कर्ता सेवा समतत्परः वि
धिविरव्यातकीर्तिश्च विश्वधर्मप्रदश्रीकः २१

द्वाष्टीकृतचतुर्वैगीश्वरुर्मागीविशदः श्रीनाम
 वततत्वाप्यज्ञातातज्ञानयोषकः २२ पुष्टिमा
 गीकधर्मादिप्रकाशनपरायणः अंतारह
 येकर्ता नामातिकृतनूतनः २३ उग्रेज
 दुरुः पूज्यो भक्तयोधिसिररुहः आकर्ण
 कंजनयनभूषांगदतसेवकः २४ अवि
 तमदिमाज्ञातकर्ममार्गोदिरिकदः प्रतिप
 द्वाष्टीवडवानलः कल्याणकारणः २५ भ
 स्थापितव्रह्मवादैकपदाः परमसुंदरः ति
 स्सारिनत्रिलिंगारव्यदेशोतिचतुरोविभुः
 २६ श्रीरुक्मिणीपतिः श्रीदः कुलिनसर्व
 वल्लभः पद्मावतिप्राणतपः सर्वलोकैक
 मेडने २७ श्रीमत्पुराणपुरुषः प्राणसंतोष
 कारकः भुविप्रसिद्धगोपीशतत्पादसक्त
 मानसः २८ लोकिकालौकिकार्थादिदाता
 कालात्मवर्त्तवित् संसारसागरामग्नजी
 वेष्टतिहुतिद्वयः २९ ब्रह्मातंदमयः पूर्णः
 कालिंदीवल्लभः प्रियः व्रजप्रियोव्रजास
 कोहरिवक्त्राब्जसेनवः ३० श्रीमद्वाधाय
 तिपादोनीजयुग्मावलंबनः सर्वस्वयं
 नियेताचनगवर्धर्मवस्तुदः ३१ कृष्णति
 स्मृतिपुराणतिहासवेत्ताप्रतापवान् यथा
 मतिहिमेकाचरविताताममालिका ३२ श्री
 विभुजेशकुलनाममालिकोयेषवंतिजगति
 तलेजनाः प्राप्नुवंतिरतिकुंजमेडये ३३ इ
 द्येधार्यतेयेतनामकोस्तनमूषणं मत्त

: कृत्स्नतुल्यात्मा हृदयते सर्वनूतने ३४
 जन्मजन्मसु गायानापासनाय कृतपुरा
 त्मा कौस्तुभसारस्य ज्ञातुं तत्वाधिकार
 ए ३५ नर्गावलंबका केचित् केचित्
 त्मावलंबकाः वयंतु वितुलेशस्य दास
 दासावलंबकाः ३६ इति श्रीरघुनाथ
 जीविचितनाम कौस्तुभसारस्तोत्रसंपूर्ण
 णि संवत् ३९३० केमिती वी स सुदी ३४

कृष्णाय नमः॥ श्रीगोपीजनवत्सलपुत्रमाधवः॥ श्रीगोपी
 नरैराज्जीवितसिंहापत्रताकीटीका श्रीगोपेश्वरजी
 रच्यते॥ एकसमय श्रीहरिराज्जी परदेस पधारे हुते
 त्रों श्रीगोपेश्वरजी घरसे वासैं हुते श्रीहरिराज्जी वडे भ
 श्रीगोपेश्वरजी छोटे भाई सो श्रीगोपेश्वरजी की वह
 वो होत अनुकूलसे वासैं तत्पर भागदद भावसंवल
 सो श्रीवहजी लीला विस्तारे॥ तब श्रीगोपेश्वरजी
 सेवासंवेधार्थ बहुत ही विरह भयो॥ सो दिन तीन
 ने भोजन नाही की गो॥ सो श्रीवहजी की लीला विस्त
 हरिराज्जी महीना दोय पहलें जानी
 विचारे जो श्रीगोपेश्वरजी
 विप्रयोग करि बो होत दुख पावे गो॥ तातें कछु सिंहादे
 पत्र पहलें ते पढाये चहिये॥ श्रीआचार्यजी महाम
 भुत की कृपा ते जो कोई सिंहापत्र वाचे गो॥ ताके स
 कलहः खनिवर्त होइ गो॥ इत्यसं भगवद्भाव होइ
 गो॥ यह विचार सगरो सास्त्रपुराण श्रीभागवत
 सर्वको सिद्धांत संयुक्त सिंहापत्र लिखे दे॥ एक पत्र नि
 त्य श्रीहरिराज्जी अपने मनुष्य हाथ श्रीगोपेश्वर
 जी को पढावते॥ सो श्रीगोपेश्वरजी अपनी बैठक में
 एक गवाखे में धरि राखते॥ वाचते नाही जानते जो
 भाई सो स्नेह हम ऊपर वो होत है॥ सो सिंहाकरत है
 सो हम तो भगवद्सेवा करत है॥ और कछु जानत
 नाही॥ यह विचारि के एक गवाखे में धरि राखते
 और ले करत सिंहापत्र॥ थपढाये सो सब श्रीगो
 पेश्वरजी धरि राखते वाचते नाही॥ तब श्रीहरिरा
 ज्जी अपने मनुष्य न सो पूछे जो भाई श्रीगोपेश्वरजी
 पत्र वाचत है॥ तब मनुष्य न ने विनती करी॥ जो म
 हा॥ तब हमारे आपों तो एक गवाखे में धरि देत है॥
 व॥ नाही कसत पत्र लिखि के हम दो विदा क

१
रमह पाछे आपुवाचत होय नाकीठीकनाही हमारे
गेतो वाचतनाही तव श्रीहरिराज्ञी विचारें जो नाही
वेकहे ४१ एकतालीस पढारे सोई बहुत हैं एक रूप
त्रवाचे गो तो सकल दुख निवर्त होशो पाछे श्रीहरि
राज्ञी पत्र नाही लिखे पाछे बहुत दिन में श्रीगोपेश्वर
जी की बहुत लीला विस्तार सो श्रीगोपेश्वर जी को व
हुन ही दुख भयो तीन दिन लोभो जननाही कीरो
सारे मिलि के समुगाय हारे काहू की मानी नाही कहे
अवत्र के ले मो सो खेवान होशो घाघो डि के वहु वन में
जाऊगो पाछे एक सेवक हरिजीवनदास सो श्रीहरि
राज्ञी को कृपा पात्र श्रीगोपेश्वर जी हरिजीवनदास
पर बहुत कृपा करते सो उदयेश्वर श्रीगोपेश्वर जी के पा
स आय बहुत समगाय के विनती करी सो श्रीगोपे
श्वर जी ने एक हुन मानी तव हरिजीवनदास ने कही
यास मय श्रीहरिराज्ञी घर होते तो समगावते श्री
खेवस की बात नाही हैं पाछे हरिजीवनदास ने
श्रीगोपेश्वर जी सो पृछी जो कोई पत्र श्रीहरिराज्ञी
के हारे हैं तव श्रीगोपेश्वर जी ने कही जो आगे तो
बहुन आवते गवाखे में धरे हैं अवदस पाच दिन ते तो आव
ते नाही तव हरिजीवनदास ने गवाखे में ते पत्र ४१ निव
रि के श्रीगोपेश्वर जी के आगे धरे और विनती की नी
जो महाराज एक पत्र वाचिपे तो सही तव श्रीगोपेश्वर
जी ने एक पत्र अपने श्रीहस्त में लीगे सो भगवद उद्घा
ते प्रथम पत्र हस्त में आयो तव श्रीगोपेश्वर जी उद्घपत्र
वाचते ही सगरो दुख हरि होशो भगवद भाव रुदय
में वढ्यो तव श्रीगोपेश्वर जी उठि के हरिजीवनदास के
हस्त को अपने हृदय सो लगाइ के कहे वैभव तू आ
यो तो हम यह श्रीहरिराज्ञी के पत्र वाचे ताकि
सगरो दुख गयो पाछे श्रीगोपेश्वर जी सिद्धा प

सो सब वाचे पाछें श्री गोपेश्वर जी ने हस्ति जीवन दास
जो यह सिद्धापत्र की टीका में कस जात नित्य
महाराज

शरजी प्रसन्न होइ के स्नान कीयो पाछें आप भोजन की
तो सगरो परिवार प्रसन्न भयो पाछें हरि जीवन दास के
बेढाय पास श्री गोपेश्वर जी भाव में मग्न होया श्री आच
र्य जी श्री गुसाई जी श्री हरिराइ जी को स्मरण करि नम
स्कार करि सिद्धापत्र की टीका करन लागो सो प्रथम
सिद्धापत्र के लोक कहन हो जो ॥ सदेष्टि धर्मनाह
स दर्शनः क्लिष्टमानसः लौकिकं वैदिकं चापि कार्य
बुर्वन्न नास्थया ॥ १ ॥ यावो अर्थ ॥ अथ श्री हरिराइ जी
सिद्धाकरत हैं जो लौकिक वैदिक कार्य के आवे सक
रि मन को उद्वेग करि के तथा लौकिक वैदिक कार्य के
क्षेय करि के श्री हरि के दर्शन को जैयें जो प्रभु तो सदा
आनंद रूप हैं सो जीव को मन मुख लै सरूप देखि के
उदासी न होय जाय तनि लौकिक संसार के कार्य सि
द्ध होऊ अथवा विग रिजाय परंतु मन में लै मन के
स्थिति से ही वैदिक कार्य सिद्ध होऊ अथवा विगार
होय ता स्वात्म में मन में लै शनाही करि लौकिक
स्व मन में तुष्ट करि जानिये और प्रभु की सेवा स
बंधी कार्य ह्यो सिद्ध होय तव मन को प्रसन्न तारि
ये जो कदाचित विगार सेवानवने तो लै समन मेरा
ये यह पुष्टि मार्ग की रीति है जिसे वृजभक्त श्री ठाकुर ज
गो चारन को वन में पधारते तव विप्रयोग में वे गुण
गुण लगीत गावते पाछें जव श्री ठाकुर जी संग स
कन को सुखदानार्थ घर में पधारते तव वृजभ

प. आने दसों दरसन से वाकरते तेसे ही पुष्टि मार्ग से सेवा सम
य सेवा दर्शन करे ओ अनोसर मे श्री गुरुजी को ले सक
रिये गुरु श्री हस्के मुखारविंद को मन में ध्यान करिये
जब समय सेवा को होय तब अत्यंत आतुरता से श्री गुरु
जन फलात्मक पुरुषोत्तम तिन को दर्शन करिये पाहुने
कि ककार्य वैदिक कार्य ग्रहस्थाश्रम दोधर्म हैं ताते लो
कि कअपकीर्तिके भय तथा वैदिक मर्यादा के लीये आ
वश्यक रिये परंतु लोकि कवैदिक मे मन आसक्ति न राखिये
मन एक श्री गुरु ही में राखिये ताते मन में ले सराखिंद
दर्शन न करिये प्रेम न तासे करिये या प्रथम श्लोक मे
दरसन को प्रकाश है सेवा को नाही कहै सो याते जो स
तव मे मंदिर की सिवान होय सर्वे भाव करि मानसी सेवा
होय यह मर्यादा र्थ मंदिर में छुय जाय अवचोर हसिना
करत होइ श्लोक ॥ निरुद्ध वचनो वाक्य मायस्य कुमुदाहर
तु मनसो भाव्यं नित्यं लीलाः सर्वा क्रमागताः ॥ २ ॥
अपने वचन को निरोध करनो बोलनो नाही
आवश्यक कार्य थो होइ सोई बोलनो मुख्य सिद्धांत तो
यह है जो भगवदसंबंध विना सद्गथा ही न बोलनो
परंतु लोकि कवैदिक कार्य ग्रहस्थाश्रम से बोल विना
कार्य न चलै तो अवश्य होय सोई बोलनो कहिते वा
नी को निग्रह होइ तो मुखरता होय न होइ ओ भगव
दभाद हृदय में स्थिर होइ रहें बहुत बोलते भगवद भा
व हृदय ते निरुसि जाते हैं वानी द्वारा एसी भगवद धर्म
की सहास गति है ताते जब वानी को निरोध होइ तब म
न को धर्म यह है जो अने कविकाने भटकत हैं सो मन में
विचारि के श्री गुरुजी की अपार लीला बने क प्रका
र की है ताते क्रम सहित लगाइ दीजें कहिते मन को
गमन पवन हूते अधिक है ताते मन को कोटि ७ यम

पानुरोवैसोमनतोहनाही तांतुं श्रीठाकुरजी
कीलीलांमेलगाइयें जन्माधुमीअन्नकूटहोरीहिंडो
आदिदरखदिनकेउत्सवतिनकोअनेकेलीलांम
वकरिकेपुष्टिमार्गकीरीतिसोमनलगाइयें तथानि
यलीलाप्रान्तकालतेश्रीठाकुरजीश्रीनंदराइजीविद्य
जागतहेंकुंजमेंश्रीस्वामिनीजीकेइहाइंजमानहेंत
थाखंडितासगलभोगभोगालाआरतीसिंगारमाल
पालनराजभोगभोगापनभोगसंग्यासेनपर्यंत
अनुसारनथासेनपीछेंसुखमनहोयमनलागेतो
रासलीखामानाहिकजस्तस्थलविहोरइत्यादिक
मनसोभावनाकरिजेतथाश्रीआचार्यजीकेसुल
श्रीगुणोंइजीकोस्वरूपकोविचारेंश्रीठाकुरजीकोप्र
गत्यकोनअर्थलीलासंगीवागावजूकोभावना
होहेंयहमनमेंविचारिकेभावनाकरियेंक्रमसहि
तेलीलाकेविचारकरियेंताकरिभागवदचावेसहो
इअष्टप्रहरलीलाकोसंप्रणामनमेंराखनोभावना
केहोयप्रकारहोएकउत्तमएकमध्यमउत्तमप्रदार
प्रदजोभावकरिगुरुकेपासआपुजायस्नानकरि
मुंदहोयप्रथमगुरुकीसेवाकरिकेपाछेगुरुकेस
गमंदिरमेंजायतहांगुरुजोआगपुहइतथादिन
तीकरिसेवाकरेनोप्रभुकोअमनहोइओरअनु
रूपप्रभुवेगिहीप्रसन्नहोइयहउत्तमप्रकाशान
ओरमध्यमयहजोअपनेइदयमेंप्रभुकोपधरावेंते
प्रभुतोइयातहेंपधारहें।परंतुप्रभुकोअमहोय
पुष्टिमार्गकीरीतिनाही।याक्रमसेसेवाकरें।अ
धोरहंसिहावरतहेंलोक॥सेवापिकापिकीव
निरुद्धनेवचिंतता॥देहिकसमेंनिखिलप्रभुसे
योनिहैं॥याकोअर्थ॥अवकहतहेंजोसेव

हस्योकरनो चोस्काइयोन
अपनेसरीसोसगरीसेवान
श्रीठाकुरजीकोश्रमहोनहोइनोसहाय
येओरहसोकरावनों पुष्टिमागरीयवेस्वहोय
याअपनेकुलंवमेंसमयेनीमयोदीहोय तासो
गवनों अवेस्वसोसेवासर्वबाहीनकरावनों
जहल्लोजितनीसेवाअपनीदेहसोवनसोकरने
आतस्करिकेलोकिदावेसनकरनो अपनीका
मेंश्रीठाकुरजीकीसेवाकरेनीसरीइंदियनसवश्र
ठाकुरजीकेसनमुखहोइभागदहसंवंधतेवहमुख
होइतातेआवस्यअपनेसरीसोनेमसहितभाग
वहसेवाकरनो यहनेमराखनो जोइतनीसेवाकिन
लोकिवकार्यवैदिककार्यखानपाननकरनोसन
मेंविचारकरिनाकरिकेसनकोसमगावनेजोजा
भातिस्वानपानकोनेमहें प्रीतिसोतेसीप्रीतिसो
सेवाजोवैस्वकोमुखधर्महें सोनेमकारिकेकर
नो यहदासकोधर्महें सेवाविनकेसहें ओरलो
किववैस्वकार्याहिनैकठोरसनभटकेतहें तहा
तेमनकोनिरोधकरिकेसेवाकरे प्रथमतोमनको
निरोधराखे जोमनलोकिववैस्वमेंजायतोभ
गवहसेवामेंउद्देगहोय तवसेवामेंअधाघटिना
य तातेमनकोनिरोधसेवामेंआवस्यकरेतापीछे
नहेंनकोनिरोधकरनो सेवासंवंधीकार्यविनावो
खनोनाही लोकिवतानीतेमुखतादोयतेसेवा
मिभागवदभावहूपीरसतिरोधानहोतहें तातेमि
ध्यावानीकोनिरोधकरेतेहेंहीमिथ्याक्रियाकोनि
रोधकरनो भगवदसेवाकेसमय लोकिवकार्यकधु
आयपरसोन्नकरनो जोसेवासंवंधीकार्य

दिकें चोर कार्य करे नों उह कार्य सिद्धि होइ लौकिकावे
सहेय या प्रकार मनवानी क्रिया ती नो कों लौकिक
वेदिक ते निरोध करि भावद सेवा करे चोर वैदिक सेवहु
तहें लौकिक वेदिक सोय हसंसा मरे दिकें न करे नों ससा
मंत्र अपकीर्ति होय सेवा में प्रतिबंध होय तातें लौकिक
वेदिक कार्य हें लोग न के दिसाय वे के ली रो श्री गुरुजी
की सेवा सो पो हो लि के च नो समें आसति विना करे
या प्रकार प्रभु को अंगीकार वस्त्र सांम ग्री सन करि पाछे
अपने अर्थ लौकिक वैदिक में उठावें या प्रकार वैस्पद
सेवा करे नों प्रभु अनुभव करावें ३ अथ चोर हंकाह
तहें श्लोक यथोपकरनादीना रत्नात तद्विधीयता
भार्यो दीय नुरागोपि सेवा देतु क एव हि ४ या का
अर्थ ॥ अथ कहतहें जो पाकादिक सामग्री की रत्ना
र्थ चोर श्री गुरुजी की सेवा में सामग्री सिद्धि कर
णार्थ काहे ते श्री भगवद सेवामें सहाय होय तो
भगवद सेवामें सहाय होय तो भगवद सेवा भली भां
ति सो होय यां भांति भगवद सेवार्थ भार्यो जो स्त्री त
हमें अनुराग राखने ॥ अपने विषयादिक के अर्थ
अनुराग सर्वथान करे नों ताको दृष्टान्त कहतहें स
हादेव जी की स्त्री सती दुती सो महादेव जी को कही
ताही मान्यो श्री राम चंद्र जी की परी लाली नी जानी
की जी को रूप धरि सो घातो महादेव जी नें जानी सो स
हादेव तो भगवद भक्त भयो सो वाही ससय सती को
त्याग ही की रो पाछे सती रह प्रजापति के जन्म में आ
प्ती देह भस्म कीयो पाछे हेमाचल पर्वत में प्रगटीत
हा अपने कत पण्या कीनी तज महादेव जी को सन सती
पर प्रसन्न भयो तव श्री गुरुजी नें महादेव जी सो कही
जो अन्न म इत नो मेरो क ह्यो करो पर्वत को अंगीकार
महादेव जी पार्वती को व्याहिकें अपने घर लाया

ॐ तव पार्वतीने महादेव जी सो भाव दस्ती लाए छी
 तव महादेव प्रसन्न भरे ताते वैभव होइ के लौकिक
 विषय के अर्थ स्त्री पर प्रसन्न न होय भगवदसेवा
 अनुराग करे जा प्रकार भगवदसेवा भली भांति सो
 होइ सोई करनो या भांति सेवा हेतु लौकिक कस्य
 अत्र और कहत है ४ श्लोक ॥ प्रतिकूल यथा त्याग
 प्रभु संबंधि वसुनः धनैर्घनिस्पृहस्यैव पयोगत्वेन र
 णोपयाको अथो और जो स्त्री प्रतिकूल होय भगव
 दसेवा में प्रतिबंध करे तो उह स्त्री को त्याग ही करिये
 वा स्त्री में अनुराग न करिये कहते न भुसंबंधी न
 होय ता को त्याग ही कहत है कहते न प्रभु संबंधि
 न जो स्त्री होय सो सर्वथा भगवद्भाव को नास करे
 ताते सिद्धा करि भगवद्भाव में बाको मन लागे पुष्टि
 मार्ग में श्री आचार्य जी के दुलदारा नाम निवेदन होय
 मया होय तो भीटा कुजी के परस्कराये सेवक होय मया
 होइ तो भीटा कुजी को परस्कराये सेवक होय मया
 होय तो अणकी सेवा कराये प्रतिबंध करे तो सी
 ही बाको त्याग कस्ये और धन में आस न राखे निह
 ही को नाई है धन की रक्षा करे ना ही उत्तमोत्तम हो और
 यह कलिकाल हो या काल में जीव को धीर जन तत्काल
 छूटि जात है सो धन की रक्षा न करे तो धन सर्व छूटि जाय
 पाछे जीव को धीर जन है तव धन वेत्तु गे कहत दुख पा
 दे सो न करे धन की रक्षा अपने सुख अर्थ न करे यह ज
 ने जो यह धन प्रभु को है सो प्रभु की सेवा अर्थ रक्षा क
 रे जो इह धन में प्रणवेराप होय तो धन की रक्षा न करे
 जो वैराग्य इह धन होय तो भगवदसेवा अर्थ ना निरक्षा क
 रे और भाव दत्त सब आदि में उह धन को लगावे न
 भगवद अर्थ द्रव्य न लगावे लौकिक लगावे १ था
 धन में आस न मन को करिके भगवद अर्थ

होवधभवकुलमेंवैष्णवमेंनलगावैतोह्यासुरावेष्ट
 होयतातेधनकरिदितहैधनकीरत्नाकरिभगव
 दसेवागुरुसेवावैष्णवसेवामेंविनियोगकरैयाभां
 तिविवेकविचारकरिवैष्णवरहेतोभगवदभाव
 द्यमेंबहोपत्रवच्योरहंकहतहैश्लोक॥ विवहा
 दिसुकार्येषुवधासेवाथमोनसःभगवदसंगिसंगो
 पिस्रप्राणप्रेष्टवार्त्तयाध्याकोअर्थ॥उपर्यहकहेजो
 धनकोलौकिकमेंनरखवैसोविवाहादिककार्यमें
 धनखरचेविनाकेसेंचलैताहंकहतहेजोअपनोवि
 बाहतथापुत्रादिककोविवाहहोयतोप्रभुसेवाको
 विचारकरैजोभगवदसेवामेंअमनुष्यहोयतोभ
 गवदसेवाभलीभांतिहोयपहविचारिकेंजितने
 द्वयविवाहादिककार्यमेंलगावनोहोयसोश्रीठा
 कुरजीकीआग्रहकेअहद्वयखरचकरैयाभातिप्र
 भुकीआग्रामाणिकेहासभावहोयकेंलौकिकवैदिक
 कार्यकरैअरभगवदीयकोसंगकरियेसोकछलौकि
 कवैदिककीबाहनास्वारथकेलीएनकरियेकेवलअ
 म्नेप्राणप्रेष्टजोश्रीठाकुरजीहैंतिनकीवार्त्तवरणार्थ
 भगवदीयकोसंगहोयतोबहमुखहोयजायतातेभग
 वदीयकोसंगआवश्यकहीकरनोनिरेहभावसोअप
 नीबडाईप्रतिष्ठाअर्थभगवदधर्मकछुनकरनोहेन
 होयअपनोधर्मजानिवरनोअवच्योरहंकहतहैश्लोक
 वियोगानुभवंकुर्वन्सेवानवसरेपुनःमूर्तोभगवतोदृ
 ष्टिर्भाव्याततस्यदर्शने॥याकोअर्थ॥भगवदसेवामें
 संयोगात्मकलीलारसकोअनुभवकरियेजोसामग्री
 धरियेताकोभावविचारियेजोस्वस्वादिकधरियेताको
 भावविचारियेजोस्वस्वादिकधरियेताकोभावविचा
 रियेतवसेवासोपोहोचिअनोसरकरियेतववियोगा

प. भवकरिये जैसे वृजभक्त ने गुणीत जुगल गीत में की
वासी भाति विचारिये। अब प्रभु को नसी कुंज में
कहा स्त्रीलाभ कन के संग करत है ता को स
विकल होय जो में वडो दुष्ट हो। जो प्र
ननाही होत तव यह श्लोक श्रीगुसांईजी
हैं ता को भाव विचार नों चिते न दुष्टो वच सापि दु
ष्ट कये न दुष्ट क्रिय या वदुष्टः जालि न दुष्टो भजन न
दुष्टो ममापराधः कतिधा विचार्य। या भांति हेन्य
करि वियोगानुभव करिये जव से वा को समय होय
तव वे गिही स्नान करि अथ परम पुष्टि मार्ग की रीति
सो मंदि में जोय के श्रीठाकुरजी के श्रीमुख श्रीअंग
आनंद समय दर्शन करि सकल विरह को दूरि करिये
भाव सहित दर्शन करिये जैसे वृजभक्त नंदरायजी के
घर आय के श्रीठाकुरजी को दर्शन करत है ता भाव को
स्मरण करिये तो वृजभक्तन की कृपा ते याह को भा
व होन होय। अब और कहत है श्लोक। विवीध
दिष्टुं कार्येषु स्पर्शतत्रैव भावेन सर्वास्तत्रैव तत्रिय
भावात्मन्यनुभाव सर्व भावेन नान्यथा। ए पाठे अ
पर को दूर अन्न प्रकार कहै तामे नैत्र इंद्रिय को सुख भ
यो पाछे स्नान करि सेवामें सर्व इंद्रिय को विनियोग
होत है या प्रकार कहत है। प्रथम मंगलाते पो हो वि
पाछे श्रीठाकुरजी को स्नान करावे। अंग वस्त्र करि
नुअनुसार वागा वस्त्र धरावे। या भांति सेवामें भग
वदस्वरूप को परस भाव सो करे जो इष्ट सुद्ध होय तो
वृजभक्तन की भावना करि भाव विचार जो अपने
नंद वृजभक्त आभूषण वस्त्र खिलोना ले के श्रीनंद
रायजी के घर प्रातः कास्त आय सेवा करत है स्नान
रावत है अंगारादिक करत है जो सुद्ध हृदय भो

प्रतर्हताईराजाकीनारुभयमनमेंराखें

जोसीतकालेनेयतोअपनीहाथ

सबोत्मकभा

ममेंश्रीठाकुरजीकीसेवाकरेतास्वस्फानंदकोअनुभ
वहोय। अथवाअरहंकहतहैं। श्लोको। हृदयस्यात्मसु
ध्यात्रतत्रावेससंभवे। स्वमूर्तोवतिशुद्धायामाविश्या
तुभवंहरि। रीयाकोअथ। अथकहतहैंजोभगवदसेवा
मेंअपनेहृदयकोइंद्रियकोअत्यंतशुद्धराखें। लौकि
कावेसविषयकीभावनाकरें। लौकिकदेहसंबंधी
कोदुखसुखमनमेंराखें। लौकिकवैदिकदेखसुख
होसोयहदेहसंबंधीहो। औरभगवदसेवासंबंधीदु
खसुखहैंसोआत्मसंबंधीजन्मजन्मकोहो। औरश्रीठाकुरजी
कीमूर्तिअतिसुद्धहै। तातेलौकिकमायाकेगुणप्रभुविषे
कसुनेविचारें। प्रभुकोश्रीअंगकरपादमुखोदरदिसर्वभ
नंदरूपात्मकहैं। औरशुद्धमनकरिवें। अनुभवयोग्यहैं। का
मनोधर्मदलोभमत्सरनाकरिकैरहितहैं। औरसर्वदुख
केहतीहैं। परमानंदकेदाताहैं। ऐसेश्रीठाकुरजीकोअ
लौकिकगुणसंयुक्तमनमेंभावनाकरिसर्वदोरनेअ

धि। अथवाअरहंकहतहैं। श्लो

साधनसंपत्तिकारयेत्यखिलोनिजान। शुद्धवि

सि.प.
६

धायक हयं पञ्चातत्रा विस्तृतं यो २४ यको अर्थ
हयं सारमंत्रासुरी पदार्थ है और देवी पदार्थ है
देवी में होय प्रकार है एक मया होय क पुष्टि सो जानि
भेद न्यारे न्यारे कहत है नी न्यो के ने हयं हयं मेरा खे
अज्ञान करि दुख सुख न पावे पुष्टि पदार्थ कहत है
भगवदसेवामें जो साधन संपत्ति है मयम अपनी
भावदसेवामें जो साधन संपत्ति है मयम अपनी
हज भगवदसेवामें लगी रहतो देवी जानिये जो भ
वामें आलस होय कहा चित को देव सक्के स
नै करे तो रोगादि क बाध करे तव जानिये जो आप
देह और देवी मन होय तो आसुरी ही सिवा करत में प्र
अनुभव होय जो मन आसुरी होय तो से
वा करत में मन अने कलौ बिकरमें भव के ताको स्वरूप
नै दे को अनुभव होय और देह संबंधी स्त्री पुत्रादि
फल देव भगवदसेवामें विरोध करे तो आसुरी जानि
नै कर्म मारि जा क ह वि होय तो मर्यादा जानिये
गही प्रकार दुव्य जो भगवदसेवामें विनियोग होय
नै देवी जो कर्म नर्गदा न है म आइ उठो सो मर्यादा ले
नै कर्म जाय चोरी जाय दंड होय सो आसुरी ताते जो प
थ भगवदसेवामें विनियोग होय तो देवी नै कर्म ति
धन को सुद जानि जो भगवदसेवामें विनियोग न हो
ता को अ सुद जानि या भांति जो प्रभु की सेवा संबंधी
पदार्थ है तिन को हयं मे धारन करे जो मेरे काम
हयं तव स्वयं भावा न सुद हयं में प्रवेश करि स्वरूप
जो अनुभव करे ताते सेवा संबंधी न होय ता पद
ता गा ही क स्थि भगवदभाव संबंधी पदार्थ संमग
दिक को भाव हयं मेरा खिके भगवदसेवा क स्थि
और हयं कहत है जो दत्ता देव न संत प्रति

संदेहमलौकिकं स्वयंप्रविश्यभावात्मानुभवंकायेत्स्व
 कं॥११याज्ञो अथ॥ उपरकहेताप्रकारसेवाकरे और
 दैन्यतामनमें होय तो श्रीठाकुरजी संतुष्ट न होय ताते न
 भगवद्सेवाकरि दैन्यताकरि श्रीठाकुरजी को संतुष्ट क
 रिये तव श्रीठाकुरजी प्रसन्न होय काहेते भगवानस्य
 दृगुगापूर्ण ईश्वर के ईश्वर हैं ना स्वतन्त्र की अपेक्षानाह
 ह एक प्रीति दैन्यता प्रसन्न करि के काउपाय है सो भ
 गवद्दीय गारे द प्रीतम प्रीति ही ते पैये जघपिदपगु
 सीत सुधार तो इन बात न नरि रिये १ सतकूल जे न
 त्रमस्य भल्लहा देह पुराण पदये गोविंद कहें सनेह
 पुवा लौर सना कहान चैये २ ताते भक्त दैन्यता करि जे
 कसु प्रीति सो समये सो प्रभु श्रीगार करे जे से पदना भ
 दास छाला समये सो प्रभु श्रीगार की ऐ नव प्रभु अ
 पंत करि दैन्य संतुष्ट होय तव जीव परहमा करे तव अ
 लौकिक देह जो नित्य है स्वायोग्यता की सिद्ध करि
 चापुद्गल्य मे पधारे भावात्मक प्रभु तव अपने लक्ष्म
 अनुभव करावे तव सगरो जैन लीला मय ही से कह
 प्राणी मात्र में ईश्वर न होय तव पुष्टि मारगीय फल सि
 ह भयो ११ अव ओर कह न है स्मो का एवं विधं प
 रितित्यं चिंतयन् चेतसा सदा कुर्यादत्यादरं कृत्स्न
 सेवायां मेव सवथा १२ याज्ञो अथ॥ अये पुरुषोत्त
 म परमात्मक तिनको चिंतन चिंतन मे सदा सर्वकाल
 में कीयो करे तो कबहू अन्य संबंध न होय जो नित
 न करे तो अन्य संबंध होय तो ता करि चासुरी

न

बुद्धि

जाय ताते उपर कहे ताही प्रकार दैन्य
 आतुरता संयुक्त चिंतन करे और अ
 गवद्सेवा करे लौकिक मोहि
 दृष्ट अर्थ सेवान करे पुष्टि मारगीय

प. वैश्वकौमुखधर्मग्रंथे हासभावमें फलरूपस्वीकार
जानिसेवाकरे अतिआदरपूर्वक सहाय्य न विचारजे
आजुनाहीसेवा करी तो कालिकरुगो नित्यनेमपूर्व
अपनीदेहको अनित्य जानि देहइंद्रीको सुखसुख
दिके भावसेवाकरे यह सर्वोपर सिद्धांत है १२ अथ
और एक कहत है श्लो ३ साक्षात्परोक्षरूपत्वात्मेवा पूर्व
विलक्षण यथागायंत्य इत्यत्र भावः संवलितोऽस्मि
१३ यावत् अ ३ साक्षात् और परोक्ष होऊ समयके स्व
रूप संवलित भाव होय सेवाकरे प्रथमसेवा समय
सातस्वरूपकी सेवा करि संयोगासको अनुभव करे अ
नोसरमे परोक्ष कुंजकी लीला विचारि विचारि वियो
गस्वरूपको अनुभव करे जैसे वृजभतरास पंचाध्याइ
में अपने घरते श्रीठाकुरजी के पास आय स्वस्वरूप नंदको
अनुभव कराइये काहेत प्रथम ही श्रीठाकुरजी स्वरूपा
नंदको अनुभव न करावत तो अंतरध्यान में विप्रयोग
दुख भक्तनको बहुत होतो जैसे लौकिक में कोई धन
पावे और परिधन नष्ट होय तो वह बहुत मन में दुख
पावे जाके पास जन्मत ही मूलने धन न होय सो दुख
है को पावे ताभांति गोपी जन थोरो सो अनुभव संयोग
रसको अनुभव कीये पाछे श्रीठाकुरजी के अंतरध्यान
में विप्रयोग रसको अनुभव कीये पाछे श्रीठाकुरजी प्र
गटभये जब जल स्थल की डासिद्धि भई तेसे ही पुष्टि
मागै सेवा है वैश्व भगवत्सेवा में साक्षात् स्वरूपा
नंदको अनुभव करे है तासमयसेवा संबंधी संयोग
के कीर्तन करे और जब अनोसर होइ तब परोक्ष दि
सा जानि विप्रयोग के कीर्तन बेणगीत जुगल गीत
गोपिका गीत अति आतुरता से गान करे परोक्ष की
सेवा होय सो सब सिद्धि करे याभांति संयोग विप्रयोग

विचारि सेवा करने तो आगे भाववर्द्ध हो प्रकाश आगे हो
 कर्म कहत है ॥ १३ ॥ श्लोक ॥ तदुत्तरं यथा भावः केवलं वि
 हात्मकः फलं तथैव चात्रापि फलता केवलं स हि
 १४ या को अर्थ ॥ उपर कहत प्रकाश भाववर्द्ध हो आगे
 मानव रस संयोग विप्रयोग स हो उभाव वैष्टित होय
 करे तो ताकरि उत्तर हर जे केवल विहात्म भाव को
 हान प्रभु करे सो फल सुदृष्टि मार्ग में है सर्वोपरि है या
 उपरान्त और फल को ईनाही ॥ जहां उत्तर हल भाव वि
 हात्मक भाव को दान त्री आचार्य जीरी है तब सर्व फ
 ल की सिद्धि होय चुकी ॥ विप्रयोग में सगरोप दार्थ प्र
 भु रूप ही ही सौ तब भाववर्द्ध होय समय संयोग में विप्रो
 ग होय विकल होय प्रेम लहर में यह जनि प्रभु मो
 को छोड़ि कह गये यह साक्षात् विरह वना तस्कीली
 ला सुदृष्टि विकल होय जो प्रभु धूप में नागो पाइन
 गाय चराय वे के से जायें ॥ को मल चरणों के क्षरि
 कान चले जाय मे प्रभु विना के से काल विना ऊगी
 पभांतिके हान को टि विप्रयोग समय है लोकिक
 हेतु संबंधी भोग सब दृष्टि जाय तब जानिये जो प्रेम ल
 राणा भक्ति की प्राप्ति भई यह मुखर स है ॥ १४ ॥ अर्थ
 कहत है श्लोक ॥ फल स्या फलं ह्यस्य वदन्ति
 चित्तं तो ॥
 १५ या को अर्थ ॥

समझना ही सो भाववर्द्ध भक्त ही जानत है

मिमांसिकों का गम्भीर प्रोत्साहन न मानकर तामे बहुत
लौकिक वैदिक फल की आशा तथा अपने कर्माकार की आस
राखे ताकी पुष्टि माणी प्रमुख फल न होय फल यह ही मन
में चाहै जो श्री हनुमन् चंद्र के वदन कमल के दर्शन काहेते
श्री हनुमन् जी के मुखारविंद हूय श्री आचार्य जी ताते श्री अ
चार्य जी के हर सनकी मन ते अतिला स्वरारखे सो भाव ह
सेवामे आसात मुखारविंद की हर सन वारंवार करे यही
सर्व पर फल हूय मानै ताते श्री हनुमन् चंद्र के वदन के
चित न संयोग में हूय करै अने सरो वियोग समव ह
करै तब केवल विप्रयोग भावात्मक फल सिद्धि भयो
न क श्री हनुमन् को वदन चंद्र सब ठोरे देखे ताते कि हरे
सो फल हूय है और श्री हनुमन् सो फल आत्मक हज भक्त
न के आवात्मक परम तत्त्व है सो नि सव साधन करे
अथ और हूय हत है श्री हनुमन् तत्र ज्ञान संबंधीयता
प्रापिन वै विनि सचिदानंद संपत्ति प्रसिद्ध पुरुषोत्तमः
है या न हूय अने साधन क श्री हनुमन् एक अनन्य भ
क्त के श्रेष्ठ भवयोग है तहां कोई कहै जो पुराण सा
हस से ज्ञान मार्ग देखे न हूय है ताकारि प्रभु की प्राप्ति कही
है और तुम भाते कोरि प्राप्ति कहै ताको कहा कारन ह
नहां कहत है तहां कहत है जो ज्ञान मार्ग में जानी नि
कारि हनुमन् की भावना करत है तिन जानी को स्वरूप
है सो सब धर्मों का ली मे नाही उन के चित्त ज योग्यता
ही जानी को संबंध अज्ञान में है सर्व ठोर अग्रि की नाईय
कहै तिन ही में लय होत है उन को भक्ति रस की प्राप्ति क
हना ही है ताते जानी के आगे या स्वस्व को भावन
नौ और श्री हनुमन् सो सचिदानंद स्वरूप को भावन व
नौ श्री हनुमन् सो सचिदानंद स्वरूप आत्म कर सात्मक
जीवन होय कहत है सत चैर वित्त आनंद को सिद्धा

हं श्रीगुरुजीपरमानंदरूपप्रसिद्धि श्रीभागवतगी
तामैकहैं जो श्रीगुरुसंपूर्णपुरुषोत्तमहैं सो वेदसास्त्र
में सबद्वारप्रसिद्धिहैं ताते एक श्रीगुरुसही को सबते परे एक
पुरुषोत्तमजानना। त्रस्तादिसिवादिभगवत्सम्भक्तजान
ना स्वतंत्र एक श्रीगुरुसही को जानना। १६ श्लोक। पूर्वा
वस्थापरंतु हस्सके कलेषो जरो मतः तस्मै वास्य हृदय
पूर्णः प्रभु श्रीवद्वत्तामिधः। १७ याज्ञिके श्रीगुरुको सर्व
होतुमश्रीगुरुजीकी सेवाकरिके कछु फलहूकी वास
नामनमें राखत हों। काहेते वेदमें जितनी क्रिया बही
ताकी फलहू देहैं जो कछु फल न होय तो क्रिया व्यर्थ है
हियें यह वेदसास्त्रकी मयादावे यह संदेह होय नहों
कहत हैं जो जानीको श्रीगुरुसस्येबंधजीवको भये
थोउहवे सवपुष्टिमागकी मीतिमें भगवत्सेवाक
रनजाणै। तबउहसेवाकरतमें साधनहैं श्रीगुरुसही
फलश्रीगुरुसेवासिद्धिभये पाछें श्रीगुरुसही पूजे ताते
मापुष्टिमागमें साधनहीमं फलकी प्राप्तिभये और वेद
मयोहमें क्रियान्पारीहैं साधनरूपफलभयो। तब
योदाकी क्रियानासभयें और पुष्टिमागमें साधनह
मं श्रीगुरुसेवासे श्रीगुरुसववप्राप्तिहोय। तब श्रीग
ुरुजीके मुखारविंदरूपश्रीगुरुआचार्यजीकी संपूर्ण
कृपाहोय तबही यह जीव सरन आदि पुष्टिमागमें
भावसेवासे रुचिहोय श्रीगुरुआचार्यजीकी कृपावि
ना पुष्टिमागमें शरणक बहन होय यह सिद्धांत नि
श्चयजानना। सो श्रीगुरुआचार्यजीकी पूर्ण कृपाको न
कारहोय। सो उपाय आगे श्लोकमें कहत हैं। १८ श्लोक
तदाश्रयसदाकार्यमनोवाक्याद्यतिभिः स्व
कीयता तदीयेषु तद्विभक्तता प्रता। १८ या
श्रीगुरुदृष्टिगुणपादरे सो उपाय कहत हैं जो

नन्दनचचतुर्कारिकात्रीचाचायेजीविचरणभक्त
नीआय्यवरनवरीआचायेजीचनन्यपयवको
नवहृदिकप्रसन्नहोय औरजीआचायेजीकोआ
य्यहृदयमेतहोय तोकोहानकोहिमाधनकीपो
करवदइफलतिदिनहोय चन्यसंदेधनेनाप्रजा
पसोत्रीगुणोत्तीविजममेकहोय चन्यसंदेधगंधोपी
कधामेदवाधते चन्यसंदेधहोयतोमायोरीक
नसदासोरादाप्रसभनचारकीवानोमेप्रसिद्धि
नीनिंकरायंदेधकीधोनोंउचमलेष्टभयो चन्यसंवे
वतिनाममहाबाधकहो औरजीआचायेजीमद
तुसेइदनाय्यहोय औरसाधनयोगेवतिआवे
नयकयकार्यसिद्धहोय आन्यइदयहवैदिकको
तियेजीआचायेजीकोइदआन्यभयावन
होवदयपुष्टाएनादिनोहृदयमेजिनकोइदभाव
नदिलेइदयमेजीआचायेजीकोइदआन्य
होयहोईजीआचायेजीप्रसन्नहोयअपनोअ
नोमानतहोईसेभगवदीयकोसत्संगजक्के
नयेभगवदीयहोयहोआदारेनोइनकोत्री
नयेजीहोपकारिहोलेदीयोहो सोअहन्तिय
होयमेजीआचायेजीविराजतेहोतातेत्री
यनीसेऔरभगवदीयमेकहुमिलताना
नयेपुंजलेतेदिनगारीउडतहोसिद्ध
होतातेईसेभगवदीयमेऔरजीआचा
मिलतपुष्टिराखेनोउहनीकोपुष्टिमागे
होयहोयकीआचायेजीप्रसन्नहोय
नहनेकहीअपनीस्त्रीयोंजोगोव

नातर वैभव गोव उठाय ले जायो यह सुनत ही
श्री आचार्य जी के ध्वनि पाग की गो कितने जन्म को
अंतराय भयो ताते भगवदीय में श्री आचार्य जी में
बुद्धि न राखे १२ अथ अवशोर कहत है श्लोक ॥ तही
ये पुत्र तदुध्या न राख्या विरोधतः यथा इतीभा
वती विषाणायामति स्था १२ यथा श्री आचार्य तदीय
में लोकिक बुद्धि न राखे यह जान जो तदीय प्रसन्न
हो जो तव श्री आचार्य जी प्रसन्न होय सन करे
सो लोकिक दृष्टांत कहत है जे से कामी पुरुष हो
सो इती द्वारा परस्त्री को बुलावे सो काम तो परस्त्री सोन
को सिद्ध होय परंतु बीच में इती प्रसन्न होय करे तो का
म सिद्ध होय नान राही सिद्ध होय ताते जे से इती प्रस
न रहे सोई कामी पुरुष कहत है ताते इती जो कार्य की
सिद्धि करता है ता पर अधिक सिद्ध होत है ते से ही जो
बजव भगवान को मिले तव ही यह जीव को कार्य सि
द्ध होय परंतु भगवान न हं विना भगवदीय के संग वि
ना न मिले भगवदीय द्वारा भगवान प्रसन्न होत है
ताते भगवदीय में भगवान में बरावर बुद्धि स्थापन
करे १२ अथ अवशोर कहत है श्लोक ॥ धन ग्रह यथा
सो तथा भक्त स्थिते पि च विनियोग व्यसने वा हि प्र
भो वा भविष्यति ॥ २४ ॥ अथ ॥ अवकहत है जे
भगवदीय में भाव भयो क जानिये जे से धन ग्रह अ
श्री कृष्ण को समर्पत है भाव सहित भगवद् सेवा कर
ते से ही भाव पूर्वक भगवदीय की सेवा करिये धन
हम न वचन क्रिया करिये जे से जे से श्री कृष्ण को
विनियोग करिये ते से ही स्नेह संयुक्त भगवदीय
नियोग करिये तो भगवान ही य सो आगे कहत है
ते नदी यो श्वेत तनु शत तुष्टः ह्यसो न संश

प. दीयासुनिजाचार्यप्राणैकपरायण २१ या २२ अव
पाकहे जेसेभावपूर्वकधनग्रहश्रीलक्ष्मीसमर्पे तेसेहीभा
वसहितेभागवदीयकोइंधनग्रहसमर्पे तहांकोईकहेजेभ
गवानकीसेवातोआवस्यहेसोवरीचाहिये औरभागव
दीयकीसेवाकीयेतेंकहाहोनहेयाभांतिकोईकहे तहां
कहतहे जोभागवदीयकीसेवाकप्रसन्नकरिये भा
गवदीयसंतुष्टहोइ तवभगवानइंसंतुष्टहोइ जोभागव
दीयसंतुष्टनहोइतोभगवानकोईप्रकारसंतुष्टनहोइ
असोजानिभागवदीयकोसबप्रकारसंतुष्टकरनाताक
रिंकेनिअयभगवानसंतुष्टहोइगे तहांकोईकहेजेत
दीयसंतुष्टनहोयवैसबजानिकेआपतेवनेसोसेवाक
रिये औरवैसबकठिनआगपाकरेसोआपतेवनेना
ही तववैसबसंतुष्टनहोयतोभगवानइंसंतुष्टनहोय
याभांतिकोईकहे तहांकहतहे जोजेसेयजोकेवाज
ककीदेवाकरिये सोउहवालकजो जाननहोइ प्रस
न्ननहोय वालकअनेकदातो कहें सोआपतेनव
ने सोराजाअपनेसनमेंजाने जोयहमेरीवालककी
बहुतसेवाकरीहै यासोवनीतितनीकरीहै यहजा
निकेराजाप्रसन्नहीहोय यहजानिअपनेसोवने
तितनीवैसबकीसेवाकरिये तदीयनप्रसन्नहोइ
गे तउकहुदितानाहीभगवानप्रसन्नहीहोइगे अब
सबकितनीप्रकारकेहैं तहांकहतहे जोअसेवैसबह
यतिनकीसेवाकरे एकश्रीआचार्यजीकेचरणारवि
दकीभक्तिमेंपरायणहोय अहंनिसयहतोकरलो
दोश्रीआचार्यजीकेसणकीकामनाहोइ ऐसेभ
गवदीयकीसेवाकरे सत्संगकरेंतोजीवहलीअनन्य
ताश्रीआचार्यजिमिशोयअबओरइंभगवदीयकेल
लएकहतहै २१ श्लोक॥ अनन्यभजनासुष्टकामलो

वर्जिता निरपेक्षा विताय सर्व भूत हिते रता ॥ २३ ॥
अथ अवक हत हो जो से भगवदीय की सेवा क
पदे जो एक श्री गुरु की सेवा ही करि संतुष्ट हो और दे
त को भजन स्वभम में ना ही जानत हो तब श्री गुरु
प्रसन्न होय और काहु सुकी कामना ना ही होती
लोक पर्यंत ब्रह्मानंद मोल पर्यंत तुष्ट जाने हो लौकि
काम क्रोध मद मत्सर तादिस्य बाध ना ही गंधवा
न ही होय और लोभ न ही होय जो सगरो धर्म दुष्य
लीये वैच काहेतै यह कलियुग में दुष्य करि सकल
पर्य लौकिक सिद्ध होत है सो दुष्य में जा को बहुत लो
भन होय सो भगवदीय जानिये और निरपेक्ष भाव
भगवद् सेवा करै कछु लौकिक वैदिक की काम
ना मन में न राखे और मन करि विरत रहे स्त्री पुत्र कु
ल व ग्रह देह संबंधी सारी जगत में दूद बेराग्य जाने
काह सो अपने स्थाय्य के ली एक ठु जाचे ना ही यह जाने
जो श्री गुरु ही सर्व कार्य सिद्ध करे सो मोक्ष मोक्ष भगवद्
सेवा ही करि के हो और सर्व भूत प्राणी मात्र में हित
राखे काह को बुरे सर्व ध्यान विचार मन वचन क्रम
करि सब को हित ही करे जो से भगवदीय को संग अह
र्नि सही कर्तव्य हो तिन की सेवा स्नेह पूर्वक करे २२
अथ और एक हत हो श्लोक ॥ निर्मल राहु छ स सेवा
कथा दिवि हितादरा एवं विधास्त दीय श्रम संगार
पि विरोधत ॥ २३ ॥ अथ ॥ निर्मल राजा और
को अत्यंत देखिन सब को सोन करे आपने ते और वैल
वयो भगवद् धर्म करत होय तो वाह की बड़ाई करे
कहे धन्य है तुम को आपु को जो गतान जाने जो से व
हुत धर्म करत है यह जाने जो से मोक्ष भगवद् धर्म चक
ना ही हो या भौति है नाराखे दस की सेवा है आद

एवं वक्तव्य श्रीहृत्सुक्तीयां आचार्यपूर्वकवैसुने क
 ते भगवद्वेवा कीयेते सर्वे इति भगवद्वेवा गण होइ
 श्रीहृत्सुक्तीया सुनेते भगवद्वेवा गण होइ
 भगवद्वेवा करनी और भगवद्वेवा गण होइ
 सुनेनी या भोति अपर कहि आगे ऐसे भगवदीय सर्व
 गण होइ तिनको संग आबस्य कने म पूर्वक करे क
 हु लोकिक होय न भगवदीय दिखवे तो उह होय मन
 मेरे च कहन लावे यह जाने जो इनमें होय ना ही है मो
 ही को अपान करि के होय ही सज है या भोति सुद्ध मन
 सो भगवदीय को संग करे उनकी सेवा करे भगवदीय
 कहैतामि विस्वास राखि के मन में रहै संयुक्त करे या प्र
 कार वैसव है तो श्री आचार्यजी प्रसन्न होय आनंद हो
 न करे २३ श्लोक सर्वथा सुद्ध भाव नों खदना नों
 छपाखुना सर्व श्रीवध्नभाचार्य प्रसादेन भविष्यति २४
 पाठ्य अपराजित नो प्रकार कहि सब सुद्ध भाव सो
 करे भगवद्वेवा सुद्ध भाव सो करे गुह्य सेवा सुद्ध भा
 व सो करे श्रीहृत्सुक्तीया सुद्ध भाव सो करे सारी
 भगवद्वेवा सुद्ध भाव सो करे सर्व भगवद्वेवा सुद्ध भा
 व सो करे भगवदीय प्रसन्न होय छपाकरे तो प्रभु
 कपाकरे तहां को कहि जो तुम इनने धर्म महा कठिन है यह
 कलियुग के जीव सो के सेवनि आवेगे जीव सो तो एक कहं
 श्री महा कठिन न सो सिद्धि होत है या भोति संदेह करे
 तहां कहत है जो श्रीवध्नभाचार्यजी यह कलियुग के जी
 वन को छपा करि के नीगे प्रगटे है यह पुष्टि मार्ग सर्वो
 र प्रादकी गे है सो श्री महा प्रभुजी की छपाते सगरे धर्म
 कला में आवेगे जीव को तो सब ही कठिन है जीव सो
 कलियुग में और श्री आचार्यजी छपाकरे तिनको
 प्रभु गम है ताते मन में एक श्री आचार्यजी ॥

कमलको आश्रय इतराखे सर्वकार्य आश्रय ही ते निश्च
यसिद्ध होय गोपाभांति श्रीहरिगुणी प्रतिपादित कहन
हैं जो एक श्री आचार्यजी को आश्रय मनमें इतराखें ताही
करि सर्व सिद्धि होइ गो निश्चय पुष्टि मारगीयमें फल है सो
श्रीमहप्रभु नीलंन करे गोपाप्रकार प्रथम सिद्धापत्रकों भ
वयथा बुद्धि अनुसार कहो ॥ इति श्रीहरिगुणी के प्रथ
म सिद्धापत्र ताकी टीका श्रीगोपेश्वरजी कृत संपूर्ण ॥ १ ॥ अ
महसरो सिद्धापत्र श्रीहरिगुणी पठारे हैं ताको बाह्य न
श्रीगोपेश्वरजी करत हैं ऊपर प्रथम सिद्धापत्रको भाष
हृदयमें धारन करें तो श्री आचार्यजी महाप्रभु वाके ऊपर
निश्चय धृपायें पुष्टि मार्गमें श्रीलक्ष्मण फलान्न कर सस्य
दान करें तब श्रीलक्ष्मण को स्वरूप हृदय में होय सो यह
हृदय सिद्धापत्रमें कहत हैं जो एको स्वरूपकों अनुभ
व होय ॥ श्लोक ॥ य सो दोहो संगला लित कंच ग्रथित
वेणिक सुता फल सैले डालो चलतुं डिल कुंतल १
या जो अ ॥ अब कहत हैं श्रीय सो दोहो संगला लित यह
केवल भावात्मक स्वरूप है वसुदेव देवजी के इहां जो म
पुरा में प्रागट है श्री श्रीय सो दाजी के उहां जो स्वरूप प्र
गट है सो केवल देव भक्तन को आनंद दानार्थ है सो श्री
य सो दोहो संगला लित जो रसात्मक सोई यह श्री आचार्य
जी के पुष्टि मार्गमें सेवनीय है ताहमें होय प्रकार है कल्प
कल्पमें दापर आसक्त है तब श्रीनिंद्य सो दा प्रगटत है त
ब श्रीठाकुरजी प्रगटत है सो य सो दोहो संगला लित
पुष्टि मारगीयमें सेवनीय है काहेतें कल्प कल्पमें क
वहं ये सावतार होत है श्रीरसात्मक कल्पमें जो स्वयं
प्रभु आप पधारें जो वेद की रचा की वरदान दीए सो
सा रसात्मक कल्प के य सो दोहो संगला लित यह पुष्टि मार्ग
में सेवनीय है सो श्रीगुसाईजी के वचन है ॥

जानितं परमं तत्त्वं यसो दोहोत्संगलाहितः तद्वत्पद्मिनी यो
रासुगस्तान्देखुधा १ श्रीयसो दोहोत्संगलाहितविना
ओरको जानिता को आसुरजानिये सर्व लीलासर्व
तुम्हे कारण रूप यसो दोहोत्संगलाहित है तिनको श्रीय
सोदाजी अति स्नेह हो अ संग में ली ऐला ल न पालन
करत है परम आनंद में मगू है य सो दाजी ए सो मंगल रूप
प्रभु को पायवें सो श्री गुणों में मंगल ग्रंथ में कहें है मंगल
मिह श्री मंदय सो दा नाम सुकीर्तन में बहुत चिरोत्संग सुजा
लित पा लित रूप मंगल रूप की गोदों य सो दा जीले आ
पद मंगल रूप भई ए से अ रूप को ध्यान कहत है श्रीय सो दा
जीले आपद मंगल रूप भई ए से अ रूप को ध्यान कहत है
श्रीय सो दा जी उष्टंग में पुत्र को ले सुंदर धधर वारे वार
हैं तिनको ए वारिके वेणी गुह त है अथवा श्रीय सो दा
जी अ पनी गोद में प्रभु को ले के अने वसे वा मिठाई अरोग
वत है अने कपिलो ना सो खिलवत है कुमारिका जो घ
में भक्त हैं दो वेनी गुह त है अथवा शुक्ति रूप श्री चंद्राव
ली जी पधारिवाल भाव सो गुहें है अथवा श्री दा कुंज कि
वा ल भाव कहत है श्रीय सो दा जी वृष भात कुमारी को अ
पने पास देठा य दो अ रूप की वेणी सुंदर गुह त है य सो दा
अने वभाव है श्रीमहा प्रभु जी की रूपानि अनुभव होत
हैं य सो दा निवेनी सभा रिके सुंदर भाल पर मोती की लार
सो भादेत है सो मानो नील कमल के ऊपर वरावरि
जल की बूंद आयर ही है तथा स्याम चंद्रमा के ऊपर त
रागाण की पंक्ति आयर ही है सीतल मंद सुगंध वायु ने
कुंतल जो अकल सो चलाय मान है सो परम अद्भुत
सो भादेत है मानो मुख कमल के मकरंद वस होय अ
लि जो भ्रमर के पुत्र छोटे छोटे पंक्ति की पंक्ति आय पा
नकारत है तथा मुख चंद्रमा पर अलक सो सपके वृद्ध

आयेहं यामोतिनासिखानेनसपर्यंतश्रंगास्कोभा
हितहृदयमेंविचारे॥श्रवश्रोरहंकहतहैलोक॥मु
ताकलावलीभालप्राताकर्णविभेषितःकसुरी
कंसुकभालभूयातिसुंदर॥भूयाकोत्यर्थ तोफर
कीलरभालतेहोउकणतोइवहीधरेहो

होयवककीपंक्तिपरमसोभाहैनु सुं
कसुरीकोतिलकभालपरविराजमान

गुसाइजीकेभालपरसुतसि

कोतिलकहैतातेश्रीचंद्राव

भावसंवधीतिलककसुरीकोश्रीठा

है॥श्रोरश्रीमुख्यस्वामिनीअपनेभाव

को भावात्मकहै॥अथ

का॥

विलसकपोलद्वयचित्रनः

लद्युतिमंडित॥अथाकोश्रय

श्रीरमेजोदे शरकुसुमकुमशादिश्रंगरागसोवपा

चित्रि सोदाऊकपोलमेंकमलपत्रपरमसो

स्वामिनीजीकेमनो

कोहोका कमलपत्रजवव्याहहोतहैतवही

श्रोरश्रीस्वामिनीजीअपनोमनोरथक

हो

बुरजी

जो

राजीश्री

न

रतहैजोह

तवश्रीठा

चिरकात्को

सोरव

का

मनोरथपूराकरतहै

नीजीरोऊकपोलपरकमलपत्रअपनेहस्तसोस्वा
रिक्केअपनेआहकोमनोरथकरतहेतोनित्यपहीभां
तिहमकोदीयोकरोयापदकेअनुसारदिनइलहमेरो
दुखखनेयायाभांतिअनेकलीलागोचकरिपाछेभी
ठाकुरजीकोगोदलेश्रीखामिनीजीश्रीयसोदाजीपास
आपकेकहतहेतोमहतुमारोपुत्रअतिचंचलकेसे
इहतनाहीसोकोहकोहराखेहेएकठोरतोयाही
कोमननाहीलागततोनेखिलायलारेहेतवश्री
यसोदाजीश्रीखामिनीजीकेऊपरप्रसन्नहोयश्रीपा
कुरजीकोअपनीउंछामेंलेनहेविधनासोअचरण
सारिहप्रार्थनाकरतहेतोव्यभानकुमारीतेमोपुत्र
कोव्याहरोययहीममागतिहोपाछेमेवामिदाइसोअ
खामिनीजीकीगोदभरितहेयाभांतिश्रीठाकुरजी
कपोलचित्रतहेआरहोऊश्रुतिजोकार्गमेंकुंडलपर
मसोभायमानहेसोकुंडलअतिचंचलहेसोकवहूम
कराइनकुंडलधरतहेवहहमकराइनकुंडलधरतहे
मेंमकराइनमेंखकीयभक्तकोमनोरथमोराहतमेपरव
यभक्तकोमनोरथसोकुंडलकीक्रांतिगंडरथलपर
खकनहेसोकोट्टिकोट्टिहर्पनकीछविकोहरतहे
नीलमणिकीक्रांतिलज्जापावतहेअबअरेहंक
तहे३ श्लोक चिबुकांतलसदनेभूयसांजनल
वनःनयनप्रातविलसमसिबिंदुसुयोभनधाय
अथ सुंदरचिबुकपरहीराकोभूयणसोहतव
सोपरमउजलश्रीचंद्रवलीजीकोभावहेसोप्रधुर
ककीटीकामेबिताएकरिवर्णनहेसोश्रीखामिनी
धरामृतकोपानकरासरसकेआधिकतेमुखकम
नेअधरसअवतहेसोचिबुकपरआवतहेसो
चंद्रवलीजीआस्थाइनकरतहेयाभावतेचिबु

पावि राजत हे नैन कसल में अंजन अंगार सही सो
त है सो नयन व कटा लक्ष्मो दिख भक्त न ऊपर
म है तम रित्त भक्त मोहित होय वै अपनो ग्रह का
न भूलि जात है काहे ते नेत्र अतिकुटिल है अति च
भत है अति अरुण धारण य मान हो अनेक भाव सो
म है सो श्री गुसाई जी लिलित त्रिभंग ग्रंथ में वर्णन
कीये हैं इस दिसा के भक्त न को संकेत नेत्र ही द्वारा
पान करावत है और अनेक विहार को प्रकार नेत्र द
रास पान करावत है और श्रीय सोदाजी मसि विंदु का
भोम दीरे है जो मेरु पत्र का काट की छिन्न लागे तो मि
स विंदु का परम सो दत है सब के मन को दत है ॥ अद
ओर कहत है लोको ॥ लाल मिस अधर ए स अचान
जान बोध के बाल भाति सलेन रस बोधन तप
रास या को अधो अधर अधर ए स अचान
य सोदाजी तो यह जानत है तो बाल के के रस अध
त है सो श्रीय सोदाजी सो यह जानत है मुख मुंदन क
त है तव अधर की उन को बाल लीजा को आर
ह दो त है काहे ते पुष्टि लीला में अधर न पान लि
ता अंगीकार न होय और श्री गुरु जी तो नित्य
ता में सब को अंगीकार करान के लीला पधार है
जी को अधर मृत के सो प्राप्त होय ताते बाल भाव
परत है सखान को बाल मंडल में गठे रक्वा
रज भक्त को तो रास न ए अधर सत सुवन क
है पशु पंक्षी को वेणु द्वारा अधर सत सुवन क
कने रहत है अधर सत सुवन पान व ह
श्री स्वामिनी जी को अधर मृत पान व ह
ने श्रीय सोदाजी सो कहि के श्री गुरु

धराइकेलेजातहैतोनुमारेपुत्रकोखिलाइलावै नवस
वकोजंयहजानतेहैजोवाक्यवकोखिलावनकोलेजा
तहैकाइकोविषमबुद्धिनाहीहैतएकान्तमेंलेजाय
गुमराकीरीतिप्रार्थनाकरतहैश्रीठाकुरजीरसदानमें
नत्परायाभांतिसमस्तभक्तनवेमनोरथसिद्धिकरतहै
पञ्चदशऔरएकहस्तहैलोकांमुखवांजुजनिजागुह्यप्र
वसतपरायणभक्तिप्रवृत्तिखगतिक्रियासक्तिवि
बोधक॥इयाकोअ॥श्रीठाकुरजीसुंदरपालनेमें
पेटेहैअपनेअंगुष्ठकोबारंबारमुखमेंप्रवेशकरत
हैनाकोसिंहजताघतहैजोचरणारविंदमेंकीलान
कोटिभक्तनकेमनलागिरहेहैतिनभक्तनकेमनमें
यहनापञ्चनेककलस्योरहतहैजोहमकोअधारास्त
कोपानवत्कहंनभयोइहएकौनभोतिकोहैसोभक्तन
कीआरतिप्रभुपहिनाहीसकतततेवालेभावसो
कोइजानेनाहीयाभांतिचरणारविंदकेभक्तकोअ
धरामनरसकोपानकरवतहैअथवाप्रभुयहविचा
रकरतहैजोमेरेचरणारविंदमेंएसोकहाएसहैजोमग
रेभक्तचरणारविंदकोपूजतहैध्यानधरतहैमोएस
कोमेंहोदेखोसोवालभावसोआपुहंचरणारविंद
कोरसकोआस्थाहनकरतहैअथवाकंवहंश्रीहस्तके
अंगुष्ठमुखमेंरतहैनाकोरिअंतरग्रहगतादेहके
ओश्रीठाकुरजीकेपासआइहैतिनकोआपुश्रीहस्तमें
पकरिअपनेमुखारविंदमेंधारनकरतहैसोवहएक
तमेंउनभक्तनकोबाहिरनिकासिरमाणकरिपाछेपे
रिमुखारविंदमेंधरिलेतहैलोगनकेदिखाइवेंमेवा
लकअंगुष्ठवसतहैस्वामिनीआदिकोअनेकरमाण
बंधनादिकक्रियाकोबोधनकरतहैयाभांतिश्री
ठाकुरजीकोजैसेश्रीठाकुरजीकोअधिकारहैतको

हीसपानकरावतहैंसथवओरहंकहनहैंल्लोका।प्र
 सनुताफलमलदिभुयनेनदनेरखसस्य
 मनिमालातिमोहन।७।याकोअर्थग्रीवासोलागी
 तीकीमालाताकोनामकंठश्रीपरमसोभादेनहैं
 हीकेपासखवर्णहैंमनिकाओरमणिमालाग्रंथ
 करिअपनेभक्तनकोयहनताऐजोमेनुमकोंअह
 रमेंराखतहैं।नुताकीमाखाखवर्णेतयाम
 मयअनेकभक्तनकेभावातकहैं।ततिप्रभुप्रेमने
 कीरिहैं।७।अथवओरहंकहनहैंल्लोका।अस्थल
 त्वछचक्रवैयाद्यभयामसुताफलस्वरसाला
 लतोहर।१॥याकोअर्थअस्थलकेऊपरदेह
 कोनखवधनखापरमसोभादेनहैं।सोश्रीयसोदाजी
 अपनेपुत्रकीरलाअर्थधराऐहो।ओरहजभक्तन
 अनेकलीलाभोधनकरावतहैंनखदानरासा
 हारलीलामेंहोतहैं।सोवधनखाबेटोहोताको
 अभिप्राययहहैंजोकिजनैकभक्तनकोहृदयदेहोहैं
 कोमनश्रीठाकुरजीकोअपनेवसकरनोहैं।सोव
 खहैं।अपनेहृदयमेंधारियहनताऐजोमेदूत्रिम
 होयाभातिभक्तनकेमनसुधकरिभक्तनकोअ
 हृदयमेंराखेहैं।तयअनेकभक्तनकेघरश्रीठाकुर
 त्वहोअपराखवारीचाहिएतवनखते
 सें दिदेविकनसिंधजीप्रगटकरिह
 अपराखवारीराखिभक्तनकेसंगनिर्भयतासोंली
 लाविहारलीलाकरनहैं।तातेंपारीपरसिंधहो।सो
 पछिलीलासंबंधीहोताहीतेश्रीठाकुरजीनखभयन
 कीरे।याभातिसारेअभयणवृज
 हैं।तातेंश्रीठाकुरजी
 सोंपासराखेहैं।जोव

कृत्व होयता को तत्काल श्री ठाकुरजी का गध रज है ताते पु
ष्टि भागे में अंगीकार वृज भक्त नदी दया ते होय और उपासके
इना ही या भांति सो वधन खा प्रभु धरे हैं तान स्वभूषण के
पास सुनी फल और स्ववर्ण के मणि का युत हैं गूथी असी
मुखा माता ऊपर विराज मान हैं सो स्ववर्ण पनिका श्री
स्वामिनी जी की भाव मुतासों श्री चंद्रावली जी के भाव सों
श्री ठाकुरजी अपने हृदय में धारन की ये हैं अब और एक
हृत्त है ॥ ८ ॥ श्लोक ॥ वाद मधुल सद्रत्न जटित मोद सुंदर
पर गुह्य लसत स्वयं कर के कन भूषण ॥ धिया के अर्थ सुंदर
चाह में बाजु वंदन न जटित हैं नय युतर तन जडाऊ
होऊ भुजन सों भई त हैं सो वास भुजा में श्री स्वामि
नी जी की भावात्मक हृदन भुजा में श्री चंद्रावली जी के
भाव सों और पाद के गुह्य में धरोयो असे छोटे हल के
होऊ कर में कंकन परम सो भाई त हैं अब और एक ह
त है ॥ श्लोक ॥ दसंगुलिल सद्रत्न जटितो तम मुद्रिक
कि किनी पद्म छाति विराजित कटि स्थल ॥ ९ ॥ या के
अर्थ होऊ श्री हस्त की दस अंगुली सो दसों में तन जटि
त जडाऊ मुद्रिका सो हत हैं परम उत्तम सो दस मुद्रिक की
अभिप्राय यह हो सो दस प्रकार के भक्तन के भावात्मक
हैं जार सके जो भक्त हैं निन को ता ही अंगुरी सो नख दान
कर परम सुख देत हैं और कटि स्थल विषे पाद के गुह्य
में परोई असी जो कि किनी राया हि अने कली लामे सुंदर
रम धर स्वयं की कता सों कटि में बाधी हैं सो भक्तन की कि
किनी के ना ही अने कली ला को स्मरण होत हैं ॥ १० ॥ अ
ब और एक हत है ॥ श्लोक ॥ सन पर पद न्यासे ध्वनि मो
हित गोपिकाः दिगं दशेन खविधु जो त्सा जित नि साप
ति ॥ ११ ॥ या के अर्थ चरण कमल में नूपुर पाम सुंदर धा
रा की रोहें सो नूपुर की धुनि सुनि के अने गोपी जन

श्रीरत्नलीलाकोषरूपदिगंबरनिशव
सनकरावतहो। सोश्रीनिवनीतप्रियाजी
मह प्रगटदशनहोनहें दशन

गोतानखचंद्रकेआ

चंद्रमाल तहोतहो। चंद्रमाकोनीते। येसेनखचंद्र
तनकेहृदयमेंरहतेहैं। तिनकेहृदयमेंप्रकासहोय
हादहनों। नखचंद्रनेअपनेज्योतिकेप्रकास
चंद्रमा।। सूर्य।। रत्ननाउमणि।। आदिसर्व
कासकोजीतेहैं। औरहसनखचंद्रहोतामैंवामच
रकिंदमेंनखपुष्टिभक्तकेहृदयकोतिमरद्वारिक
औरहसनचरणकेनखमर्यादाभक्तनकेतिमरकोई
क तहें। याभांतिनासिखांतनखपर्यंतस्वरूपवर्णन
गोहो। रशत्रवऔरहूंकहतहैं। लोका।। स्वरूपप्रतिबिंब
दृष्टिहास्यमुखवुजःपंकागरागरुचिरसदासुगंध
रोमणि।। श्याकोअर्थ।। अपरकहेचैसेसुंदरवाल
रूपकीलीलाश्रीठाकुरजीकरतहैं। स्वयनोप्रतिवि
बहूमणिजटितअंगनमेंदेखिपकरनकोहोस
प्रतिबिंबहस्तमेंनाहीआवतनवमुखमेंहास्यहोन
कवहूमणिजटितखंभहैं। जहांअपनोप्रतिबिंबदे
वारंवारकिलकिलेहसतहैं। वजकीरूपवीगये
गिरहीहैं। सोपरमसोभाहेंतहें। सुगंधलौकिकव
कीनाईअनेकलीलाकरतहैं। परंतुसुगंधसिरोम
हैं। मानोकछहीनाहीजानतहैं। याभातिवजभक्त
सुखदेतहैं। रशत्रवऔरहूंकहतहैं। लोका।। स्वरूप
गान्यज्ञानरहितसर्वलीलाविचक्षणकोदृष्टकोदि
वाणोमाननीमानदर्पहा।। श्याकोअर्थ।। सर्व
गनकोयहदीसेजोकेवलवालकहीजानतहैं।
हुऔरलीलाकोनाहीजानतपससुगंधहैं। मात्र

चरनयसोदाजीनंदरायजीरोहिणीजीआदिबहुगोपगो
पीसबकोकेवलवस्तुकीजानतहैं औरअंतर्गत
जभतहैं सोयहजानतहैं जोसबलीलासंप्रसक्त
हैं कष्टभयोमात्रचरणकेआगेमुग्धताजनावतहैं
तोवृजभक्तयहभावजानतहैं औरकोटिकोटिकल्प
जिनकीसोभादेखिलज्याकोपावतहैं ऐसेलावण्य
जिनकोश्रीचंगपरमसोभायमानहैं माननीजोश्री
स्वामिनीजीमानकोहरतहैं यहविलक्षणरीतिहैं जोर
क्कालावद्धिस्तसगरीलीलाकोअनुभवकरावतहैं
सोश्रीगुरुदेवीजीपालनामेंकहेहैं माननीमानहरण
श्रीप्रसोदाजीकेआगेपालनामेंगूँजतहैं ताहीसम
यमेंमाननीजोश्रीस्वामिनीजीकोमानहरतहैं ऐसे
विरुधधर्मअथअलोकिकवासकहैं ॥१३॥ श्लोक ॥ स्व
गोपिकागूढचौरहतसंकेतगोपन ॥ परमानंदसंदो
हसदादुःखविवर्जित ॥ १५ ॥ पावोचये ॥ स्वजोअप
नीगोपिकाश्रीस्वामिनीजीतिनकोगूढभावहैं ति
नकेघरचोरीकरिसंकेतकरतहैं पाछेऔरगोपीज
नकेआगेस्वामिनीजीकोसंकेतदरावतहैं जोयह
नजानेतोआछो ॥ अथवासमस्तगोपीजनकेघरश्री
ठाकुरजीगूढभावसोछिपिकेपधारतहैं इधरहीमा
खनसंगरोसंग्रीआगेगिकेपाछेउहेगोपीआव
तहैं तवउनकोएकांतमेंसंकेतकरतहैं पाछेकोश्री
पआवतहैं अथवामात्रचरणयसोदाजीकेआगेउ
हसंकेतगोपनकरतहैं तथासमस्तभजनकेसंगसंके
तकरतहैं एकाकभक्तकेआगेसंकेतगोपराखतहैं
यहजानतहैं जोहमहीकोश्रीठाकुरजीमिलेहैं और
कोनाहीयाभातिमनकरतहैं अथवासमस्तभक्त
केमध्यमेंश्रीस्वामिनीजीबैठीहैं तवश्रीठाकुरजीसेन

मैं श्रीस्वामिनी जी को गढ़भाव से बजावत हूँ जो श्रीकोरे
न जाने या भांति जतावेत हूँ सो फलानी हो आवें तही
संवेत हूँ तब श्रीस्वामिनी जी कछु वहाने तै घर को नाम
लेक छुमि सते श्रीठाकुर जी के पास पधारत हूँ पाछे अ
नेक भांति लीला करि पाछे सब सखी न के आगे सली
ला गोप्य करत हूँ परम आनंद रूप हूँ ताते समस्त भक्त न
को परमानंद को दान करत हूँ और सर्व काल दिव्य
दुख कष्टि रहित हूँ ॥ १५ ॥ अथ श्रीगुरु कहत हूँ सो
असम हो दुखिताना प्रपंच सुखिनाम पि ह्या निधि मु
ग्ध नाव स्वयं वक्तौ ककार क ॥ १५ ॥ पाको अर्थ ॥ लौकि
क प्रपंच के अनेक प्रकार के दुख हो कास क्रोध मोह मद मग
रता आदि माया संबंधीति न सकन के पोखन हारे हूँ
अविद्या रूप प्रतनाहती ताको श्रीठाकुर जी मारि के सम
स्त भक्त की अविद्या हरि की नी काहे नै भक्तन को साम
र्थ अविद्या हरि करन को नाही हतों ॥ ताते श्रीठाकुर जी अ
पने भक्तन के अर्थ सृजमें अवतार धारे हूँ ताते सब न
की अविद्या हरि करि अनेक लीला रस को अनुभव
कराय परम सुख ही ते दुखन को नास की रो काहे नै
ह्या निधि हूँ न त दुख पावें सो सहि नाही सकत हूँ लो
गन में देखत मुग्ध भाव को आंगीकार की रहै माने कछु
गान नही नाही काहे नै जानै भक्त तो इव य प्रगट होय
तो वात्सभाव छुटि जाय काहे नै इष्ट रता सुपूजे जो यह
जानै जो सगर जगत के पोषन कर्ता ये हूँ इनको मैं भोग कर
धरु आभूषण वस्त्र खिलोना कहां देखै सगरो श्रीगुरु
जी को हूँ या भांति स्नेह छुटे नो पुष्टि भक्त की प्राप्ति न हो
य ताते श्रीठाकुर जी मुग्ध लोकि वात्स्य की नाई लीला
करत हूँ भूखे हो न हूँ तब सहन करि हठ करि माता सो
भोजन मागत हूँ ताते भक्तन पर दूपा करि के लीगें मुग्ध

भावको ध्यान श्रीठाकुरजी की गे मुग्धभावमें योरी बलु सों सं
नुष्ट होत है जो ईश्वरता सहित प्रभु मार्गें तो भक्त सों दीयो नाही
जाय जे सैं राजा बलिसों तीन पेंड धरती मागी हैं सो राज व
लिसों ही नीन गई ताते मुग्धभाव होय वृजभक्तन को सु
ख दैत है और अपने वृजभक्त जो अंगी हन हैं तिन के वा
क्य हैं पूर्ण कर्ता हैं सो श्रीभागवतमें कहै है जो ईश्वरभक्त
कहत हैं पीछा सदा इतवों जो ईश्वर कहत है मथानी लावो को
ई कहत है पादुका ब्यावों तुमकों हम माखन देइगी केस
कहत हैं नाचो तव श्रीठाकुरजी सब को कसो करत हैं जे
प्रकार वृजभक्त सुख पावत हैं सो ईश्रीठाकुरजी कहत
हैं १५ अथ और एक कहत है श्लोक ॥ प्रपंचेनासनाख्ये
य निरोधकृति तत्परं बालभावग्रहपरं दृष्टं दानवित
क्षण ॥ १६ ॥ याके अर्थ श्रीठाकुरजी अपने निजभक्तन
के प्रपंच लोकिक ग्रहासक्त के मन हैं तहां ते छोड़ाय आ
पमें लगावत हैं ताते वृजभक्तन के घर श्रीठाकुरजी चोरी
करन को पधारत हैं वृजभक्तन को मन दूध दही माखन
की चोरी करी तव वृजभक्तन के मनमें श्रीठाकुरजी को
ध्यान भयो जो अब चोरी करन को प्रभु आवत होइगे
और वेनु नाहक सख भक्तन को मन हरिलीनों ताकरि प
ति पुत्र ग्रहादि देह संबंधी सब भक्त भूलि जात हैं और प्रपंच
व अविद्या रूप पुतना को मारि के समाप्त भक्तन की अवि
द्या हरि की नी और अपने भक्तन के निरोध करन में तत्प
र हैं इइया ज वृजवासी करत हैं ते सो ईश्वर को यज्ञ छोड़ायो
तिष्ठि जकी पूजा कराय आपु सगरी इंद्रिय वैसा मग्री
अंगीकार कीनी संयोगात्मक सगरी लीला करी वा
हर की सगरी इंद्रियन को निरोध कीरो और वनांतर
देसांतर की लीला करी मन इंद्रिय को निरोध कीरो
जे सैं रास पंचाध्याई में प्रथम मुरली बजाय घाते वृज

[illegible]

नलेहृदयमें आनंद होय जेसो मनोरथ होय ताही कार्य
में श्रीठाकुरजी तत्पर हैं और बात जानत ही नाही अप
ने निज भक्तन के हृदय के अभिप्राय किना कछु जान ही
मनमें नाही राखत काहे नै वृजमें श्रीयसोदाजी के ध
रपधारत हैं सो केवल वृज भक्तन के सुख हेनार्थ ते पुष्टि
मार्गमें प्रभु भक्ताधीन हैं अन्य ज्ञान करि रहित हैं १७
अब श्रीराव कहत हैं लोक सेवनीय सावधाने विप
रीति गति क्रिया गूढ लीला परो भक्त गूढ भाव सात्म
क १८ याको अ भक्तन के संग गूढ लीला परायण हैं
गूढ लीला सो रास लीला नामें अनेक प्रकार के रास हैं
गोपी विच विच माधो तथा अष्टछ्वा भवें ती तथा भक्त
भक्त प्रतिधा भांति अनेक रास लीला मान अनेक भांति
कों विहार अनेक प्रकार सों जल क्रिया अनेक भांति को
थवन में श्रीवृंदावन में निवृज की कहें और वृज भक्त
न के धारवास्तव रूप ते कि सो होय अनेक लीला तथा
एक में गाइ दहावन में अनेक लीला समुद्र को पार
नाही ताते गूढ लीला परायण करे गूढ भाव हैं जि
न के भाव की काहू की खबरि नाही श्रीठाकुरजी के भा
व की काहू की खबरि नाही गोपी जन के भाव की का
हू की खबरि नाही रसात्मक श्रीठाकुरजी रसात्मक वृ
ज भक्त रास सम अनेक भांति की लीला करत हैं अ
मेर सात्मक य सो होत संग लालित हैं सो श्रीहरि
जी श्रीगोपश्वजी को पत्र में लिखे जो असे प्रभु न
की सेवा अनंत सावधान होय के कते थें का
हेन प्रभु की विपरीति गति हैं विपरीति क्रिया हैं एक
भाग में प्रसन्न होय एक लग में क्रोध करे ताते जे
दिवस मन न राखिये प्रभु में मन राखिये जो मति
कछु अ प्रसन्न होय या भांति भय संयुक्त भगवत् सेवा

कष्टियों रक्षा अवश्य रह करत हैं श्लोक ॥ श्रीमदाचार्य स्व
पातिश्रुति स्वग्रहे हरि एवं विधसदा ह्ये योगिन पार
शियथा र्धसा को अर्थ ॥ अवश्य श्रीहरिराज्ञी कहन हैं जो
असे वृजभक्त के भावात्मक स्वरूप अपने ग्रह में विराज
त हैं सो श्री आचार्य जी महाप्रभुन की छपाते बहुत अपनी
प्रेम से इह भक्ति और बहुत साधन की बल मति जानी यों
एसे सात्मक भावात्मक प्रभु की सेवा अपने कहा कर
वियोग हैं परंतु श्री आचार्य जी की कानि ते छपा प्रभु
में विराजत हैं या प्रकार को भाव अपने मन में सदा
जाननो के से है प्रभु योगिन के ध्यान में ना ही आवत
अनेक जन्म लो अनेक योग साधन करत हैं तिन को
स्वप्न में इह मन दुर्लभ है सो प्रभु श्री आचार्य जी मत्
प्रभु की छपाते साक्षात् अपने ग्रह में विराजत हैं
अपने मन में सदा विचार करी सावधान ते सेवा करि
मतिकर अपराध पूर्ण प्रभु प्रसन्न होय जायग
अवश्य रह कहन हैं श्लोक ॥ चिंतनीयानवसरे
यां सर्वथा धियाय तो निरोध संसिद्ध सेवा हाईय
ता रक्षा को अर्थ ॥ अवश्य श्रीहरिराज्ञी कहन हैं
सेवा हो त्सा रक्षा लित भावात्मक सेवा सम्यगमन
य सेवा करने उचित हैं पाछे अनेक होय तब
हि अर्थ ता भांति इह यमें चिंतन करना ॥ सदा
से ह्यो जा भाति सेवा सर्वथा अपने धर्म जा
नो ता ही भांति अनेक सरे सर्वथा चिंतन क
निरोध सिद्ध होइगो ते से वृजभक्तन को निर
भयो संयोग वियोग सब को अनुभवत ते से
मय संयोग की भावना अनेक सरे विप्रयोग

सुगंध्यवीसस्रोवकोकियेहैं ताभावकेअनुसारश्रीह
रिराइजीयहसिहापत्रमेंनिरोधपुष्टिमाणीयजीवनको
जाभांतिसिद्धहोय। सोप्रकारसबकहतहैं तातेनिरोध
श्रीभागवतदसमस्कंधहैं तेसेहीयहयवोपरनिरोधप्र
कारकोहो२०॥ इतिश्रीहरेश्रीजीकृतहर्तादिसिहापत्र
नवींटीक। श्रीगोपेन्द्रजीकृतदंष्ट्रणं २॥ अब
अपकहेजोसेवाकरोगे। तथाअनोसरमेंचिंतनहूकरो
गे। परंतुदुःसंगमिते। तबएकक्षणमेंसगरेधर्मकोनास
होयजाय। जन्मजन्मकोभावदुःसंगतेएकक्षणमेंजा
तरहतहैं। तातेयापत्रमेंदुःसंगतेवचेसोनिहूणकरन
हैं। श्लो३॥ निधिप्राप्तसुखरहोदुःसंगादिकनसहाय
तापिलोवसंकोच्यथाधनिजलादिभि। श्लो४॥ यथ
अवश्रीहरिराइजीकहतहैं। जोनिधिप्राप्तहोय। ताकी
रक्षाकर्तव्यहैं। जेसेकाहूकोपनकोद्रव्यमित्यो। सोउहद्र
व्यकीरक्षाजंतननकरैं। तोद्रव्यकोचोरलेजाय। तेसे
हीयहभागवदभाकरूपनिधि। श्रीआचार्यजीकीहूपा
तेप्राप्तहैं। तेनिधिवीदुःसंगतेरक्षाआवस्यकही
कर्तव्यहैं। तामेंदुःसंगअनेकप्रकाशकोहैं। लोकि। कधि
यथादितयाअन्नमाणीयकोसंगतथादेहसंव
धीकुहं। कलौकिकवैदिककार्यइनसवनतेमननिका
मिप्रभुमेंगए। तहांकहतहैं। जोग्रहस्थाधर्ममेंहूने।
लोकि। कवैदिककीएविनाकेसेवने। तहांकहतहैं।
जोभावदसेवापुष्टिमाणीयधर्मतोअपनेमनते
मेहपूर्वककरै। लौकिकवैदिक। लोकनके। दिखाइके
लीऐकरै। सेवासमयसेवाप्रोडिनकरै। सेवामेंलोकि
ककोसंकोचनकरैं। तेसेहामोहरदससंभलवारश्रीद्वारि
कानाथजीकीसेवाकरने। सोजलअपनेहाथकूपतेम
हिलावते। तबहामोहरदसकेसरनेकही। जोतुमजल

मरुतहो प्रोहमकोवोहो नलज्या आवतहो जातेनुमजल
 लोडीपोसभरावो तवसमोहरासनेकही अवत्रेये
 हीचिरो पाछे अपनीस्त्रीसो कहो जो चलो जललावे
 तवस्त्रीभगवद्दीयहुती तत्वात्कलयालि होऊजने
 चले जलभरिकें सुसारी हाट आगें होस्के निकसे
 तवसुसारायसोहरासके पापनपह्यो कस्योमे
 चुको जेतुमकी कस्यो अवनुमही जलभरा स्त्रीज
 नसे सतिभरावो तवसोहरासनेकस्यो कालि
 तेनभरावो गोप्याभांति भगवदसेवामें लोकसंकोच
 सर्वथानाही कर्तव्यहो छोटीवडीसेवासवभावप्र
 र्वकप्रेमसो कर्नो पाभातिदुःसंगको जाननो भग
 वद्भावहो सो तो अग्रिरूपहो औरदुःसंगहो सो ज
 लभगवदभावको नासके तोहो १॥ अव औरहकर
 तहो ॥ श्लोक ॥ वनिमद्गवद्भावसत्सगवधिधान
 नासयत्यसतियद्व्याजव्यवाहितो जलो ॥ २
 को अथो भगवद्भावहो सो अग्रिरूपहो सो सत्स
 नेसे अग्रिमैकाष्टपरतो औरदुःसंगि
 दें तेजपुंज नेसेही भगवद्भावसत्सगपायके वदे
 दहोय औरभगवद्भावअग्रिमैदुसंगरूपी जलते भा
 नासहोय नेसे योसीसी अग्रिहोयतामें जवजनीडा
 देइ तवअग्रिको नासहोय तहां लोकिभूमैदेविन
 चलेनाही तो कहाकरेदुःसंगरूपी जलसत्संगर
 ॥ त्रमंराखें नेसे अग्रिको साक्षात जलको संबंध
 नो अग्रिको नासहोय और एकपात्रमें जलध
 के ऊपरधरे तो जलको नासहोय भगव
 अग्रिको संबंध तंगरूपकाष्टने कहाये नाय
 संग जलको पात्रमें धरि अपने हृदयमें अष्ट
 चारकरिदुःसंगको जरायदेइ तवही वच्चा ॥

प. जों वडे वडे भगवदी यदुःसंग ते गिरे हें ता तें दुःसंग ते सब ह
डर पतर हें अवओर एक हत हें ॥ श्लो ॥ जल वलौ कि
कंप्रोतं सा सात मेलने ननु मूल तो नास्ये दुभावं जथा
वैश्वानरं जलं ॥ ३ ॥ या को अ ये हसं सारं मेलौ कि कहु
संग हें सो जल को पात्र विना सा सात भगवद्भाव रूप
अग्नि में नाही डार नों जो सा सात डारे जो वैश्वानर जो अ
ग्निको मल ते ना स होय जे सें जड भरथ सगरो लौ कि
कछो डि भगवद्भव जन को वन में गये तहां हर नीज
लपी वन आइ सो सिंदु ना दने गर्भ ते व चा गिर सो
भरथ को द्या आइ यही दुःसंग मिल्यो भगवद्भव
न सब भलि गारे एक हिरनी के पीछे तीन जन्म को अ
न राय भयो अ सो दुःसंग बाध कहें तथा श्री नंदराय जी
अपने पुत्र की सेवा करत हुने सो अं विका पूजन गारे
लो श्री रावुरजी न सहिय के तहां सुदर्शन रूपे आय के
नंदराय जी को प्रसखी ऐ तव श्री रावुरजी ने छो डारे
ता तें दुःसंग अन्य संबंध सिद्धि भक्त हें तिन को बाध
कहें जो साधन भक्त को लगे ता में कहा कह नो ता तें
दुःसंग को घट जा न नों जो हमारे सर्व भाव को ना स
ही करे गो पाप्रकार स संग ते र हा करे अवओर एक
हत हें ॥ श्लो ॥ अतः सदैव भेत वलौ कि कासक्ति
तो जने स संग मग्रतः इत्या ना सनीय न चान्धथा
४ या अपी अव श्री हरि राइ जी कहत हें जो लौ
विकासक्ति रूप हें दुःसंग ते सहा डर पत ही रह नों
यह जाने जो जल लौ कि कासक्ति होइ गों तव मे स संग
ग करिले हुगों ता ही समय दुःसंग मिल्यो ता ही स
मय त काल लौ कि कासक्ति होय भगवद्भाव को
ना स ही होय गो ता तें दुःसंग मिले पह ले ही ते स संग
ग की पो करे तव दुःसंग बाध कन करे ता को दृष्टांत

कहत है जो जीवके पीछे काल फिरत है जो पहले ते स
गा भजन करिखे तो पीछे अंत काल समय काल वा
धान करे जो जने अब तो लो किक करिले दु॥ पीछे भ
गवद स्मरण करुंगे ताको काल आवे सो एक स्मरण
खाय जाय तब वा समय कुछ भाव धर्म न बने ते स
ही पहले ते स संग न करे ओं भगवद सेवा स्मरण इक
रो सो जव लोक दुःसंग आवे तब स संग प्रतापते
व च जायगो ओर दूसरो उपाय स संग बिना दुःसंग ते
व चिको ना ही होय हनि श्रय जाननो अब ओर
कहत है ॥ ४ ॥ लोक ॥ सतां परो स संग जात भावो वि
भाव तां न द्वि दुव चो नैव माननीयं सतां व चित ॥
पुयाको श्री ॥ अकृपक हे जो स संग करि दुःस
ग न बाधा करेगो तहां कोई कहें जो स संग तो दोय घ
री बनेगो पाछे सेवा स्मरण लोक वैदिक कार्य
सब कसो चहिये तब दुःसंग ते को न प्रकार बचेगो
या भांति कोई कहें तहां कहत है जो नित नैम करिजे
से भगवद सेवा स्मरण करे ते से ही नित्य नैम करि के स
संग एक घरी दोय घरी बने नित नै ही करे पाछे जव
स संग के परो स में जो जो वार्ता मार्ग को सिद्ध त स संग
ग में भयो होय ताको स्मरण करि अपने धर्म को देखे
जो श्री आचार्य जी श्री गुसाई जी तो या भांति कहें
ओर मे कहा कहत है जो विरोध होय ताके त्याग में
को जो प्रकार कहें सो कारण को मन में करे या भांति स
को जो भगवद धर्म में लगाय राखेंगो सो दुःसंग ते
बेगो जो जो वार्ता भगवदीय के मुख से सुनिरे ता में
अथ दृढ विश्वास करि हवाता की भावना मन में करि
तब मन ठिकाने आवे जे स गाय वरुं ते चरि आवत है
धर आ य उह पे विवेकि चंदन करि सवाह ले त है

प. सर्वेश्वर को संग करि होय ॥ ता समय भगवद् धर्म को प्रव
ण करे ॥ पाछे सत्संग के परोक्ष में अपने इन्द्रिय में मन करि
भावना सो रस को आस्वादन करे ॥ सत्संग ते विरुद्ध वच
न जितने हैं ॥ तिन को विचारि धर्म अधर्म को विचार म
न में राखे ॥ और सत्संग ते विरुद्ध वचन न कहें ॥ जो स
त्संग छूटि जाय ॥ सो न करे कवहुं ॥ अथ चोख कहत है ॥
श्लोक ॥ भिरत स्यापि दुःसंगो जाता हरिण जातिना केवलं
कलि होयाभिः भूता अपि जनाः सुत ॥ हेया ॥ अथ ॥ दु
संग ते मन में भय राखे ॥ अपने काल जानै ॥ काहे नें दुसंग
होय होय तो हरि जो भगवान सो हरि जात रहन है ॥ सो
श्री आचार्य जी महाप्रभु संन्यास निर्णय ग्रंथ में कहें हैं
विषयाक्रान्त देहस्यः भावे सः सर्वथा हरि ॥ न हं दुःसंग
होय करि देह विषया हृत भई ॥ ता देह में भगवद् वासे
निश्चय न होय ॥ ता तें दुःसंग होय महा बाध कहें ॥ और ज
गत में भूत प्राणी जो दें सो सहज ही में होय करि भयो है
काहे नें यह कलिकाल महा कठिन है ॥ अपने मन को
विश्वास न करे ॥ जो में बहुत समझत हो ॥ मेरो इदृजान वै
राग्य है ॥ मेरो मन जो मेरे वसहै ॥ यह न जानै ॥ जो समय दुस
ग मिलेगो ॥ ता समय जानै ॥ वैराग्य विवेक धैर्य एव ॥ ए
में सब जात रहेंगो ॥ ता तें अपने मन को ईद्री को देह को
कलिके दोष रूप ही जानै ॥ और यह जानै ॥ जो सत्संग के
प्रताप ते से बचत है ॥ सो जा समय दुसंग मिलेगो ॥ ता ही
समय में गिरुगो ॥ सो जो ज्ञान मन में जो राखे ॥ यह कलियु
ग नें सगरे प्राणी मात्र की बुद्धि हरि लीनी है ॥ कलिके दोष
सब को लग्यो है ॥ अथ और कहत है ॥ श्लोक ॥ सत्संग
निर्तै निव भवित यं विशेषतः ॥ अथ वा सर्वतो मो नंत
दभावे विधियतां ॥ अथ ॥ अ ॥ सो जो दुसंग हो
य सर्व धर्म को नास करे ॥ तिन ते न्यारोय रह जीवर है ॥

तवही भगवद्भावविशेष होय और उपाय को ईनाही है त
हो को ई कहें जो दुःसंग प्रबल होय अपने वसन होय
अपने घर के पड़ोस में होय तथा कइ जीव का होय तहां
दुःसंग होय अथवा अपने कुटुंब में होय अपने ते उह
दुःसंग निवारन न होय और जीव का तथा घर में रहे
विना तो बने नाही और दुःसंग प्रबल होय तो तहां
कहा करें तहां श्री हरि राजी कहत हैं जो मुख तो यही
हैं जो अपने समुदावते अपने उपाय ते दुःसंग छूटत
होय तो छोड़ाईये अथवा आपछोड़िके और छोरे नि
बोह की रो और जो अपने काहूं भांति दुःसंग छूटे तो
तहां मोन होइ रहिये बोलिगे नाही अहां अपने क
ह्यो न होय तहां अपने मन को भाव भगवद् धर्म की
वातां कवहं न कहिये मन ते मन न्याये राखिये काहे
ते जा को भगवद् धर्म सुनिबे की श्रद्धान होय तिन
के आगे भगवद् धर्म सर्वथान कहिये काहे ते भगव
न में भगवद् धर्म में भेद नाही है एक ही पदार्थ है ता
ने भगवत्त को अति क्रम होत है यह विचार दुःसंग
प्रबल होय तहां वाद न करिये मोन रहिये मन में
रिसरन की भावना करिये श्री आचार्य जी महाप्रभु
जी विवेक धेयो ग्रंथ में कहें हैं दुख हानो तथा पापे
धका साध्य पूरेन अस को वा सुस को वा सर्वथा सर
हरि या भांति हरि सरा की भावना मन में करि वि
चुप होय रहिये ॥ अथ और एक कहत है ॥ लोका
वदत्यन्यथा वा मा मा धार्य वचन जना संस
प्रको वा पितृ संगो दुष्ट संजन ॥ वा या को अप
व को ई कहें जो दुःसंग अथवा विरोध भगवद् धर्म
विन को कहिये तहां श्री हरि राजी कहत हैं जो
वध्व भाचार्य जी के वचन ते सिद्धांत ते अन्यथा

सवैश्वकोसंगकरिहोय ॥ तासमय भगवद्धर्मको अव
 गाकर पाछे सत्संगके परोक्षमें अपने इन्द्रियमें मन करि
 भावना सो रसको आस्वादन करे ॥ सत्संगते विरुद्ध वच
 न जितने हैं ॥ तिनको विचारि धर्म अधर्मको विचार म
 नमें राखे ॥ ओर सत्संगते विरुद्ध वचन न कहें ॥ तसे स
 त्संग छुटि जाय ॥ ऐसे न करे कबहुं ॥ अथ चोख कहत है
 श्लोक ॥ भिरतस्यापि दुःसंगो जाता हरिण जातिना केवलं
 कलिहोयाभिः भूता अपि जनाः सन्त ॥ इत्यादि ॥ ॥ दु
 संगते मनमें भय राखे ॥ अपने काल जानै ॥ काहे ते दुसरा
 दोष होय तो हरि जो भगवान सो हरि जात रहत है सो
 श्री आचार्य जी महाप्रभु संन्यास निर्णय ग्रंथमें कहें हैं
 विषयाक्रान्त देहस्यः भावे सः सर्वथा हरि ॥ जहं दुःसंग
 दोष करि देह विषया हत भई ॥ ता देहमें भगवद्भावे स
 निश्चय न होय ॥ ता ते दुःसंग दोष महाबाध कहें ॥ आ ज
 गतमें भूत प्राणी नो दें सो सहज ही में दोष करि भयो है
 काहे ते यह कलिकाल महाकठिन है ॥ अपने मनको
 विश्वास न करे ॥ नो में बहुत समझत हो ॥ मेरो दृढ ज्ञान वै
 राग्य है ॥ मेरो मन नो मेरे वस है ॥ यह न जानै ॥ जा समय दुस
 र मिलेगो ॥ ता समय जानवै राग विवेक धैर्य एकाग्र
 में सब जात रहैगो ॥ ता ते अपने मनको ईद्री को देहको
 कलिके दोष रूप ही जानै ॥ ओर यह जानै ॥ नो सत्संगके
 प्रताप ते से बचत है ॥ सो जा समय दुसरा मिलेगो ॥ ता ही
 समय में गिरुगो ॥ ऐसे ज्ञान मनमें जो राखे ॥ यह कलियु
 ग नै सगरे प्राणी मात्र की बुद्धि हरि लीनी है ॥ कलिके दोष
 सबको लाग्यो है ॥ अथ चोख कहत है ॥ श्लोक ॥ सत्संग
 नितै निवभवितव्यं विशेषतः ॥ अथवा सर्वतो मो नंत
 दभावे विधिपता ॥ ७ ॥ अथ ॥ ऐसे जो दुसंग दो
 ष सर्वधर्मको नास करे ॥ तिन ते न्यारो यह जीवर है ॥

तवही भगवद्भावविशेष होय और उपाय कोई नाही है त
हो कोई कहें जो दुःसंग प्रबल होय अपने वसन होय
अपने घर के पड़ोस में होय तथा कही वका होय तहां
दुःसंग होय अथवा अपने कुटुंब में होय अपने ने उह
दुःसंग निवारन न होय और जीवका तथा घर में रहे
बिना तो बने नाही और दुःसंग प्रबल होय तो तहां
कहा करें सहं श्री हरि राजी कहत हैं जो मुख तो यही
हैं जो अपने समुहा वने अपने उपाय ते दुःसंग छूटन
होय तो छोड़ाईयों अथवा आप छोड़ि के और नि
बोह की गे और जो अपने का भोगि दुःसंग छूटे तो
तहां मोन होइ रहियें बोलिगे नाही जहां अपने क
द्यो न होय सहं अपने मन को भाव भगवद् धर्म की
वार्ता क्वहन कहिगे उत ते मन न्यारो राखियें काहे
ते जा को भगवद् धर्म सुनिबे की श्रद्धान होय तिन
के आगे भगवद् धर्म सर्वथान कहिगे काहे ते भगव
न में भगवद् धर्म में भेद नाही हो एक ही पदार्थ है ना
ते भाव न को अतिक्रम होत होय हविचार दुःसंग
प्रबल होय तहां वादन करिये मोन रहियें मन में ह
रि सरन की भावना करिये श्री आचार्य जी महाप्रभु
जी विवेक धेयो ग्रंथ में कहें हैं दुख हानो जथा पापे म
धका साध्य पूरनो असको वा सुसको वा सर्वथा सरा
हरि या भांति हरि सरा की भावना मन में करि के
बुप होय रहिये ॥ अव और कहत हो स्तोका
वदत्यन्यथा वाक्मा धार्य वचेना जना संस
प्रको वा पितसंगो दुष्ट संजन ॥ दाया को श्रु
वकोई कहें जो दुःसंग अथवा विरोध भगवद् धर्म
बिना को कहिये नहां श्री हरि राजी कहत हैं जो
ब्रह्म भाचार्य जी के वचन ते सिद्धत ते अन्यथा व

न कहें ताके वचन अन्यथा गूढ़े जानने श्री आचार्यजी
ने विरोध धर्म में बोध के चलावे अन्य मार्ग की रीति
कहें तिन को दुष्ट करि दें मन में जानें जो या के वचन
मानते मेरो सर्व धर्म को ना स होय जाय गो ताते अ
न्य मार्ग की पक्षे पास न वेठिये अन्य संबंध होय जाय
अन्य मार्ग को धर्म न युनिये अन्य मार्ग की क्रिया कछु
न करिये सो गो विंद दुबे की वार्ता में प्रसिद्धि है एक सम
य गो विंद दुबे मीरावाई के घर गारे तहां मीरावाई ने आ
हरसन मान करि गो विंद दुबे को राखे सो मीरावाई भग
वत्स भक्त हुनी परंतु श्री आचार्यजी के पुष्टि मार्ग में न हु
ती मर्यादा मार्ग में हुनी सो यह बात श्री गुसाईजी ने
सुनी जो गो विंद दुबे मीरावाई के घर हैं तब श्री गुसाई
जी एक लोक लिखे भगवत्पद पर राग पुष्यो न हियु
क्ति तरंग एण विना इतर त्रय एण गजर जयु तो नहि
सम मय्युर बी कुरुते यह लिखि के एक वृजवासी को दी
ये जो गो विंद दुबे को दी जो सो वृजवासी ने गो विंद दुबे
को दीये सो गो विंद दुबे वाचन ही उठि आये ताते यह
पुष्टि मार्ग है सो श्री सोई श्री गुसाईजी गो विंद दुबे से क
ही सो हाथी की असवारी करि अवगद्धा की असवा
री को मन भयो है सो भाव राखि पुष्टि मार्ग ते अन्य
धर्म चलावें ता को एसे जान नों जो दुष्ट संग हैं त को
ल ता को त्याग कर नों ॥ ८ ॥ अब और एक कहत है श्री
यश्वद्वक्षरती नित्य वास्य त्व प्रयो जन निरपेक्ष सा
त्व कर्तव्य सत्तंग साध संजनि ॥ ९ ॥ या को श्री उप कहें
जो अन्य मार्ग को संग न करें तहां कोई कहें जो कि
न को संग करें तहां कहत है जो एक श्री ब्रह्मपलात्म
क भावात्मा कवृजपति तिन में नित्य प्रतिनौ तन प्रीत
होय और अवतार आदि में न होय सो अनन्य भाव न

तो होय और एक श्री हृषीकेश चरणारविंद की भक्ति
अर्पेय ही बोध करे और इह यमैय ही नासना रहे जो श्री
हृषीकेश चरण कमल में प्रीति ही होय और इह सरो प्रयो
जन मन में न होय निरपेक्ष होय का हकी अर्पेक्षान रा
खें यह मन में जाने जो एक श्री हृषीकेश ही सर्व कर्ता है और
रकोऊ ना ही का हकी भगवद्धर्म दिखाय अपनी प्रति
ष्ठा अर्थ लोभ अर्थ भगवद्धर्म न करत होय और सा
त्वक होय अलंकृत काम क्रोध मद मद्य रता इह
यमें न होय तको संग करे अर्थ सोधर्म न हं दे खें सो भ
गवद्दीय को संग करे श्लोक ॥ एवं निश्चित्य सर्व युद्ध
यष्ट्वेषु वा मुनः ॥ महत्कुल प्रसतेषु कतेव्यः संगति
लेयः ॥ १४ ॥ या को अर्थ ॥ सर्व और ते निश्चित होय लो
किते वैदिक और देह संबंधी अनेक उपाधि ग्रह को ज
ते मन करि निश्चित होय भगवद्परायण होय एतन्मा
रगीय पुष्टि मा रगीय वैष्णव को अपनो जाने जो श्री
चार्य जी के सरण हं और हं महं श्री आचार्य जी के सर
ण हं ये वैष्णव हं मा रं संबंधी हं अर्थ सो निहं वैष्णव प
होय ॥ तिन को सत्संग कते बड़े ॥ अन्य मा रगीय जो ज
वह तिन सो जा को प्रयोजन न होय महत्कुल उतास
ल में जन्म होय सो सा सात बह्वं भवुल मये सग
ने एक श्री हृषीकेश की सेवा एक श्री हृषीकेश को अ
इने ही को सत्संग मन च न क्रिया करि के कते बड़े
अर्थ श्री आचार्य जी के चंगी हत पुष्टि मा रगीय ना
बदन मया दा सेवा श्री हृषीकेश में जा की रति होय
भगवद्दीय को निश्चय ही सत्संग कते बड़े ॥ १५ ॥
इह हं न हो श्लोक ॥ श्री महाचार्य चरणो मति स
यते स्वतः तत एक व कीयानां सिद्ध कार्य स
रया को अर्थ ॥ श्री आचार्य जी के च

३
प्राणातद्रूपकरसखास्यहोयमनवचनकरि
श्रीआचार्यजीकेचरणकमलमेंजाकीबुद्धिहैनि
गकरनो जोश्रीखर्वोतमजीकीटीकाश्रीगोबु
जीकरीहैतहोलिखेहैपद्मनाभदाससरीखेन
दीयकोटिकविरला। ऐसेभगवदीयकेइहयमें
चार्यजीमहाप्रभुनित्यविराजमानहैतिनकेसा
सकलकार्यसिद्धहोयभीजोकापराहैताकोस्पर्श
काहीकोसंबंधहोयतोउहंभीजेतेसेहीभगवदीय
कोसत्संगतेभगवदीयहोय। ऐसेसकलीयभावर
यमिलनेवहुतदुखमहै। औसज्जानाई। ऐसेसक
यभगवदीयकोसंगनहोय। तहोतोईकायेदृष्टिदिन
होय। तातेभगवद्सेवासुमनकरिगे। ऐसेभाव
दीयकेमिलिवेकोनापराधिरे। तोश्रीआचार्य
जीहृषाकरिकैनिश्चयमिलानेवतवश्रद्धापूर्वकहैम
होयउनकोसंगमनलगाइकैकरिगे। जववेभगवदीय
प्रसन्नहोय। हृषाकरिपुष्टिमागकोप्रकारलीलाभा
ववतादे। तवसर्वकार्यनिश्चयसिद्धहोय। ताहीतेंश्री
आचार्यजीमहाप्रभुनवरत्नगुंथमेंआपुनिहृषनकी
गहै। निवेदनतुसमर्थसर्वथाताइसेजेनेनिवेदन
कोसाराणताइसीवैलक्योंमिलिवेकरे। तोमाराग
मेंस्फुटहोय। तातेंसत्संगहीअवस्यकर्तव्यहै॥ ११ ॥ अव
औरइकहंतहै॥ श्लोक॥ अवैश्वत्वेनंतर्थातद्विद्वज
अथजीवेयुदोषकथयंतथातासास्यवस्तुयु॥ १२ ॥
सोदृष्टनकहनहैजोयहश्रीआचार्यजीनंपुष्टि
गंगदकीगहै। श्रीगुसांईजीप्रकासकीगहै। सोन
वलीसेनामकहैहै। पुष्टिमागप्रवर्तकायनम। यह
आचार्यजीकेनामहै। पुष्टिमागप्रकासकायनम

यह श्रीगुसांईजीके नाम जो कोई पुष्टिमार्ग की रीतियों विरु
 द्ध आचरण करे तो को अवेक्ष्य व जानिये जो कोई पुष्टिमा
 र्ग की रीति हो ना प्रमान्य न हो ॥ तिन को वैश्य व जानि
 गि काहे ते भुङ्गी धर्मो अशुद्ध क्रिया व नेहे सो जीवनी
 न प्रकार के हे जगत् में हो सो पुष्टि प्रचार मर्यादा ग्रंथ में
 श्री आचार्य जी महा प्रभु के हे ॥ इच्छा मात्रे न मन सा प्रव
 ह सृष्टि वारि ॥ वच सा वेद मार्ग द्वि पुष्टि का येन निश्चयः
 श्री ठाकुर जी इच्छा करि के मन ते सृष्टि प्रगट करी हे सो प्र
 वाही सृष्टि हे वा को मन व व इ भाव दध मे में ना ही ल
 गे ॥ सदा दृष्टा चरण ही करे और वृक्ष न करि के श्री ठाकुर
 जी सृष्टि प्रगट करी हे सो वेद कर्म में लागी मर्यादा धर्म
 मे आसक्त हो और श्री ठाकुर जी अपनी काया ते सृष्टि
 प्रगट करी हे सो वेद कर्म में लागी सो पुष्टि जीव हे उन में
 भाव दसे वाही वने या प्रकार तीन प्रकार के जीव हे तो
 ता ते जो जीव दोष करि के भयो हे प्रवाही हे ते से ही
 दृष्टा चरण करत हे ता को अवेक्ष्य व ही जान नो ॥ १२ ॥
 व और दूक दन हे ॥ श्लोक ॥ श्री हृक्ष श्री महाचार्य
 तथा श्री विठ्ठलेश्वर ॥ तथा लीलासामग्री नैन त्सा
 म्प कदा चन ॥ १३ ॥ या को अर्थ ॥ अव श्री हरि राज्ञी पु
 ष्टि मार्गीय जीव न को सिद्धा करत हे जो यह भाव अह
 नि स मन में राखियो ॥ अलौकिक पदार्थ में लौकिक व
 द्वि आये तो वा को सर्व स्वना सहोय सो कहन हे एक
 श्री हृक्ष और श्री वक्ष भावाय जी और श्री विठ्ठल नाथ
 जी तथा लीलासामग्री मे व ज भक्त आदि श्री आचा
 र्य जी के पुष्टि मार्ग में सेवा सामग्री सब अलौकिक ज्ञा
 न नी ॥ श्री हृक्ष सातान फलात्मक भावात्मक सात्मा
 क श्री य सो दो त्संगाला लित स्वो ग सुंदर ज भक्त
 सर्व स्वजीवन धन ॥ सोई श्री हृक्ष अपने देवी जीवन के

य. उद्धारार्थ श्री आचार्य जी महाराज प्रभु जी को रूप प्रगटे लौकिक
अलौकिक गिरूप से अलौकिक मार्ग प्रगट की गे सो ई
श्री आचार्य जी अपनो इसरो रूप श्री गुरु साई जी को ध्यान
करि यह पुष्टि मार्ग को प्रकट की गे जेसे श्री ब्रह्म बना से
ब्रह्म से मगरी ली ला सो मगरी अलौकिक जाननी श्री ब्रह्म
अलौकिक श्री नंदराजी प सो दानी आदि सब अलौ
किक वाक्य ली ला सो मगरी अलौकिक जाननी श्री ब्रह्म
किक सत्य भाव में मगरी गो पीजन में अनेक प्रकार हू
नित्य कुमारि मुख श्री लक्ष्मी जी वृषभांजन श्री
गुरु नाना ईश्वर के पृथक् अनेक सरदी ये सब अलौकिक
श्री गिरिराज चलादि पड पंती वृज भूमि गुल्ल
ता श्री यधी निवृज आदि ये स दली ला सो मगरी आभ
षाणव आदि कस्य अलौकिक तेरे ही यह श्री आच
र्य जी श्री गुरु साई जी के पुष्टि मार्ग में सेवा प्रकार स
दिन के उमर वनिते सेवा के प्रकार सो मगरी आभ
षाणव सिंघार नख डपाट पिछवा निजमंदिम
गो को हाति वारी डोखति वारी सो ईश्वर पान घर फूल
घर साग घर भंडार चौक सेवक कीर्तनी या पचार ग
सारी सेवा संवेधी पदार्थ अलौकिक जानिगे इनको
भावति कप हारथ अलौकिक जानिगे इनको भाव
त्व जानिगे इनमें लौकिक बुद्धि करे तो महा अप्र
धेय या भाव से पुष्टि मार्ग ये सेवा करे यह भोगो
यम नमै राखे सो आगे लोक में कहत है श्री गुरु य
ह्य भाभि पुष्टि मार्ग नदिनै स्थाप्य नै ह्य ननु चादिद
वक्तव्य सो प्रनदि मुख बुजा भाषा को अर्थ अर्थ को
ई पूर्व पद करे जो सेवा सो मगरी पुष्टि मार्ग अलौकिक वता
गे सो पुष्टि मार्ग युक्त सो कहत है विकल्प ग्रंथ में ई का
हू सो पुनी हू पाभांति को ई कहत है श्री हरिराई जी अ

रिक्ते तु मसं कहत है जो यह बो तो अपने चित्त में स्थो
 मन करियो ॥ सदा कव को ईकाल में भक्ति के लो बिक
 मति जानियो ॥ और यह भाव का है के आगे मति कहियो
 तुमारे घंगी हत ना को मुद्द हृदय यह है इन्द्रा श्री श्री
 धार्य जी श्री गुणों ई कि चरण कमल में विस्वास होइ
 तिन सौ मिलि के अलौकिक पदार्थ को विचार कते व्य
 हो ॥ और विमुख जन ना की लो कि वसुधि हो ॥ तिन प्रति
 कव है अलौकिक पदार्थ को तो ये कहियो ॥ तहां को
 कहें जो समुने ना ही ॥ ना के आगे कहिये तो उह जान
 तुम के ध्यान कहियो ना को कारण कहा ॥ या भाति को
 कहें तहां वस्तु है ॥ श्लोक ॥ सांमुख बोधनं नेव जा
 यते वास्य धर्मतः ॥ एकोपि दोष सुद्रुहः सर्वनाश इति धृत्व
 ॥ या को अर्थ ॥ और के आगे अलौकिक प्रकार है सो न
 कहने ॥ या पुष्टि मागे भगवदीय विना अन्य है ॥ तिन
 को कहिये तो अपनो धर्म जाय ॥ और के आगे अवस्था
 कहु कहने को प्रकार संयोग आयवने तो जान वैराग्य
 को प्रकार कहि दीजिये ॥ अलौकिक भाव को प्रकाश
 न करियो ॥ काहे ते अपने हृदय को धर्म बाहिर प्रकाश
 करें तो वास्य धर्म सजात है ॥ हृदय ते प्रभु जान रहे
 ताते मुख्य धर्म है ॥ सो बाह्य प्रकाश सब या हीन करने
 काहे ते एक दोष यह है सो जीव में द्रष्ट है ॥ लौकिक
 बुद्धि अलौकिक में सो यह सब धर्म को निश्चय ही ना स

करन है सो अलौकिक पदार्थ में लौकिक बुद्धि सब
कोई कोटान को हिमें कोई एक की अलौकिक बुद्धि हो
सगरी वस्तु लीला में देखे गो सगरी वस्तु लीला में देखे गो
ता की लौकिक क्रिया कवहन वनेगी ताते यह एक दोष
महा जगत् में निहिरा हो है जो लौकिक बुद्धि अलौकि
क में है तिन को सर्व धर्म को ना सहें कष्ट अनुभव ना ही
हैं या प्रकार पुष्टि मार्ग में हैं तिन को श्री आचार्य जी
की दृष्टि ने भाव उत्पन्न हो या स्वरूपानंद को अनुभव हो
या १५ लोका अस्माभिरेवं लिखिते निरपेक्षे स्वमा
वजा निहेन सबथा चिते धीयतां यदिरोगत ॥ १६ ॥
चपे ॥ अवधी हरि ई जी अपने भाई श्री गोपेश्वर जी
पति तृतीय सिद्धापत्र संपूर्ण करत हैं तामें कहत हैं जे
यह सिद्धापत्र हम तुम को लिखे हैं सो तुम यह मत जानो
तैर्यो जो कहु भाई के संबंध करि के लिखे हैं अथवा कहु
नो प्रसन्न करि के अथवा नाही निरपेक्ष भाव सो लिखे
हैं सो महा प्रभु जी की निधि घर में विराजत हैं सेवा सो
य यति लिखे हैं ताते जो तुमारे चित में रहते वहु
जित नो प्रकार के हैं सो यह चित में निश्चय धार
खिजाप पदार्थ है ॥ काहे के आगे प्रकास क
नो अप पदार्थ नाही ॥ यह मार्ग श्री आचार्य ज
स भुज को है सो भावात्मक गोप्य है ॥ ताते ने ह
ने चित में ये दे भाव को धारन करोगी ॥ क्षति
होत है तब सिद्धापत्र तृतीय तत्त्व का
जो जी हत स ॥ ३ ॥ अब अपर कहै सत्त
संग को त्याग करे ताके अर्थ में भगवान प
भावात्मक श्री द्वैत के से हैं विरुद्ध मार्ग प्रय है

तिनके स्वरूप को जान होय ॥ सो स्वरूप अवधारण सिद्ध ॥
पूर्वक निरूपण कहत है ॥ श्लोक ॥ प्रमोदमोक्षितो प्रोक्त
तथा भागवतोपि च ॥ अप्राप्तता स्वरूपैक निव्यभिक्त ॥
मरूपका ॥ शिवा को श्रद्धा ॥ प्रभु जो श्री हृदय है ॥ तिनके धर्म है
सो श्रुति में सगरो विलास करि कहत है ॥ ओ श्री भाग
वत में प्रभु पर धर्म सब कहत है ॥ सो श्रुतिके श्री भागव
त के होऊ च बन प्रमान जानने ॥ जिनके हृदय में श्रुति
के वचन श्री भागवत के वचन प्रमान नाही है ॥ सो
जीव को असुर मानने ॥ जिनके हृदय में श्रुतिके वच
न श्री भागवत के वचन प्रमान है ॥ तिनको सुख
जीव देवी जानने ॥ सो श्रुति में भागवत के स्वरूप को
प्राप्त कहत है ॥ सो अप्राप्त और प्राप्ति में यह नारतम
है ॥ अप्राप्त न है सो सदा एक सबै बल अने समय त
है ॥ लोकि माय के गुण की प्रवेश नाही है ॥ और प्रा
प्त है ॥ सो माया जन्य है ॥ माया हत गुण को मोक्ष
मर्म छद्म मुख सब लेगे ॥ काल पाय के निष्ठ है
य जाय ॥ यह प्राप्ति जानने ॥ तो ते प्रभु को स्वरूप अप
रूप जानने ॥ अप्राप्त स्वरूप प्रभु को जानने कवु जो नि
धे ॥ जव प्रभु के स्वरूप में और नाम में दृढ नेष्ट होय ॥
शुक्ल के स्वरूप की सिवा करि विनार हो न जाय ॥ श्री
शुक्ल के हर मन विनार हो न जाय ॥ श्री श्री ठाक
जी के नाम श्री ठाकुर जी की लीला संबंधी कीर्तन
ना न हो जाय ॥ सब जानने ॥ जो श्री ठाकुर जी के
रूप में नेष्ट भई श्री ठाकुर जी संबंधी धर्म में सगरी
मने देह लपोर है तव जानिये यह नेष्ट रूप पर
प्रभु की गो ॥ अव और कहत है ॥ श्लोक ॥ कत
स्वरूप त्वसंवाधार त्वमुख्य का ॥ आपद त्ववि
माधर्मोद्या श्रुति रूपित ॥ शिवा को अर्थ ॥ श्री

सि.प.
२६

निर्गोप्रीभागवतप्रभुकोप्रपन्नरूपक्रियाकह
जो श्रीगुरुजी चाहें सोइसको धरि लेइ अथपने
तनके सुखदेनाथ सो श्रीभागवतमें प्रसिद्धि व
हे तनहरनाकुसुमप्रहलादको बोहोत दुखदी
तवप्रभुनसिंहरूपधरि केइ रनाकुसुमो मरि प्रहला
की रक्षा करि लीनी श्रीयसोदाजीको सुखवा लभ
इति नको बाखक होय पलनामें मूलतहें श्रीर
भननको पतिभावहें तो तें उनको रति हो नमानमे
घनहें करत हो एक कालावधि नसर्व नीलकण्ठ
काहे तें सर्वके आधाररूपमुख श्रीहृदय हो कते
कते अन्यथा कते सर्वसामर्थ्ययुक्तहें सगरेयापद
हो सबदोर श्रीहृदय ही की सत्ता हो श्रीरसवतेन्यारे
यही विरहधर्म अथ जो सवमे हो श्रीरसवतेन्यारे या
भाति वेदपुराण श्रुति श्रीभागवत भगवानको रूप
अलौकिक निरूपण कीयोहें सब श्रीरहं कहतहें
लोक ॥ श्रीश्वयंभो धर्तरे गधर्मो भागवते तथा ते
पितृरूप भई लमया सापुहि भई न ॥ श्रया के यर्थ
अब श्रुति श्रीभागवत होय भावको खरूप कह
तहें एक भाव तो ऐश्वर्यता को हो प्रभुको व्याप्य सब
वैद्योधाररूप तो मर्यादा भक्त अथ यजानि भजन क
नहें श्रुति नेतनेत कहतहें ब्रह्मासिव शैयादि
ऐश्वर्य भाव सो भजन करमे हो सो मर्यादा भक्तहें श्री
प्रभु के अंतरंग भक्तहें सो स्नेह भाव सो भजन करत
हें निंदय सो रावज भक्त ये पुहि भक्तहें सो श्रीठाकुर
जी एक ही हें भक्तनके भाव करि न्यारे न्यारे हें सो श्रीभा
गवतमें कहें जव अकूरजी श्रीठाकुरजी को मधुपुरी में
पधराय कै ले गये तहें तो को जे सो भावहतो ताको ते
ईदरसन भयो वंसको वेर भावहतो ताते का लरूप प्रभुको

देखे जीगीजनपरमतत्त्वदेखे। मथुरास्थभक्तस्त्रीजनपरम
 कोमलप्रकुमारवालकरूपदेखे। जहांजेसोभक्तकोभाव
 तहांश्रीठाकुरजीताहीभावसोंविराजतहैं। मर्यादाभक्त
 श्रेष्ठ्यभावेकरिआराधनकरतहैं। यहजानतहैं। प्रभुको
 भूखप्यासनाही। कोटिब्रह्माडकेकैतोपालनकरोसंघा
 रकरो। तिनकोहमकहादेहिगे। प्रभुहमारीरक्षाकरतहैं।
 यहभावतिनकैसोंप्रभुकछुमागतनाही। औरपुष्टिम
 तहैं। तंदयसोदाष्टजभक्तआदिइनकोस्नेहभावहैं। जो
 मखटाणमेंभूखेहोइगे। सीतउझलागतहैं। तहांश्रीठा
 कुरजीमागिकेशंगीकरकरतहैं। सोश्रीभागवतमेंप्र
 सिद्धहीनिरूपणहैं। ईश्वर्यभावमेंमर्यादारीतहैं। स्नेहभा
 वमेंपुष्टीरितिहैं। याभांतिस्वरूपमेंदृष्ट्येन्योन्यारसकों
 अनुभवहैं। सोहोजमार्गप्रसिद्धिहैं। श्रद्धावशोरस्कहन
 हैं। श्लोक॥ सर्वेपिविभिद्यन्तेइतिश्रीमप्रभोवच॥ अत
 पुष्टिमागीयमंतरंगविरोधत॥ ४॥ याकोअर्थसर्वमें
 व्यापीहैं। भगवानसोसास्त्रपुरानश्रीभागवतकहनहैं
 औरश्रीसुबोधनीजीआदिग्रंथमेंश्रीआचार्यजीसहाप्र
 भुहंसर्वव्यापकप्रभुकोंकहेहैं। पानुअंतरंगपुष्टिमागीय
 भक्तनकोभावसर्वोपरहैं। कहैंतोरानीहैं। तथास्योदा
 मागीयभक्तहैं। सोसर्वव्यापकभगवानकोंजीतिभजनक
 रतहैं। तिनकोंस्वरूपजंदकोंअनुभवनाहीहैं। केवलमो
 हकेअधिकारीहैं। औरपुष्टिमागीयभक्तहैं। सोसर्वोप
 रहैं। श्रीठाकुरजीकेअंतरंगीसदासेवाअंगारभोगआ
 दिकरीस्वरूपनंदकोंअनुभवकरतहैं। तिनतेंएकहो
 ए। श्रीठाकुरजीन्यरेनाहीरहतहैं। यहपुष्टिभक्तविरोध
 करिसर्वोपरहैं। ४॥ श्रद्धावशोरस्कहनहैं। श्लोक॥ विरुद्ध
 मोक्षयत्स्वमुखायविचार्यतेः प्रभुः कुमारवासीवृ
 जेमात्रपदावगा॥ पायाकोअर्थ॥ प्रभुकोस्वरूपप्रभुविद

इधर्मोअथहै यहप्रकारभक्तजनकोअवश्यहृदयमेंक
रनावैलक्ष्मीमुखधर्मयहहैजोप्रभुकोविरुद्धधर्मो
यजानेकाहेतैजहांताईप्रभुकीलीलामेंसंभावना
विपरीतिभावनाहोयसोभक्तजीकोनासकैताको
प्रकारकहतहैजोप्रभुकीलीलामेंसंदेहआवेतोदामो
दरलीलामेंकद्विष्टोटीसीप्रभुकीहोयअंगुलकोबी
जसोराजीहामजोरतजायऔरहोयअंगुलहीघ
टेंयाभांतिअसंभावनाहोयहनजानैजोप्रभुविरुद्ध
धर्मोअथहैवाहैसोकरेगोऔरअनेकभांतिकीविपरीति
भावनाउठैजोप्रभुमारदनकेलीगेवोसहनकीयोसा
नाहिलीलामेंहोसंदेहप्रभुकोकरतहैयाभांतिप्रभु
कीलीलामेंहोयबुद्धिआदिसोविपरीतभावनासोयह
असंभावनाऔरविपरीतकवजायजवश्रीठाकुरजी
कोविरुद्धधर्मोअथजानैयहमुखविचारवैलक्ष्मी
कर्तव्यहैप्रभुसमारपाचवरषकेपसमवैसुंदरश्रीराम
राजीमात्तचरणकेअंकमेंविराजतहैऔरप्रभुकोस
वेलीलाकोअनुभवकरावतहैप्रभुकीसगरीलीला
हितहैजानंदरूपहैजैसेप्रभुआनंदरूपहैतेसेहीप्र
भुकीलीलाहैनित्यसोआगेवर्णनकरतहै॥ श्लोक श्री
भागवतनाकोनकोमारंजहतुर्देजेव्याख्यांतचतयैवास
चचार्यैविद्युतावधिदेयातअश्रीभागवतमेंनि
त्यलीलाकहेहैजेकुमारलीलाकृजमेराखिकेपोग
दक्षिणैरनयकीलीलाकरीजेकोमारंजहतुर्देजेइति
वाक्यांतमनुष्यकोबालपनोगरेपीछिकेरिवालप
नोजन्ममेराकोदिनजआवैऔरश्रीठाकुरजीकीसा
रीलीलानित्यहैबालअवस्थामेंकिसैरलीलामें
हैयहविरुद्धधर्मोअथप्रभुकोजाननोताहीतैश्रीभा
गवतमेंश्रीशुकदेवजीकहेजेकुमारलीलाराखेदूसरी

लीलाकीणोयाश्लोककोव्याख्यानश्रीआचार्यजीमहा
प्रभुश्रीसुबोधनीजीनिबंधसप्तार्थविचंचनकरिकीरे
होंकोमारंजहनुवृजो॥ओरनित्यलीलागोरोरसपाह
नकीरेताहीभांतिपुष्टिमार्गमेंश्रीआचार्यजीमहाप्र
भुसेवाप्रगटकीरे॥वरयकेवरसजन्माष्टमीहंनरास
होरीपूतसंदूलीहिडोरासबुनित्यलीलाकोअनु
भवसाक्षात्तहोतहेंयाभावनेवैभवनित्यलीलाको
मेंहजानिस्मरणभजनकरे॥ध्यावचौरदकहतहें
श्लोक॥वृजगवकुमारश्रुकुमारीवाभावइरे॥एका
हससमास्तत्रगृहावित्तःसर्वतावत्॥अथाकोअथ
तातेवृजमेकुमारप्रभुयातेहेंजोकुमारजिसोरहहजा
एअधिकुमारिकापाचपांचवरयकीहोउनकेभावनी
यभावनामेंपांचवस्थकेप्रभुहैंकाहेनरससारमें
यहकहेहेंजोतेसीभावस्त्रीकोहोयतेसोईपतिहोइ
तवरसविशेषहोयतातेकुमारकीभावनीएकव
यकीभावनाप्रभुमेंकरतहैंतातेकुमारीकोप्रभुकुमा
रूपसोंभावकीछिदिकरतहैंओरगुणहवरयकीली
लावृजमेंसदाहैंतामेंबाललीलातेपोगंडकिसोर
सबहीकरतहैंकुमारिकानेंगदभावसोंकात्यायनीको
अर्चनकीरेगदभावनेछिपायकेयातेकीथोंजोहमा
रेभावकोनहराययसोराजीआदिवृजमेंकोऊनजो
नोकाहेनगदभावप्रगटभरेनरसजातरहतहैंजातेस
वसोछिपायकात्यायनीकोअर्चनकुमारिकानेकीरे
ताकरिकेंश्रीठाकुरजीकोअपनेवसकागेकुमारको
गदभावप्रभुजानिचीहरणकरिसवोंगदरसनकरिअ
नोविकदेहसंपादनकरवाणोपाठवस्त्रहंअलोवित्त
करिकेंहीरेवरहानंदीरेजोसरदरितुमेंगसकरितुम
रमनोरथपूरणकरेगोसोरासमेंगुणहवरयकेकुमा

नैकि सोरव्य को धरि के जे सो जे सो म नो अथ कुमारी न को
नो सो सब पूरन की ग या भांति गढ भाव सो का तयानी
नो अरचन करि प्रभु को वस की एकु मारिका ॥ ७ ॥ अब ओ
एक इत है ॥ श्लोक ॥ एतद्गर्व मिश्र रूपे कुमार के वनो ह
र ॥ १ ॥ म प्रपित थे वासि य तो गोप्य कुमारी का ॥ ८ ॥
या को अथ या भांति होय वा कहें ॥ दोय प्रकार को भाव है
श्रुति वाक्य नै अथ य भाव श्री भागवत के वाक्य ते कु
मार सो मिश्रित रूप दोय रूप प्रभु के मो के तल कुमार रूप
हरि कुमारी के भाव करि हरि हैं न द्विपि प्रभु की स्थिति
संग रहे परंतु गोप्य कुमारी के पास ही रूप प्रभु है कुम
रिका के भाव विना रूप प्रभु है तहां ना ही है काहे ते मा
वात्म कर रूप प्रभु पात्र विना ओर ओर रहे ना ही ता
नै भाव रूप पात्र कुमारी का है ता नै कुमारी के पास
भावात्मक प्रभु है ॥ अब ओर एक इत है ॥ श्लोक ॥ एवं
सती रसे रूप रास की लाइ करि रुपि तां ॥ विरुद्ध धर्म प्र
यत्न बोधायै बहियु न्य ते ॥ १ ॥ या को अथ ॥ अब कहें
त है जो ऐसा तमक प्रभु कुमारी के ही पास है सो रासली
ला में वर्णन है ॥ जो वे एव जाय श्री ठाकु जी संग रहे
जमन न को रमण कीयो तव सबन को सो भगमद भये
एक अग्रि कुमारी गुण तीन तीन को मदन भयो ता
श्री ठाकु जी एक गुण तीन कुमारी को ले के पधा
पाछे इन को सो भगमद भयो तव तहां अंतराधान
यउ ह गुण तीन भक्त के रुदय में पधारे जो प्रभु रूप
न होय तो एक दण में दस सी अवस्था भक्तन की
जाय सो नव गुण तीन कुमारी नै वाहर प्रग
भु की न देखे ता ही सम यम द्वा खाये वै गिरी सो
नै दोऊ भुजायो ऊठयो है तव उह भक्त ली ही
रमण प्रेष्ट का सिद्धा सि महा भुज ॥ दास्या स्पष्ट प

सखे दर्शन संनिधि। तुम पास तो हो उठाय मद्रा प्रभुर ता
की नी तो अब दर्शन देहुं। पाछे सगरे भक्त आइ परे पुलिन
में गुन गान गाया पाछे निःसाधन होयर रन की यों तव प्र
भु उन ही के भीतर ते वाहिर प्रगटि जाते कुमारी के पास ही
प्रभु है और सब दोर व्यापक है अथ धर्म का के या भांति वि
द्विध धर्म करि दे मो अथ के बोध की यों। सो वे स्वव को जा
न अथ वस्य जानौ आदियो। दो अथ वं और ह्व हत हो। लो क
इहं हि पुष्टि मा रगीय त देव जाय ते बुद्धि गीत गोविंद दृ
य द्योपेत देव निरूप्यते। एव या को अथान हां को ईक है
जो दु मा रिका पुष्टि मा रगीय है। य ह्व बुद्धि के जान नो
कु मा रिका के धर्म न व आदि। तव जानिये पुष्टि मा रगीय
धर्म आयो। अ सो दुध्न भ पुष्टि मा रग है। जानै यह निस
कु मा रिका के भाव की भावना मन में करनी उन की दास
त्व की गेते कु मा रिका की रूपाने भाव जव इह द्या रुद हो
इगो। तव प्रभु वें अनुभव हो इगो। यह बुद्धि में निश्चय क
रि कु मा रिका के भाव की भावना मन में करिगो। सो श्री अच
र्य की के पुष्टि मा रग में उन ही के भाव की सेवा होय य द्जो
निरीतियों से वा क रिये। श्री आचार्य जी श्री गुसाई जी
के बरण व मल को आ अरु ते वें उन के भाव रूप ही पि
ता पुत्र को जानि रो गीत गोविंद में माना दिक् विह
र जय देव ते कु मा रिका के भाव की स्त्री ला सक जान न
या प्रकार प्रभु कु मा रिका के व स है। या प्रकार स्व ज भ
न संगर स पर व स है। सोर स के ग्रंथ अने कहें नामें
त गोविंद आदि में सब आणे। सो कु मा रिका स्त्री की
या प्रकार मन में जानि भावना करनी। एव अथ वं
कहत हो लो क। अ न्यथा नंद व द नं ताइ से यु न्यते
यं। अतस्तु पुष्टि मा रगीय दिरुद गुण संस्प य। ११ य
अथ। नंद राय जी वें व च न सत्य जानने काहे ते वं

प्र. रिकागोडदेसतेत्यागे नंदरायजी सो कंस के देनाथ
सो विपुष्टि माणी यहती नाते प्रभु की सेवा में लागी
नव नंदरायजी कंस को नाही दीयो कुमारिका की बहु
न सराहना करी पुत्र के सेवार्थ घर में राखे सो श्री नंदराय
जी के वचन बड़े बड़े नाइसी नंदरायजी के स्नेह की सराहना
करत है सो नंदरायजी कुमारिका न की सुगहना करत है
ताने कुमारिका को स्नेह भावन नंदरायजी सो अधिक है तो
ते श्री ठाकुरजी कुमारिका के बस है एसो पुष्टि मार्ग सर्वो
पर है जामे श्री हृदय भावात्म करी न सो सदा विराजत है
सो पुष्टि मार्ग में प्रभु विरुद्ध धर्म श्रय स्वरूप सो विराजत है
श्रव आगे श्लोक में विरुद्ध धर्म श्रय को भाव प्रकास करी
वर्णन करत है ११ श्लोक ॥ समारणीय धर्मो सुते बाध
बाध विवर्तण ॥ बालो रसिक मई न्य स्वयं सो न्य वसः सदा
१२ या को अथ ॥ समार्ग की रीति में मया दामे विरोध है
ओर पुष्टि में विरोध नाही पुष्टि में विलक्षण रीति है सो
कहत है श्री राम चंद्रजी ॥ १३ ॥ नमै धर्म स्थापन की री
ति है नाते ये कपती वृत्त ॥ ओर श्री हृदय भावना में समस्त
वृत्त भक्त गोप भार्य सो रमण धर्म को स्थापन है ओर
एलेक वेह से जहा समार्ग से सास्त्र वर्णन है तेह धर्म
मार्ग में विरोध है काहे ते रस सास्त्र में पर कियामे कहुन
न भाव है सो जहां पर किया समा भयो तेह धर्म स्थाप
न नाही ओर जहां धर्म स्थापन सास्त्र में वर्णन है ते
हा पर श्री कर्मन कस्कि रमण विचार तो दोष है य
हमयो दामार्ग की रीति है ओर पुष्टि मार्ग में श्री ठाकुर
जी विराजत है सो सगरे धर्म को स्थापन करत है ओर
समस्त वृत्त भक्त सो रस सास्त्र रमण करत है यह
विलक्षणता है यह विरुद्ध धर्म श्रय ओर पुष्टि मार्ग
में श्री ठाकुर जी बालक है पलना मूलन है ओर परम

रसिकनके मुकटमणि जारहवयके योइस्यवस्यके
कका लावां छित्त होअपनेवसई कोटानकोटि भांति के
साधनकोई करों ब्रह्मादि सिवादि शेषादि कोटानकोटि
बरसते साधन करने हो कवक वरुन होत हो वेदने न
नेतकहत हो कास्वेवमप्रभुना ही और भक्तनके वसस
होई श्रीयसोदाजी भक्ति करि वार्ध हो वृजभक्तनके स
हा आधीन हो भक्तन कहत हो सोई करत अन्यथा जानत
नाही यह विरुध धर्म श्रिय जाननो अवयोर कहत
हो श्लोक ॥ अभीतः सर्वथाभीतः सोपेही निरपेक्षकः
चतुरोपि महासुधः सर्वज्ञो परोक्षवः ॥ १३ ॥ या अ
धी प्रभुवसे हो अभीत हो भयकरि के रहित हो काहेत
कालके काल हो रंचक भवुटी विलासते कोटानको
टि ब्रह्माडको करे रंच भवुटी दिखसते कोटानकोटि ब्र
ह्माडको करे नासह करे मगर देवता डरपतरहत हो तिन
को भयको लेसना ही हो और भय संयुत हो सो श्री ठाकु
रजी नवमाटी खाई तद्वरी न सो दाजी लवुटी ले दे डरप
वत हो जो माटी को खाई तद्वरी ठाकु रजी डरदारि दे
ने असे तेजल भारिक कहत हो मेयामे माटी नाही खाई
या भांति भक्त सो डरपत हो और वृजभक्तन सो डरपत
हो जो ये अ प्रसन्न होय कवहु मानमति करे असे प्र
भु हो और प्रभु को कोइ वस्तु की अपेक्षाना ही हो अरु
ब्रह्म सारि खो धर हो ले हमी सारि खी रानी को सुम
नित्य भूषण इत्यादि सब अलौकिक पदार्थ तिन
को कहत अपेक्षा हो माया सारि खी दासी सर्व एक हाण
में सिद्धि को असे निरपेक्षी हो और भक्तन की रंचक हो
वस्तु होय तकी लेके की अपेक्षा हो वृजमें य सो दाजी
तथा वृजभक्तन सो नवनीत आदि खिलेना आदि
के लीगे वारकस्त हो और प्रभु चतुरसिरोमनि हो को

विज्ञं साधुमेजो को ईमर्यादा विना चले तिनको हंडत
गणकी प्रिया मन को भाव सब को जानत है श्री भ
क्तन के आगे प्रहसु गंध है बाल कहें भक्त है त है सोई
आरोगत है आपक छु जानत ही नाही श्री सर्व ज
हैं सर्व ठोर आपक है सगरी सता प्रभु की है तिननेत्र
यलोक में कहु हूँ सो नाही भक्तन के आगे आपका वहु
नन नाही दिलत में हार जानत है चंद्रना को ले के खेल
नली ऐह दन करत है अरे विरुद्ध मो श्रय प्रभु है
१३ अथ श्रीरह कहत है श्लोक आचारामो यग
पीनां सर्वदारातिवर्द्धनः पूर्णकामाधिकामातो धरी
नाही न भाषणः १४ या को अर्थ प्रभु सदा आत्मा
मैं अपनी आत्मा में समा है बाहर नाही श्री गोपी
जन के संग नित्य समा करि नित्य नौतन दास की रहि
रत है श्री प्रभु पूर्ण काम है साक्षात् मन मथ के मन मथ
हैं तिनको काम कह दस्तु है सर्व काम ते पूर्ण हैं सा सक
रिति आते हैं तन के मथे तै काम दिह करि द्या दुख हो
य लखी को मे प्रथम आ पुमना दत है दीनता करि हि
त है ईश्वर के ईश्वर त्रिलोकी जित को नमन करत है
सो दीनता को को सो भक्तन सोई न्य करत है जो में तुम
राहें तुम विना मैं श्री को नाही जानत मो पछ पारखे
या भोति अने कहै न के वचन कहत है यह विरुद्ध मो
अथ जाननो १४ अथ श्रीरह कहत है श्लोक स्वप्रका
शोप्य प्रकाशो वहिष्ठोतः स्थितः सदाः अच्युतं त्रः स्वतं
त्रोपि समर्थोपि न तथापि च १५ या को अर्थ प्रभु अ
पनी प्रकास सगरी त्रिलोकी में करे है श्री रज को प्रका
स तेज अभिमान भयो तिनको तत्त्वोत्तना स करि अ
पनी ही प्रकास राखे है श्री भक्तन के आगे अपनी प्रका
स जानत ही नाही भक्त को सोई ही भक्त कहै सोई आप

रं बाहिर स्थित है। सदा सर्व वृज भक्तन के संग अने
लीला करत है। और सर्व प्राणी मात्र के अंतः करन
स्थिति है सदा। और प्रभु सदा स्वतंत्र है मन आवे ते
लीला करत है। अपनी इच्छा ते एक लोह में नास कर
ते हैं। भक्तन के वस है वृज भक्त कहत है। इहां वे ठो न होई
वे ठो है। भक्तन के आगे स्वतंत्र की बात नाही कहत भक्त
के मनो रथानुसार प्रभु का राज करत है। सर्व सामर्थ्य युक्त
प्रभु है। कर्तुं अकर्तुं अल्पथा करतु सर्व सामर्थ्यवान है।
भक्तन के आगे अपने सामर्थ्य करि रहित है। गोद में वृज
भक्त ले मन आवे तहां ले जात है। अपने मनो रथ करत
हैं या भांति प्रभु को खेरूप है। १५। अथ और कहत है
लोक॥ गवंहि पुष्टि मार्गी विरुद्ध स्वगुणालये हृष्ट
हृष्यालु सततं सरां भावयेद्दि। १६। या को अर्थ। अ
व श्री हरि ईजी कहत है। लीया प्रकार विरुद्ध गुण के
घर जों कहत है। नो जाय नाही। ऐसे प्रभु सात्मक भाव
त्मक यह पुष्टि मार्ग में विराजत है। साक्षात् श्री हृष्ट
पलात्मक परम हृष्यालु भक्तन पर सो उपर कहत है। ताते
असे श्री हृष्ट की संतन जो निरंतर अहं निरंतर सारा जे
यो मन क्रमवचन करि सर्व भाव सो सारा रहित है। अथ
ने हृष्ट में सारा की भावना निरंतर राखिये। तव श्री
हृष्ट नो परम उपर है हृष्यालु है। हृष्टा करि हृष्या करे
सो श्री आचार्य जी महा प्रभु नवरत्न ग्रंथ में कहत है
तस्यात्त सद्वात्मना नित्यं श्री हृष्ट सारां समान तथा
विवेक धैर्य श्रय मोक्ष सको वासुसको वासवयास
एंदरि। १७। इत्यादि ठो। और श्री आचार्य जी श्री गुसाई
कहे है। ताते सारा की भावना हृष्ट में वर्तव्य है। अथ
हाको महा मंत्र सर्व सिद्ध कर्ता जानि सारा अष्ट प्र
करिगे सो विज्ञप्त में श्री गुसाई जी कहत है। यदुक्तं त

अहो श्री हृषीकेशः शरणं मया तत एवास्ति नैष्ठिकं तमे हि के
पारलौकिके प्रतिवचनान्नाता तै श्री हृषीकेशोपरमहृषा
लहं तिनकी भावना अपने रहस्य मे मन हू मय चेतन के
रिषरण नैये तो यह निश्चय सिद्ध त है १६ अवश्यांस्क
इत है स्तोत्र असाधनः साधनुवान साधुसाधुषु ए
वा शरण देवति खिलं फलं प्राप्नोत्यसंशय १७ या
अर्थ ॥ अवश्यांस्क इजी कहत है जो कोई जीव में
एक साधन नाही है और कोई जीव अनेक प्रकार के
साधन करत है कोई जीव साधु है परम सुसील है का
म क्रोध मद मछरता रहित है और कोई जीव असोध
है काम क्रोध मद मछरता रहित है अनेक दोष सो भ
हो है और उची जात देवता मनुष्य ब्राह्मण क्षत्री वैश्य
शूद्र चांडाल पर्यंत प्रभु पंछी आदि आखिल कोई
हो है जो श्री गुरु जी की शरण है तिनको निश्चय फ
ल की प्राप्ति होइगी यामें संदेह नाही प्रभु की शरण
यह सर्वोपर धर्म है शरण प्रभु की भयो सो जीव सर्व
धर्म करि चुको और अनेक साधन करत है साधु
द प्रभु की नाही आयो तहां तो ई फल की प्राप्ति नाही
है तातें प्रभु की शरण गऐतें सगरो फल सिद्ध होइगों नि
श्चय यह सिद्ध त भयो अवश्यांस्क कहत है स्तोत्र भ
क्ति मार्ग साधन च फलं शरण मेव हि सर्व धर्म परिता
गे स्वतंत्र चैत् फलं दिनत १८ या अर्थ ॥ अवश्यांस्क
हरिगुरु जी कहत है जो भक्ति मार्ग से साधन है श्री हृषी
की शरण यह साधन फल न्यारी नाही साधन है फल
पहें तति शरण है रह्य फल है सो भगवान गीतो जमि
कहे है सर्व धर्मान् परित्यज्य मामेकं शरणं व्रजेत या श्रो
क पर श्री गुरु साई जी न्यायी टीका स्वतंत्र की रोहे नामे स
रण ही की भावना मुख्य करि निरूपण की रोहे एक श्री

सकौ आश्रय जजीवमें भयों लहो संतरे धर्म सिद्धि भोगे
ति सर्व ते मुख्य फल रूप श्री हस्त कौ आश्रय है यह भाव
तो निश्चय शरण करत बहो या भोति निरुपाण की रे
१८ अथ यो एक हत हो शो का परो से शरण ता जो हा पु
स्व योगतः ह्यो चैता इसाना हित हो न दास्क भवेत्
हृदया के यो श्री हस्ता अवतार दिसा में प्रसिद्धि स
रण सिद्धि होय श्री आचार्य जी के परो ह में श्री आच
र्य जी द्वारा सरण सिद्धि होय श्री आचार्य जी के ग्रंथ
वचनामृत द्वारा सरण होय तथा श्री हस्त के प्राण
दिसा में तो प्रसिद्धि सरण होय परो ह दिसा में म
हापुरुष भगवदीय सौ मिलि के सरण दो विचार के
हो तो यह पुष्टि माग की रीति है सेवा सम्यसा हान स
रण अने सा में भगवदीय सौ मिलि के सरण की भा
वना करे काहे तो ता इसी भाव दीय की कृपा ते तो ही
भगवदीय द्वारा सरण सिद्ध होय या में संयोग विप्रयोग
हो उपकार कौ सरण सिद्ध होत है सेवा में तो संयोग
माग प्रसिद्धि ही है शरण पर सकरत ही है तुलसी
नित्य समर्पत ही है यस्या हान सरण भयो अथ म
करि अंतः करण में सरण भगवदीय सौ मिलि के
वदीय द्वारा होय ॥ अथ यो एक हत हो शो का
यामयितु पारो हत हुतै वचन स्वतः तत्प्रकाश
मार्गे स्थितो भवति सर्वथा ॥ या को यो जप
ह संयोग में साक्षात् प्रसिद्धि सरण सिद्ध होय
वर्ष जी के परो ह में श्री आचार्य जी वचन म
द्वारा सरण सिद्ध होय जो श्री आचार्य जी पुष्टि
प्राप्त की रीति तिन में स्थित होय सर्वथा तव
सिद्धि होय काहे तो श्री हस्त के परो ह में श्री
जी पासाई जी वद्वत्सुल तिन के परो ह में प

ऐतथापुनोजनकरे पोटे तबउनके लचनकी भावना
करे सगरे ग्रंथनकी भावक हे सुने उनके पुष्टिमार्गकी
१। तिमे स्थित होइ के सारा की भावना सर्वथा करते नि
अथ सरण सिद्ध होय ॥ २० ॥ अथ और कहत है लोक
संसारिण सदा दुष्ट संगिना मन्त्र देखत वहि मुखां
मताने कुतो मार्ग स्थिति भवेत् ॥ २१ ॥ याके अर्थ अथ
उपर कहै साक्षात् सारा परी सदि सामें श्री आचार्यजी
द्वारा सरण सिद्ध होय श्री आचार्यजी के परोक्षमें उनके
ग्रंथ वचना मन्त्र द्वारा भगवद्दीय सो मिलि के पुष्टि मार्ग
में स्थिति होय के सारा धि धारि परंतु दुःसंग होय तो स
गरो की योग्य लगामें जात है काहे ते संसारी जीव हैं
सो सदा ते दुष्ट ही होते ते दुष्ट के संग ते निश्चय दुष्टता हो
य ताते संसार मत्त जे जीव हैं निन्कों संग वदना ही
कर्तव्य है तहां कहत है जो वद मुख के से जानिगे लोक
कमें विय याद्विक में ते न मन धन क रित्तर है अष्ट प्र
हर लोकिक आवेश रहे भगवद् धर्म में मन ही न लगे
अभिमान अहंकार मन में घुन रहे ऐसे संसारी जीव
व के हृदय में यह पुष्टि मार्ग कव द स्थिति न होय ऐसे
हर्म मुख होय तो संग करते पुष्टि मार्ग ते नष्ट होइ ता
ते संसारी जीव वद मुख के संग छोडि भगवद् दीय को सं
ग करि सरण की भावना करे ॥ २१ ॥ अथ और कहत है
लोक ॥ तस्य श्री महाचार्य वराण दुःसा अथः सदा
विधेय ते नैव सकल सिद्धि मति ॥ २२ ॥ याके अर्थ जो
कदाचि ब्रह्म भकुल तथा ताइसी भगवद् दीय को संग
न होय और कछु ग्रंथ वार्ता में अभिनिवेसन होय तो
कहा करे तहां कहत है दुःसंग वद मुख को संग छो
डि अपने ते जितनी सेवा वनि आवि सो करे और अ
पने हृदय में श्री आचार्यजी महा प्रभु को आश्रय द

खं श्रीमहाप्रभुजीकेचरणकमलकी भावना मनमें
रे नित्यनेमकरि अष्टप्रहर मन लगाइ केवरी ताके
कलमनोरथ सिद्धि निश्चय होइ सो कहें तो श्री आचार्य
जीमहाप्रभु अलौकिक अग्रिदृष्टि योजो बेशवमहा
भुजीके सरण आयके श्री आचार्यजीके चरणकमल
को सदा मन लगाइ के आप्रयसिथलन करे कहें भाग
वदीयके संगते आप्रयवेगि सिद्धि वाही होत यह जानि
के सिथलन होय जो भगवदीयको संग हो सो तब ही सि
आप्रय करु गोत्रे में न विचारें भगवदीय कहा जानिये
वत मिले तहां ताई आप्रयकी गेविना दुबुद्धि होय जा
य ताते मन ते आप्रय न छोड़ें या भांति सिथलन होय
जो होनहार हो सो होइगी जे सो देख्यो हैं ते सो होइगी क
हाकरु यह सिथल भाव मनमें न करें जे सेते खें अपने
मनको खेदिके श्री आचार्यजीके चरणकमलमें लगा
वें सो श्री आचार्यजी विवेक धैर्य आप्रय ग्रंथमें वर्णन की
ऐहं आप्रयणापि कर्तव्यं स्वस्यासामर्थ्ये नावनात् इ
ति वेचनात् इंद्री देह तो लौकिक सुख चाहत है भ
गवदसंबंधमें आदिकाल ते सिथल दी है ताते मन
को सिथल करियो भगवदधर्म ते तहां इंद्री देह तो यह
चाहत है ताते जद्यपि असुर दे इंद्री देह ते ऊंच अपने मन
में असुरकी भावना तकरें यह जाने जो यह नेत्रको सु
खधर्म है ही जो प्रभुको दृश्य न करे सो हाथको यह
धर्म है स्वाकरनी जहर श्रवण सो भगवदकथा सुन
नी मुख सो भगवदनाम ले नो देह में बाल सनराख
तत्काल उठे नो भगवदधर्म में यह जान नो आजु मने
सो करि लेहुं कालिक हा जानिये कहा है या भांति
तान वैराग मनको इटाय इंद्री देह को भगवदध
में लगाइ सिथलता मनमें न राखें या भांति श्रीमह

परे तथा आपु नोजन करे पोटे तब उन के तचन की भावना
करे सगरे ग्रंथन को भाव करे पुने उनके पुष्टि मार्ग की
शिति में स्थित होइ के साग की भावना सर्वथा करे तो नि
श्चय सारण सिद्ध होय २० अथ चार हक कहत है लोक
से सारीण सदा दुष्ट संगिना मन्त्र देखत वहि मुखानां
मतान कुतो मार्ग स्थिति भवेत् २१ या के अथ अथ
उपर कहै साक्षात् सारण परोस दिसा में श्री आचार्य जी
द्वारा सारण सिद्धि होय श्री आचार्य जी के परोस में उनके
ग्रंथ वचना मन्त्र द्वारा भगवद्दीय सो मिलि के पुष्टि मार्ग
में स्थिति होय के पारण विधारे परंतु दुःसंग होय तो स
गरो की योग्य कृपा में जात रहे काहे ते संसारी जीव हें
सो सदा ते दुष्ट ही होते ते दुष्ट के संग ते निश्चय दुष्टता हो
य ताते संसार सत जे जीव हें तिन को संग वदना ही
कर्तव्य है तहा कहत है जो वद मुख के से जा निगे लोधि
क से वियया द्विमे तेन मन धन का उन्मत्तर है अष्ट प्र
हर लोचिक आवेश रहे भगवद् धर्म में मन ही न लगे
अभिमान अहंकार मन में घुन रहे ऐसे संसारी जीव
वद हृदय में यह पुष्टि मार्ग कितव स्थिति न होय ऐसे
ह मुख होय तो संग करे तो पुष्टि मार्ग तेन नष्ट होइ ता
ते संसारी जीव वद मुख के संग छोडि भगवद्दीय को सं
ग करि सारण की भावना करे २२ अथ चार हक कहत है
लोक ॥ तद्ये श्री महाचार्य वराण दुःसा अथः सदा
विधेय तेनैव सकल सिद्धि मति २२ या के अथ जो
कदाचि ब्रह्म भकुल तथा तादसी भगवद्दीय को संग
न होय और कछु ग्रंथ वार्ता में अभिनिवेदन होय तो
कहा करे तहा कहत है दुःसंग वद मुख को संग छो
डि अपने ते जितनी सेवा वनि आवि सो करे और अ
पने हृदय में श्री आचार्य जी महा प्रभु को आश्रय द

गखे श्री महाप्रभुजी के चरण कमल की भावना मन में
करे नित्य नेम करि चर प्रहर मन लगाइ के तरे ता के
मकर मन्तर य सिद्धि निश्चय होइ शो काहे नो श्री आच
र्यजी महाप्रभु चरितो कि क अग्रि दपे हो जो वैश्य व महा
प्रभुजी के सरण आय के श्री आचार्यजी के चरण कमल
को सदा मन लगाइ के आश्रय मिलत न करे काहे नो भा
वदीय के संग ते अश्रय वेगि सिद्धि वाही होत यह जानि
के सिथल न हो य जो भाव दीय को संग हो शो तव ही सं
अश्रय करु मो त्वे संत विचार भाव दीय कुहा जानिये
व व मिले त हो ताई आश्रय की गे विना दुखु दि होय जा
य ताते मन ते अश्रय न होइ पा भोति सिथल न होय
जो होत हार हे सो होइ शी जे सो देख्यो हैं ते सो होइ शो क
हा क सुं यह सिथल भाव मन में न करे जे ते से अ पन
मन को खेदिके श्री आचार्यजी विचारण सज सं लगा
वें सो श्री आचार्यजी विवेक धर्य अश्रय ग्रंथ में वर्णन की
ऐहं अश्रयणा पिक जंयं स्वप्ना समस्य भावनात् इ
ति वेचनात् इहो हेनो लौकिक सुख छाहते भ
गवत्संबंध से आदि को लते सिथल दी हे ताते मन
को सिथल करि यो भाव दधम ते त होइ इहो हेनो यद्
वाहते ताते जग पि अमर इहो हेनो जे अ पन मन
से अ सुख की भावना न करे यह जाने जो यह से अ को सु
ख धर्म है यही जो प्रभु को हर मन कुहा होइ अप्य को यही
धर्म है स्वाकरनी जर अ वराय भाव दधम यामु न
नी नुख्यो भाव दधम ते नो दे द मे धान मन ग र्वना
ता काल वद नो भाव दधम सं यह जाने नो अ नुवने
सो करि लेह का लिक हा जानिये व हा है या भोति
ताते वे राग मन का इहा य इहो हेनो भाव दधम
मंलगाइ सिथलता मन मन ग र्व या नो नि श्री महाप्र

[illegible]

श्रृंगीक्षतवैश्वकेन स गह्वरे प्रवृत्तौ रक्षत है स्तो
 का लोके स्वास्थमिति श्री महाचार्य वचनामनात् त
 दीयत्वा मिहा दे जेतो यः कार्यं सुतेन हि २५ या को
 श्री श्री आचार्य जी महाप्रभु नवरत्न ग्रंथ में वच
 नामृत कहें हैं लेखि स्वास्थ तथा विदेह सिद्धि न करि
 ति इति वचनात् अपने जन हैं तिनको भावां न ले
 कि क वैदिक सै स्थिति ना ही करत है त हा छोड़ा या
 क अपने ही आश्रय सिद्धि करत है त व त दीय जो हैं भ
 गव दीय सो स्वामी के इह द्य को अभिप्राय को चिंतन क
 रत है जो लोक वेद कार्य प्रभु ना ही सिद्ध करे सो प्रभु
 भली करी लौकिक सिद्धि हो तो तो में लौकिक कार्य के
 आवेस में प्रभु को भली जानो जो वैदिक कार्य सिद्धि हो
 तो मे वैदिक कार्य के आवेस में प्रभु को भली जानो ता
 ते प्रभु करी सो बहुत भली करी या भांति स्वामी के इह
 य के अभिप्राय को मन में भावना करि स्थितोष करि म
 न प्रसन्न राखें ता को त दीय कहिये २५ प्रवृत्तौ रक्ष
 त है स्तोकात् अतो हिलौ विसलै री ना तरः क्रिय
 तां च चित् वाद्यतस्तु प्रकर्तव्यो धो हा सीन्य प्रसादना
 त २५ या को श्री ॥ अक्षर कहें जो जी हा कर जी लो
 कित वैदिक कार्य न सिद्धि करै त हा भगव दीय मन मे
 से तोष करि लेसन करै प्रसन्न रहे पाहे लौकिक वै
 दिक कार्य न करे तो ग्रहस्था धर्म यह के संचले या भा
 तिको ई संदेह करै त हा कहत है जो लौकिक वैदिक
 कार्य में मन लगायो जानै प्रभु कार्य सिद्धि न करी
 सा भली भई अवलौकिक वैदिक कार्य में मन ना ही रा
 खी गो वने वाहर ऊपर ते लो गान के दिखा
 इवे के लिये कछु रनो लो
 ह्ये वा संवंधी

येते अपने मन को खेच ले यया भांति लोविक में है अ
पने धर्म का कौन जतावे लोविक वेदिक क्रिया लो
गन में जतावे या प्रकार भगवद् आश्रय करे तो प्रभु
प्रयत्न रहे २६ अथ वयो रं कहत है श्लो २६
संग ज चान्य लोविका भित्ति वेशांत सत्संगा भाव जंच
पितया मार्ग स्थिते रपि २७ या २७ लोविक को
आविस करवे असे जो दुःसंगति न को संग दुःख
पजा निरे वा को कष्टो कष्ट न करिये यह भक्त की
टंक है जे से प्रह्लाद जी भगवद् भक्त है सो अपने प्र
भु को स्मरण करे तहा पिता ही प्रतिबंध भयो सो प्रह
्लाद को बोला तही समगयो ते व प्रह्लाद ने न माने
तव उन प्रह्लाद को बहुत दुख दीयो जो त भगवान
को स्मरण प्रति करे तव प्रह्लाद अपने मर नो मार
दुख सह्यो परंतु भगवद् आश्रय न छोडे तव प्रभु प्र
सन्न होय के प्रह्लाद की रक्षा करी हरन्य कस्य प
के मार ते से ही विस्तव को दुःसंग होय सो तो लोकि
क कार्य में लगवे ता को संग दुख रूप जानित्या गर्ह
करे सत्संग करे तो भगवद् धर्म में लगावे ता ही को
सत्संग करे जो कदाचित् संग को अभाव होय न मिले
तो अपने पुष्टि मार्ग की रीति सेवा स्मरण न छोडे दु
संग को दुख रूप जानि सब ते न्यारो वे ठी श्री आचार्य
श्री गुलांड जी को आश्रय मन में दृढ करिके मार्ग की सि
त्ति न छोडे नित्य ने म सो सेवा स्मरण करे यह सिद्ध
की मन मे राखने २७ अथ वयो रं कहत है श्लो २७
तम प्रभु पादा ज्वरूप या सर्वथा मत नदी यानो
संगे न दृणादूरी भविष्यति २८ या २८ अथ २८ त
भु जो श्री आचार्य जी पुष्टि मार्ग य जित ने जीव
रण आ रहे तिन सब न के प्रभु श्री आचार्य जी म

प्रभुं हों ऐसे श्रीमहाप्रभुजी के पद कमल की छपाते
सर्वथा तदीय को संग होय भागवत सेवा स्मरण सब
अनिश्रान्त सुष्ठि मार्ग को सिध्द न इह दृष्टा दुह होय जा
तै श्रीमहाप्रभुजी के चरण कमल की छपाते तादृ
सी भागवदीय को संग होय जातै तादृसी भागवदी
य के संग होय तिन के संग ते श्रीमहाप्रभुजी ए
क हाण दुह रिन रहें सो चोरा सी वानो में प्रसिद्धि
हो जव श्री आचार्य जी महाप्रभु आसुर व्यामोह ली
लाहि खाई कासी में तव एक वैष्णव का सी ते भग
वंत दास वैष्णव के पास आय के सब समाचार क
हो तव भगवान दास ने कही लो को भूत भयो है श्रीमहा
प्रभुजी ऐसे कवहुं न करौ तव उन वैष्णव ने कही में अप
नी आखिन लो देखि के आवत हो तव भगवान दास संदि
ग्धे कि वा डखोलि उह वैष्णव को दरसन कराय आपुने
ठपोथी वाचत हो तव उह वैष्णव के मन को संदेहायो
जाते तादृसी वैष्णव ते श्री आचार्य जी महाप्रभुजी हाण
एक नाराही रहत है ऐसे भगवदीय को संग अवश्य
करौ तव श्री आचार्य जी महाप्रभु इह दृष्ट में पधारै भग
वदीय को संग ऐसे हो ॥ स्वायव चोर है कहत है ॥ हो
काते दुध्ने भइति मनः खिन्नं भवति नित्यदा ॥ पदा प्र
भुः पूर्य पापूर्णः रूपं पिब्यति दैन्यतः ॥ पदाया को अ
थ व श्री हरि गी जी कहत है जो ऐसे भगवदीय चति
दुध्ने भइ मितने में सब ठोए दोग सो को नाही मिलेता
न में मन में दुख खेद को पावत हो सो तो मन में दैन्यता
नाही आवत जो मन में अति दैन्यता आवै त अ श्री आ
चार्य जी महाप्रभु वपा करै ताते मो को भगवदीय को सं
ग नाही यह दुख हो जाते श्री ओर दैन्यता ना
खनौ है काहे ते श्री आचार्य जी की पूर्ण

३५ श्रीभागवदीयकीसंगहोय तेसैंहीजवश्रीआचार्यजी
होप्रभुकीहृपाहोय तवहृपिनवतचतुंतदेन्यता
यजेसैंभागवदीयकेसंगतेप्रभुहृपाकरिरुह्याह
हहोय तेसैंहीअतुंतदेन्यसिद्धिभयेतेप्रभुरुह्यो
आवेप्रसन्नहोय सोश्रीआचार्यजीमहाप्रभुश्री
सुबोधनीमेंकहेहैं नोप्रभुप्रसन्नकरिवेकोएकहै
न्यताहीपरमसाधनहैं सोत्रिविधिनामावलीमें
पंचाध्याईकेप्रसंगपरनामकहेहैं हीनहृपाप्रगति
रूपायनमः सगरेसाधनवृजभक्तकीयों श्रीठाकुरजी
कीलीखाकरीगुनगानकीयों पाछेंनिःसाधनहोय
रहनकीयों तवश्रीठाकुरजीप्रगटभरे तातेदेन्यता
वडोपदार्थहैं जवश्रीआचार्यजीकीपूर्णहृपाहो
य तवदेन्यताआवे अवजाफकारदेन्यताआदिस
वधर्मरुह्यमेंस्थापकहोय सोउपाइछेलेभ्लोकमें
कहनहैं भ्लोक तदाचार्यपदाशक्तानुपस्था
पयिष्यति अस्माकंनुगतिनान्पाश्रीहृल्लःसरां
ममः ३५याके अर्थ अक्कहतेहैं यहजीवजवश्री
आचार्यजीकेचरणकमलमेंमनहमवचनकरि
आसक्तहोय तवदेन्यताआदिसगरेधर्मरुह्यमेंस्था
पनहोय यहसर्वोपरउपायहै औरकोईनाहीकाहे
तैजवजीवश्रीआचार्यजीकीस्मरणआयमनवच
नहमकरिश्रीआचार्यजीकेपदकमलकोआश्रय
कीयों तवश्रीआचार्यजीनोहृपानिधिहैं देवीजीव
नपरहृपाकरनाथ उद्धारार्थप्रगटेहैं सोभक्तिकीसर्व
आगतिकोहरिकरेगे सोश्रीसर्वोत्तमग्रंथमेंश्रीगुसा
ईजीश्रीआचार्यजीकेनामकहेहैं स्मृतिमात्रार्तिना
शनायनमः श्रीआचार्यजीकोस्मरणकरनमात्रही
सर्वआर्तिकोप्रभुहरे तातेश्रीआचार्यजीकीहृपाते

[illegible]

प. जी कहत हैं जो श्री हृषिकेश के दोय स्वरूप है क्रियात्मक भा
वात्मक स्वरूप मथुरा तेव सुदेव जी ले आये सो क्रिया
त्मक स्वरूप और श्रीयसोदा जी के घर प्रगटे सो भावात्म
क सो भावात्मक श्री हृषिकेश की दोय लीला बाल लीला
और कि सो रलीला बाल लीला श्री गोकुल में कि सो
रलीला श्री वृंदावन में तातें बाल लीला के भाव ते
से वाकरें कि सो रलीला के भाव को स्मरण करें सो
श्री गसाई जी कहत हैं श्लोक सदा सर्वोत्तमना सेवो
भगवान् गोधुलेश्वर स्मर्तव्यो गोपिका च देत्री इव
वृंदावने स्थित इत्यादिवचन के अनुसार बाल
लीला श्री नवनीत प्रिया जी के स्वरूप में रासादि
लीला श्री गोवर्द्धन नाथ जी के स्वरूप सो विप्र
योगात्मक स्वरूप श्री स्वामिनी जी के हृदय में रह
त है सो जव श्री स्वामिनी जी के भाव हैं तिनकी भाव
ना करें जो श्री स्वामिनी जी प्रभु को कोन भानि लडा
वत है कोन भानि गुन गान करें तें प्रभु के संग को
न भानि लीला करत है यह भावना करे तो श्री स्वा
मिनी जी हृषिकेश निधि है प्रसन्न होय भाव को दान क
रे तव भावात्मक प्रभु को अनुभव होय ओए पाय
नाही काहे ते श्री हृषिकेश के हृदय देखें श्री स्वामि
नी ही स्थित है और कहु श्री स्वामिनी विना श्री हृ
षिकेश जानत ही नाही तातें श्री स्वामिनी जी को श्री
अयकर श्री स्वामिनी जी विह करत है तिनकी भाव
ना भावात्मक हरिकी करे तव श्री स्वामिनी जी हृषिकेश
हैं प्रसन्न होय तव प्रभु अपना अनुभव जतावें १
अवधे रह कहत है श्लोक अस्माकं सति भागे
न तदाप्यवदिरुद्धता अतस्तीतल नावोस्मिन्मा
र्जनैवोपयुज्यते २ यावत् अ यह विप्रयोग भाव

वाग्निमेरे भाग्यसे तो नाही है। काहे नै यह भावात्मक
अग्नि तो दास्य धर्म है न्यता होय। तिन के रूद्र्य में होय
सो दास्य धर्म अति कठिन मर्याद दुर्लभ है। और देना
ता अति दुर्लभ है। लोक कहत है। श्री स्वामिनी जी को सु
ख चाहै। त्वप नो सुख न चाहै। सो दास्य जिसे पद मना
भदास की वार्ता में है। जो श्री आचार्य जी मरा प्रभु जी भो
जन को पधारता ही सम्यग्यो पारी को दूख गयो हतो।
लो आये। तब पद मना भदास यो पारी को बोलन नाही
दीरे। श्री आचार्य जी को प्रमन करि वेदी रे। अरे सो दास्य
धर्म कठिन है। और देन्य को प्रकारा सपंचा ध्याई में प्र
सिद्धि कहै। अंतर ध्यान समय भगवान ने श्री हस्म की
लीला हकीयो। गुन गांन की यों। तापी छे निःसाधन
देन्यता की यो गता भई। सो मेरे मेदास धर्म नाही है।
और निःसाधन ना देन्यता नाही है। ताते भावाग्नि
ति दुर्लभ है। और यह श्री आचार्य जी को पुष्टि मार्ग है।
ता में तो यह ही रीत है। जो सीतल भाव कब न करे।
जैसे कुंभ न दास जी एक दरसन के विरह में किने दिन
के लगे विनु देखे। या भांति आतुस्ता होय तब पु
माग कि भाव को अनुभव होय। अथ और एक
तह। श्लोक॥ ताप भाव पर देन्य प्रकाश सर्व होय।
देन्य न द्यया दीन बंधुः प्रादुर्भवत्यसौ। अथा
यै॥ अथ का प्रकार देन्यता होय। सो पांय कहै
पहले तो रूद्र्य में ताप होय। जो सगरो जन्म वी
पुष्टि मार्ग में साक्षात् पुरुषोत्तम विराजत है। त
अनुभव कहु न भयो। मेरे मै कहु धर्म नाही।
प्रभु विषय के ताप रूद्र्य में होय। सो ताप सग
एक ओइ रिकरता है। काहे नै अनेक जन के
ना नै मानसिक रूद्र्य में भरि रह्यो है।

क्रोधमदमधरता करि द्रुह्य मलीन जीव को है सो ज
वना पाप्मि प्रगट होय तव सगरे दोष न को ना स होय
तापी छे दैन्यता आवे काहे ते दैन्यता मुख धर्म है सो
सुद्ध द्रुह्य होय तव दैन्यता आवे तव देह की ओर
दिसा होय जाय खान पान देह संबंधी मुख सब छुटि
जाय या भांति द्रुह्य में प्रभु को प्रकाश होय काहे ते
हीन बंधु यह श्री ठाकुर जी को नाम है सो जीव को
दैन्यता होय तव प्रभु को दया आवे सो श्री भाग
वत मै ठोर ठोराने रूपण है दो पक्षी को दैन्य भूयो
तव प्रभु की लाज राखे गजेन्द्र को दैन्यता भई तव
प्रभु पधारि रास पंचाध्याई में भक्तन को दैन्यता जब
भई या भांति इति गोप्य प्रगायं न्य प्रनयं न्य च चि
त्रयाधा रुद्रः सुखं राजन् वृक्ष दर्शन लालसा
या भाव की सिद्ध भई तापी छे तासा मावि भैंछोरि
अथ मान मुखां वुजः पीतां वरधरः स्वर्गी साहा
त्मन्मथ मन्मथः या भांति प्रभु पधारि ताते अभि
मान अहंकार ते प्रभु हरि हैं और दैन्यता प्रगट हो
ता ते दैन्यता होय ता के द्रुह्य में प्रभु प्रगट होय
अपने आनंद को अनुभव सर्वथा करवे प्रथम
ताप होय तापी छे दैन्य होय तह को ई कहें दैन्य
ता को न भोति होय सो उपाय आगे श्लोक में कहत है
३ श्लो त दैन्यं स्यात् स्वामिनीनां तापभाववि
भावनात् तद्वायनं भवेदेव तासां संचरणं अथा
न ध्यायेत् अथ दैन्यता सिद्धि तो श्री स्वा
मिनी जी है श्री स्वामिनी जी जब छपा करै तब ता
पभाव की भावना होय तापभाव की भावना ई
ज भक्तन की रीति सो करनी सेवा के संयोग में न कर
नी सेवा सो पो हो चि अनो सर में यह रीति सो करनी

श्रीश्रपनेमनकीकल्पनासोविप्रयोगकीभाव
नकरनीश्रीस्वामिनीजीकेचरणकमलकोआ
श्रयकरिजाप्रकारश्रीस्वामिनीजीविप्रयोगकीभा
वनकरतहैविणुगीतजुगलगीतमेंभावकोंवरन
तहै। ताभावकीभावनाकरै श्रीस्वामिनीजीकोव
ह्यतापात्रकजनि। याभांतिश्रीस्वामिनीजीकेभा
वकीभावनाकरै श्रीस्वामिनीजीकेचरणको आश्रय
केसंसिद्धिहैस्य सोअगेश्लोकमेंकहतहै। श्लोक॥
तदाश्रयस्यसिद्धिसुतदावापरिनिष्ठयाः तन्निष्ठा
सततंताडक तदीयजनसेवया॥ ५॥ याकोअर्थे। श्री
स्वामिनीजीकेचरणकमलको आश्रययाभांतिकरै
श्रीस्वामिनीजीकेभावसुप्रीआचार्यजीहैं। तातेश्री
आचार्यजीकेचरणकमलहै। सोश्रीस्वामिनीजीकेजा
नने। याभावसोश्रीआचार्यजीकेचरणकमलकोआ
श्रयकरनो। ताकरिभावसुविप्रयोगकोहानहोइ
गो। सोश्रीआचार्यजीकेचरणकमलको आश्रय
कवहोय। जबश्रीआचार्यजीकेवचनामृतश्रीमु
बोधनीजीअदिछोटछोटग्रंथकोभावतामेंनेष्टा
होय। तबश्रीआचार्यजीकेस्वरूपकोज्ञानहोय
तापीछेश्रीआचार्यजीकेचरणकमलमेंभावहोय
तबचरणकमलको आश्रयहोय। सोश्रीआचार्य
जीकेवचनामृतग्रंथमेंनेष्टानस्वहोय। जबपुष्टिना
गीयभागवदीयकीसेवाकरिये। भगवदीयसंपाद
रिकेंजतावै। तबहीज्ञानोजाय। तातेंभगवदीय
कीसेवाआवश्यकहीमनक्रमवचनकरिकतव
है। तिनकीरूपतेंसर्वसिद्धहोइगो। ५॥ अथव्यारह
हनेहै। श्लोक॥ तदीयाहुर्हभोत्रेत्सुः श्रीभागव
सेवना। अथवादैत्यभावनसतैव।

श्रीगणेशाय नमः पर कहै भागवदीय की सेवति सिद्धि होय
सो पुष्टि माणीय भागवदीय अति ही दुर्लभ है सो जे हा
ताई पुष्टि माणीय भागवदीय न मिले तहां ताई नित्य श्री
भागवत श्री सुबोधनी जी को सेवन नित्य नेम करि
कह्यो सुन्यो करे तब भागवदीय मिलेगे तब सगरोभा
व चलावेगे तहां ताई आप ही श्री भागवत वाचें जो
श्री भागवत श्री सुबोधनी जी में अभ्यस्य न होय सा
न न होय तो दैन्य होइ के निरंतर हरि जो भागवान स
र्व दुःख के हर्ता तिन को स्मरण करे निरंतर दैन्य भाव
सो जव हरि को स्मरण जीव करेगो तब श्री हनुमत् जी दु
ख नाही सहिय केगे कृपा करि पुष्टि माणीय भागवदीय
के संग मिली वेगे तिन के संग ते सर्व कार्य सिद्ध होइगे
इ अवशोर हंकहत है श्लोक ॥ अष्टाक्षर महा मंत्रो व
क्तव्यः इति निश्चयः सर्वदा सर्व भावेन तेन सर्व भवि
ष्यति ॥ ७ ॥ पादो अर्थ ॥ अवश्री हरि राजी कहत है जो
जीव तो स्वभाव करि दुष्ट है जो कुछ न वनि आवे तो अष्टा
क्षर को महा मंत्र जानि अष्ट प्रहर श्री हनुमत् सः सराण मम
पद कह्यो करे काहे नै यह श्री आचार्य जी महा प्रभु के
पुराण सास्त्र श्री भागवत में ते सार सनिश्चय करि प्र
गट करि ऐह सो अने देवी जीवन के अर्थ ताते सर्व का
र्य में अष्टाक्षर को जप करे वहु भूले नाही सर्व भाव करि
अष्टाक्षर को जप जो करेगो तिन के सर्व कार्य निश्चय
सिद्ध होइगे ७ ॥ अवशोर हंकहत है श्लोक ॥ अस्माकं
न्यूनतां यासीन्मिलने यहि भूनाहि एतावती हरि
करनः पूर्यिष्यति तामपि यथा ॥ अर्थ ॥ अवशुप
र कहै ताभावात् प्रविप्रयोगात् प्रभु असे दुर्लभ है
ताते जीव अपने को न्यूनता तुष्ट माने या भांति प्रभु
के मिलि वी को जतन करे तब श्री हनुमत् सर्व दुःख के हर्ता

हरिहो सोसगो मनोरथ पूरा करोगे ॥ सो जीवतो स
माद करि दुष्ट ही हो ॥ परंतु अपन पैंको उतम अज्ञान
करि मानत हो ॥ ताहीनि प्रभु अपनो अनुभवना ही न
नावत काहे ते ॥ श्री भागवत में पिंगला सारि खीजा की
महादुष्ट क्रिया सो अपन पैंको तुष्ट मान्यो घाभाति पिं
गल वचन ॥ संसार कूपे पतित विषयें मुखि ते हो ॥
प्रसं कालाहि जाताने को न्यस्तानु महेश्वर ॥ या भो
ति अपनो दोष सुखो ॥ तव नून भाव होय प्रभु की
प्रार्थना करी ॥ तव प्रभु हपा ही करी ॥ ते सी ही पुसखा
की कथा श्री भागवत में कही है ॥ पीछे अपनो दोष
सुखो ॥ श्लोक ॥ पुंश्चल्या पिदूतै चित्तं को न्यो मोह
पितु तमा ॥ आत्मरामेश्वर मते भागवत मधो हजं ॥
या भो अश्रु ॥ ८ ॥ पा प्रकार जव अपनो दोष पुरखा
को सुखो ॥ तव प्रभु हपा करी ॥ शोय हजीवन कथी
आचार्य जी के सरण आयो है ॥ यह तो है न्य मार्ग ही है
या मार्ग में जहां ताई दे न्य न अवे ॥ तहां ताई फल सिद्धि
ना ही है ॥ सो अपन को उतम जाने ॥ तहां ताई दे न्य न आ
वे ॥ ताति अपन को नून तुष्ट जानि के प्रभु के मिलि के को
न न करै ॥ तो प्रभु दुःख को ना सह करै ॥ हसि वंदुख
के हतो ॥ असे श्री कृष्ण सार मनोरथ निश्चय पूरा करे
गे ॥ ९ ॥ अ व अर ह कह न हो ॥ श्लोक ॥ भागवति नैव कर्त
व्य हो भो मनसि सर्वथा ॥ अस्मिन् मार्गे तथेवाति तथे
वपल संनिधौ ॥ १० ॥ अपन को नून तुष्ट जा
ने ॥ अर सो भसहित मन में भाव सो सर्वथा करै ॥ सो श्री
गुसाई जी विरस में कहै है ॥ त्वं दर्शन विहीन सत्य दीय
स्पनु जीवतु ॥ अर्थ मेव यथा नाथ दुर्भाया न वंदय ॥
श्री गुसाई जी कह न हो ॥ जो हे नाथ तु मारे दर्शन विना
जो कोई तु मारे त्वही भो होय जीवत है ॥ सो अर्थ पुछि

मार्गीयवैश्वतुमारैकहाये औरतुमारैदर्शनविना
जो जीवतहै सोइथा जीवतहै वेकडेअभागेहै याभं
तिअपनेकोमहाअभागीसबसाधनकरीहीनमहादु
ष्टजानिमनमेंहोभकरै हानाथअवमेरीकोनदिया
होइगी महाप्रभुजीद्वारातुमारैसनआयोहं सोमेरा
कोधर्मनाही याभंतिनित्यकरै सर्वथवारंबोरबि
हकरिउधउसासलेइ कहैते यहश्रीआचार्यजीम
होप्रभुकेपुष्टिमागमेंजाकेइदयमेंतितनीआतिंति
तनोहीफलसिद्धिजाकोअत्यंतविरहताकोतत्का
लसिद्धिजाकोविरहनाही ताकेफलसिद्धिकीटीज
जाकोथोरोविरहताकोथोरोफल याभंतिविप्रो
गकीजाकोजैसीआतिंतिनकोतैसीफलसिद्धिजे
संरासलीलामेंजैसीजाकोभावनेसोइताकोसदत
वृत्तादिपशुपक्षीवृजभक्तअपनेभावअनुसारअनु
भवतेसैहीपुष्टिमागीयवैश्वकोजैसीआतिंतेसी
हीफलश्रीहरसरसकोएवंधकरावेइ अवओहं
कहतहै लोक यथाकथंचित्कर्तव्योविवहारोहि
लोकिर्तौ अपकीर्तिभयातिनैबुद्धिसैथिल्यसंभवात
१० याकोअर्थ॥ अबश्रीहरिराइजीकहतहै जोवि
प्रयोगआतिंकोस्मरणतवहोय तवलौकिकवै
दिककार्यधुटे सोसंसारमेंदिकेंसबकस्योचाहिरो
जैलौकिकवैदिककार्यधुटेतोलोकमेंलोकमेंअ
पकीर्तिहोय लोगखुरोकहै तवअपनेमनमेंहोभहो
य औधनामसंहारतोबुद्धिअपनेमागमेंसिथ
लहोयजाय तातैलोकनकीअपकीर्तिकीभयने
कछुथोरोसोलौकिकवैदिककार्यकरै जामेंअपनोध
मेंहोप्यरहै मनबोहारादिकुनमेंनखगावै होय
चारघरीकरै यहसिद्धोतभयो १०३ श्रीहरि ३

तीक्ष्ण सिद्ध पत्र ताकी दीक्षा श्रीगोपेश्वर जी हन
से रंग ॥ ५ ॥ अब उपस्कहे ताप भाव मन में राखे विप्र
योग ही मुख्य है यातिजिही होय ते सैं ही पालकों च
नुभव होय। तामें लौकिक लै सबाध दहैं लौकिक दु
ख में या भाति जान राखें तों दुख न होय भाग्य धर्म
हैं सो अव कह न हों ॥ श्लोक ॥ सदा य सो दातनु जो दि
भुजः सुदिव्य ॥ सो जाय स्वधन सत्य ताम
येवं सज ॥ यो को अर्थ ॥ अब श्री हरि राइजी कह न हें
जो संसार दुख लै सकरि मन में रह पावें तो प्रभु वा
ल कहें ॥ श्री यमोदाजी के पुत्र हैं द्विभुज और दंत
छोटे छोटे हैं मुखारविंद में नेला श्रवण हैं ॥ त्रैलोक्य श्री हनु
को स्मरण कर नव हैं ॥ और श्री हनु बड़े हैं जिन को या
येवं स जो स्वते ऊंचोय दुवं स जो चंद्रवं स स्वते श्रेष्ठ
तथा वक्ष भकुल स्वते श्रेष्ठ पृथ्वी परती न कुल श्रेष्ठ प्र
सिद्धि हैं ॥ और अवतार रूप ने कहैं तिन में तीन श्रेष्ठ त्रेता
में दशमयजी के घर श्री राम चंद्रजी तिन को रघुकुल
घापर में श्री हनु सोय दुकुल कलियुग में श्री बाबा
यजी ते वक्ष भकुल ए सब में श्रेष्ठ केवल भक्त अर्थ ही
हैं ॥ तानें हमारो ऊवं स में श्री हनु ही वाल भाव सो सेव
नीय हैं ॥ तहां लौकिक लै स जो मन में कहु होय तो श्री
ठाकुरजी अप्रसन्न होय जाय तो अपनो धर्म जात रहैं
तानें श्री हनु प्रसन्न रहैं ॥ सोई कहै यह ॥ १ ॥ श्लोक ॥ अ
हं भासमाचारा ॥ श्रुता सुविधा यिता ॥ तदर्थ लिखते
किंचित् समाधानाय चेतसः ॥ या को अर्थ ॥ अब श्री
हरि राइजी के छोटे भाई श्री गोपेश्वरजी तिन की वदत ही
गोपेश्वरजी के अनुकूल हती ॥ सो ऊपर वर्णन करे हैं न
ही अर्थ श्री हरि राइजी सिद्ध पत्र लिखे हैं ॥ सो अब श्री
हरि राइजी भाई श्री गोपेश्वरजी को समाधान होय त

सि.प. ४०

भांति लिखत है जो तुमारे ग्रह भंग को समा
ने सो सुनत ही त्रै सो दुख भयो मानो हमारे
बघोरि कै पयो त्रै सो बुरे लाग्यो सो दुःख
खे तुमारे मन मे दुख है तदर्थ हम कछु सास्त्र
न पत्र लिखत है तिन को बाचि कै रुदय मे
कै चित को समाधान करियो काहे ते या समा
तुमारे पास हो ते तो आछों सो भगवद् इच्छा ता
मन मे दुख जित नो भयो सो पत्र मे कह्यो ता
मानो विष ही घोरि दीयो या मे जो निली जो
सुदुःख मे जब अपने पुष्टि मार गीय धर्म को स
होय तब जो नियो जो श्री आचार्य जी की प्रछा
हम समाधान लिखत है जो भगवद् इच्छा को प्र
रनी अपने मूल धर्म रुदय मे प्रभु को क्षणा प्रभु
वे सजा प्रकार मन ते वाहर न जाय सो करत व्यह
त्र वाचि कै चित को समाधान करियो या पत्र मे
क वैदिक कार्य तथा भगवद् धर्म स्वरण न है जा
सो पुष्टि मार गीय है भगवद् इच्छा विचार सो सर्व
न है नाने अपने चित लगाय पत्र वाचि चित को स
धौ न करियो २ श्लो १ सर्वेश्वर सर्वज्ञः द्रष्टा स
रूपः सदा ॥ असंमर्थो ज्ञानभूयो जीव ईत्येव निश्च
रया नो वष ॥ अब भगवद् स्वरूप कहत है और जीव को
स्वरूप कहत है सो या ते जो प्रभु की इच्छा को जीव के से
जाने श्री छल है सो सर्वो पर ईश्वर के ईश्वर है ईश्वरा
कहे नो मन आवे सो इकरे कोई ब्रह्मादिक शिवादिक
इष्टादिक कोई श्री छल की आगा को लखे को सामर्थ
नाही है अनामल के साखे को एक पुत्र के भाव नारा
यन नाम ते निभेय करि दीरे त्रै से सर्व करण सामर्थ है
ताने सर्वेश्वर श्री छल है और त्रै लोच मे सर्व के इष्ट

जानत है तथा कोटान कोटि चंसाड में सर्व डोर गव श्री च
 ह ही सर्व कर्ता है सर्व जानत है इन ते कहुं छिप्यो ना
 ही है और करण वेत हो त्रिसे रंभर हो सो का ह के दुख सु
 ख के से जानत हो इगे सो ना ही परम करण वे निधि है
 अपने भक्त को रंभ कहुं दुख ना ही सहि सकत त्रेसे धर्म श्री
 हृष्ट में हो अवनी वकी स्वरूप कहत हो जीव के सो है अस
 मर्थ है यह जी को कीयो कहुं ना ही ही त है यह अपने
 हृष्ट मानत है सो सगरो अ जानत ही जानत नो अपने प्रभु
 को भूल्यो है सो या करि के सो हित है हृष्ट में तान नृत्त
 है ना तें अपने सो मर्थ जानत है जानना ही है अ ज्ञा
 नी है सो श्री आचार्य जी महा प्रभु बाल दो धर्म कहत है जो
 जीव स्वभाव करि दुष्ट है यह निश्चय है प्रभु गुन निधि है
 जीव दोष निधि है यह निश्चय सन में जानत नो ३ अ व
 और कहुत है सो का त स्पेष्टा त्रिविधा लो के मूल वे
 हृष्ट ने दता कले छया ग्रहीताना जान था करत फ
 ल भुया को च धा और श्री ठा कर जी की इष्टा तीन प्रका
 र की है एक प्रवाही सृष्टि को लो धिक् कार्ये पृष्टि सृष्टि
 को भागवद रूपे वा मयोदा सृष्टि को कर्म सागो स प्रवक्त क
 या भांति प्रभु की इष्टा तीन प्रकार की है १ मूल २ वि
 द ३ ताने यह श्री आचार्य जी महा प्रभु के से वंधी सृ
 छि है सो पृष्टि मागी यह निन को तो निश्चय जग वा
 न की मूल इष्टा है सो इष्ट गव जेव है जो कार्य होय
 सो एक प्रभु ही कीयो वही ज्ञान द्रुट मन्म रंभो च हि
 यै और कर्म मागी यह सो या भांति कहत है जे सो ह
 म करे गो ते सो फल पावै गो वे एक कर्म ही को फल क
 हत है प्रवाही माय करि जानत है जो माया ही सगरो
 कार्य करत है

वेक तो प्रभु हैं या भोति जान्यो वहियै अन्यथा ओर फ
ल को न जाननो तो कर्म करि फल होइ गो कोइ साधन
करि फल की सिद्ध होइगी सो सर्वथा ओर भोति फल के
चिंतन न करनें अवतीन प्रकार की सृष्टि तीन प्रका
की भाव दइछा मानत है सो आगे श्लोक में कहत है
प्रवाह एव नियत ते सुहृत् एव विचारितः मर्ज
दया प्रदीतां सुप्रवर्तयति कर्मणि ॥ ५ ॥ या को अर्थ प्रवा
ही सृष्टि लोक वही विचारण्यो है काहेन प्रवाही सृष्टि
के जीव न्यारे हैं देह न्यारी तेही क्रिया न्यारी है सो पु
ष्टि प्रवाह मर्यादा ग्रंथ में श्री आचार्य जी महा प्रभु को
हैं जीव देह की नाच भिन्न त्वे नित्य परनाशुते इति
वाक्य जानत है प्रवाही सदा भ्रम ही में है भाति मार्ग में
कवह आदेना ही ओर मर्यादा को ग्रहण करत है सो
जीव कर्म में प्रवर्त है काहेन वरन करि प्राप्ति है वच
स विदमार्ग ही इति वाक्य जान या भोति वेद में कहत है आ
इ सुभय जन से यत्न तपदान अनेक साधन सोइ फल
मुख्य वतागे है ग्रह ज्ञान मर्यादा को नाही है जो आष्टि
कर्म करनें स्वर्ग लोक में जात है तहो मुख भोग के जव
पुण्य छीन होत है तब फेर यह संसार में गिरत है प्रभु
की प्राप्ति नाही है सो कर्म मार्गीय स्वर्ग ही को फल जानत
न है या भोति मर्यादा सृष्टि वेद इच्छा मानत है या भोति
प्रवाही ओर मर्यादा सृष्टि को प्रकार कहत है अव पुष्टि स
ष्टि को कहत है सो आगे श्लोक में कहत है ५ श्लो
क स्वप्ने एव तानोतु स्वप्न सर्व करोति हि तद्विज्ञेयं
दिव्या पद पातुः सर्वतो विभुर्गुणायकः अर्थ जो पुष्टि
सृष्टि केवल भाव दइ रूप को आश्रय करो काहेन
भगवद रूप की सेवा य पुष्टि सृष्टि करी है भावान
भगवद रूप से वांछित तत्सृष्टि नान्यथा भवेत् इति वच

नाना ताते पुष्टि स्थिति ह मनमें विचारे जो प्रभु अपने
 रूप चलते स्वतः आपुही करे गो यह चिंताना ही द
 ने यह है ॥ काहे न प्रभु तो सारे व्यापक है ॥ सर्वे तो प्रभु ही है
 तहां चित्ता काहे को करने ॥ श्री हृक्ष ही को की गो स्वर्ग
 रहे न हो ॥ ओर श्री हृक्ष के से है ॥ हृपाल है ॥ अपने भक्त पर
 सदा हृया ही क सं आरे है ॥ ओर हृपा के दिगे या भंति
 प्रभु को चिंतन करने ॥ ओर श्री हृक्ष के से है ॥ बिभु है ॥ सर्व
 सामर्थ युक्त है ॥ काहू को दियो ॥ अर्थ न ही है ॥ त्रस्ता दि
 क सिवा हि क इडा दि देवता है ॥ तिन को भगवान् ईश्वर
 दियो है ॥ ताते देवता फल दीयो चाह तो प्रभु की आण
 ले देत है ॥ स्वतः सामर्थ देवता में ना ही है ॥ ते से श्री हृक्ष ना
 ही है ॥ आपु ही सर्व सामर्थ युक्त है ॥ पौ श्री गुण ई जी वि श
 स में कहै है ॥ कर्तु पुनरन्यथा कर्तु मनुष्या कर्तु मी श्वरे सा
 मर्थ्य न मया दृष्टं त्वेवातो न संशयः ॥ इति वचनात्
 या भंति कर्तु अ कर्तु अन्यथा कर्तु प्रभु सर्व सामर्थ है ना
 ते लो कि क वै दि क क ह ॥ अपने को चिंताना ही कर्तु यह है
 प्रभु आपु ही ते सर्व करे गो प्रभु सर्व सामर्थ युक्त है ॥ अ
 व ॥ ओर कहै न हो ॥ ॥ निवर्तयत्यनिष्टभ्यः स्वकी
 या चरुण निधिः ॥ यहि जीव स्वभावेन निवर्तयन्तते
 स्वतः ॥ सा के अर्थ ॥ ओर श्री हृक्ष अनिष्ट है ना के निव
 र्ते कर्तु है ॥ अपने स्वकीय को अनिष्ट निश्चय इ करे गो
 काहे न करे ना निधि है ॥ त ह को ई पूर्व पक्ष करे गो भाग
 न तो स सद री है ॥ सब प्राणी मात्र पर गद सी दृष्टि है ॥ भ
 गवान् नि विश्व भर सर्व के भस्न पोषण कर्तु है ॥ सो तु म
 कहै अपने स्वकीय पर करुण करे गो ॥ सो ओर पर न क
 री ॥ या भंति को ई संदे करे ॥ त ह कहै न है ॥ गो सारे ज
 गत को प्रभु आनंद दता है ॥ ता में भक्तन को अधि द आ
 नंद दान करत है ॥ सो निरोध लक्ष्मन में श्री आचार्य जी

सिद्ध.

४२

सह प्रभु कहै सर्वानंद मय सपिछ पाने
सर्व को आनंद दाता है छपाने दुख भई
जन ही में है सो श्री भागवत में न कस स्व
दुखी सा प्रतिक है हो लोक ॥ अहं भक्त परा
नैत्र स्वदिन साधु भिन्न हृदयो भक्त भक्त
प्रतिवक्त भक्त भक्त न के व सदे नृणा
नाही भक्त न के अथ अवतार प्रभु के तह न
स्वकीय को अनिष्ट वे गिही हरि करे कसण
यह जीव को स्वभाव है जो रच दुःख लेश में
ही रहत चिंता नुर हो न है सो यह स्वभाव निव
वे भई एक प्रभु ही सत्य है और दूसरो कोई न
७ भव और कह न है सो अनिष्ट मेव सर्व
ला हरि करानिहि इष्टानिष्ट विवेको हि जीव कु
जाय तो दया के अथ भक्त न के अनष्ट को प्रभु ज
है काहे ते प्रभु सब ते है हरि करि मेव लवत है
आप ही हरि करे जो से प्रह्लाद जी को हराण कस
न दुख हीयो सो ही लक्ष्मी जी प्रथम नाही जानत
तो परंतु भक्त न की परी क्षाले नाथ प्रभु प्रथम नाही
दे जव प्रह्लाद जी को बह न दुख ही हिरण्य कस
हीयो और प्रह्लाद को भगवद आश्रय छूट्यो नाही
नव प्रभु प्रगाढ़ होय अनिष्ट हरि करि हिरण्य कस
को सो री न ते दुख लै सम भगवद आश्रय भक्त न की
न छो छो वाहिनी और प्रभु नो छपा करे हीगे सगरे दु
ख हरि करे पांतु जीव बुद्धि ते ईष्ट के नष्ट को विवेक जा
न्यो नाही जानत है जो से भगवद भक्त हो ईष्ट के अन्याश्रय
करत ही लौकिक वैदिक चिंता करत है भगवान ते जो
करत है सो भली ही करत है मेरे भाषतो बह न है सो
प्रभु यो री ही में निवर्त करे सो पर प्रभु अत्र भक्त की

तो यह हृदय भयो पाभांति धीरज जीव बुद्धि तेना ही रहत है तांते
दुख पावत है पत्रव और हृदय ते हो लोक अविद्या या प्र
हीतानां मन नाना भ्रम संभवात अतएव हि संसारं मन्यते
सुख रूपीणां ध्या के अर्थ अत्र जीव प्रभु के स्वरूप को ज्ञा
नि किमैसा मर्थ ना ही है कहि तें अविद्या रूप मूर्त मे और मे
री इत नो ही है ता भ्रम को जीव परिना ही सकत जय पि स
वै जानत है जो कामा क प्रभु सो देह संवंधी पदार्थ सब मो
ते न्यारो देह ए भाग सरीखे काल का हों सो ज्ञाना ही यह
ज्ञान हं मन मे आवत है परंतु तऊ अहंता ममता जीव की
ना ही छूटत है काम क्रोध मद मछाता लौकिक दुख सुख
प ही चिंता प्रसित रहत है तांते संसार को सुख देह संव
धी जो सुख है ता ही के सुख रूप मानि रघो है तऊ प्रभ
संसार ते छोडावे ही गो सो कोन प्रकार सो चापे जो व
मे कहत है ही लोक वास्ना इव कर प्राप्त संसारी ड
चिंता पिते व स हज लिग्ध संनिवर्तयते वला ता १९२
ले अर्थ ॥ जय पि जीव संसार को सुख रूप मानि रघो
नहा प्रभु अयने भक्त जन को या भांति छोडा वन
दुख मे मन होय तो द्रव्य को ना स प्रभु करे जो स्व
न होय तो स्त्री को ना स करे जो पुत्र मे मन होइ तो
को ना स करे या भांति भक्त को मन जहां लौकिक
गो सो प्रभु ईस्करत है तव यह जीव स्वभाव ते
भांति के दुख पावत है परंतु प्रभु देत ना ही है
कि कष्ट तो त कहत है जे मे अज्ञान बाल कह
खंड के ली ए स प को पक खि को दोरत है यह
जल न जीव द काल दे का दि गो

परंतु प्रभु को लेह मत पर है छपा करि संसार ने छोड़ा कने
है। ताते संसार सुख में लागत नही रहित १०॥ अब और
कहत है ॥ स्तोत्र ॥ यथा दूदंति ते वाला भ्राता संसारि
एतथा ॥ अतएव हि स्वैर उद्धरं रमो वक ॥ ११ ॥
॥ अथ ॥ पिता स्नेह करि सर्प ते निवर्त करत है ॥ तव कृपा
रत करे ॥ शान करि रहन करत है ॥ जो मेरो बिलोना लेन
नाही देत ते से ही यह संसारी जीव पर प्रभु अपनी पस
कृपा करी ॥ संसार में मन है ना ही वस्तु को हरिले त है तव
पहम मन में अहंता ममता करि दुख पावत है प्रभु को गु
ण अज्ञान करि के नाही मानत ॥ जो प्रभु कृपा करी संसा
ने छोड़ा यो और प्रभु तो सर्व ज है ॥ श्री हस्म अपने भक्त को
अब न जानि संसार मोचन करत है ॥ जे से पुराण त से
कथा है ॥ जो नारद जी को भक्त व्याह करि वे को भयो सो रा
जा जा की बिटी को स्वयं वर ह्यो ॥ तहां सगरे देस देस के
राजा आए सो नारद के मन में भयो ॥ जो मैं वर ॥ तव नार
द विचार्यो ॥ जो राजा की बिटी जा पर प्रसन्न होय माला
पहरावे ता सो व्याह होइ गों ॥ सो या सम यतो सुंदर स
वहिये ॥ जो राजा की बिटी री ॥ ताते सर्व ते सुंदर भा
गाने ॥ उनको रूप लाऊ ॥ तव नारद जी भावों न पास आ
ये ॥ प्रभु बहुत समो धान की ऐ ॥ पूछे ॥ जो नारद जी कछो
नो मे तुमारा ॥ मेरो भलो हो ॥ ये सो करियो ॥ अपने
पदे ह्यो ॥ राजा की बिटी व्याहिला ॥ तव प्रभु मुसिकाय
में व ह्यो ॥ जो तुमारा भलो होइ गों ॥ सो मैं करूंगों ॥ तुम
उमे दीयो ॥ तव नारद तो मया के भक्त प्रभु के वि
भव चन समुज नाही ॥ तहां स्वयं वर ह्यो ॥ तहां आ
ये ॥ सो श्री ठाकर जी ने मर्कट को वहन वुरा दे दो मुख
दीयो ॥ और नारद जी जाने ॥ जो भगवान को रूप पायो
माधारं वार न ह्यो ॥ उह कंन्या जाय ता सन्मुख आयवे

देसाएलोगहसेजोकहंहेदोमुखकरिचायो सोनए
 रकोजाननाहीकामवसतेपाछेप्रभुराजाकोरूपक
 रिप्रासैभानेमात्तापहराई तवप्रभुलेगारे तवना
 रदनिरासभगे तवाकनेकहीनाहजीअपनोमुख
 तोदेखो सोनारहजीदपनमेमुखदेखो सोबाहरको
 हेदोतवबहुतकोधभगवानपरकीयो जोमेरीहो
 सीजगतमेकराई पाछेप्रभुसमायायो तवजाननाह
 जीकोभयो प्रथमनारहजीतपस्याकरतहते सोकाम
 देवतपस्यामेभंगकरिकोसहायसहितगयो सो
 नारहजीकोमोहनभयो कामदेवहारमोभिकेफिरग
 यो सोअभिमानप्रभुनारहकोयाभोतिइरिबीयो
 याभोतिप्रभुअपनेभक्तनकोसंसारतेबलाकार
 छोडावतहोयेसेश्रीछ्महेरअथवाओरहंकहत
 होलोका इत्येवंहूयतेनामनथाविधमितः प्रभो
 समारवेरीधरनीप्रतिरोयोन्परूपयता ॥ १ ॥ याका
 अथ अथकहतहेजोप्रभुकोरूपहंससोजेछोडाव
 तहे वृजभक्तश्रीछ्मचंद्रकोललितत्रिभंगस्व
 रूपहरेखितोक्तेदपनिपुत्रधरसबमेतेमनछोडि
 केप्रभुकोभजेयेसोरूपहेओरनामकरिकेअनामे
 लवादिअनेकभक्तनकोसंसारछुटेओरविधिजो
 प्रभुकीसेवाकरतहेतिनहकेसर्वसंसारइरिहोत
 हेतथाप्रभुस्तीजाअनेकविधिकीकरतहेताको
 जोकोउस्मरणकरोतिनहकोसकलसंसारदुख
 दारिजायओस्मतिश्रीछ्मकेमनहमेयहरह
 तहेजोभक्तनकोसंसारजायमेरेपासअवेभक्तको
 भलोहोययहीप्रभुविचारतहेतातिधरनीसेषसंवा
 रमेधरनीजोपृथ्वीपतिशेषजभगवानकोनामद
 हेहे

रीहें तहां संसार भक्त न को होय तहां आप सब इहारे
श्री हृक्ष को रूप नाम लीजा आपु मन करि भक्त को
संसार इहारे भलो होय सोई करत है १२ अथ श्री
इह कहत है श्लोक ॥ मन्यारम हे वय भ्राता हृक्ष वि
साति कारणें संसार सुत मंद हृक्ष संकथं स्थापय धरि
: १३ पाये अथ ॥ यह जीव के हृदय में अनेक जन्म को
भूमि है सो गद्य श्लोक में समर्पण में कहै है जो अना
इकाले को भूमय यह जीव के इह गौड़ पर्यटन है ता
ने अविद्या करि के श्री हृक्ष को भक्ति गयो है ताते
यह संसार को ऊम जानिया में मन को लग गयो है
संसार में देह संबंधी सुख दुख को उत्तम मानत है सो
श्री हृक्ष संसार को के संराखे काहे ते हरि है तहो म
ये होय तहां अधिपारी को न भांति है ते में संसार
सार अविद्या रूप तम के सूर्य रूप प्रभु संसार भक्त
न को के संराखे काहे ते जीव तो संसार संबंधी सुख विचा
रत है जो अवयव कार्य करे ता में मरे देह संबंधी कुटुंब
हू सुख पावे ओ में हू सुख पाऊं और प्रभु यह विचारत
है जो अदया में या को मन है सो हरि लेइ तो या में ते मन
छूटि के मेरो आश्रय करे या भांति श्री हृक्ष भक्त न को सं
सार हरत है १३ अथ श्री इह कहत है श्लोक ॥ एवं तदीये
में नय निधेयः स्व प्रभो गुणः स्व स्मिन् विविनिश्रेया
प्रभो रंगी हृक्ष निधुवा १४ पाये अथ ॥ या भांति तदीय
जो पुष्टि मारणी ये भगवदीय है सो अपने मन में प्रभु
के गुण धरे सो ऊपर ते दिखाइ वे के लीगे जो प्रभु के गु
ण धरे सो ऊपर ते दिखाइ वे के लीगे जो प्रभु करत है
सो भली करत है और भीतर ते मन करि दुख पावे अथ
से न करे अपने मन में निश्चय यह धारण करे जो अप
ने अंगीकृत भक्त न के प्रभु रहव ही है कहा भयो

दुख आयो तो अपने स्वकीय को हृदय प्रभु देत है जेसे स्त्री क
सुख को हाते और भाति वस्त्रो तो पति दंड दे देरी तिसो च
लावै तिसे ही प्रभु अपने भक्तन के होय है तिन के हरि
करि वेमें अर्थ दंड देत है सो श्रीगुरु ईनी विज्ञा समें कहै
है लोकर ॥ दंड स्वकीय तो मत्ते ते वंचे ॥ ६ ॥ मे वन ॥ अस्मा
सुखीयतां मत्वा यत्र कुत्र यदा कदा ॥ इति वचनात् अ
पने सुखीय को प्रभु दंड दीयो ॥ सो अत्र नुग्रह हम जानि म
नमें सुखी है ताते जहां जहां हम ते अपराध परे तहां तहां
सुख न हम को दंड दे नो उचित है सा वात में हम मनमें सु
खी है या भाति भाव दीय अपने प्रभु की अनुग्रह जाने
उह दुख दंड अनुग्रह रूप जानि प्रभु के गुण अपने हृदय
में धरो कहै न प्रभु पर दोष धरत है ॥ सो वह मुख है अन
को पुष्टि मार्ग में अंगीकार नाही है ताते निश्चय मन
वचन काय कुरिय हजाने जो श्रीठाकुर जी अंगीकृत
निज भक्तन के रह के है ॥ १४ ॥ अत्र वचन कहत है लो
के अतएवा स्मदाचार्य सत्त वरण लक्षण लोके स्था
स्थित आदि हरि स्तुन करिष्यति ॥ १५ ॥ या को अर्थ अ
वऊपर कहै जो भक्त के रह के प्रभु हो ॥ सो दुख सो देत है
जो भाति भक्त सुख दीय हलोक परलोक में पावे सो
को नाही करत या भाति को इव देत हो कहत है
जो यह जी दुख भाव कुरि दुष्ट है जो लोकि क काय में
सुख पावे तो तहां मन की आसनि नगरे जाय जो
वैदिक कार्य में सुख पावे तो तहां आसन होय जाय तो
हृदय तें प्रभु को आश्रय जात रहै तो भक्ति को ना स
हाय ॥ ताते श्रीठाकुर जी लोकि वैदिक कार्य की सि
करै नाही ॥ तव दुःख पाय के उह कार्य में मन क बंध
करै केवल प्रभु ही को आश्रय करै ॥ सो श्री आचार्य
महा प्रभु चारो वस्त्र के लक्षण श्री सुबोधनी जी ॥

निबंधमें कहें हैं जो कोई जीव हो उं ब्राह्मण
 शूद्र स्त्री आदि प्रभु की सन आर्वा ता को प्रभु
 हने छोड़ाय बंगी कार करत हैं और श्री नवरत्न
 हारि आचार्य जो श्री वल्लभाचार्य जी वर्णन क
 जो लोक वेद में स्थिति प्रभु भक्त न को न करे स
 रने छोड़ाय के अपनो करे यह विवाह हरिको
 अथ करने यह सिद्ध न सर्वोपर १५ इ श्री
 हत सिद्ध पत्र ता की श्री पत्र हत स
 है अथ अपर सिद्धापत्र कहें जो लौकिक वैदिक प्र
 नो सिद्ध करें तो प्रभु को गुण ही मन में धरे जो प्रभु भ
 करत है सो यह धीरे जे कव होय तव भगवदीय से
 गकारि भगवत् स्मरण भजन करे सो प्रकार आगे सि
 द्धापत्र में कहत है ॥ १ ॥ सदा श्री गोकुलाधीशः स
 तेयः सर्वथा जने नदीयैर्मिलिते ॥ सर्वदोष चिंता वि
 वर्जिते ॥ २ ॥ या को अथ पुष्टि माणीय भक्त जो जन है नि
 न को सर्वथा यह धर्म है जो सदा श्री गोकुलाधीश को
 स्मरण करे अथ श्री ठाकुर जी के अनेक नाम है ता में
 श्री गोकुलाधीश को स्मरण को कहें सो या ते जो गो
 नो गायति न के कुल के रस को यह कहिय हज तारे जो
 निःसाधन फलान्तर क गाय जो निःसाधन है तिन के
 प्रभु रस कहें ते सही जीव जव नि साधन होय गोकु
 लाधीश को स्मरण भजन करे तव प्रभु दयाल है
 सो अथ प्रह करे हि गो तो निःसाधन भाव सो भजन
 स्मरण दत्त वने नव तदीय भगवदीय मिलै तव रुह्य
 में अनेक प्रकार के दोष है काम क्रोध मद महर ता लो
 किक वैदिक चिंता अथ हरि होय विना भगवदीय के
 न ग किन नो हं भगवद धर्म करे परंतु मन ते दोष चिंता
 हरि न जाय जैसे रास पंचाध्यासे सब भक्त न को मह

भयो॥ तहां एक मुख्य भक्त को मदन भयो॥ तव श्री ठाकुर
 जी एक भक्त को ले पधारो॥ तव सार भक्त न को अपने मंद
 की खव रिनाही प्रभु पर दोष बुद्धि भई जो हम को छोड
 गये या भांति सगरे भक्त प्रभु को खोस्ति वे को चले पा
 छें एक भक्त को हम मदन भयो॥ तव प्रभु न हाते चतर ध्यान
 भये॥ सा छें दृढ तट स्तन सब भक्त तहां आय पृच्छो जो तु
 मां को श्री ठाकुर जी छोड गये॥ तव उन को अपने दोष
 को जान हतो सो कहो जो मे मस्कीयो॥ ता करि प्रभु च
 तर ध्यान भये यद सुनत ही उन के संग ते सगरे भक्त न के
 जो न भयो॥ अपने दोष पूछो जो हम मस्कीयो मदन भयो॥ तति
 प्रभु छोडि गये॥ या भांति श्री आचार्य जी श्री सुबोध नीजी
 में निरूपण करि दे॥ तति भगवदीय के संग बिना दोष दि
 ता को ना स होय॥ ताते भगवदीय सो मिलि के स्मरण
 प्रभु को करौ॥ सो श्री आचार्य जी मह प्रभु न वर ल ग्रंथ में के
 हे॥ निवेदन तु स्मर्त व्यं स वेया ताइ जो नै इति वचनात
 भगवदीय के संग ते सर्व दोष दिता को ना स होय प्रभु
 वेणी ही रूप करौ॥ पहि दो त मन में जानै॥ अवे ओर
 कहत है॥ लोका न लौकिक मति कायो भगवद्वाच
 बाधिका॥ लौकिक वैदिक चापि स्वयं साधन धिता प्रभु
 मया के अथ॥ लौकिक बुद्धि अलौकिक पदार्थ न क
 रनो भगवद्वाच में बाध कहै प्रभु की लीला में श्री वक्ष
 भक्त में भगवदीय में सेवा सो मयी छुज श्री यमुना जी
 श्री गिराज आदि दृश्यता भाव दवा तो ग्रंथ की न
 न श्री भागवत दृष्टा दिक में लौकिक मति न करनो॥
 सगरी प्रभु से वेधी जा निभय संयुक्त से वा स्मरण करे
 लौकिक बुद्धि आर्दे तो अलौकिक भाव के में बाध क
 रो या ओर लौकिक वैदिक काय की धिता मन में न
 रवे॥

सिप. वैदिक प्रभु आपुही पर्वक स्तिप्रो और वक्ष
४६ लोकि वैदिक वा कश्चिपने भगवदीयसे
जता वत है जो तुमसे भगवदीय की धिंता मति करों
तुमारे अर्थ करत है तुमसे केन प्रभु की सेवा सम
करों जाते प्रभु को कि क आपुही ते सिद्ध करों
और हंक दत है ॥ श्लोक ॥ इस नी मी ह्मना का ल
निवले समो गत यथा कथं विस्वमनस्थाप
यो पहा जयो ॥ अथा ॥ अव श्री हरि राज्ञी क
त है या का तम जो मिलत है सो प्रतिकूल मिलत है क
देने भगवदीय को संग तो दुःख भई सो तो वेगिना ही
लत है और जो मिलत है सो तो कि क की कामना और
हि ध्या स्थली से मिलत है अपर ते मले सत संग मली
क्रिया दीयत है भीतर अनेक प्रकार की लोकि क वा
नौ सना भरी है तिनके संग ते फल सिद्धि न होय और सो
संग यह कालि में मिलत है ताते यथा कथं विजित नो
वने तित नो अपने मन को श्री ठाकुर जी की चरणारवि
हमें लगे प्रभु में प्रीति बढी वे के लीगे बहुत लोग न
सो सिले ता में और भगवद धर्म धर्मे सो न करें जित नो
है तित नो ही की रक्षा करि प्रभु के चरणारवि दमें मन को
स्थापे ॥ अव और हंक दत है ॥ श्लोक ॥ सेवायां च म
नस्थाप्य तन्माधक ने ये वदि गा दे स्थ स्थ विवा हे पि
प्रयत्नः क्रियतां दुर्त ॥ अथा ॥ श्री ठाकुर जी
की सेवा आदि भगवद धर्म में मन को स्थापन करे और
और भगवद धर्म में अपने मन को स्थापन करे और
भगवद सेवा में सगरी वस्तु को संग्रह जानै जो वस्तु
भगवद सेवामें साधक होय ता को राखे जो सेवा
काम न आवे अथवा बाधक होय ता को त्याग
दे यह प्रस्था अमहं भगवद सेवार्थ ही जानै और

विवाहादिकों प्रयत्नभावदसे वार्थ ही करे सो कहने
जो ग्रहस्थाधर्मविनाभावदसे वाभली भांति सो न होय
सो ना ते से नार्थ ही करे सो न वमस्कंध श्री भागवत भगवों से
न दुर्वाया प्रतिकहे हो स्तोत्र का मने वया प्रतीत च सा लो
कादि चतुष्टय ले छति से वया पूर्ण हुते न काल विस्तृत
र इति वचना ता भक्त की भगवदसे वासे प्रतीत हो ते
चतुष्टय मुक्ति हो जे तिन को ना ही चाहत है असे से वा क
रिके पूर्ण है तिन को कारन कह वाधक करे गो धा भां
ति भागवदसे वार्थ ग्रहस्थाधर्म विवाहादिक कार्य स
क करे धात्रा गे अव और हुंकहत हो लोक नम वे त्याय
सो भोगे त्वदीयानां च चिन्मनः तथापि चैव द्योगो नि
वार्थः सर्वे चैव हि शपाया को अर्थे तदीय जन्म से सो अ
पने भोग के लिये स्त्री को न जने भगवदसे वार्थ जने
तथा भोग करे सो काम की निवर्तये तथा पुत्र भगवद
भक्त होय तह कामना करि विष करि धा भांति सगरीर
दीय घर भागवदसे वामे लगवें ॥ आगे अव और हुंक
हत हो स्तोत्र भावोत्र साधन सागे प्रमेय भगवान् हि
सः प्रमाण छरु से वा हो स एव च फल पुनर्दया का
अर्थे यह पुष्टि मार्ग में सगरी सेवा की रीति हो सो साधन
रूप ही सत है पांतु सगरी भाव रूप है काहे न या को कारन
कहो जो फल रूप है साधन रूपादि सो तह संकहत है जो
फल तो प्रमुच्य पने प्रमेय बल दायरा से जे वचो देगे त
व देहि गो यह निश्चय ना ही जो जने दिन में फल होय
ओर जीव स्वभाव करि फल की मन में चोहरहत है ताते
सेवा साधन रूप ही सत है जो सेवा ही को फल रूप जानत
है ता को फल रूप हो ताते श्री कृष्ण की सेवा है सो प्रमान
रूप जने फल रूप जानो प्रमाण जे कोई जानि हृष से
वा करत है तिन को साधन रूप भगवदसे

मेयस्य यद्वा ज्ञानतर्हे जोहमें तो प्रभुसेवा दी ऐह्यो सो प्रभु
प्रमेय वस्तु ते दी ऐह्यो मेरे मेक हा योग्यता है या भोति प्रमे
य फल रूप जानिके भागवदसेवा करत है तिनको फल
पेटे जा भन के ह्य में जे सो भाव है तिनको ते सी प्राप्ति
है हे श्रीगोत्र व श्रीरंक कहत है श्लोक ॥ तस्मात्स एव
संरक्षेन्निधिरूपस्तु सर्वथा एतद्विरुद्धं तत्सर्वं ज्ञात्वा शास्त्रे
निवर्तयेत् ७ या ॥ श्री या भोति श्री फले भाव की रक्षा
सर्व श्रीरते करे प्रभु के स्व रूप की रक्षा सर्व श्रीरते करे का
है ते ऊपर वही श्रीरते जो काल कटि न है रं च दुःसंग
होइ तो अपने प्रभु में ते वा छलता छुटि जय तथा भा
व दसेवा ते दूसरे साधन में मन लागे तो सेवा में स्थि
लता होय जाय तर्हे अपने भाव को निधिरूप जानि ले
कि वैदिक कार्य अपने वदुःसंग ते रक्षा करि लेहि सो
रक्षा को न प्रकार करे सो तर्हा कहत है जो भागवदसेवा
में श्री प्रतिबंध करे तो वाह को त्याग करिये श्री को भा
वन गिनिये त्याग ही करिये श्री जो भागवदसेवा में
माता पिता प्रतिबंध करे या भोति देह संबंधी तथा देस
में राज दिव को प्रतिबंध होय सो ज्ञान करि विचारि वि
चारि छेडे एक बार न करे तो क्रम क्रम सो सब छोडे श्री
पनि भाव की रक्षा करि लेहि श्री पुष्टि मार्ग की सेवा स
र्वोपर जो निये को भाव निधिरूप जानि गोप राखे
या भोति है ता को श्री महा प्रभु जी की छपाने वे गि श्री
नुभव होय ७ इति श्री हरि इ ह स म हा
न की का श्री पे र ह स ए ७ श्री
ऊपर कहै ता प्रकार करि भागवदसेवा करि भाव सहि
त करे परंतु मन में दृढ विश्वास राखे सो तो सर्व सिद्धि
होय सो श्री व श्रीगो कहत है श्लोक ॥ एहि के परलो
के सब सर्व सामर्थ्य संयुक्त स एव गो कुलाधीश चिंतनी

यः सदा इति शिष्या के अथ श्री अवश्री हरि राई जी कहते हैं जो
 गोखुलाधीसकों चपने इदयमें सदा चिंतन करे श्री स्व
 करे तमैय इति ता वाध करे एक तो यह लो कि क कार्य
 मेरो के से सिद्ध होइगो और मेरो लो कि न को न भांति से
 सिद्ध होइगो मे तो भगवद से वावर न हो लो वित्त में निव
 ह के से होइगो और मेरो अलो कि क पर लो व के से सव
 गो यह दोय चिंता है ता को त्याग करे यह ज्ञान मन मेरा
 खें जो प्रभु सर्व सिद्धि करि वे में सामर्थ्य युक्त हैं प्रभु लो
 कि क इति सिद्ध करे काहे तो श्री गोखुलाधीस हैं सो सर्व स
 मर्थ्य चां न हो यह विद्या सद्रु मन में करि सुसरन करे
 सदा निम पूर्व करे और आगे अवश्री कहते हैं लो
 का विश्वास सत्त्र कते बां भस्मे व विधा सति स्व हो या
 देव तत्रापि दे स्य फ ती य तो भवेत अथा के अथ श्री अव
 हत हैं जो इति विश्वास मन में रा हो यह मुख्य विश्वास
 विभाव है काहे तो विश्वास सद्रु होय तो भगवद धर्म यो
 ग इव निचावे तो वा को क त्याग होय और लोग न
 को देया श्वे को भगवद धर्म वहुत करे मन में विश्वा
 न होय तो सो धर्म में फल सिद्धि ना ही है सो श्री आच
 र्य जी मदा प्रभु विवेक धैर्य अग्र्य में के हे हैं ब्रह्म
 चात को भावो प्राप्त से वेति निर्मम जव हनु मान जी
 सीता की सुधि ले न को लंका में गे हो त वरा ससन के
 पाउ जारे अने करा ससन को भारे त व इंद जी त को
 राम न ने पठायो सो इंद जी त ने ब्रह्मा स्त्र चलायो प
 ले तो इंद जी त ने वो होत उपाय कीयो परंतु हनु मां
 जी प करे न जाय त व पाछे इंद जी त ने ब्रह्मा स्त्र च
 य के परि नीत की नी त व हनु मान ब्रह्मा के वचन
 त्य कर नाथ उह ब्रह्मा स्त्र मेव

एसो बलवंतवानर कितने करातु सनको मागे सोय
हसत्र के तागा में के से बाधो या भांति रावन को अवि
स्वास भयो तव ब्रंस्तास्त्र के उपर लोह की सांकर से
बाधो तव ब्रंस्तास्त्र आपु ही छूटि गयो तव हनुमान
जी मोटे भरे सो तव सगरी सा कर दृष्टि गई सो दृष्टि के न्य
री जाय परी पाछे लंक सगरी जरायो अविस्वास ते ब्रंस्ता
स्त्र नष्ट भयो और चात्र के से सो एक स्वाति के तूँह को वि
स्वास राखत है और जल ही पृथ्वी उपर ना ही जानत
ता विस्वास ते धन जड है तो ऊवा को मनोरथ पूरन
करत है ताते वैष्णव को सुखा विस्वास चाहिये को
है ते अविस्वास है सो आसुर धर्म है विस्वास है सो भगव
द धर्म है ताते इष्ट विस्वास है सो ना के इष्ट धर्म होय ताको
सर्व फल प्राप्ति होय कल्याण होय और अपने दोष को
बार बार विचारि अपन पै को दोष रूप जाने दोष की स्फु
र्तिकरि मन में दोष की भावना करे काहे ते अपनो दो
ष है ताको विचारें तो मन में हीनता आवे जो में महां
दोष वंन हो सो पर प्रभु के से दया करेगे या भांति दोष
की स्फुर्ति होय तो प्रभु की परम हृष पा अपने मन में जानि
ये सो भगवदीय गाए है माधो हो पतित न को राजा हो
पतित न को नायक हो पतित न को ईस या भांति अप
न को सवन में दोष जाने न व जानिये तो दोष की स्फु
र्ति भई तव देन्यता होय सो तव प्रभु हृष पा करे २ आ
गे अव ओर कहत है श्लोक आर्ति फल साधन च दज
धि पति संग मे अतः सदा न दान्यै वस्थीयतां तत हृष पायु
ते ३ या को अर्थ आर्ति प्रभु के मिलि वे की है सो साध
न ह आर्ति समान कोई ना ही और फल ह आर्ति हो इष्ट
में आर्ति होय तो भगवद सेवा सु मरन से व होय और
प्रभु हृष पा करे अनुभव करावे ता पाछे ओर दूसरी आर

नीहोयभ्यो ज्यो आर्तिवदेच्यो तो अधिवा अनुभव अधि
क प्रभुहपा करे ताते आर्ति है सो ईश्वर जाधिपतिके संगमक
राश्वेमें कारण हो सदा विप्रयोग आर्तिकरत करत आ
र्ति पदो इजाइ तव प्रभुहपा करे जे ये अग्नि के संबंधते
नवनीत इवी भत होय सो निरोध लक्षण में श्री आ
चार्य जी महा प्रभु कहैं लो रामानान जनान दृष्टा ह
पायु कयदा सवेत तदा सर्व सदानंदं हृदि स्थितिर्गंतव
ह्वि अनिले रासंयुक्त प्रभुजी वको देखे तव हपायु
त होय सो इहय में ते वाहि पधारे सनंद ह्वि ताते
आर्ति ही पुष्टि मार्ग में साधन है आर्ति ही फल है जव
विप्रयोग में तद रूप हो इजाय तव प्रभुहपा करे आ
र्ति अवशोर हु कहैं त हो लोक अन्याश्रयो महानेव
बाधको भीयता तत एत एनेव सचेतो विमुख वे वि
धास्पति ध्याया को अयो अव ऊपर कहैं जे विप्रयो
ग साधन करे आर्ति ही साधन फल हो कहैं त हो अ
न्याश्रय बाधक हो सगरी आर्तिकों दूरि करे सगरी
धर्म अन्याश्रय नो सक सनंद ताते अन्याश्रय ते
सदा डर पतर हनो सो ईरीति सज्जो मे कहैं हो लोक
नान्य देवन मंस्त्या नान्य देव निरीतयने नान्य प्रसा
द माहे नान्य दायन नं वजेता शइत्यादि स्मृति वेव च
न विचारि अन्य देव को देखने हुना ही न मत्कारादि
प्रसाद कछु न लेइ आर अन्य देव को आश्रय करे ता
वद मुख जानिये अपने मन में बाको वे निही त्याग
ही करे अपने भाव की रक्षार्थ काहेते विमुख को ए
क्षण संवंधते दुर बुद्धि उपजे सो श्री गुसाई जी वि
संकेत है लोक अहं कुरंगी दगंभी संगी ना
वृत्तो स्मर्य अन्य संवंध गंधापी कंधामे बाधते
मनह भक्त को अन्य संवंध या भांति वा

हर्म्यजीवकों संग हो द्विअपने भाव की रक्षा करे यह
निश्चय सिद्धांत है ॥ आगे अब और एक कहत है ॥
तदीये सुसदा स्थेये सदा विनैद सर्वथा ॥ न एव भक्ति मार्ग
स्य सहायत्वे निरूपिता ॥ भाषा को अर्थ भगवदीय को सं
ग रहे तो वह हर्म्यजीवता न होय ॥ अन्या अर्थ न होय सुंद
र भाव प्रभु में बढे ॥ तदीय को संग सर्वथा सुद्ध भाव सो करे
यह प्रभु मिलन के अर्थ करे ॥ और एक दु लो किक वैदि
कवाहना न राखे ॥ काहे ते जो यह भक्ति मार्ग में सहायते
भक्ति बढे ॥ प्रभु कृपा करे ॥ ताते तदीय को संग करे ॥ सो श्री
भागवत प्रथम स्कंध में सो न कवा को तुलया मल वेना
पिन स्वर्ग न पुन भवे ॥ भगवत्संगी संग स्प मर्ताना ॥ कि मुता
विषय ॥ भगवदीय को संग एक हाण होइ ॥ ता मुख समा
न र्धर्ग ॥ अथ वर्ग मोहना ही है ॥ ए सो सत्संग है ॥ और
काह सखंध में श्री भगवान उद्धव जी प्रतिकहे है ॥ लोक
निरोध यति सांयोगेन सांख्य धर्म उद्धव ॥ न स्वाध्यायत
पुस्त्या गो नष्टा पूते न दक्षिणा ॥ वृत्तानियतं शृङ्खलसिती
यो नि नियमा यथा ॥ यथा विरुद्ध सत्संग सर्व संग य हो
दिमां ॥ तत्संगेन हि दैत्येयाया तु धानि खगामगा गो
धत्ता सरसो नागा सिद्धाश्चाराण गुह्यकां ॥ ३ ॥ अर्थ
श्री भगवान उद्धव जी प्रतिकहे है ॥ जो मोको सत्संग वस
करन और नाही ॥ योग तथा सांख्य तथा धर्म तप त्याग
वृत्त नियम यज्ञ तीर्थ इत्यादि मोको वसना ही करन
है ॥ और सत्संग के प्रभाव ते दैत्य राक्षस खगामगा गंध
र्व अपक्षि नाग सिद्ध चारण मनुष्य को य होय तत्संगो
ताते सुद्ध भाव सो भगवदीय को संग करे तो पुष्टि मार्ग
में भगवदीय को संग करे तो पुष्टि मार्ग में भगवदीय
को सहायते भक्ति बढे ॥ सो चोरासी वार्ता में प्रसिधव
ए न है ॥ गदाधरदास के आसी नी दत्ते संग ते माधोदा

को भक्ति भई ॥ आगे अब और कहत है ॥ श्लोक ॥ अ
भाव तु तदीयानां प्रसंगोऽपि सुदुर्लभः ॥ चेतोऽपि साधना
भावादिमुखेति एति स्वतः ॥ इत्याको अर्थ ॥ अब श्री हरि
इजी कहत है जो हमको तो तदीय भाव दीय के संग तो
महाई दुर्लभ है ॥ एक साहस भाव दीय ना ही मिलत एक
तो यदुख है ॥ और दूसरे चित करि साधन सुमरा भा
वना कुछ भाव धर्म ना ही वनत है ॥ ताते भाव दीय के
संग को अब कहै ॥ और एक ले चित भाव धर्म मे ना ही
लागत ता करि के स्वर्ग मुख हृदय में होत है ॥ यह दोय उ
पाय है प्रसन्न करि के ॥ एक तो भाव दीय के संग ते प्र
भु मे मन लगै ॥ तथा संगत होइ तो चित अब प्रहर भा
व दली लगे ला गोरे तो प्रभु पावै ॥ भाव दीय के
अभाव होय ॥ और मन करि साधन को अब होय
तहां स्वर्ग मुख ता होइ सो हमको वनी है ॥ अब कहैं क
रें या भांति श्री हरि इजी है न्यता वरन है ॥ जीवन के अ
र्थ ॥ आगे अब और कहत है ॥ श्लोक ॥ ततो हि भग
वदास स्वकार्योऽयं विदेस के ॥ वृजपालोऽपि चलिते
न मे दुःखितं मनः ॥ ७ ॥ आको अर्थ ॥ एक भाव दीय हमारे
पास है तो भाव न द्यास सो अपने कायार्थ विदेस के
गयो ॥ और श्री वृजपाल जी श्री गुसाई जी सो हं पादे सके
गो सो ता करि के मन में दुःख मिटै ॥ मेन के सो हमारे
और न उनको अपने पास राखि सके ॥ ताते स संग विन
मन करि बहुत दुःख पावत है ॥ ७ ॥ आगे अब और कह
त है ॥ श्लोक ॥ मयि यद्यपि नास्ति व किंचित् रूपया
यदि स्तित दीपि स्वीय साधना भाव तो गता ॥ ८ ॥ आको अ
भाव दीय मेरे पास ने पधारे सो मे जानत है ॥ जो मे
से द हो तो तो नु मागे संग और भाव द से ॥ धार ही मे
हैं सो काहे को छुटनी ॥ काहे मेरे हृदय में

पंत्तुन अरु कनु मारी छपा सोवल है जो मो पर प्रसन्न हो मो में
जद्यपि रोहे नाही है मो तै लौकि कवै दिक् कार्य है नाही
वनत ताते ग्रहस्था धर्म के काम ता को अभाव है सो इन
ही वनत सो अव मे सव और ते निः साधन हो आगे अ
व और हुंकहत है स्तोत्र एतादृशे रथे संप्राप्ते सदृशिसरण
मम एहि के परलोके च नै श्रिता तत एव न दीया को
अथ ए सो निः साधन जो मे सो मे हरिसरण एक रहिम
न मे विचार के हरिसरण ही गति मे रहे सो श्री आचा
र्य जी महा प्रभु विवेक धैर्य अय मे कहै है जो मन मे रा
हि आश्रय करे एहि लोके परलोके च सर्वथा शरण
हरि न्यह लौकि कवै दिक् न सिद्धि होइ अथ तो हरिसर
ण सर्वथा को ता करि सर्व सिद्धि होइ गों ता ते मे हरिसरण
करि सर्व और ते निश्चित हो अव प्रभु करि लेहि गो सो
श्री आचार्य जी महा प्रभु सर्व और ते श्री वृक्षाश्रय ग्रंथ
मे कहै है शरण स्थस मुद्रा संवृत्ति विताप्य याम्प हं जो स
रण स्थ भत है तिन को उद्धार प्रभु निश्चय करे सो साधन
वने अथ वान वने सो भगवद् बीता मे कहै है भगवा
न ने सर्व धर्मान परित्यज्य मामेकं सरणं वृजेत अहं वा
सर्व पापे भो मोक्षयिष्यामि मा शुच इति वचनात् इत्या
दि वचन को अभाव जानि हरिसरण ही की है ता
ने या लोक संबंधी कार्य तथा पर जो क के हो अ और ते नि
श्चित हो दी आगे अव और हुंकहत है स्तोत्र कदाचि
निल नै चेत्या तू प्राणो न च भवा दृशा तदा को वेद
चित्त स्या परादति पुनर्भवेत् १० या को अथ अव श्री
हरि राजी कहत है जो हम तो भगवद् दीय के संग विना
ए सो दुख पावत है और जीवन को तो कदाचित्त कवहुं
भगवद् दीय मिलत है तऊ ऊन के भाग्य मे भगवद् हली
ला भगवद् सेवा स्वरूप पुष्टि मार्ग के रस को अनुभव

भापमें नाही लिख्यो है ताते संसारा में दुन जीवन को मन
ही नाही लागत है कोहे तो अवही पुनरागमन बहु
त जन्म संसार में लेनो है बहुत अंतराय है यह कहि के
श्री हरि गइ जीय दजतायो जो पहिले तो संसारा भगवही
पको दुर्ध्व भई तउ कवई भाग्योगते संसारा आइ मिल
त है तव जीव को मन नाही लागत ताते जाके मन सत्
गमन लगे ता को यह जानिये अवही या जीव के भाप
में अनुभव नाही लिख्यो है अवही यह जीव संसार में
बहुत भ्रम गो अनेक जन्म को अंतराय जाननो १०
आगे अवशोर कहत है लोक ॥ बियद्विरय महा
चिंता समुद्र ॥ इदिव ते तो स्थिते पिशिरसि प्राणना
ये चिते विभेदन ॥ पाके अर्थ ॥ अवश्री हरि गइ जीव
हत है जो जीव को स्वभाव तथा जीव की क्रिया देखि के मे
रे मन में चिंता बहुत होत है सो मैं अपने मन की चिंता
कहां ताई लिखो चिंता को समुद्र में रह्य मैं भयो है
यह कहि यह जतारो जो अपार चिंता हृदय में समुद्र
त भरी है वागद में कहा ताई लिखो सो चिंता इरि
रि के लीये मेरो सा मर्थ नाही द्विगे मन की होती तो
करजो ताते एक सो को भरो सो है जो मेरे माये प्रभु
प्राणनाथ विराजत है श्री आचार्य जी महा प्रभु न
की रूपांत सो नाथ मेरे चित को सांति करोगे यह वक्त
सो को हो तथा इसरो अर्थ कहत है चिंता करि के मेरे
माये में प्राण आये रहे हो एसी चिंता हृदय में समुद्र वत है न
हं श्री ठावर जी मेरे प्राण के नाथ हो सो प्राण की रक्षा प्रसक्त
खि के लीये मेरे दुख चिंता को समुद्र हृदय में बम प्रो है
सो प्रभु ही सांति करोगे ॥ भाति श्री हरि गइ जी विप्रयो
ग को अनुभव करत करत अपने हृदय में नयना हो
यगारे

प. अनुभव होइ सो अनुभव कोन प्रकार कीरे सो आगे सि
१ क्षापन में वर्णन करत है वेव लार सात्म स्व रूप को अ
नुभव ११ ~~ननु तब हीरे लाली के वरुन निहारे~~
~~ननु तब हीरे लाली के वरुन निहारे~~ ८ अव
ओर कहत है जो ऊपर के पत्र में है न पत्र करि नि साध
न होइ तो अनुभव कोन प्रकार होइ सो आगे कहत है
लोका कदा निज प्रति हस स्व रूप दर्शयिष्यति वइव
इति खनील कुंतला वरणा नने ॥ पा ॥ अवे अवक
हत है जो श्री हरि राइजी को वि प्रयोग कर्म जो है सो श्री
छल्ल जी के स्वरूप को अनुभव करि विरह करत है जो
श्री छल्ल हमारे ॥ ताँति न जो कव है हस्य न है होइ गो मे
रे मति पाति कहै जो वृज भक्त न के भाव भावित होइ अ
पन पादे दान संधान भूति गयो है अपनो स्वरूप अ
लो किव सुज भक्त स्वामिनी रूप सो भाव इत्य मे है अ
त्यंत विरह ते उह नीति को भाव वाहर न मगि के निक
स्यो ताँते अपने पति कहै तथा ब्रह्म संबंध को सुम
न करि जो श्री आचार्य जी द्वारा ब्रह्म संबंध भयो है तुल
सी चरण एदि द्यर सप पी है यह भावने श्री गुरु जी
हमारे पति है सो श्री छल्ल के से है सो सिखाते न स्वप्य
त वृज भक्त अनुभव करत है ते से ही श्री हरि राइजी अ
नुभव करि श्री हंसावन में स्थिति स्वरूप तिन को वर्ण
न करत है सो कहै ते जो वृज भक्त न की भावना कि सो
स्वरूप सात है ताँते श्री हरि राइजी हंस्वामिनी भाव भा
वित है ताँते कि सो स्वरूप को वर्णन करत है श्री छल्ल
के से है सो के पक्ष के गुछा करि के नाम मुकट सवारि
माथे पाधरे है ताँको अभिप्रार्थय है जो मुकट को
अंगार है सो स्वामिनी जी के सदन न्य है ताँते मुक
ट धरे सो अवदान कव करे सो वेति ही हरसन है

स्मदानकरो और नीलकुंतलस्यामरासी अजकावली
सुखारविंदके ऊपर आया ही हो ऐसे श्री हृदय वदयन
देहु गो ॥ आगे अब और एक हत हो श्लोक ॥ भूधनुः सं
धिर एक सरी चित्रकांचित ॥ इंदीवर हला दे धी विशाल
नयन दया रसाकोश ॥ भकुटी धनुष्की नाही तहार स
रूप कसुरी को निलक तथा कपोल नमै कमल पत्र
और धनुष धान ले हर सन हमारे मन को कव भारे गो और
रुमल के पत्र वत कडे ने तरो ऊ अति विशाल ता करि
हर सन दे हमारे ताप कव हरे गो ॥ आगे अब और एक ह
त हो श्लोक ॥ मौक्तिका भरणाले विसुन संसर साधरं
धिरैया कंठ विलसत कंठा भरण भूषित ॥ आया को अ
थ वे सस्त्रि मुकाले वो परम सो भायमान उज्वल सो सो
अरुण अधर स रूप पर आयर सो है सो मानो स्वामि
नीजी को भाव निर्विकार अधर मृतर स को पान करत है
कंठ मोति नरे खा हो ता करि सात्व कर ज सीता म सी नीत
प्रकाश के भत सी स्थिति हो अथवा त्रिलोकी मोहित हो
त है और श्री कंठ में कंठा भरण कंठ सरी आदि सो हत है
ऐसे श्री हृदय जी कव हम को हर सन देहु गो ॥ आगे अब
और एक हत हो श्लोक ॥ प्रफुल्ल मलयुगल चिबुका
भरण युते ॥ सौख्य सस्त्र मणि युवकं प्माला विराजि
त ॥ आया को अथ ॥ हो उ ग ह्न स्थल प्रफुलित हो सो युग
लगी त मे वण न हो वर रूपा पुवद नो महुंगा जै से पक्ष
वेर में बुक चो च भारे ते स इहां प्रफुल्ल कपोल रस में स्व
मिनी के ह्न स्पर्श चुवनां दि ऐसे कपोल और चिबु
क भरण सो श्री चंद्रावली जी को भाव स्वामिनी
अधर मृते को अनुभव करे त हार स के आधिकार ते
अधर ते अवे ॥ सो श्री चंद्रावली जी अनुभव करे सो म
धुरा एक की दी कामे वण न हो एसो चिबुक विराज न है

सोनेकेछोटेमनिकाकीमालासोकेसमेंविराजतहैएसे
श्रीहृषीकेशवदरसनदेहुगो॥ ४॥ आगेअवत्रैएवहहै
श्रीनारायणललसत्स्ववन्नवैयाप्रवाहुंरत्नेवन
हितस्थूलमुतामालाचितोहै॥ पापाकेअर्थमस्थूल
पापुज्यलवघनखावक्रलसतहैसोप्रसिद्धितीयहअ
र्थहैजोआयसोहजीवात्मककीरहाथधराएहैतथा
श्रीधामिनीजीकेनखनतऊपरभावसहितधरेहैर
त्नकरिगुहितनवरत्नयुक्तबडेडीमालावैजयंतीमा
लाजाकोकहैतहैसोसमस्तभक्तनकेभावसोविराज
तहैऔरबडेबडेमोतिनकीमालाउपरविराज
तहैएसेश्रीहृषीकेशवदरसनदेहुगो॥ ५॥ आगेअवत्रै
हकहैतहै॥ श्रीगुरुवर्णहैश्रीममणिस्थूलमाला
तिसुंदरागुंजाफलमहन्मालालसदुरुगुंजांतराहैया
नेअर्थसोनेकीकृतिमनिकासीकाटीएसेदानेऔ
रमणिकारिवडीमालागयीपरमसुंदरपहरेहैगुंजाला
लखेतसुंदरगयेतामेंचतुर्थश्यामिनीपूथपतिकेभा
वसोंपहरेहैमोहनमालासोऊउरजोघोटताईपहरेहै
एसेश्रीहृषीकेशवदरसनदेहुगो॥ ६॥ आगेअवत्रैऔरकह
तहैश्रीगुरुअनेकरलजटितकरकंकनभूषितवाहुम
ध्यलसत्स्वर्णनिर्मितप्रथितांगद॥ ७॥ आगेअने
करलकरिजहितएसोकेकनदीऊदस्तमेंपहरेहैऔ
रदोकभुजानमेशंगदजोवाजुहसोनेकेविराजत
हैएसेश्रीहृषीकेशवदरसनदेहुगो॥ ८॥ आगेअवत्रैए
हकहैतहै॥ श्रीगुरुअनेकपुष्पतुलसीवलमालाति
लालितविचित्रवर्णविलसतकटिवासोविराज
ते॥ ९॥ आगेअनेकप्रकारकेपुष्पतुलसीवलमो
लालितलालितविचित्रसहितग्रथितएसीलालि
तवनमालाविराजतहैयामेसगरेदृजभक्तनके

भावसोंधरेहैं कटिवासका छनीपचरांगी प्रतिवि
धित्र कटिपर विराजत हो प्रभुसहित चतुर्थयुथपति
के भावसों एसे श्री हृषिकेश वदर न देखेहु गोदा आगे अ
वचोर हंकहत हो लोक। कटिभाव जाप कानि किं कि
नी रवि सो भित्त पद दृष्ट गत स्वर्ण मणि नूपुर मंडित
साया को अथ कटिमें किं किनी के रव सो हत है तार
चकरि वज्र भक्तन को अने कर मणालिक लीला के भा
व को मुखन कर रावत हो होय चरण क मल की चाल
परम सुंदर हो नाम मणि नडि सुवर्ण के नूपुर सो हत
हो असे श्री हृषिकेश वदर मन देखेहु गोदा आगे अवचो
र हंकहत हो लोक। नख चंद्र प्रकाशैक प्रकाशिन ज
गत्रय पीतांबर गतरियेय चल दंडल सुंदर। १७ या
को अथ नख चंद्र प्रकाश करि तीनो भक्त को प्र
कास करत हो तीनो भक्त सो आकास पाताल भू लो
क एतीनो लोक में भक्त जे सतिन के हृदय में प्रका
स करत हैं ओं के हृदय में नख चंद्र प्रकास नोही करत है सो
भक्त के सेहै राकशी हाकुरी के चरणारविंद ही को आश्र
य कीऐ हैं तिन के हृदय में नख चंद्र प्रकास करत हैं न
था यह ललित त्रिभंगी स्वरूप श्री वृंदावन में स्थिति है
तिन के अनुभवै कृज भक्त हो सो राजसीता मसी सा
त्व की त्रिगुण भक्त के हृद में ए नख चंद्र प्रकास करत है
ओर पीतांबर ओ देहो सो कृज भक्त स्वामिनी की उतरी
भाव सों धारन कीऐ हो सो उतरीय के दोऊ अंचल संहस्य
गंध वयारि चलाय मान है १८ आगे अब ओर हंक
हत हो लोक। प्रदर्शित सिरो नेह चलन कर सुंदर
नृत्य नयनानंद नितो नरति संप्रदा १९ या अ
मस्तक के हो ऊ ओर सुंदर अवगम में मकराहत नहु डल
हैं सो सांख्य योग के स्वरूप है एसे श्री हृषिकेश निर्नकरत

१३ हे ताकरि के वृज भक्त न के ने न को परम आनंद हे तने
रति रस को अनुभव भक्त न को करावत है ॥ ११ ॥ आगे
वचन ओर कहत है ॥ श्लोक ॥ निते विनिवृत्त वर्ती स्यानु
भव जो सुखे विहरं न विरीये गारा सखी ला पाया
॥ १२ ॥ या को अर्थ ॥ निते विनिजो वृज भक्त न के वृद्ध मे
भुवि राज मान है सो भक्त न को रसानुभव कराखे मे
परम चंचल है सो या ते जो एक कालावधुत्तम समत
वृज भक्त न के संगे विहार करत है रासाखि लीला कर
न मे भक्त प्रभु परम चतुर है ॥ १२ ॥ आगे अब ओर कहत
है ॥ श्लोक ॥ त्रिभंग रत्न लिते वेणु कलिते भुज यो रपि वृ
दावनै कपलिते वलिते स्वर्जने सद ॥ १३ ॥ या को अर्थ
या भांति त्रिभंग स्वरूप का होऊ भुजो न सो वनु ना
द करत है सो यह श्री वृंदावन के फलान्मक स्वरूप स
दा श्री वृंदावन मे धि राज मान है अपने स्वजन वृज भक्त
न करि के वैष्टित है या भांति स्वरूप को लीला सहित है प्र
भु मो को धवदरसन देहु गो ॥ १३ ॥ आगे अब ओर कह
त है ॥ श्लोक ॥ वादयेतु मुरलिका मो दयंते मनः सता ज
गजुडं प्रकुर्वन्ते रोधयेते च भरणं ॥ १४ ॥ या को अर्थ सुंद
र सत सुर न को मुरलिका वजाय के समस्त भक्त न के म
न को मोहत है पशु पंछी चैतन्य है सो जड वत एक
करसन करि वेनु नाद अमतरस को पांन करत है
ओर ब्रह्मादि पक्षतन दीजइ है सो चैतन्य होय मधुधा
रा वहत है गाय आदि पशु जो न भक्त न करत है नाही
॥ १४ ॥ आगे अब ओर कहत है ॥ श्लोक ॥ पशुणां पतुणां
चैव मोन संपादनं तदा तस्मात्तरानंदमधुधारैक
वर्षुकं ॥ १५ ॥ या को अर्थ ॥ पशु पंछी वेनु नाद सुनि के चंच
ल नाछो डि मोन होइ रस पांन करत है ये आधिदैवक
श्री वृंदावन के मुनी हैं पुष्टि लीला संबंधी वृत्तादि

मधुकी धारा वस्यतः सोऽन्तःकरणमेभगवद्दीयकेन
वभगवत्स्वरूपकोऽनुभवयायतवचनं हं पुन
कावली देहमेहोया सोऽश्री वृंदा वभके वृत्तं सोप
रमभगवद्दीयकोऽपि वेनुनादस्य अमृतको रुदयमे
अनुभवकरि चेतःकरणे आनंदपायमधुधारा
श्रवतः ॥ ५ ॥ आगो अवशोर कृतं हो ॥ श्लो ॥ हर
तं वृजभूता च पदस्था वनतस्तथा प्रमुना नीरपात्रे
कजलक्रीडा हृतिप्रिया रक्षया कोऽश्री या भोतिरास
दिकलीला वृजभूमिकेतापको हरतः ॥ तथा वृजके
भूतजो प्राणी सर्वतोपहरतः ॥ अथवा वृजमेऽपने
चरणारविंदस्थापन करि सगरी गुल्मस्तता औषधी
आदि इनके तापको हरतः ॥ अथवा वृजमेऽपने
चरणचिन्ह स्थापन करि यद्वज्रता वनतः ॥ जो कोई वृ
जकोऽश्रय करे गोतिन हूँ को ताप हरि होइ गो गसे
श्री वृक्षमोको कवहरसन देइ गो ॥ या भोतिरासलीला
अनेक विधिसो भक्तन सहित अमजल भयो तव श्री
हृकुरजी जने जो यह मत न सहित अमजल सहरस कहाही
यो ॥ राधे विचार जो यह हरस के पात्र श्रीयमुनाजी हे यह ज
नि भक्तन सहित श्रीयमुनाजी में पधारो सो अपनी प्रि
या स्वामिनी जी संयुक्त जल क्रीडा करन भरो या भोति
श्रीयमुनाजी को पात्र जानि सागर सदान की यो ज
ल क्रीडा करि अमको निवारन भयो गसे श्री वृक्षमो
को कवहरसन देइ गो रक्षया गे अवशोर कृतं हो
श्लोकारसात्मक रसात्मक वृजभक्त हृदयमल्लित निज
नुभव संवेद्य प्रगटं तं हणेत ॥ १७ ॥ या ॥ अ
रसात्मक रसात्मक रसात्मक वृजभक्त निज को करा
वतः ॥ हणेत हणेत अधिक अधिक रसात्मक प्रभुवर
तः ॥ जो करि भक्त को भाव हणेत ॥

धिक प्रगट होत है ऐसे प्रभु सदानकर्ता श्री कृष्ण कव
हर मन देहु गो ॥ १७ ॥ आगे अब और कहत है ॥ श्लोक ॥
विरहाधुनाय तसर्वे निज लीलानुभाव को साकारानंद
रूपेण वृजभक्त हृदि स्थित ॥ १८ ॥ पाके अर्थ ॥ ऐसे भावा
त्मकर सात्मक श्री कृष्ण सो केवल सुद्विरह करै तव
अपनी निज लीला को अनुभव करावै सो जीवसा
र दिन रात्रि केवल विप्रयोग आर्तिकरि सुदृश्य हो
य ॥ तव ही निज लील को अनुभव होय सो निजभक्त
स्वाप्ति नीजी है तिन को विप्रयोग है तिन ही को य
ह निज लील को अनुभव हो ऐसे भावात्मक श्री
कृष्ण सो वृजभक्त न के हृदय में सो के आनंद रूप स
र्व लीला संयुक्त विराजते है काहे नै स को सुभाव
है जो पात्र विना रहे ना ही सो रसात्मक साकार आ
नंद रूप श्री कृष्ण ता ऐसे पात्र वृजभक्त है ताते वृज
भक्त न के हृदय में रात्रि दिवस स्थिर रहत है ॥ १९ ॥ आगे
अब और कहत है ॥ श्लोक ॥ एवं दिद्रुहा सततं स्था
पनीया निजैरुद्दि सैवास्माकं प्रेमभावो न पराग वि
निवर्तकं ॥ २० ॥ पाके अर्थ ॥ ऐसे श्री कृष्ण चंद्र के हरम
न की इष्टा मज में जाके हो सो निरंतर अपने हृदय में
यह स्वरूप को ध्यान करि स्थिति करै तहां को ईक हे जो
तुमारे हृदय में तो ऐसे प्रभु स्थिति है ध्याने करितु मरु
है स्थिति की ऐसी पाभाति को ईक हे सो तहां श्री ह
रि राजीव कहत है जो मेरे हृदय में प्रेम को अभाव है
मेरे में प्रेम ना ही है ॥ और यह स्वरूप तो प्रेम करि धार
न करै तव होय और मो को तो ऐसे श्री कृष्ण के चरन क
मल की रज जो पराग सो अत्यंत दुर्लभ है ता में मे तो
चरण कमल की पराग करि के रहित है तहां को ईक
हे जो तुमारे में प्रेम तो ही सत है स्वरूप को वर्णन

की गिहें प्रभुमें आतिहैं भावहैं प्रभुमें आसतहैं पुष्टि
 रीकी सगरीरीतिहैं ताप्रमाण चलनहैं तुमको कहावा
 धकहैं याभांतिकोईकहैं तहां कहतहैं श्लोक॥ ततः
 वार्तिगाधिकागेहैद्विकवाधिका आसतिः सेवमागे
 स्मिनग्रहस्थस्वास्थकारिका॥ २०॥ यादोश्चिद्वे अवशीह
 रिराप्ती कहतहैं जोहमको लौकिक आतिहैं ग्रहदेहसंबंधी
 सोयह भावदभावसे बाधकहैं कहतहैं देहसंबंधी हरता
 में लौकिक वैदिक चनेक कार्यता आतिमनमें रहतहैं
 सो बाधकहैं ओस्थहं अपने पुष्टिमागमें आसतहैं सोप
 रमधर्महैं सो जाकी आतिप्रभुपादहैं सो ग्रहस्थ ग्रहसेके
 सें स्वास्थरहेगे ग्रहमें स्वास्थ जाके मनहैं सोयह पुष्टि
 मार्गमें कोन भांति स्वास्थरहेगो यद्वहिकें यहें
 ताऐनो जाकी आसतिप्रभुमेंहैं तासों देहसंबंधी लो
 किक वैदिक क्रिया भली भांति सो नवनेगी ॥ २१॥ आ
 जें अवशोरहैं कहतहैं श्लोक॥ परितापोऽयत्नस्मात्त
 व विस्मृति को रकः सरो वयस न तत्र प्रपंच स्फुटिना
 शनो ॥ २२॥ यादोश्चिद्वे उपर कहतहैं भांति प्रभुमें आस
 तहोय तव प्रभुह्य करि आतिहैं नवरें सो नवविप्र
 योगहोय सो विप्रयोग भयो कव जाजिये प्रभुसंबंध
 विना देहसंबंधी सब कार्य की दिसति होय तव विप्र
 योग भयो तापाछें प्रभुमें वसत होइ सो प्रभु विदुरहो
 न जाय एक एक राग युग समान जाय ग्रहस्थ सनको
 स्वस्व ताव सन करिकें प्रपंच की स्फुटिना सन होइ
 के केवल प्रभु परत न भयता होइ ॥ २३॥ आगे अवशोरहैं
 कहतहैं श्लोक॥ एवं विधस्तु निविद्यो भवेति साध
 नो मतः ॥ अतोऽनुद्वेगो लोके तत्प्राप्ति भजता न
 णा ॥ २४॥ यादोश्चिद्वे याभांति भाद जव मन वचन
 करितीनो प्रकार भाव सिद्ध होइ

प. जाय सोया भांति नि साधन हो नोया लोक में बहुत दु
र्लभ है। निरंतर सदा भजन जो श्री हृदय की सेवा कीये
रत व नि साधन होइ २२ आगे अथ श्री हृदय कहत है स्तो
त्राचक्र करण्य हृदय भावात्मा संतथा विधं मति
महा व संबंधात प्राप्ति वेदयत २३ आगे अथ य
हृदय विधि पूर्व क व सिद्धि होइ तव श्री हृदय भावात्मा
क प्रभु की हृपा होइ तथा श्री हृदय भावात्मा क प्रभु की
हृपा होइ तथा श्री हृदय भावात्मा के आश्रय मुखारवि
हृदय श्री आचार्य जी महा प्रभु की हृपा होय तव भाव
सिद्ध होइ भाव सिद्ध भयो क व जानिये श्री हृदय स्वरू
प मूर्ति वंत मैं यह भाव सिद्धि है जो ये ईसाहात श्री
हृदय भावात्मा मेरे पति हैं यह मन क व क्रम का भाव हो
इत व प्राप्ति होइ यह वेद के व चन हो त हो कोई कह श्री
हृदय के स्वरूप में प्रति भाव के से हो सो उपाय आगिले
श्लोक में कहत है श्लोक ॥ प्रमेय वल तो नान्य साधन
हृदय भाव तो चेतः सर्व प्रकर्तव्य निजा चार्य पदाश्र
यः २४ आगे अथ यह भाव श्री हृदय स्वरूप में प्रति भा
व यह जीव के साधन ते न होइ यह श्री हृदय प्रमेय वल
ते भाव को दान करे तव ही भाव होइ श्री हृदय प्रमेय
व ल क व प्रगट करे सो उपाय कहत है जो पुष्टि मार्ग
की रीति सो तन मन धन सो प्रीति सहित सेवा करे अ
पने श्री वल्लभ आचार्य जी के चरण कमल को आश्रय
करे तव श्री आचार्य जी महा प्रभु भाव दान प्रमेय व
ल ते करे ताते मार्ग रीति सो सेवा श्री वल्लभ आचार्य जी
के चरण कमल को आश्रय यह मन ति श्रय लगाइ
देव ते व्यते यह सिद्धांत सर्वोपर है २५ आगे अथ
श्री हृदय कहत है श्लोक ॥ तदा भावेन वे भावि फल
मैल ल संशयः अतएवा स्मदी गौ तु ग्रंथे श्री वल्लभ

भाष्टको २५ या को अथो ऊपर कहें भोति श्री आचार्यजी
 महाप्रभु भावदानकरे तव भावात्मकर समेत इप होय
 जाय सो तव यहु पुष्टि साधि फल की प्राप्ति होय निश्च
 य संसय नाही सो हमारे श्री गुसाईजी वक्ष भाष्टक में क
 रें हो २५ अथ श्रीरङ्क कहत हैं श्लोक ॥ स्वामिन श्रीवक्ष
 ने ते तत्पद्ये खिल मुदी रिते तदा प्रयोन वक्षने विपुल न्मा
 गे निष्ठया रथ या को अथो श्रीवल्लभाष्टक जो सप्तमांशो
 का स्वामिन श्रीवक्ष भाष्टक मणि भवतः सनिधाने ह
 पातः प्राण प्रेष्टृजाधिप रवहन दिहलार्तिता पो जने यु
 यत्प्रभुर्भावा मामेभ्युचित तस्मिंदेय तु श्राद्ध्यात्पद्ये
 यस्मिन् मुखे दो प्रचुरतर मुदे ते तस्मिन्मेतत् ॥ इत्यादि
 वचन करिय हवचन दो अनुसार आश्रय यहु पुष्टि सा
 गे में नेशा होय तव सगरी लीला को अनुभव होय सो
 अश्रय श्रीरामागे में नेशा को न प्रकार होइ ॥ २६ अथो
 अथ श्रीरङ्क कहत हैं श्लोक ॥ मागे नेशा नख बोधे कि तु ता
 ह गुरु रिते गुरु हितानि वाक्यानि नख तो घन वाहन
 २७ या को अथो ॥ अथ वक्षत हैं जो पुष्टि सागे में नेशा वि
 ना गुरु के बोध करि विना न होय ज व गुरु प्रसन्न होइ ह
 पा करि के बोध करे तव यहु जीव को इदं विस्वास गुरु ते व
 चन में होय विस्वास करि वारं वार गुरु वचन को अर्थ
 सहित भावना करे अपने मन सो अक्ष भावनान होइ
 तो तो इसी विलम्बन सो मिलि के गुरु के वचन को अनु
 वाद करे वारं वार अनुवाद भावना करे ता वचन अनु
 माद हैं तो हपा करे अथो अथ श्रीरङ्क कहत हैं श्लो
 अनुवादेन स्वबोधा किं तु मूल ह मा गते अथपि

२८ या को अथो गुरु

धने कल्प

नाकार नदरे जे सै मूल क्रम

प. प्रभुसुबोधनीजीनिबंधादिभावविचारेंतहेश्रीमहाप्र
भुजीकीरूपांतेश्रीसुबोधनीजीमेंजानो जाय। सोश्री
आचार्यजीमहाप्रभुकावतकरेजबहुद्वचरणारवि
हकोआश्रयहोय। तातेश्रीआचार्यजीमहाप्रभुके
चरणकमलकोद्रुदआश्रयकरिश्रीसुबोधनीजीनि
बंधमेंजात्रमसोभावहै। ताभंतिअपनेहृदयमेंभाव
नाकरेंसेवाकरें। २४। आगेअबओरहंकरनेहै। सो
एताहरीनृगुरुगवगत्यनिखिलजन। आश्रित्यच
निजाचार्यान्पदनेंदसदाभजेत्। २५। याकोअप
याभंतिगुरुकोआग्यप्रमानअनुगत्यचलेतोनिखि
लकोइवैसबहै। २६। श्रीआचार्यजीमहाप्रभुअपने
आश्रयनिश्चयहै। देहियामेंसंदेहनाही। कहितेश्री
आचार्यजीमहाप्रभुकोमनमेंआश्रयकरिगुरुआ
ग्यप्रमानचले। तवश्रीआचार्यजीमहाप्रभुअनु
ग्रहकरिआश्रयअपनोदेहि। सदाआनंदरूपश्रीआ
चार्यजीमहाप्रभुहै। यहभावसोभजनकरें। ओरलोकि
कवेदिकेमेघानंदतुहहै। सदानाही। लोकिकेमेवि
द्ययादिकमुखरताकरिनिर्कमेखगोदिकमुखसोप
एप्तीनभयेसंसारमेंपरेदुखीहोइ। ओश्रीआचार्य
जीमहाप्रभुसदाएक। सआनंदरूपहै। सोश्रीगुसाई
जीसर्वोत्तममेंकहैहै। श्रीआचार्यजीमहाप्रभुनकेना
म। आनंदायनमः। परमानंदायनमः। इत्यादिवचन
केभावसो जाननै। ओश्रीआचार्यजीकीनामाव
लीमेंनामहै। आनंदायनमः। मूर्तोयनमः। यहश्रीआ
चार्यजीकोस्वरूपहै। सोमूर्तिवंतआनंदमयहै। सदाए
करसपाभातिभावसंप्रेमसहितभजनकरें। तहाको
इकहै। जोश्रीआचार्यजीमहाप्रभुजीकेयहपुष्टि
मार्गमेंहै। सोसगरेजीवश्रीआचार्यजीमहाप्रभु

को आश्रय करि भजन सेवा करत हैं श्री गुरु मकरे भाव
सो भजन करो सो कहें या भांति कोई कहें सो तहें क
हत हैं श्लोक ॥ भजन भव रूपम्य भावो नैवोपपद्यते
चेतस्तत्प्रवणं सेवा भावो नैवोपपद्यते द्यत एव निर
पिता ॥ ३ ॥ या को अर्थ अक्व सत है जो भजन सो से
वा भाव सो करे कहिते भाव दिना आगे मानसी फल
रूपन होइ जाते तनु जावित जा भाव सो करे तव मान
सी फल रूप सिद्ध होइ श्लोक श्री आचार्य जी महा प्रभु नि
दान मुक्तावली ग्रंथ में कहें हैं ॥ रहस्य सेवा सदा कार्यो मा
नसी सा परामता ॥ परा श्री हिस की सेवा करे ॥ निन को
मानसी सेवा सिद्ध होइ को न भांति ॥ चेतस्तत्प्रवणं से
वा तत्सिद्धे तनु वित जा ॥ ते से नदी को प्रवाह्य त्रिदि
वय एकर सधरें ता भांति अष्ट प्रहर दिन से मानसी
निन की साधन कता तनु जावित जा करे भाव क
रित वही सिद्ध होइ तनु जावित जा ॥ भाव सहित म
न लगाइ के करे तव ही वने तव भाव सिद्ध होइ या
भांति श्री आचार्य जी महा प्रभु निरूपण की गेहो ॥ ३ ॥
मानसी सेवा सिद्ध भई होय ॥ निन के लक्षण कहें के से जो
निये सो आगिले श्लोक में कहत हैं श्लोक ॥ तस्यात्
विस्मृतिर्भाषा जगतः सर्वथा ध्रुवा ॥ तद्द्रवै मानसी
तसेवनान्नैव सिद्धति ॥ ३ ॥ या को अर्थ ॥ तनु जावित जा
सेवा मन लगाइ के करे सदा ॥ तव सारा जगत देह संव
धी पदार्थ की विस्मृति मन में सब भूलि जाय ॥ मानसी
सेवा को यही भाव है जो यगरे जत को भुलावै सर्वथा
यह निश्चय जाननो ॥ अपनी देहानुसंधान को भूलि
जाय ॥ खान पान निद्रा दिया भांति भावा विष्ट होय म
न में सेवा करि स्वरूप भेद को अनुभव करे ॥ तव जो
निये जो भाव रूप मानसी सेवा सिद्ध भई ॥

प. नुजावितजासेवाहोतेदुर्ध्वभहं तोमानसीकहतेसि
इहोइतनुजावितजासेवामेवाधकहवहुनहं सोक
हतहं श्लो॥ तदाधकानीद्रियाणि विषयास्तोक्त्रि
मती प्रतिबंधस्तयोद्देशोभोगोप्यत्रैव लोक्त्रि ३२ या
को अथो तनुजावितजासेवामनलगाइवेकरें तामे
सोइंद्रीवाधकहं काहेतें इंद्रीकेदेवताहं तिनकेवि
षयप्रियहं सोभागवदसेवामेइंद्रीवाधककरनहं ये
कोनभांतिसेवाकरतमं विषयादिककीबुद्धिहोइलो
किबुद्धितोयहजोसेवातोनित्यहीकरतहं घकोलो
किवकार्यहं करनोहं भूयहुवहुतहं याभांतिबुद्धिमलो
किबमतिहोइतवसेवामेतेमनकोउद्देशहोइसेजे
संवनेतेसेवेगिकरिअनोयरकरावें तवश्रीधकु
रजीतोमनकीलोकिबुद्धिजानें सोसेवामेंप्रति
बंधकरैं एसेलोकिबवैदिककार्यतथाविषयादि
ककोकार्यमनमेंप्रेरेजोसेवामेंप्रतिबंधहोइमनउ
द्देशतेंप्रतिबंधहोइतवभागवदसेवादेहतेतनुजावि
तजानवनेपाछेध्यानपानादिविषयभोगामेंमनवे
लें पाछेविषयादिकरेंपीछेकेवललोकिबहोइजा
इसोसेवाफूलमेंश्रीआचार्यजीमहाप्रभुकहेहैंउ
द्देशप्रतिबंधोवाभोगोवास्यातुवाधकइत्यादिबच
नसो जाननो जोइंद्रीकोविषयमेंमनहोइताकरि
प्रथमउद्देशपाछेप्रतिबंधपीछेभोगपीछेकेवललो
किबनहांकोईकहं जोइंद्रियकोविषयबुद्धिसेवामेंको
होनहं तहांअवकहतहं श्लो॥ दुष्टान्मभक्षणांवा
यिद्यसमर्पितमक्षणे असत्संगसर्वथाहीभाववाध
कईष्यते ३३ याको अथो अवकहतहं जोइंद्रियादिम
नमेंदुर्बुद्धिविषयायातेहोतहं एकतोदुष्टप्राणीकी
सत्ताकोअन्तताकोभजनकरें अथवादुष्टक्रियाक

रिञ्चनलवैभवाणवर्गैतथाअसमर्पितत्वाइतथाअ
सतवहर्मुखकोसंगकरोयेनीनोसर्वथाहीबाधककर
निश्चयासोन्पान्पार्वहृत्तहोदुष्टचन्नवहृत्तबाधक
होसोपप्रपुराणमेंवहहोअवैष्णवानामन्त्रपति
नानातथैवचअनेर्पिततथावैष्णोस्वमाससहशोभ
वेत्ताअनिवेद्यपयोभुक्तेहृत्पेपरमात्मनोपुतंतिपित
रतस्यनरवैष्णोस्वतीयमाभइतिवचनात्अवैष्णवको
अन्तहोइतथापतितबाडालाहितेलीयोधोवीनीच
कोअन्नतथाअसमर्पितअन्नयहमाससहशतह
एसोअन्नखातेइहीबुद्धिसर्वेनष्टहोयजायाअसुर
वतहोइतथाअसमर्पितअन्नकोषायतोपितर
सहितनर्कमेंजायतातेआइहंप्रसाहीअन्नसोक्त
रोओरकर्मपुराणमेंवहहोअनर्पयित्वागोविंदयो
भुक्तधर्मवर्जितस्वानविष्टासमंवालेनिरंतेस्वर
याममंइतिवचनात्गोविंदजोश्रीकृष्णकोअर्प
विनाअसमर्पितजोअन्नघातहोसोतेसकलधर्मक
रिरहितहैउहअन्नस्वानकेविष्टासमानहैउहघात
होओअसुरहैनिश्चयासोदुष्टसंगतेअसमर्पितअन्न
याइतातेयहतीनबाधकहोएकतेदुष्टकोअन्नतथा
असमर्पिततथाअसत्संगतोअदुष्टसंगयाकरिअ
न्यसंबंधहोइतवदेहइंद्रीसर्ववहर्मुखहोइजायवि
षयकेध्यानमेंनत्यरहोइतातेवैष्णवहोइमनमेंवि
चारराखेंजोदुष्टकोअन्नअसमर्पितअन्नसंबंध
कवहृत्तकरोअथ्यागोअथओरइवहृत्तहोहो
तस्मात्पत्कादुष्टसंगहत्वास्वाचासंश्रयतहीयज
नसंसर्गस्थित्वामार्गेतथागुरोउपयाकोअथअथ
कहतहैजोदुष्टकेसंगकोत्यागकरोकाहेतोदुष्टके
संगतेबुधिविगरेअसमर्पितहैदुष्टकेसंगतेयाइ

सि.प. अन्नाश्रय इष्टके संगते होइ तानें लोषको मू
५८ गको त्याग करे और श्री आचार्य जी महाप्रभु के
विदको आश्रय करे और पुष्टि मार्गीय की ही ति प्र
मी स्थिति होइ गुरु कहें ना प्रमान क्रिया सर्व को
पाचो प्रकार से हयुक्त करे प्रथमतो इष्टके संग के
गार और श्री आचार्य जी महाप्रभु के वर एक मल
आश्रय होइ गो नीयें भगवदीय को संग सो श्री
आचार्य जी महाप्रभु की दृष्टि पातें मिले पुष्टि मार्ग में स्थित
उभय भवदीय के संगते गुरु कहें ना प्रकार से वाश्रपते
ते कलित नाही यह पाद्य प्रकार भाव दीय वेक्ष्म्व के
कर्तव्य है ३४ आगे अब और कहें नहें ॥ लोका ॥ द्योत
वियय वैराग्य परितीय विधाय च ॥ सदानंद सदानंद
प्रवृत्त सदा भजेत् ३५ या ॥ अ ॥ विषय में वैराग्य
होइ तव ही सर्व धर्म वे नि आवे सो श्री आचार्य जी म
हाप्रभु संन्यास निर्णय से कहें विषय को न देखे नो
नो वैस सर्वथा होइ इति वचनात् जा जीव के इष्ट्य में
विषय को जान होइ हे हमें विषय की कामना होइ
ता के इष्ट्य में ही जो भगवान को आवेस सर्वथा न होइ
नार्ति विषय दिदेह संबंधी कार्य वैराग्य होइ और मन में
संतोष होइ यथा लो भ संतुष्टो भगवद् इच्छा ते चाइ
प्राप्त होइ नाही सें संतोष होइ जब विषय दिक्क में
वैराग्य होइ तव ही संतोष होइ और लो विक वैदि
क देह संबंधी की चिंता छोडि सदा आनंद में रहें
नो भव इष्ट्य में संतोष होइ तव इष्ट्य में आनंद एण
वे चिंतान होइ तव भगवद् धर्म में सनत्तागे ता ही
श्री आचार्य जी महाप्रभु नवरत्न ग्रंथ में कहें हे
कापिन कार्या निवेदिनात्मभिः कदापि निवे
देन भक्त हैं सो चिंतान करे सदा आनंद में रहें

तव सदा आनंद रूप जो श्री छल ऊपर कहै श्री वंदन न मेव
 ज भक्त संयुक्त वेष्टित फल रूप निन की सेवा करे सदा सर्व
 पा फल प्राप्ति हो ॥ ३५ ॥ इति श्री हरिराजी छल त सिद्ध
 पत्र ता की टीका श्री गोपेश्वर जी छल त संग ॥ ६ ॥ श्री
 चक्र और ऊपर कहै जो विषय मे वे राय करि यथा लाभ
 संतोष करि प्रसन्नता सो सुदृढ़ रह्यते भाव द से वा करे
 तो फल प्राप्ति हो ॥ सो श्री छल फल दान देव को जव
 विचारै तव ही वने छल के मन्की अभिप्राय ता को
 जानि वे को जीव सामर्थ्य ना ही है को न भानि कहा प्र
 ल दे ॥ सो श्री छल फल दान देव को जव
 द की द स ह्म मि प्रिय स्व जने मता स्वान द सिद्ध
 राति निजा ति दर्शना दियु ॥ या को चर्य ॥ श्री छल
 के अभिप्राय जानि वे मे वे द सामर्थ्य ना ही है ने जने
 त पुकारत है जय पि भाव न की खास ते प्रगे दे भग
 व द स्व रूप वे द है ॥ सो श्री छल के अभिप्राय जानि वे
 मे ना ही सामर्थ्य है ॥ तो श्री अपनी से सु बुद्धि ते कहा जो
 न गो त ऊ श्री आचार्य जी महा प्रभु की छपा ते कहु
 से श्री अपनी मति अनुसार करत है ॥ काहे ते वे द है सो
 प्रभु के वंदी जन है ॥ यदा गुणा वत है बाहर ईश्वर ता
 को माहात्म्य कहत है ॥ श्री छल को जन द स
 है ॥ तति प्रभु की छपा सो पर है ॥ ता ते कहु अपनी म
 ति अनुसार कहत है ॥ श्री छल आनंद रूप है ॥ सो अप
 नो आनंद जव न धि जो पुष्टि मार्ग य निज से व कहै निन
 को अनुभव करै स्वकी इच्छा करत है ॥ तो फलानि भक्त
 को प्रभु आनंद सिद्धि को विचारत है ॥ तव अन भक्त को
 श्री छल के दरसन की आति होत है ॥ तव उह भक्त की
 रति जो प्रीति सर्व और ने छुटि के श्री छल के दरसन
 में होत है ॥ ता ते यह जाननो जो श्री छल आनंद दान

म.प. कोविचारेसेवकको तिनसों अपनेदरसनकी आर्ति सिद्ध
म.प. रावोउहसेवकके हृदयमें तापहीय जोमें कवचप्रीहृदयको
दरसनकर गोवाहीमें पुमानकीर्तनसेवा सर्वजानने
वाको भावधर्मकरिवेमें प्रीति होइ प्रभुके दरसनवि
नारघोन जाइ ॥ आगे अब और कहत है श्लोक ॥ सं
सारभावरागायलौकिकार्ति तथा पुन ॥ महाभावायव
स्वार्तिशरीरार्ति त्रिय छति ॥ अथाको अर्थ ॥ अब कहत
है जो यह संसार देह संबंधी जितनो पदार्थ है तिनमें
अनुरागको अभाव होइ तिनमें तेरागको अभाव
होइ सो अश्री हृदयकी कृपाते लौकिक संसार तेजव
छूटे जव अश्री हृदय करुणाको और लौकिक कार्यकी
आर्ति छूटे सो अश्री हृदयकी कृपाते और मदको अभाव
होइ अभिमान न होइ जोमें दीसर्वकर्ता पेह अश्री हृदय
की कृपाते होइ और अपने मरीरकी आर्ति दुखसुख
खानपानकी आर्ति न होइ ये अश्री हृदयकी कृपाते ज
निये ॥ आगे अब और कहत है श्लोक ॥ संगभा
वायव ध्वार्ति देशार्ति देन्य सिद्धये ॥ मोहाभावाय भग
वान् साधनार्ति ददाति हि ॥ अथाको अर्थ ॥ संगको अ
भाव होइ भगवदीयको संग न होइ तजबंधु जो देह
संबंधी कुटुंबकी आर्ति न होइ मुतह अपने हृदयते
राज उपजे जो ये देह संबंधी नेक हा संबंध है सो आ
त्म संबंधी भगवान् न हो काम तो उन सो है या भो तिस
संग विना ही मुतह बंधु आर्ति न होइ यह अश्री हृदय
की कृपास संग विना सब दोर जीव आर्तिकारन है के
सन संगता ते छूटे के भगवद कृपाते छूटे और देसार्ति
जो अनेक देसमें कुटुंब तथा दुष्पधार सिन्न तथा आप
जहा रहत होइ सो देशको दुःख सुख न होइ मनमें आ
र्ति न होइ सो अश्री हृदयकी कृपाते और देन्य ताने सिद्ध हो

इत्येक श्रीहनुमन्की परमरूपाते जाननो ॥ काहेतें प्रभु प्रसन्न
रिवे दोहै न्यनाही साधनहें सो श्री आचार्य जी महा प्रभु
की सुबोधनी जी मै लिखे सो आचार्य चरणौ सजं है न्यंत तो
साधन है न्यता रूप साधन तो प्रभु प्रसन्न होइ ॥ सो है न्य
ना श्रीहनुमन्की रूपाति पिइ होत है ॥ श्रीमोह को अभाव
होइ ॥ एव श्रीहनुमन्की चोर न मोह होइ ॥ श्रीउजप
ति मित्र धारण देह परलोक यहु लोक मै कहं मोहन
होइ ॥ येह श्रीहनुमन्की रूपाते होइ ॥ श्रीभगवान के मि
लिवे के सोधन भगवद सेवा स्मरण कीर्तन जप पाठ भ
गवद्वातादि पुष्टि मार्ग की रीति ते साधवैन सो ॥ आपु श्री
भगवान क्रिया कर्त्तव्ये दोन देख रावै तव ही वनि आवै
३ आगे अवजोर इक हत होइ ॥ स्तोत्र प्रारध्व भोजना
र्थ वापरी सार्थ कितेवना तु निर्वाहार्थ तथा वेद साध्या
र्थीति प्रयच्छति ॥ ॥ एवमार्ति प्रदाने पिपस्नं दद्यात् ॥ स
माश्रयो नमो तव्यो दृढ स्वाचार्य यश्रयो ॥ ॥ ५ ॥ ॥ अथैक
परक हेता प्रकार लौकिक आर्तिक राय भगवद संबंध की
आर्ति श्रीहनुमन्की रूपाति करि दान करे ता पाछे श्रीहनुमन्
द परमानंद रूपान्तर रूप को दान करे ॥ जहां तोइ इतनी
आर्ति सिद्धि न भई होइ ॥ तहां तोइ परमानंद को दान निश्च
य न होइ ॥ सो सगो साधन में जीव के हाथ एक हुना ही है
श्रीहनुमन्की सर्व सिद्धि करि पाछे पुष्टि मार्ग को परम पक्ष प
रमानंद रूप प्रभु दान करत है ॥ तहां कोइ कहै जो यह आश्रि
यतु सकाहेतें कहै जो सर्व श्रीहनुमन्की करत है ॥ सो तहां
श्रीहरि राजीव कहत है ॥ जो यह आश्रय में अपनी युक्त
तेनाही कहै ॥ सो श्री आचार्य जी महा प्रभु के चरण क
मल को दृढ आश्रय कीयो है ॥ ता करि के महा प्रभु की ह
पा करि अपनो अभिप्राय जता ऐ ॥ सो अभिप्राय सहित
मे श्री आचार्य जी महा प्रभु के चरण कमल को दृढ आश्र

प्र. यत्र अपने मन में करिय ह आश्रय निरूपण कीये है यह कह
हि अपने भक्त न को यह ज ता रे जो श्री आचार्य जी महारा
भके चरण कमल को दृढ़ आश्रय करे गो. तिनको श्री ठाकुर
जी अपने आश्रय दे के अपने पस आनंद को दान करे
ताते मुख्य श्री आचार्य जी महारा प्रभु के चरण कमल को आ
श्रय करत यह है ॥ ५ ॥ आगे अब और कहत है ॥ श्लोक ॥ स्व
तः कृष्णमसहानंदो निजानंदो प्रदास्यति ॥ भदाश्रये वस्था
नव्यं सर्वैश्चातकः पलिवनर्धिया के अ. श्री कृष्ण के
से है स्वतः आपु ही सदा आनंद रूप है परम दयालु है
सब प्राणी मात्र को आनंद ही देत है ऐसे श्री कृष्ण सो
अपने दास को आनंद दान करे सो उचित ही है दास
पर तो और अधिक दान दूपा करि के देहि गो. यह निश्चय
श्री कृष्ण को भरो सो है श्री कृष्ण के नाम ते सगरो कार्य सि
द्ध होइ यह श्री भागवत द्वादस स्कंध में श्री भुक्त देव जी
कहे हैं ॥ श्लोक ॥ कल्विदोष निधेरा ज न्नस्ति इको महा
नुण ॥ कीर्तेन हि कलक्षस्प मुक्त बंध परं हजेत ॥ इति
चनात् जयपिकलियुग दोष दोष रूप है तऊ श्री कृष्ण
नाम ते संसार दुख ते छुटि जाय भक्ति प्राप्ति होइ सो भ
गवदीय गाणे है ॥ राग विराग ॥ करि हैं कृष्ण नाम स
हाइ अधमता गरा नि अपनी मरत कित न कला
य ॥ अधम अग्रित न धारे सो कहा तेरो भार को न उ
दिम आपने निज करि सकी निस्तार ॥ नैक हूधो क
र भरो सो वसत जा के गाव सो को ममता छाडि देल
जीवन ना को नाम ॥ विरध विविधि बुलाइ वो करि
हरि निधरि दे लाज तो पे गदा धर निगम आगम व
कन कित वे काज ॥ धर से प्रभु को नाम स्या ल है त हा प्र
भु दया करि अपने भक्त न को आनंद दे हि सो कहा
कहना त हा दृष्टांत कहत है जो चात्र कपली वत द

अवस्थासंकरिहोकारितेचात्रकपलीजडकोस्मर
 एकरनहोसोमेघवाकोमनोरथप्रनवरनहेतो
 श्रीहृत्पतोपरमआनंदरूपहोह्याकरिसवकरेगे
 द्विआगेअवचोरहूकदनहोहोस्तोका।लौकिकार्तिर
 गानंपरमानंदचिंतनानेयथानगणयेद्वागीनितंभे
 षजभक्तण्णयथास्यार्थ।लौकिकार्तिविहरेहसंवंधीसं
 सारकीआर्तिकरिविदपावोतहंप्रभुकोचिंतानहोइप्र
 भुअर्थजवयहजीवआर्तिकरेंतवप्रभुकोचिंतानहोइता
 तिलौकिकार्तिवैभवकोसर्वथाहीनाहीकरतवहंप्रभु
 कीआर्तिविप्रयोगकरेंसोअपरकहेजेसेचात्रकपली
 रात्रिदिवसखातवेजलकोलीयेरतेतहेंजेसेहीपुष्टि
 माणीयवैभवरात्रिदिवसविप्रयोगकरप्रभुकोक
 रेंपरमानंदरूपभगवान्कोपुणविचारिविचारिअ
 पनेदोघेविचारिविचारिचिंतनकरेंतवप्रभुवेह
 दयमेस्याआवेसोनिरोधलक्षणग्रंथमेंश्रीआचा
 र्यजीमहाप्रभूकहेहेंलेखमानानेजनानंदष्टाहपा
 युकोयहाभवेतअपनेजनकोजवविप्रयोगलेस
 प्रभुदेखतहेंतवप्रभुहृपाकरतहेंजवअभिमान
 देखतहेंतवदंडतेहो।सोश्रीभागवतरासपंचाधा
 ईमेंवर्णनहेंजोवृजभक्तनकोमदभयो।तवअंतर
 ध्यानप्रभुभरणपाछेभक्तनको।अतंतलेराविरह
 देखो।तवश्रीठाकुरजीहृपाकरिप्रगतभगतिसंहो
 यदपुष्टिमा।मैवृजभक्तनकोभाषकरिमनमेंलेरा
 होइतवप्रभुहृपाकरेंततिलौकिकार्तिहोइप्र
 भुकोविरहकरिपरमानंदकोचिंतनकरेंतोप्रभुह
 पाकरेंतहोदृष्टान्तेतहो।तविरोगहोआपोतितथो
 षधीकोघातहो।रोगजोयवेनेअथी।नद्यापिअथ
 धवहुनतितककरईहो।सोरोगीप्रीतिसोखानहोने

में ही जावौ संसार रूप का मत्रो धर्म मत्स्यनादि दुख
सर्व राग सङ्ग मज्जन भयो है सो रोग निवर्त करण थ्य
भुक्तो विप्रयोग रूप श्रोत्र धरवा इत व प्रभु कृपा करे
स गरो दुख मिटि जाइ ताते विप्रयोग प्रभु में होयत
वही प्रभु प्रसन्न होइ अवचोर हूँ कहते है ॥ श्लोक ॥
आदि ते निज भक्त ना विरधाति हरि ने हि समस्त
ना सखा स्वीय भक्तानां न कथं भवेत् ॥ यथा कौश्र्य
श्री हस्त के से है अपने निज भक्त न को अहित जो वरो
क वहन करे महा हित ही करे सो महा भारथ में भी
अपर कृपा ही करी ते से नंदराय जी अं विका पूजन गणे
अन्या अय कीयो ता करि सुदर्शन सपने ग्रस ही स्त्री
यो पाछे प्रभु के निज भक्त है नंदराय जी ताते कृपा
करि सुदर्शन सपने छुडाए ते से ही पुष्टि माणीय
भगवदीय को कछु दाय निवर्त करनार्थ दुख प्रभ
दे हितो मन में चिंताना ही करत वही पाछे प्रभु हित
ही करे काहे ते समस्त जीव के पालन कर्ता सखा भ
गवान है सो अपने भक्त के अपर कृपा करे या में कहा आ
श्रय है निश्चय अपने भक्त के अपर कृपा करे त आगे
सो अव कृपा करे या भांति पुष्टि माणीय वै हम
प्रभु के गुण विचारि स्मरण भजन करे यह सिद्धि
भयो ॥ ८ ॥ इति श्री हरि राइ जी के द्वाये सित पत्र
ही श्री पेश्वर जी कृत संपूर्ण ॥ १० ॥ अव ऊपर
दि आगे जो प्रभु अपने भक्त न को वरो क वहन क
ते हित ही करे परंतु भक्ति मार्ग की रीति को न छो
सो आगे वान करत है जो या भांति भक्त रहे ॥ श्री
सर्वदा सर्व भावै कहते भूते पुसवैया ॥ श्री महा चा
गदयु स्थाप्यतां तन्मय मनः ॥ १ ॥ या को श्री ॥ अव
गवद भक्त के लक्षन कहते है सर्वदा सर्व काल में

तो सर्व भाव में करि के भूत जो प्राणी हैं तिन को सर्वथा दि
ही करनें प्राणी मात्र को सुख ही देनें मन करि वचन क
रि निया करि द्रव्यादिक करि जित नो अपने में सा सर्थ होइ
निश्चाये तहां ताई जीव मात्र को दित करनें द्यारा खनी
एक यह भक्त जन के लक्षणों श्री महा चाये जी श्री ब्रह्म
मा चाये जी अपने चाये के चरण कमल में अपने मन
की स्थिति करनें एक श्री चाये जी के चरण कमल को
ब्रह्म आश्रय करनें सो अपने मन सो तन्यता होइ क
रनें मन वचन का म सर्व प्रकार श्री चाये जी महा प्रभु
के चरण कमल में ही मन राखे प्राणों अब श्री कहत
हो ॥ श्लोक ॥ तत एव ह्यतः स्थितिः श्रयः क्रियतां हृदि
श्री मुखं विनिश्चय मन्य तत्साम्यं दृष्ट्वा भूया को अ
थ ॥ रूप स्व हे जो प्राणी मात्र पर द्यारा खे श्री श्री आच
ये जी महा प्रभु के चरण कमल में अपने मन राखे सो ह
तार्थ रूप है निश्चय परम भागवदीय है ताते हृदय में प
होइ उ क्रिया विचारि निश्चय करनें प्राणी मात्र पर द्य
श्री श्री चाये जी महा प्रभु के चरण कमल को आप्र
य हति अथ ह्यतः ही प्रथम सिद्धांत वेद सास्त्र गीता
भागवत में प्रसात है नामें विद्यासन होइ ता को नि
यत्र सुख ही जाननें प्राणों अब श्री कहत हो ॥ स्त
श्री हृष्य सर्वदा स्मर्यः सकंती लास मन्वितः भक्त स
यस्था पी सकलः पुरो ज म न श्रिया को श्री श्री
फलात्मक तिन को स्मरण सदा करनें लीला स
भक्त न सहित सुमरन करे काहे ते सात्मक श्री
वृज भक्त न के संग अष्ट प्रहर लीला करत श्री ह
सुमरन करि गोता करि के भक्त के हृदय में सदा
तम स्थिति है काहे ते यही ति हे जा को आ
भगवान् को कि कर्म हृदय में संसार में श्री

भुक्तौ सुखिन करे तो प्रभु सगरे न दधि है न हं भक्त के हृद
 य में लीला सहित प्रभु स्थिति है प्रवचनो रूपा हत है
 श्लोक ॥ गुन गान तथा दुख भावन है न्य मे वचः तथा त्या
 गः सिद्धि दशः हृत्पमे तद्धृतुष्ट्यं भया न च यथा श्रीम
 रत्न कीलीला को गुन गान करे १ विप्रयोग दुःख की
 भावना करे २ हृत्पता करे ३ ता करि सब लौकिक
 वैदिक त्याग करे ४ यह चारो कृत आवश्यकी करे
 काहे ते जो प्रथम गुन गान ही करे ता करि के जितने
 होय होइ तिन के भस्म होइ जोय मुद्द हृत्प होइ त
 व अपने दोष पुरे अपने को तुष्ट जाने प्रभु को सबो
 पर जाने तब दुख हृदय में होइ जो से तो कछु साधन
 नाही करियो मेरो श्री कार प्रभु के से करेयो या भांति वि
 चारि के निःसाधन ता की भावना मन में होइ तब हृत्प
 ता होइ तब कछु प्रभु बिना और सुहाइन ही पाछे लो
 कि क वैदिक सर्व त्याग होइ यह चतुष्टय प्रकार करे ता
 को पुष्टि मारी थ फल होइ प्रथम साधन ए चार करे
 पाछे ये चार फल रूप सिद्धि होइ सो आगे श्लोक में क
 हत है श्लोक ॥ गुन गान भागवतान् सेवया दुख भा
 वन न हृत्प भावना हृत्प त्यागो विरह भावत ॥ पूया
 को च यथा ॥ परगुण गान सो साधन रूप ता करि सर्व दो
 ष हरी होइ और फल रूप गुन गान भगवान के हर मनो
 य जे से वज्र भक्त वेणी ते युग लगीत गाय के निवाह क
 रत है ते से ही वैश्व सेवा के श्रुनो सर में गुन गावत है
 जो कब समय प्रभु की सेवा को होइ यह दुःख की भाव
 ना होइ यह गुन गान ते से ता को दुख मन में होइ ता क
 रि निःसाधन ता सिद्ध होइ कितनी सेवा करे परते
 मन में पही दुखा है जो जन्म सगरो रथो ही गयो क
 छु भाव ह सेवा नवनी यह हृत्प ता सिद्ध होइ या भांति

हेन्यताकीभावनाकरतकरतसर्वदेहसंबंधीपदार्थमें
गउत्पन्नहोइतद्विधिसुइविप्रयोगाविरहकीभाव
नाहोइसर्वोपरमुख्यफलपाछेसर्वलीलाकोअनुभव
होइपदचतुष्टयप्रकारफलप्राप्तिहोइआत्मागोंअव
योरहकहूतहोइलोकएवंतुष्टयसिद्धयदिनान्यदये
स्तितालेवस्यमूलसत्संगतदभावेनसिध्तिहोइया
कोअर्थअपरकदेयद्वचतुष्टयप्रकारजाकोंसिद्धहोइ
ताकोंओसाधनकीअपेक्षाकहुनाही। तातेप्रथ
मगुनगानकरें ओरभगवदसेवाकरिदुखकीभाव
नाकरेंहेन्यताहोइभावनाकरोंसर्वत्मागकरिविप्र
योगविरहकीभावनाकरोंप्रहसाधनपरमफलसु
होसिद्धिभरणपाछेइसरेसाधनकीअपेक्षानाहीहोमो
यद्वचतुष्टयपदार्थपरसत्संगतेसिद्धहोइसर्वकोम
ूलसत्संगहो। सोश्रीभागवतमेंकहेहो। प्रथमस्कंध
सोनकवाकेपानुलयामलवेनापिनखेगोनपुनर्भव
भगवत्संगीसांख्यमन्योनैकिमुनाशिया। एकहणह
अप्रवदीयकोसंगहोइतासुखकोसमानखगलोक
तथाअचवर्गसुखमोहपयेनसबतुष्टहोओरएका
दसस्कंधमेंभगवानुद्धवजीप्रतिकहेहोनिरोधयति
मायोगोनसाखंधमेंउद्धवानखाध्यायतपस्याभोने
याएतेनदहणा। चतानियतछंद्रासितीर्थानिनिय
मायमा। पथावरुधसत्संग। स्वसंगापहेहिमा। २।
सत्संगनिहिदेत्यथायातुधानिखगासगागंधवोसर
सोनागाःसिद्धाश्चरणगुह्यका। ३। इत्यादिवचना
तुभगवानकहेहो। उद्धवमोकोसाखंधमें। खाध्याय
तपतथात्मागवृजछेदतीर्थनियम। इत्यादिमोको
वसनाहीकरतहोओरसत्संगकरिजीवमोकोवसक

हेत्यरा तस्य याम्ना गंधर्व च पुर सिद्धि वा एव मनुष्यत
वैद्य तार्थ नरोत्तमै सर्वसाधन को मूल सत्संग हो सत्संग
तत्तद्वपभाव हृदया हृद हो भाव की सिद्ध हो श्रुता ते म
पद ही प्रको सत्संग आ वस्य ही कलों यह सिद्ध त भयो ह
प्रति श्री हरि रात्रि हित सिद्धा पत्र ता श्री ही कलों पे स
हृ त एका रस म पू लो ॥ १ ॥ अब ऊपर चतुष्टय प्रकार साधन
कहे सोई फल कहे पुन गान प्रभु को ता करि भाव ह
सेवा अर्थ दुख की भावना पाछे हेन्यता की भावना
यह चतुष्टय सर्व पर कहे यह चतुष्टय सिद्ध भरो पाछे को
न भोति अत्र भव हो कहे हिसा उह जीव की होइ सो
आगे सिद्धा पत्र में कहत हो स्तोत्र भावनी यसदा चि
ने स्वा मिनी जलित मुहुं ता पल्ले शरयं मार्ग श्री मदा
चार्य रूपता ॥ पाके अर्थ पुष्टि मार्गीय भगवद्दीय
भोति भावना चित में करे श्री हृक्ष के वियोग में श्री
स्वामिनी जी को न प्रकार वारं वार जल्पना करत हें सो
भाव की भावना करे सो प्रेमा मृत में कहें हें एकदा श्री
हृक्ष विरहात् ध्यायंति प्रिय संगम मना वास्य निरा
साय जल्पती हें मुहुं मुहुं श्री स्वामिनी जी श्री हृक्ष
के मिलन अर्थ विप्रयोग करि वारं वार जल्पना करत
हें सो भाव की भावना करे सो प्रेमा मृत में कहें हें ए
कदा हृक्ष विरहात् ध्यायंति प्रिय संगम मना वास्य
निरासाय जल्पती हें मुहुं मुहुं श्री स्वामिनी जी श्री हृक्ष
म जी के मिलन अर्थ विप्रयोग करि वारं वार जल्प
ना करत हें यह भाव सर्व पर हें ते से यह पुष्टि मार्ग
पल्ले शरयं हें का हें ता पल्ले श श्री स्वामिनी जी हृक्ष
श्री आचार्य जी सदा प्रभु हें ता ते इन को प्राण दक्षीय
पुष्टि मार्ग हें ता पल्ले शरयं ता हें ता पल्ले श क
के यह मार्ग की फल सिद्धि हें ता ते विरह करि श्री

मिनीजीप्रकारभावनासहित अनुभवकरनेसे
भावकीभावनाकरनेहिश्रीस्वामिनीजीजाभातिव
रतहै सोआगोंकरतहै। सोकादरनेदेहिगोपी
गोवलामंदहायका। गोविंदगोपवनिताप्राणाधिपत
यानिधोपपाकोअर्थ॥ अबश्रीस्वामिनीजीकहत
हैगोपीजनकेइसदमकोदरसनदेहुंकाहेतेनुम
गोपीविपतिइंशराजाहोनातेराजाअपनीप्रजाको
दुःखनदेहिसुखहीदेतहोयहसयाहोहैनिसेहीहैश्री
हसदमनुमारीप्रजाहोनातेहसकोदरसनदेहुंदुखद
खिरो। औरनुमगायनकेबुलतिनकेअनंददाता
हो। सोगायहंतुमारेदरसनविनावहुतव्याकुलहै
तातेगायनकोदरसनदेहुंतथावनमेगाइचरण
गायनकोअनंददीगो। अबवेगिपधारिहमकोआ
नंददेहुंकाहेतेगोविंदहो। वृजकेइंदहो। इंदभाग
राजवहुनहोतेसेहीनुमवृजभक्तनकोसुखदेहुं
काहेते। गोपवनिताकेप्राणकेअधिपतिनुमारे
रसनकेमिलतेगोपवनिताजीवनदेरायेश्रीस्व
रूपानिधिहमकोवेगिहीदरसनदेहुंयाभातिस्वामि
नीलीलासहितप्रभकोनामलेविलापकरतहैना
मपांचभोगप्रआगोंअबअोरहंकहतहै। सोकेगो
पालपालितनिजवृजवृजवृजमुखानुधूपमान
इनेदाहिरुचिरोसंगालालिताध्याकोअर्थहोगोपा
लनुमगायनकेकर्ताहो। औरयहवृजनुमारेइतिन
वनकोपालनकरिसगरेवृजकेसुखदाताहोनुमसु
खेसमुद्रहो। यहवृजनिजजोनुमारेनामैवृजभक्त
मुपेछी। गायगोपालनचैतन्यसवनकोसुखदाता
। गायसुखवैसमुद्रहमकोदरसनदेहुं। तुमपरमा

सं. प. लनपासनकरतहो एसे श्री हृक्षमहमकों वदरसनदे
गोताम १४ भणे ३ स्तोत्र सचनेदतिजानेदसमुदा
यमदायकः दामोदरदयाई दिननाथदयापराध
याको हे श्री हृक्षनुमतो सदाही आनंदरूपहो भजमे
समुदायजीवमानके आनंददाताहो ओरस्यसोदज
नेदामउदरसो वाधेहो एसे भक्तनके वसहो ह्या करि
तुमारी हृदय आइ भीजिरहो है ओरदीभानाथहो
जो अतिहीनहो इ भक्तहो जिनके कोई नाही है तिन
के तुमहो ओरदया परहो सर्व परतुमारी दयाहो तो
हे श्री हृक्षदया करि हमकों दारसन देहुं नाम १२ भणे
४ आगे अब श्री हृक्ष कहतहो स्तोत्र पुरुषोत्तमसर्वो
गरुडिप्रियप्ररित्ति अने गरुडपरमप्रियगोपवधू
पते पया के अ हे पुरुषोत्तमसवते परे एसे सर्वो
परसबो गुणमारे सचिरहो सुंदरजा अंगको दारसन दे
नहेताहिने नखगिरहतहो सो भगवदीयागरे हो
रुण जया रूप देखिनेना पलक लागे नही श्री गोव
इत अंग अंग प्रतितिरखिने नमन रहत नहि नदिया
जाति सर्वो गरुचिरहो ओर प्रेम करि प्ररित्तहो सर्वो गमे
प्रेमसभारि स्थोहो अधिदेवक अने गरुडपरमसुंद
रहो गोपीजनको तुम परमप्रियहो तुमकों गोपीज
न परमप्रियहो गोपवधूके पति तुमहीहो ओर गोप
वधूके गोपकैसे हो तेसे भज्यो अन्त सो खेतमे
डारे नो उपजे नाही नाते बीजे के काम भुजो अन्त
न आवे देखिवेको अन्तहो तेसे ही गोपहो तिन
की वधूके पति तुमहीहो असे श्री हृक्ष हमको
अवदरसन देहुं नाम १२ भणे ५ आगे अब श्री
हृक्ष कहतहो स्तोत्र वज्रके अवलेवतुमहीहो सा
रो वज्र तुमारे आश्रयहो इ एक तुमहीको जानत

हैं और तुमारे के सब डेलें वे कुटिल दंहे मानो मधुप
पक्षि आइरही हैं और कलानिधि हैं। सूर्य में घोड
सकलातिन को इतनो प्रताप है और तुमनो कल
निधि समुद्र हैं। लोक होंतां इतुमारो प्रताप गुन
वरने को इसा सयनाही अपने स्त्रीय निज भक्तन को
विरह आति के हरन वारे वृज भक्तन के मन हरि वे
में तन्य रात्रपनो सुंदर मुख श्री अंग दिखाइत था
अनेक लीला करि समस्त वृज भक्तन के मन के हर
न में पगयन एसे श्री हृदय हृदय को कवहर सन देहुं
नामा २॥ भरो धा आगे अब और कवहर न हो। सो
मनो विनोद भावाधे भावाय हृदय स्थिति बंचली
हृत चित्त स्य भावा दोलित रूप भना। आया को अश्रु वृ
ज भक्तन के मन को विनोद जो आनंद के दान तुम ही
करि वृज भक्त आनंद पावन देह और भाव के समुद्र हैं।
जा भाव सो भजे सो ई सिद्धि को इ भाव के समुद्र हो। आप के
भाव को पास न पावे। सगर भाव जगत में हो। सो तुमारे
कनिका तुम भाव के समुद्र हैं। और भाव ही करि भक्तन के
हृदय में स्थिति विगनत हैं जो भक्त के हृदय में जो भावत
होता ईरीति सो विगनत हो। जहांता ई भावना ही तहांता
ई भावना ही तहांता ई कष्ट दुख की सिद्धि ना ही भाव
की भक्त के हृदय में स्थिति हो और अपने भक्तन के चि
त में बंचल बलाय मान कतो है। आ पुहें बंचल हो
भक्त को आस का ज प्रह्वे कर न हो। इतो तहांते चित्त
को बलाइ के अपने सैल गावत हो। भाव के सिखांग
भरे हो। जे से पात्र में थोरो जल हो। इतो दोलायमान
धूल के और पात्र में भरो सपूर्ण हो। इतो दोलेना ही
सो तुम भाव स करि भरे हो। तातें समस्त भक्तन के मेरे

पैसे भरि द्योहें ऐसे श्री हनुमो को कत हरसन देहु
नाम ॥ ३५ ॥ भोगे ॥ आगे अब और हंकहत है स्तो
क मदा सुगंध सदा सुगंध पांन तत्पर मानसः नवनीत
लिप्त सुख पयो विंदु युता थस दया को अथ ॥ अथ
पने निज भक्त न मे मदा सुगंध है आप कछु जान राख
नवाही निभक्त कहें सोई करौ प्रभु को प्रीति य सो दा
जी के दो लक अति ही सुगंध मानो कछु जान नही ना
ही और सदा सुगंध पांन में तत्पर मन करि होण लण
में श्री य सो दा जी के स्तन के सुगंध पांन में तत्पर मन करि
होण लण से श्री य सो दा जी के सुगंध पांन करत है मन
हवा ही में है मुख में नवनीत लिपटि रहोहें ना करि
परम अद्भुत सो भादेत है इध की निद्र अधर पाखागी दे
ता करि परम अद्भुत सो भादेत है ता करि अधर सो भायमी
न है ऐसे श्री हनुम को कव हरसन देहुगे नाम ॥ ३६ ॥ भ
गे ॥ आगे अब और हंकहत है स्तो ॥ चल्का कत वर
न मटना धिक् सुंदर ॥ कोपोल विलसदाग कस्तुरी तिल
कांचित ॥ धिया को अथ ॥ सुंदर अलकन करि आवृत एसे
वेदन कमल शोभाय मान है ॥ और सगरो श्री अंग मद
न जो काम देवते हूं अधिक् सुंदर है कोटिका मवारनेय ह
सुंदरता पर करिये ॥ होऊ कोपोलन पर कमल पत्र ला
लक मकुं सादिग सो सवार है ॥ ओ एक कस्तुरी को तिल
क भाल में विराज मान है ॥ ऐसे श्री हनुम को कव
हरसन देहुगे नाम ॥ ३७ ॥ भोगे ॥ आगे अब और हंक
हत है स्तो ॥ सिजन नूपुर सो भाटन नख भयाण
भयित ॥ सघोष मरु सुकेटि विलसत्पुद्गटिका
१४ पावो अथ ॥ होऊ चरण कमल में खण नूपुर सो
सो भाकी आद्य एसी सो भात्रीय लोक में नाही दसो
नख पर नख भयाण नख वली विराजत है सो को

दिव्यंदुसूर्यकी क्रांतिलजावतहैं। श्रीरसस्य कटिपारु
 द्रुधंत्विनाविलासकरतहैं। सोवारवारसुखसुंदरहोतहैं
 एसेश्रीहृत्सहस्रकोंकवदरसनदेहुगे। नाम। ४३। भ
 गो। १॥ अथ श्रीरसकहतहैं। श्लोक। राजहृदयवेयाधु
 नधभूषणसोभिते। किंजल्कीचनलोलातविसाला
 तविललण। १॥ याये। अथ। हृदयकेऊपरबाधकोनख
 स्वर्णमेंजड़ितकरिनखभूषणश्रीयसोदाजीपद्म
 तहैं। जोमेरेपुत्रकोंकारकीदृष्टिनेरखे। पदस्यस्थल
 मेंनखभूषणसोभितहैं। नैनकमलसमानअतिलोल
 चंचलहैं। जेसैकमलसीतलहैं। तापहारकहैं। तेसैही
 श्रीठाकुरजीकेनेत्रकमलसगरेभक्तनकेहृदयकेता
 पहारकहैं। औरनेत्रनकरिअनेकभक्तनकोरसदान
 करतहैं। संकेतसचनकरतहैं। ताकरिलोलचंचलहैं
 औरनेत्रकमलवतवडेविसालहैं। धूणायमानअ
 रतविललणहैं। जकी। उपमा। काहेंसोंकहीनजाश।
 अनिवचनीयहैं। ऐसेश्रीहृत्सहस्रकोंकवदरसन
 देहुगे। नाम। ४४। भगो। १॥ अथ श्रीरसकहतहैं।
 श्लोक। हीनैकसरणस्वीयसर्वसामर्थसंयुत। विज
 राजसुतस्वीयजननीकंठभूषण। १॥ याया। अथ।
 हीनहोनिजभक्तनकेशरणायहैं। अपनेस्वीयभक्त
 हेंन्यहोयशरणकरिराखेहैं। तिनकोसर्वभांतिप्रभु
 हाकरतहैं। काहेतेजोश्रीहृत्सहस्रकोंकवदरसन
 थयुतहैं। सोनवमस्कंधमेंश्रीभगवानंदवीधाप्र
 तिकहेहैं। श्लोक। एदागगारपुत्राहान्प्राणतवि
 तमिसंपर। हित्वासासरणयाता। कथ्यतास्तुमुत्स
 को। १॥ इतिवचनात्। श्रीठाकुरजीकहेजोसभक्तस्त्री
 घरपुत्रप्राणचितसर्वसोकोसमर्पेन कसे।
 रीसरणहोइरहेहैं। तिनकोछोडिवेकोसेके

द्वारं मेउतकी अष्टप्रहरहाहीकरतहो। तातेदी
होइभक्तसराणहैं। तिनकीरक्षाप्रभुआपुकरतहैं सर्व
प्रार्थयुक्त श्रीहृषीकेश व्रजराज जो श्रीनंदराइजीके पु
त्र अपनी स्त्री यजाननी य सोदाजी के रके भूषणहैं। ऐसे
श्रीहृषीकेशको कवदरसन देहुगे। नाम ॥ ५० ॥ भोग ॥ १२ ॥
प्रार्थति श्रीरामिनी जीविप्रयोग विरहमैली को सहि
प्रभुके नाम कहत कहत देहानुसंधान भूतिगंध मधु
वायके गिरी विरहमै तनमय होइ बोली। सो आगे कह
तहैं ॥ श्लोक ॥ हाहलहासदानंदहावृंदावन भूषण
हानंदराजन नयदाय सोदा करवतन ॥ १३ ॥ या ॥ अ
व श्रीरामिनी जीव कहतहैं ॥ हाहलहा श्रीहृषीकेश नाम
प्रसाद कहैं ॥ सर्ववेदके स्मृतिको सार सो व्रजभक्त श्री
हृषीकेश नाम को सुभरतजपकरतहैं ॥ ताही तें श्री आ
चार्य जी महाप्रभुहैं ॥ अष्टाक्षरपंचाक्षरमें यही सर्वोपरि श्री
हृषीकेश की धारनवतारहैं ॥ विरहकारि हाहल कहैं ॥ हास
दानंद तुम तो सदा एव स हो ॥ सो हृषीकेश आनंद देहुं हा
वृंदावन के भूषणहैं ॥ श्रीहृषीकेश तुम तो श्रीवृंदावन ते एक
क्षणहैं ॥ बाहिर नाही जान भूषण रूप हो ॥ हानंदराज
कननय पुत्र ॥ हाय सोदाजी के अंकमें खैल के कता
एसे श्रीहृषीकेशको कवदरसन देहुगे। नाम ॥ ५५ ॥ भोग
॥ १३ ॥ आगे अवशोरहैं कहतहैं ॥ श्लोक ॥ हागोपिके स
हानाथ हागोकुल परंदर ॥ हाहा व्रजजनार्तिघृहाहा
निसाधनाधिप ॥ १४ ॥ या ॥ अथ ॥ अव कहतहैं जो
हागोपीजन के इसराजा हानाथ तुम तो हमारे नाथ
हो ॥ यह हमारी रक्षा विनिही करो ॥ जिसे पंचाध्याइमें वि
रहकारि भक्त कहैं ॥ हानाथ रमण प्रेष्टकासिका
सिमहाप्रभु ॥ हा सो खैलपनामया सखे हरसनसं
निधि ॥ तेसे ही इहं कहैं ॥ हानाथ हे गोकुल के पतिय

इति संप्रत्यक्षं भोगना हीनोऽपि ते संतुष्टा गौ
किं इदं या तुमको विठिरहे हो। हम को क्या नंद
यजजन के आर्तिके हरनहारो तुम पूजन मत ले
बिना ही सहे हो। फाहे तो दे दू यज्ञ छोड़ित रिगज का
जन यज्ञ की ऐ त व डंड सगर व ज बोखिको डंडने
घण्टागे सो गो बडु न उठा य सारे व ज बीर रक्षा की
भी अवधि है इस मुद्र में प्रवृत्त हो। सो तुम ही को न ल
में सामर्थ्य हो। ताते वे भी बिदे आधिकार। यो तुम से
से हो नि साधन भक्तों अधिपति हो। सो हम बिदे क
रिके बाहुल हें हे इंडी मनसारी स्थित दो पर ही हैं
साधन करि रहित नि साधन हो। हो सु म स्व। दास न रहे
आर्ति हरी नाम। श्रमा श्रमा श्रमा श्रमा श्रमा श्रमा
तहैं लोक। हाहा नन्दादि स्वस्वदादा नंगान वासी
राहा नि राखे नाले व गुहां धन वैसा प्रिया पायी
निजुय नन्दादि गोपापी सेवा गा प्रिय वैक एक जु
मही सर्व स्वरूप तुम बिना चाँस्पगा पदार्थ नुष्ट
एक तुम ही सही स्वस्व जीवन जान हो। योग तुम से
से नात्र राते जो काम देव को निलंब कुली अन्न गर
पहेत नमै नोन ननु वृक्ष प्रमद ही काशन मन्त्राय
वेसन मय काम देव दुम्भ को दिवि मे द्विज भगो ने
इस समी मोहि न नय राम के हा प्रहृनों जाक
के हुं छन्द वला नीले जिते तुम ही अनुभव
गर्व किं नु चता पिता पदार्थ ते वाक्य प्रादि
वृक्ष प्रमद नय राम के हा प्रहृनों जाक
लि लि लि लि लि लि लि लि लि लि लि लि लि लि लि लि
लि लि लि लि लि लि लि लि लि लि लि लि लि लि लि

[illegible]

समस्त सर्व की बुद्धि को पदस्वल्पियुग आय अर्पते
तैं सर्व हरिलीने हैं तहों को कहें जों को कोय ह
लखो जो होय पदकाल तहों श्री हरि राजी कहत
जों को श्री वीर आचार्य जी महाराज प्रभु को आग्र्य
नमन धन करि कहें हैं तिन को ना ही बाधक भ
गो श्री उन को सहाय कहें सासने विगिहीये
हिन में पद सिद्धि हो सो एक दस स्वधर्म कविक
हो लोका कायेन वाचा मन से द्यो वी बुधा न
वानु सत स्वभावात् करोति यद्यत सर्व सं पश्ये ना
यण येति समर्थ येत या भाति प्रभु को समर्थि श्री
आचार्य जी दशपाठ निश्चित हो श्री आचार्य जी
महाराज को आग्र्य की गतिन को यह काल ना ही वा
धक हैं दशस्वधर्म श्री भुक्त देव जी कहें हैं लोका ॥
कल दोष निधेरा जन्तु तिष्ठ को महाना कतिना
देव दुष्ट सस्य सुत बंध पां वृजेत यद्यपि हरि राज कलि
युग पदकाल साधकों निधि हैं परंतु एक यामें महारा
ज हैं श्री हरि देना स्वकी तेन करत है सो सर्व दुख
छुटि के प्रभु को पावत हैं ताते श्री आचार्य जी को भा
जाव स्वकी भयो तिन को यह काल परम सुंदर
१ तहों को इ पूर्व पद करे जो तुमारे से वक्त को इय
ल बाधक होत है खियत है या भाति को स्वकी न
श्री हरि राजी कहत हैं लोका ॥ न सेवान कथा
भावने नापि संश्रय ॥ नित्य मद्रि प्रमन सां वथं
प्रयास्यति ॥ या के अर्थ ॥ अब श्री हरि राज
तहों जो ए सो जीव है तिन को तो काल बाधक
जो बुद्धि मार्ग में प्रथम भगवद् सेवा मुख प
की रीति सां भगवद् सेवा ना ही करत त
नारायण जी के प्रयासि सा मुनेत

मैं भगवद् धर्म आवैं सो कथा हूँ नही सुनत कोई श्रव
लोहैं इत्यादिक सहाय नाही हें तथा अंग भंग रोगी हें
भगवद् सेवा नवनी तो कथा को कोई भगवद् सी कहें
सो हूँ न मिले तो मन ही करि प्रभु के नाम अष्टाक्षर में
सरन की भावना हें नीला की भावना मत में भाव वि
चारें यह नवने तो लौ बिस वैदिक दुख सुख सर्व छो
ड़ि कर स श्री आचार्य जी महा प्रभु के चरण कमल को
आश्रय राखें या भांति कहें भगवद् धर्म में मन लगा
वें दिह संवंधी संसार प्रि दुख सुख ता ही में लगाइ के
नित्य जे जे अष्ट प्रहर दुख सुख में हाय हाय करें तो ति
न को इहां काल कहा करें उन को बाध कही करें तहां
कोई कहें जो सेवा एक तथा कथा ति कहा होइ कलिके
दोष तो बहुत हें या भांति कहें नहा कहत हें जो नव
संबंध में श्री भगवान् न आपु कहें हें जो दुवाया प्रति
श्लोक मन से कथा प्रतीति च सालोका दिचतुष्यं ने
इति सेवया पूर्ण कृतो न्यत्काल विमुक्त इति वचना
त भगवान् न कहत हें जो जा जीव को मेरी सेवामें प्रतीत
है विस्वास हें तिन को मैं वाखो मुक्ति देत हों सालोका
१ सामय्य २ सायुज्य ३ सारूप्य ४ मोनाही लेत हें
एसी सेवा करि पूर्ण हें तिन को काल कहा करि सके
मेरी नाही चलत हें और भगवान् की कथा के सी हें
सो सप्त संबंध में श्री शुब हेव जी कहें हें श्लोक नमो
नो दिंद माहात्म्य मानंद स सुंदर अणु यात्की तेय नि
त्यं सद्गताय न संश्रय १ इति संबंधे शुक् वाक् १ प्रवि
ष्ट वर्ण रंध्रेण स्वाप्ता नाभाव सरोरुहं धुनेति समलंघ्य स
मली नस्य यथा सरत २ इति वाक्यात् शुक् देव जी
कहत हें जो श्री ठाकुर जी की कथा मन सुंदर सुनत हें
नित्य सोइ तार्थ रूप हें तिन के कारण रंध्र में श्री ठाकुर

जीकी कथामत कर्णंध्रद्वारा इत्यमे जात हो तिनके स
गरे होय इत्यते जात हो तिनके सगरे होय इत्यमे हो
तिनके इति हो तहां कथा कह सुने सुने पाछे ओस
अनुवाद कर सोती नीजी वकी छिताथे हो जे से गंगा
जल ल्यावे लाय सगरे आस पास के पवित्र हो आसी
कथा कह जाते भगवद्धर्म में मन होय ताको यह का
ल बाधक नाही है आस के बाधक हो आगे अ
व ओर एक हत हो लोक ॥ सत्संग दुष्ट भो दुष्ट संग सं
चित्त नावृत्त अनायासे न संसिद्ध का गति से भविष्य
ति ॥ अथा को अथ ॥ अव श्री हरि आजीव हत हो जो स
त्संग तो महा दुष्ट भो हो ओर दुष्ट संग विनाय दुजीव
तो स्वभाव के दुष्ट ही हो ता में सत्संग दुष्ट न भवे
ओर दुष्ट संग विना चित्त नाही आपते विन जनन दसो
दिसते आवृत्त हो सो जीव को भगवद्धर्म में लगन ना
ही देत दे दुःसंग को गंध हो सो बाधक हो त हे यद
तो दसो दिसाते दुःसंग हो इन को बाधक हो जे यामें
कहा कहनो सो श्री गुरु आजीव ज्ञान में कह हो अहं क
गीद्वग भंगी संगी ना भो हतो सखा अन्य संबंध गो धोपी
कंधरा से व बाध तो पा भोति अन्ध संबंध हो गंध हत
गरो क दो आर मेरो तो दसो दिसाते दुष्ट संग विना चि
तन आवृत्त हो सो मेरी अव कहा गति हो न दार हो से
मो की जानि नाही पस्त हो आगे अव ओर एक ह
न हो लोक ॥ संग्रहं यि तु मखिलं ते श्री दुःयतु मे
आश कली कर्तु मधुना प्रभो बाल विकीर्षितं भ
या को अथ ॥ अप कह दे हो दुःसंग दे दुष्ट वंधी संस
री लोग अहता ममतो क भिराति न को ग्रह न क
पास राखि ऐसे अनेक भोति वे हो अ
मैं ही हत हो

करे जन्म में ऐसे ही मनुष्य मोक्षों मिलत हैं सो हे प्रभु
यह आधुनिक जीवको तुम ही नचावत हो काष्ठी
पुनरीवत हो रतमारे हाथें थैं सगरे जन्म हे तुम जन्मी
हो जाभांति वजावो ते ये ही वाजत हैं और तुम तो वा
हक की नाई की भावत हो खाल करत हो सहज में
हसत था सगरे जन्म यह माया करि है भूमत है यामा
ति कहे अब श्री हरि राइजी कहत हैं जो अब हम पर
छपा करों मैं अत्यंत है न्य होय प्रार्थना करत हो ताते
अब मो परलमा करों यह माया करि प्रेरित दुख सु
ख ते हो डावो या भांति प्रार्थना करि अब है न्य ता प्र
भु सो करत हैं ४ आगे अब और ईक कहत हैं सो
हानाथ हा छपानाथ गोपीनाथ ह्यानिधे वृजना
थरमानाथ निजनाथ जगन्नाथ ५ या अब श्री
वृष्णी हरि राइजी कहत हैं हानाथ हमार तुम नाथ
हों ध्यामी हो ताते तुम विना और हम को न सो दु
ख सुख कहे अब यह संसार दुख ना ही स हो जात
हैं तुम अपने जा निर्या करों हा छपानाथ तुम आ
गे ते अपने जीवन पर छपा करत आगे हो सो अब ह
म पर छपा ही करों काहे ते तुम गोपीनाथ गोपीजन के
नाथ हो गोपीजन नित्याधन नितन परस दो छपा करों उ
न के सगे कार्य सिद्ध करों ते ये हम दंनिः साधन हैं हम प
र छपा करों और तुम वृज के नाथ हो कंस संबंधी अने
क हेतु आगे सर्व को मारे अग्नि ते जल ते काल के वि
ध ते सर्व प्रकार अपने वृज की रक्षा ही की नी ते से ही
हमारी रक्षा करों रमा जो लक्ष्मी तिन के नाथ हो असे
प्रभु हम ऊपर प्रसन्न हो जं और अपने भक्त न के मिज
भक्त के नाथ हो भक्त प्रसन्न रहे सुख पावें सो ईक कहत हैं
सो नवम संबंध श्री भागवत में भगवान् दुबोधा प्रतिक

हे हो श्लोक ॥ अहं भक्तपराधीनो ह्यस्य तं त्रैलोक्यं हि जासाधु
 भिर्युक्तं हृदयो भक्तैर्भक्तजनप्रिय ॥ १ ॥ भक्तजनके पराधी
 न हो स्वतंत्र नाही हो ॥ हे विप्रभजनमोको बहुत प्रिय
 हे मे भक्तके सदा हृदयमें रहत हो ॥ पाशोति तुम अप
 ने निज भक्तनके नाथ हो ॥ जाते हू पावरो ॥ ओर जगत
 ति हो ॥ सगरे जगतमें तुम ही करत हो ॥ सो होत है नाते
 तुम हू पावरो गोत वयह काल तुमको दुखति श्रेय ही
 नाही हे हि गोपाध्यागे श्रवण ओर हू करत हो ॥ श्लोक ॥ गो
 कुलाधीस गोपीश भ्रजाधीश वृजप्रियो भ्रजनं दनिजा
 नंद गोकुलानंद गोप्रियार्थपाको श्रवण ॥ हे श्री हू स तु
 म गोकुलाधीस गोकुलके राजा हो ॥ सगरे गोकुल वासी
 तुम ही करि सो भित हो ॥ गायनके रसक तुम ही हो गो
 पीजनके ईस तुम ही हो ॥ ओर सगरे वृजके राजा तुम
 ही हो वृज तुमको प्रिय हो ॥ तुम वृजको प्रिय हो परस्य
 सो हू समस्वधर्म व्रताने के धो हो ॥ अहो भाग्यमहो भा
 ग्यनंद गोप वृजो कसो ॥ यन्निन परमानंद पूरण व्रत
 सनातन ॥ इति वचनात् ॥ वृजके जननंद्य सो हो गो
 पगोपीके परम भाग्य हो ॥ जो निन के मित्र श्री हू स पर
 मानंद रूप हो ॥ सगरे वृजको ॥ आनंद दाता हो ॥ ओर
 अपने निजानंद में मग्न हो ॥ निज भक्तनको हृदय
 नो आनंद दान करत हो ॥ गायनके कुलतिनको आ
 नंद दाता हो ॥ कहते गाय तुमको बहुत प्रिय हो ॥
 भगवदीय गोर हो ॥ आगे गाय पाछे गाय इत गाय तु
 उत्त गाय गोविंदो को ॥ गाइन में रहि बोई भावो ॥ ए सो
 गाइ प्रिय हो ॥ ये से श्री हू स हू पर हू पावरो ॥ ई श्री
 गोश्रवण ओर हू

॥ दास हू दास्य सिधो

रहनहैं हाह्यनुमकेसैंहैं। निःसाधनफलात्मकहैं
 मोहमापरहृपाकरो औरतुमनोहृपाहीकरोगे य
 हनिश्चयहैं परंतुहमकोधीरजनाहीरहनहैं ताते
 विजसकरनहैं सोईश्रीगुसाईजीविजसमेकहैंहैं ए
 वंदास्यस्यभावोयंसमयेवारिसुच्यति। तथापिचा
 तकःषिन्नोएतत्पेवनसंसयः॥१॥ मेघकोस्यभावहैंत
 वरचातिनक्षत्रसिंवरसिंकेसमयआएजलसंनवर
 नहैंपरंतुचात्रकअपनीरहता वरयदिनलौरटिवो
 ईकरेंतैसोईश्रीब्रह्मअपनेभक्तनपरनिश्चयहृपाक
 रगेभक्तकोआर्तिकर्तव्यहैंहृदयालिंधोअवतुमवे
 गिहीहृपाकरोकाहेतैतुमहृपाकरोतोसगरोवृजअ
 नकूलहोइमायाबाधवनहोइऔरतुमजहांताईद
 पामेडीलकरनहैं। तहांताईमायाकरिहमदुखपाव
 नहैं। सोश्रीगुसाईजीविजसमेकहैंहैं। लोक। नाथन
 कूलतायातेसर्वायात्यनुकूलता। तस्मिस्तद्विपरीते
 तुसर्वमेवभवेतथा॥१॥ हेनाथतुमारैअनुकूलतेसर्व
 अनुकूलहैं तुमारैविपरीतितेसर्वजगतविपरीति
 भयोहैं तातेतुमहृपाः॥२॥। तुमकेसैंहैं। श्रीस्वा
 मिनीजीराधिकाकेकरपतिहैं। परमसुंदरहैं। औरह
 मबहुतहीनदुःखीहैं। तातेहृपाकरोभली मेरेदोष
 देखिहृपासैंडीलकरनहैं। तामेंनिरंतरअपनेश्री
 वधूभावायेजीकीआश्रितहैं। यहजानिकेंश्रीआ
 वायेजीमहाप्रभुकीकानिकरिहैंहृपाकरो याभा
 तिदेन्यताकरतकरतअपनेदोषकीस्मृतिहोइ।
 प्रथमविरहकारिकेंप्रभुकेनामस्त्रीलासंबंधीकह
 ताकरिअतिदेन्यमहाप्रभुजीकोआश्रयपाछेअ
 पनेदोषस्फुर्तिसौश्लोककहतहैं॥७॥ श्लोक। दुष्ट
 सुदोषहृष्टेषुभाग्यमुष्टेषुमत्प्रभा। निःसाधनेषुन

सुखाकुरुष्याकसापायाकोश्रथोचदश्रीहरिरा
कहतहो जोमैवडोदुष्टहो सोथोरोदुष्टकरिदुष्ट
दीहोअपारअनेकभातिहोमानसीकवायकक
कवचनकरिअपारदोषतादुष्टताकरिपुष्टिहो
पुष्टभागवदधर्मकरियहभागहो सोमसो गयोह
भापमैभागवदधर्मनाहीलिखोवो बुडिहोइहो सुख
होहिमैरेखुइतजो भगसोहो जो तुममै प्रभुहो सो
निःसाधनहो मोतेंसाधनगवहोनाहीवनतहोमति
करिगदितहोअन्यमतिहोएसो जोमै तिनपरस्वमि
हीअवतुमदयाकरों काहेतेंमै प्रभुहो मैरोयकी
अरमतिदेखो तहो कसुचितप्रभुहो जोरोयकीन
देखेगुणरोयहो प्रसोदयोवाहियोयाभोतिकहो
तहो श्रीगुसोईनीचिरप्रकीर्णहो सोनहो कहनहो
कहो वलिष्टमपिमहोयातदो कपायेतिदुर्वला
याइश्वरधर्मतेहोखाणंजीवधर्मनाथिअपराधपि
गगनावेवकायावृजाधिपः सहजैवयभावेनस्व
सुदृतयाचनः यद्यपिमैरोयवहुतहीबलिष्ट
होतऊनुमारीरुपाकेअगोदुर्वलहोनुमारीरुपाइश्वर
धर्मसुपहंदोयतीवधर्मतेकहातोइश्वरगोताते
करोअरनुमवृजकेअधिपतिनिःसाधनः फलान
कहातोअपराधहोमारहो तिनकीगननातुमव
नाउलितनाहोकाहेना सहजहीमनुमाराणसोई
यहो जोयहरोयमहाछुडकहाह पुत्रकेभावत
मेलनपायननामलीयो सोकालदेवधनते
नुमनेअच्छहो सोरोयदखतहीनाहीताते
रुखाकरोअपराधवओरदुर्वलहो
वतेसवेतत्वतो निरुद्धचरितेहोइहोअप
मजनेः सहजैवयकाअथोइहोअप

रमेदेहसंबंधीनामग्रहं नाममनाकरिमेरेचित्तफ
 है। सोयहसंसारनेमेरेचित्तकोनिबर्तकरे। निरोध
 औरनेकरिअपनेमेंलगवो जेसैंदजभक्तनकेचित्त
 कलीलाकरिअपनेमेंलगवोहृदीदूधमाखनइ
 मेंदजभक्तकीचित्तहतो सोपभुचोरिकरिअपने
 गारे नेसेहीहेश्रीद्वसनिरोधधरित्रकरिहमार
 नअपनेमेंलगवो। अपनेहृदयमेंविचारैजोये
 एप्रभुहैअपनेमनसेनानिआवश्यकपाकरतव
 अपनेसोअनकेभक्तकेहृदयमेंसदास्थितिहै। सो
 परदुपाकरो। श्रियागअवओरहंकहतहै। श्लोक
 दृष्टदुखितसुखाननुभूतसुखितर॥खदुखनाति
 रागः श्रीद्वसपणंसम॥१॥पावतअथ॥हेश्रीद्व
 तुमकेसैंहै। अपनेभक्तजोदुखलेअकरिपीडितह
 इ सोतुमनाहीदेखिसकत भक्तप्रसन्नहै सोभुमके
 भावतहै भक्तदुखीहोय मलीनसुखदो। सोतुमन
 हीदेखिसकत। काहेजैसर्वभूतप्राणीमात्रकेसुर
 दाता। सोभक्तजोदुखकेसैंदेखो। यदेविचारिके
 मकोबडीचिंताहोतहै जोभक्तनकोलेसअवसहन
 लागे। सोविज्ञानिमेंश्रीगुसाईजीकहेहैं। श्लोक। जाना
 सिद्धभभागोहंदर्योगोबुलेश्वर। भक्तलेगासहिबुल
 खभावकुरुतेन्यथा॥१॥नेयहजानतहो जोमेरेअवदी
 मंदभाग्यहै हेगोबुलेश्वरनुमकेसैंहो भक्तलेसकत
 हुनाहीसैं। सोखभावमेरेलायिमेरेअवसहनहो तो
 मेकहाकरे सबभूतप्राणीकिनुमहीमुखदानाहो श्री
 रअपनेनिजभक्तनकोदेखिकेअत्पतकरणाकरिह
 हीकरतहै। एसेभक्तनकेकरणासिधुश्रीद्वस
 नकीमेंसरागहो। ओरकहाकरिसकोशरणही
 करतहै। श्रीगोअवओरहंकहतहै। श्लोक

का। अथ मंदपक्षानंदो निजानंदः। अथ स्थितः। स्वस्थानं
दृष्ट्वा तत्र श्रीवृक्षशरणं ममा। अथ कोऽयं श्रीवृक्ष
तुमकोसे हो। अथ पारवदुतश्चानंदकथं परिहरे हो। पर
मानंदरूप ही हो। तुम अथने निज भक्तन के अर्चन दृष्ट
ता हो। जो को उतुमारे अथिन हो। तिन के अथिन तु
म ही हो। तिन को स्वस्थानं दको स्थान करन हो। सो द
समत्वं धर्म श्रीनंदराजी कहें। मन सो वृत्तयो न सुदृ
सपादा वृत्ता अथ। वाचा प्रिधा विनीना स्त्री काय
तत्प्रकाशा दियु। मन वचन काय कश्चि वृंद के पदा वृ
न के अथ अथ नो है। तिन को अथ काय कश्चि ना ही कते अ
हें। सब सिद्धि भयो तातें जो भक्त तुमारे अथ अथ को यो है
तिन को स्वस्थानं दको दाना हो। ऐसे जो श्रीवृक्ष तिन
की मंत्रारण हो। सो नंदरत्न सो श्री अथ अर्थ जी महात्र
भूक है दो। तस्यात्स वात्मना नित्य श्रीवृक्ष शरणं
ममा। नित्य श्रीवृक्ष की शरण की भावना करन अ
हें। ओर भाव दगी ता में श्रीवृक्ष कहें। सब धसान परि
न्यज्य मा मेवं शरणं वृत्तेन दाहत्वा सर्व पापे भयो मोक्ष
यिष्यामि मा युच। अथ जे नर सर्व धर्म छोड़ि शरण
अथ मं मारा रोय न को नाय करणों। इत्यादि वचने
क वचन से तातें है श्रीवृक्ष मो ते कष्ट धर्म ना ही वनि
आवत तातें तुमारी सरन की भावना करे नो फल सिद्ध
हो। अति श्रीहरिराजी। हत सिद्धापत्रता को टीक श्री
गोपेश्वरजी। हत संप्रण। १३। अथ ओर कहत है जो
वृक्ष की शरण की भावना करे। सो श्रीवृक्ष के चरण
रणारविंद की शरण वदुत दुध भई। सो को नम
कार सिद्ध हो। सो अथ अथ वं कहत है जो या भाति रह
तों शरण दिभक्ति सिद्ध भयो। लोक॥ श्रीमत्प्रभुप
दयु गले स्थाप्य चित्तं स्वमत्कारित दनु।

विष्णुवंभवति तदीयस्त्वसर्वतः सकलेशया को च यः
७२ महिषासुरजो मेरे प्रभु श्री आचार्यजी महाप्रभुति
हो कृपणा विंदसे आपनो चित्त आपनकी मे
सो हो उचरण वामल परमयसकारी हो भातिरक
अनुभव दयावत हो तापे वास चरण के आश्रयने
पुष्टि सज्जो अनुभव होत है इह ए चरण के आश्र
यने मर्यादा भाति की अनुभव होत है सो श्री गुप्त
जी ललित चरणों के देह पुष्टि भाति स्थिति इत्यम
या वाचन दायित्व इत्यादि दायन हो गी मयया पू
र्वस्थिति १ इत्यादि वचनात् सो जाननो श्री वंद्य
नमो तद्विदित भोगो हो प्रभुवेन नास्वान है तहं पु
ष्टि एवामचरण स्थिति है ताके आश्रयन मया हो भक्ति
रूप रस चरणों के हो ऐसे उचरण महाप्रभुजी के
चित्त के आश्रयकारि मन रगायो ना करिनुम अनुग्र
हणीयो है श्री हृदय देव तुम होत दीयके सब स्वयं हृदय
हो ना करिनुम मगरे भजन को सब एव कृपान के सिद्ध
कनो हो प्रह क हिंदु य हजता ए जो को इ श्री हृदय के
रण कमल में चित्त को लगावै तिनको कल्याण होइ
नवम संकंध में भाव न कहै हो लोक देदारगा पु
आता आणा न चित्त सिमें पर दित्वा मासरां याता
कथं तास्त्यनु मुमुक्षु १ घर स्त्री पुत्र प्राणादि सर्व सम
प्राप्ति श्री हृदय को कहि शरण हो तिनको प्रभु क वदना
ही होइता सो श्री हृदय में श्री आचार्यजी कहे शरण
स्थाय सुधारें सरण स्थ जीवनो निश्चय उद्धारी है
श्लोक ॥ अन्ध आश्रयत दीयै कयदा श्रय विरोध
तत्प्रभु हृदय जित नाया कारणं त्यजतां हुनो २
को चो ॥ अन्ध है अप सो श्री हृदय के चरणों में
न चो भावे जो सब सिद्धि होत हो अन्ध आश्रय

महाबाधकहै अन्त्याश्रयणसो बाधकहै जो तदीय
भगवदीयको हंचरणकमलके आश्रयसे विरोधही
करे नो चोरजीवके हावसुते सो तो गिरेही अन्यदेव
मनुष्यराजा इनको आश्रयन करै तहां कहतहैं भग
वत्पदप्रपरागायुषो नदियुक्तिनरं मरणोपित्तो
इतराश्रयणगजराजगंतो नदिरासभमप्युरीक
इतो शिभज्वानके चरणकमलको छोड़ि अन्यदेव
को आश्रयणसो जे सें हाथी की चमसवारी छोड़ि
धापरचंदे स्तुतिमै कहै हैं हारीनस्तुतो नान्यदेव
नमस्कार्यो नान्यदेवनिरीक्षयेत्तज्जन्यदेवनम
स्तुत्यो नान्यदेवनिरीक्षयेत्तज्जन्यप्रसादसाहेन्ता
न्यदायतनं वजेत्तज्जन्यशरणायेतु न्येवाना
न्यसाधनं जन्यभोग्यभोग्यायेते तु सर्वे धिकारि
णाम् इति वचनात् चोरदेवको नमस्कारनकरै अन्य
देवको प्रसादनलेश्यनन्यप्रभुकी सरणहोसा
धनसे दोसरणगकभी हसकी तब प्रभुप्रसन्नहो
इ अन्यश्रयकरै ताके उपरप्रभु उहासीन होइ जाइ
सो जे सैं वहासामर्थदेव सैं नाही हंतो अन्यश्रय
करतहैं जे सेरासो दरदास संभलवारकी स्त्रीने रंच
क अन्यश्रयकीयो ताते पुत्रमले छुभयो बहुतरव
हंपाणे ताते वैधव भगवदीयको अन्यश्रयनि
श्रद्धीसी द्रुत्यागदुराणसो बाधकहै भाधागश्रव
ओरदेक कहतहैं श्लोक। असत्साय चत्पागो भाव
बाधकनोयतः यथा व्याघ्रबाधकस्याछरीराघेश
रीरिणः। अथा केत्वर्थे अन्यश्रय छोड़ै कहै नो भग
वदभावसे अत्सागबाधकहै ताको लोचिकहै
न कहतहैं जो जेसे बाधजो नाहरके आगे मनुष्यजा
यनोसरीरको विधनही होइ ताकरि देहको नासहो

पु. इते सौंदरीयसत्संगहोइलो भगवद्दमात्को निश्चयमा
सहोयसत्संगतिजडभरथको नीनजन्मलेनोभ
यो दिविंदवानको नरकासुखे संगते श्रीदाकुरजति
लखो। ताते असत्संगमहाबाधक जो नितका लक्ष
डने। ३। आगे अवचोरहु कहत है श्लोक। असत्संग
स्तथा प्रोक्त श्रीमहाचार्य पंडितो अध्यासं स्वसरीग
सेतदीयत्व प्रकारत। ४। याको अर्थ। श्रेय श्रीहरि
राइजी कहत है जो असत्संगमहादुखरूप है जो अ
सत्संगमहादुखरूप है जो असत्संगबाधक सोहसो
श्रीआचार्यजी महाप्रभुं महापंडित वेदसास्त्रपुरा
ण श्रीसागवतसर्वमथिके श्रीसुबोधनीजी आ
दिग्रंथपराट्की गेहो तहां अन्यामय और असत्सं
गमहाबाधक ठो ठो निरूपण की गेहो ताते अ
पने सरीरको येही अध्यास करे जो भगवद्दीयके सं
ग ही रहे भगवद्दीयके संगते छुटो तवही बाधक हो
या भगवद्दीयके संगते सगो असत्संग छुटिनाय
निश्चय। पासुं निखरीको अध्यास कहि अन्यो अयते
वर्द्धे। ५। आगे अवचोरहु कहत है श्लोक। विधाय स
र्वथा भीतं विधेयेतरया गतः सत्संगे नैवर्गो कतिष्ठत्ये
न वसवैथा। ५। याको अर्थ। या भांति असत्संग सोम
सभयराखि पट्टनिश्चय सिद्धांत मनमें जानिये जी
वको यही योगपद पही करन बहै थोरो भगवद्ध
मेषने तो चिंतना ही परंतु असत्संग न करे सत्संग
करे तहां सत्संग ए सो होइ। ता भगवद्दीयकी नेष्टा
येत न्याग पद साधिमार्ग में नेष्टा होइ। ता ही को संग
करे सर्वथा ओरको संग न करे। काहेत। एत न्यागी
य भगवद्दीयके संगते अपने पुष्टिमार्ग की पगारी
ति जानै। मार्ग में पूर्ण नेष्टा होइ। भाववढे सर्वथा स

वसिष्ठोपाभा आगे अवश्या रं कहत हो लोक सम
पे नानुसंधान विधेय मिलिते सदा इदमेवास्मदा
चाये मार्ग साधन मत सं दीया को श्रधे ॥ भगवदीय के
संग मिलि के यह कर्तव्य हो लोक कहत हो श्री बाकु र्जी
को सर्व समर्पे न श्री आचार्य जी महा प्रभु द्वारा समर्पे
न कीयो है सो भगवदीय सो मिलि के विचार कदा से
मर्पे न कीयो अर्पे कदा क्रीया करत हो कितनी विलु
प्रभु से अंगीकार होत हो को न सी इंदी बह मुख हो तथा
कितने दिन ते प्रभु ते विछुरे दता सो अव श्री आचा
र्य जी महा प्रभु पाद किं दी गे है से को न प्रकार स्म
रण करे इत्यादि भाव भगवदीय सो मिलि के विचार
देन भगवदीय सो गये तो देल पाद किं देता वे यही
श्री आचार्य जी महा प्रभु के यदुष्टि मार्ग से उत्तम साध
न हो भगवदीय संग निवेदन को स्मरण ता ही ते नवर
त प्रथम श्री आचार्य जी महा प्रभु कह हो निवेदन तु
स्मर्तव्य सर्वथा ताइ से जने सर्वथा सर्व हो उपाद
हो भगवदीय को संग सर्वथा करने ॥ तथा सर्वदा नि
त्य करने उन सो नित्य निवेदन को प्रकार मुनि के श्रु
पने मन में भाव राखने ॥ यह स संग ही श्री आचार्य
जी महा प्रभु के मार्ग से उत्तम ने उत्तम साधन हो सो
इक रीया ते विरोधी साधन न करे ॥ ध्या गे अवश्या
रं कहत हो ॥ श्लोक ॥ स्वाचार्य चरण दंड दंडाश्रयण
माहते विधेय तेन सकल मस्तिन्मार्ग भविष्यति ७
या के श्रधे ॥ अपने श्रीवल्लभा आचार्य जी के हो उचरण
गति न को इह आश्रय मे की रहो ॥ और जो कोई
पुष्टि मार्गीय जीव करे आदर प्रवेकति न के इह्य मे
यदुष्टि मार्ग को सक्ते सिद्धत जान

चार्यजी महाप्रभु के चरण कमल को आश्रय देवी जीवन
को निश्चय ही करत व्यर्थ है ता ही करि के सकल कार्य सि
द्ध हो गो यह हमारे मार्ग को सकल सिद्धांत जूने यह
हमारे मार्ग को अनुभव होइ यह सिद्धांत सर्वोपर ७
इति श्री हरिराजी हत सिद्धांत चतुर्दशनामोटी
का श्रीगणेश्वरजी हत संपूर्ण ॥ १॥ भाव्यद्वय कहें जो
भगवदीय को संग करो अपने श्री आचार्यजी महाप्र
भु के होऊ चरण कमल को आश्रय करे तो यह पुष्टि
मार्ग को फल सिद्धि होइ यह श्री महाप्रभुजी को आ
श्रय को न भानि करे तहा आगे सिद्धांत में कहत
हैं जो या भानि श्री आचार्यजी महाप्रभुन के गुण को
अहनि स्मरण करे लोक ॥ यद्गी हत जीवमान
दुख ले शान्ति पिहो सदा नंदः सदा नंदान् तस्मिन् क्रि
यन्तं सदा ॥ भाव्यद्वय ॥ अपने चंगी हत जीव जो यह
पुष्टि मार्ग में स्मरण करे हो तिन को दुख चकहोइ
दुख को ले सद्दोइ सो श्री आचार्यजी महाप्रभुना ही
सहि सक्त अपने जीवन को सकल दुख हरि करि के
यहा आनंद को दान करत हैं ॥ लोक ॥ यो निजानति
संततान् स्वदत्ते वीत्य विस्मृत ॥ प्रादुर्भवति चिरत
स्ततस्मिन् क्रियन्तं सदा ॥ भाव्यद्वय ॥ यह जीव की
कहाहि सदा जाहि नते भगवान् नते विद्युत्तादि
नते यह चोरा सी लहै योनि में को दान को दिवार भूम
तहै जन्म मरण अनेक प्रकार दुख माय के तिन ही
में पर्योपावत है संसार ग्रि में महा संतप्त है जद्यपि
देवी जीव हो तऊ अपने दास पनो भल्यो और प्रभु के
स्वरूप को भलि गयो है ना करि के महा दुख है संसार
में या भानि जीव अपनी कृत करि महा दुखी होत है श्री
राजुजी देखि के विस्मृत भणे मन में खेद पागे कहै

मोरे देवी जीव वहुन दुखी होय। यह करण करि श्री हस्स
पुत्री आचार्य जी को स्वरूप न स्यात् श्री हस्स प्रगटे ना ही भा
ति गर्भ में प्रादुर्भूत होय। अपने देवी जीवन के अने कति
र काल के सगरे दुख दुःख की ने। ऐसे श्री आचार्य जी
महा प्रभु जी भक्त धृष्ट ने परम दयालु तिन को स्मरण
सहा ही करत व्यहो। आगे अर्थों यह कहत हैं। स्तो
त्र। यः स्वर्तः सवका नाहि पराश्रय निवारिकः। हृपा
सरित्पति हस्स तत्प्रतिः प्रियतां सदा। श्रयाको अथ
जैसे श्री हस्स सगरे वृज भक्त न को अन्त्याश्रय छोड़ो। जो
द्वय ज छोड़ा यगिराज द्वारा आप आगे। अं वि का प्र
जन में श्री नंदराजी को दंड दे के छोड़ा। जैसे ही श्री आ
चार्य जी महा प्रभु अपने सेवक न को पराश्रय अन्त्या
देव को भजन छोड़ा। एक श्री हस्स ही को भजन वत
रो। सर्व श्रोते निवृत्त करि। एक श्री वृष ही की सगण की
रो। से श्री हस्स के से ही वृष के समुद्र ही ना को अंगी का
र करत है। फिर कव दूछा डन ना ही। भक्त पक्ष पा ही क
त है सो न व मस्कंध में भगवान के रहे हैं। स्तोत्र। अ
हं भक्त पाधीनो। धसु तंत्र इव दिज। साधु भि ग्रेस्त ह
दयो भक्तै भक्त जन प्रिय। ११ भगवान के रहे हैं। दिज दुव
धामें तो भक्त के व सपाधीन हैं। स्वतंत्र ना ही हो। सो धे
अपने हृदय में धारि लीनो हैं। मो को वहुन प्रेम है भ
क्त जन। ये से वृषाल श्री हस्स है। तिन की प्राप्ति श्री आ
चार्य जी अपने भक्त न को कराते जीवन को कराते है
ये से श्री आचार्य जी महा प्रभु के चरण क मल को सु
मरण अह नि स सेवक न को कते व्यहो। आगे अर्थ
आहु कहत है स्तोत्र। हृदय स्थः समस्तानां धुने
ति विषयादं हयास मोदः श्री
यतां सदा। श्रयाको अथ। श्री हस्स

श्लोक
१५॥

लीमात्रके इह यमस्थिति है सो भक्त न के इह यम
में कह कह नो परंतु जीव विषया दिखान पान दे
संसार सुख में आदर करि मन को लगायो ता
यसै प्रभु है तिन को भक्ति गयो है अनेक विषय वे
भक्त है सो मोहर है जे सोहाजी पर आपु दया क
र सो पर सो भायमान श्री हनु श्री आचार्य जी
पतिन को सुमरन वे सब को करन बहै ॥ श्री
ओर इंदु दत्त है श्लोक ॥ यः प्राण प्रेष्टु गोपीन
गोपयति स्वतः निरुद्धा यना हिते लाभिस्तत्
पतो सदा ॥ ५ ॥ या को अर्थ श्री हनु के से
जन स्वामिनी के संगम को रसात्कृता को गोप
है नामें नंदराज जी ज सो राजा श्री अरु नेक गो
नै ना ही या भक्ति वृज भक्त न को रस दान करन
गोपी जन श्री ठाकुर जी के प्राण प्रिय है सो गोप
के सी है सो उद्धव जी सो भगवान् कहै हे नाम त
मत्त प्राण मद् अर्थ त्यक्त है हि का ॥ पितृ लोक
मद् अर्थ ता न्वि भर्त्य हस ॥ तन मन प्राण देह प्रभु
अपेन कीयो है लोक वैद धर्म ताते श्री हनु के
समान प्रिय है सो तृतीय लं धर्म कहै है श्लोक
होव कीयं तन काव कहे निधा दया पाय पद प
ले भगति धातु चिंता नै तो न्मं वं वा दया लु शरा
त ॥ श्री हनु के से है प्रतना अपने तन मे काल
विषय लगाय भावन लागी ॥ एसी राक्षसी ताव
हनु माना की गति ही नी जो भक्त इध आदिना
कार की सास प्री अरो गावत है ॥ असै वृज भक्त ति
वस भगवान् हो यया मे कहा कह नो उचित ही है
प्राण प्रेष्टु गोपी को रस दान छियाय के सब ते कह
अनादि विनामा म विनी नाम र नै ॥ गोपान

श्रीरामतिनको सुमनसदाही कर्तव्य है ॥ आगों अव
त्रों रं क ह त हो ॥ श्लोक यस्माद्भावात्तवोधा य प्रादुर्भा
वित्वा न स्वतः ॥ त भुज श्रीवध्वभाचार्या नस्तस्मात्ते
क्रियतां सदा ॥ ध्याको अर्थ ॥ श्रीराम उद्धवजीको अर्थ
नो नित्त भक्त जानिके अपने स्वरूप सो आपुन की रे
गोपीजन पास पठाणे त हो यह न तो गे जो भगवान् त ह पा
वरी ता ॥ त आध्वक भगवदीय दारा स्वरूप को बोध हो
य सो सवो पण ते में ही देवी जीव संसार में प्रभु को भलि
गणे त व श्री ठाकुरजी अपने स्वरूप माहात्म्य बोधा
र्थ श्री आचार्य जी महा प्रभु जी को पठाणे त व श्री आ
चार्य जी महा प्रभु पृथ्वी ऊपर प्रादुर्भूत प्रगाढ भगव
मि पर स्थित होय देवी जीवन को स्वरूपानंद को अनु
भव करारो ॥ त से श्री आचार्य जी महा प्रभु सर्व सामर्थ्य
त हो ॥ तिन को चरण कमल को सुमनसदा कर्तव्य है
श्लोक ॥ य ऊर्ध्वेन भजेन स्वस्वरूपमवोधयन् ॥ गोपिक
ना हंत स्वतस्मतिः ॥ क्रियतां सदा ॥ ध्याको अर्थ
श्रीराम उद्धव को नित्त भक्त जाने त विचारे जो उद्धव ने
बहुत सेवा करी हो ॥ अव वृज लीला को अनुभव ऊर्ध्व
जी को रोइ तो आछो ॥ सो वृज लीला को अनुभव तो श्री
धामिनी जी के हाथ हो ॥ भावात्मक स्वरूप तो श्री ध्यामिनी
जी वृज भक्त के हृदय में स्थिति हो ॥ त योग को मिसव
रि के उद्धव जी को भगवान् वृज में पठाणे अपने नित्त
स्वरूप को बोधार्थ ॥ त व गोपीजन भगवान् को सुख
जानि अपने सगरी लीला उद्धव जी को दिखाइ ॥
व उद्धव को अनुभव भयो ॥ त व जोगति ॥ भलि गार
दना करन लाग ॥ त अं प्रियोग उनितां तने प्रस
दः स योगि तो न लिन गंध रुचां कुतो न्यारा सो तस्व
भुज दंड ग्रहीत कंठ लध्वा शिवाय ॥ वृजव

प. वी. नां ॥ १५ ॥ आसमसो चरणेणु वामहं स्यादव
नेदिप्रपिगुत्तलनोवधीनां ॥ यादृत्ताजं खजन
मार्थमर्थचरित्वा भजे मुकुटपदवीश्रुतिमिदिभाषा
यवंदेमंद व्रजस्त्रीनां पादरेणु मभीष्टाः ॥ यासां इ
रिकयो जीतं पुनाति भुवनत्रयं ॥ ३ ॥ यदृष्टिमाउद्ध
वजीकीर्णसो गोपीजनके चरणकमलकीर्ण
की आसकरिगुत्तलना ओषधीकी प्रौथना क
री सो भावात्मक भगवां नदृज भक्तके हृदय मे स्थि
तिहंता भावदुःख श्री आचार्य जी महाप्रभु जी हैं ता
ति श्री आचार्य जी महाप्रभु के चरण कमल को सुम
रन मम श्री तिसहित करौ ॥ ४ ॥ आगे अब और कह
त हैं श्लोक ॥ यस्य स्मरण मात्रेण सकलार्ति विनाश
नंतत्वाद्देव भवति सत्कृतिः क्रियतां यदा यथा
वाच्ये ॥ ऊपर कहें हैं जो श्री आचार्य जी महाप्र
भु जी श्री हनु जी रूप भावात्मक तिनके चरणारवि
दुको सुमरण करत मादृही सकल आर्तिसंसार के दु
ख सब दोष को नाश होइ जो श्री औरत काल ताही द्वि
न देवन के देव श्री वल्लभ देव श्री हनु देव प्रसन्न वा
जीव के ऊपर होइ ताते यह पुष्टि मागी य वे सवन को
निश्चय पही धर्म है जो एसे श्री महाप्रभु जी के चर
ण कमल को सुमरण मन लगाइ अह निप्र करनो
एसे दृज भक्त रात्रि दिवस सुमरन करत हैं तेसे ही करे
या यह सिद्धांत भयो ॥ इति श्री हरि इ श्री हनु सि
ता प्रव पं दस मोता की दी वा श्री गोपेन्द्र जी हनु सं
दृष्टे ॥ १५ ॥ अब ऊपर कहें ता भांति श्री महाप्रभु जी
को सुमरण करे तो प्रभु प्रसन्न होइ तव अपने स्वस
प को जान ही होइ य पुरै खों को न भांति सो आगे सि
ता प्रमैं कहत हैं श्लोक ॥ सदा स्वभक्त हृदया वास

स्वाचार्यभावित। यद्यो दातिप्रियः श्रीमग्रं दस्नु
वृजे श्वरः। याको अर्थः। सदा श्रीठाकुरजी श्रवणे भ
क्तन के इत्यमं वसत होत हो संदेह होइ सो को नये
भक्त त हो कहत हो नी श्री आचार्यजी महा प्रभु को
भाव का भावित श्री आचार्यजी को प्रसन्न की गे हे
श्री आचार्यजी महा प्रभु को भक्त भाव हो असे पुष्टि
मार्गीय भगवदीय के इत्यमं श्री आचार्यजी महा
प्रभु सदा विराजत हो सो प्रभु के से हो। श्री यमोदोत्तंग
लालित श्री यमोदजी को श्रुति प्राण प्रिय श्री सो भा
सहित नंद सुनु नंद रायजी के पुत्र इत्यमं संधर्म नंद
महोत्सव में भुक् देवजी कहें हो नंद स्वात्मज सुत्पत्ति
जाता लू दो महा मना नंद राइजी के आत्मा ते उत्पन्न
भगे। एसे श्री हृदय सो वृज के राजा सो सदा वृज ही में भ
क्तन के संग विहा कर ता हो। एसे श्री हृदय पुष्टि मार्गी
सेव्य हो। सो एत न मार्गीय भगवदीय श्री आचार्यजी
के छपात पात्रतिन के इत्यमं वसत हो। तथा श्री ठा
कुरजी के इत्यमं भक्त वसत हो। सो श्री भगवत में न
वम संधर्म भगवान् कहें हो। सो स्तोक ॥ साधवो
इत्यमं म ह साधुता हृदय त्वे हा म ह न्यंत न जानें ति
नाइ ति भयो मणा गपी। भगवान् कहें भक्त के इत्य
यमं में हो मेरे इत्यमं भक्त हो। ओर को में जानत न
ही। एसे श्री हृदय हो। यथा गे अथ श्रवण कहत हो। हे
क स्मरणीयो यथा सति सेवनीयस्तथा पुनः। ता ह
रो सह संग न कथनीयः सर्वथा। रसा को अर्थ र
सेव ज में सदा विहा कर तो न इत्यमं दा के पुत्रतिन
ही को स्मरण करनो। काहेत। एसे भावात्मक प्रभु
वृज भक्तन के वसत हो। ताते वृज भक्तन सहित सुम
न करनो। ओ से वाइ एसी ही भक्तन के भाव सहित

श्रीहनुमन्की करनी चोरता इसी भागवदीय सौमिलि
 के एहे भक्तन सहित श्रीहनुमन्ति नही कथा कहनी सु
 नती सर्वदा नित्यनेमसो ॥ आगे श्रव और सुंके इत
 होला ॥ अहनिसे वृजादीसो प्रपंचा स्मृति साधक
 स्वकीय पक्षपाति च निजा स्तोत्रा निरोधक न ॥ अया
 तो अये ॥ स्मरण सेवा कथा वातो अहनिसे माक वृजा
 धीसकी करे तो कदा इ ॥ यद्द प्रपंच दह स्वधी लोकि
 क वैदिक सवकी विस्मृति हो ॥ प्रपंच विस्मृतिको
 साधन यही पुष्टि मायाय भाव दधर्म हो ॥ और ताही
 काहे ते वृजा धीस के से हो ॥ अपने भक्तन के पक्षपाती
 हो ॥ अपने स्वार्थ करि भक्तन को सब ठोर ते निरोध
 सिद्ध करत हो ॥ और तो मर्यादा मार्ग के साधन हो ॥ जप
 नयन हो मतीर्थ व्रतादिक इत्यादिक में अनेक
 काल को हो ॥ प्रतिबंध होत है ॥ न हो प्रभुरक्षा ही क
 रत है ॥ और भगवद् धर्म में प्रभुरक्षा था पुकारत है ॥ जे से
 प्रह्लाद के अश्वमेध भते प्राण भक्त की रक्षा की नीता
 ते श्रीहनुमन्को सुमन सेवा इत्यादि मन लगाने के
 करतौ ॥ तहां का खादिक कष्ट बाधक न हो ॥ अणो अप
 ने भक्तन के पक्षपाती भगवान है ॥ अपनी सत्पामा
 मय भक्तन में धरि सब ठोर ते निरोध ही करत है ॥ ३
 आगे श्रव और सुंकरत हो ॥ श्लोक ॥ शरणायः क्षपाय
 रादारो विहित रूपवान् ॥ स एवास्मत्सबे कतो चिंता
 नुरपि नो हृदि ध्यातो अर्थ ॥ ऐसे श्रीहनुमन्को स्मर
 ण ही सदा करत व्यहो ॥ श्रीहनुमन् परम रूपाल है सो ध
 द्योस्त्र श्रीभागवत में प्रसिद्ध है ॥ यष्टम स्कंध में कह
 हो ॥ केन्य पारीहास्य वासी भट्टे लन से दवा वैकुण्ठ
 नाम ग्रह सामग्री धा धरा विदुषा ॥ अज्ञाना द्यवा
 मन्त्रोदनास्य न स कीर्तित मद्यं पुंसे देदे

मोक्षयथानल॥ इति वचनात्॥ श्री श्री श्री
जीमहा प्रश्न कहत है नवस्त्र ग्रंथ में कहें हैं॥ अ
नाना द्यवा रा नाना कृत मात्मनि वेदन॥ ये छंद
मा कृत प्राणितिया का परि देवन॥ इत्यादि वचन
सो जानन॥ सो भाव द्यम जानि के करे नो भाव
अन जाने करे प्रभु पाही करे सो श्री प्रहा प्रभु जी
की वार्ते में कहें हैं नो गदा धरा सने साव की वही
तव माधो दास ले आयो ना करि भक्ति माधो दास
को भइ या भाति प्रभु सेवा मानि लेत हो या भाति
प्रभु की कृपा दया सास्त्र में बिदिन प्रसिद्धि हो जाने प्र
भु ही हम को अपन जानि सर्व कार्य सिद्ध करे गोत्रा
ने भगवदीय को लोकि कवे दिव्य चिंता तथा प्रपुन
उद्धार की चिंता नाही करन व्यहो धागां अ व श्री
गुरु कहत है स्तोत्र॥ सतामप्यसना वापि स्वकीया
नां कृपानिधि॥ करिष्यति स्वतः सर्वमन चिंताया
मपि हि माया को अ॥ प्रभु की प्रह प्रति जाहे जो
भक्त तबे जपर कृपा ही करत है सो प्रति जा स
त है मन ध्वन न त्रिया ती न्यो कृति प्रपने स्वकी
य निज भक्तन प्रकृपा दे॥ कृपानिधि सो प्रभु को
नाम है त्रिविधि नामावली में श्री आचार्य जीमहा
प्रभु के नाम कहें हैं भक्तन नवः स्मृतान्यनमः भ
कायी नायनमः॥ इत्यादि बहुत नाम हैं सो प्रभु आधु
ही सर्व स्वतः सिद्धि करत है ताते अपन को कष्ट
चित्त नाही करत है॥ ५॥ श्री गुरु अवधार हु कहे
हैं स्तोत्र॥ सत्संगा भावतो नित्य मसत्संगा सु
वतो॥ वते ते विषया वैशेष्य क्रोद हेय मन्त्रातिः
या को अर्थ॥ अव श्री हरिराजी कहत हैं नो प्रभु
जैस कपूर करे गो उपर कहें जो

अभागवदीयको संभार है काहेने जो सत्संग हो
 इतौ दुःख बाधा न करे। सो सत्संग तो यह काल में दु
 स्तुभ है। और सत्संग विना जतन यह कलिके स
 भावते सिद्धि है। सो दृश्य में विषयावेश करावत है
 जद्यपि भगवधमोदिले। कि कवैदिक स्वही करि
 पत है। और विषयको आवेस दृश्य में रहत है। सो
 श्री आचार्य जी महाराज ऐसे पाते। जोग्य में कहें
 हीं तहां तांइ विषयको आवेस हो। इनही विषयाक्रांत
 हो। सो न वेस। सर्वथा हरे। इत्यादि वचनांत तांते
 सत्संगते विषयको आवेस होत है। ताकरिके मेरी म
 ति चक्र की नाई। सो दिसा फिरत है प्रभु मे विस्वास
 नाही। तो चिंता हो। ईके चने क संसार को दुख ही आ
 यत्न गात है। ताकरि बुद्धि मलीन है। ६ आगे चवथो
 रहं कहत है। स्तोत्र ॥ नैतस्मिन् समये कोपि सहायो
 सप्तवर्तिने। विना श्रीवक्ष्णभाचार्य चरणों वरह
 अथात् ॥ ७ ॥ याको अर्थ ॥ अथ श्रीहरिगइजी कह
 त है। जो दुःख करि विषयावेश ते मन भमत है। अ
 ने क दुःख वावत है। भागवदीयको ई मिलत नाही
 तांते या दुख में मेरी सहायको करेगा। या समय में
 यह काल कर ज मेरी सहायको न करन वारो है
 एक श्रीवक्ष्णभाचार्य जी के चरण कमल को में आ
 श्रय की गेहों। सो ई मेरी सहाय है। ओ को सहायक
 ई के मैं नाही सामर्थ्य है। यह कहिके श्रीहरिगइजी
 जत गेहें जो यह कलिकाल में श्री आचार्य जी के
 चरण कमल को आश्रय की गेहें। तिनको तो सर्व प
 दाश्रय की सिद्धि
 आचार्य जी महाराज
 न

एतदोषते विषयावेश करि च ज्ञानी नई भूमे गो ॥ उन
को फल सिद्धि नाही है तातें श्री आचार्य जी महाराज
भक्ति चरण कमल को आश्रय ग्रहण हिसार गीयवै
भव को निश्चय ही करत यहाँ आगे अवश्या
हृत हैं हे लोक ॥ तत्तु नामति ॥ काल वाला त्वे
न लोकिके ॥ नित्य स्थिता ततो भीति भय सी जायते
इति ॥ यो को अथ ॥ अवश्या हरि राज्ञी कहत हैं ॥ जो मे
अपने अवस्था का काल को दुख सुने हों ॥ जो जन्म मृत्यु
दुःख समान दुःख को ईनाही है ॥ यह अनेक बार
इन सो मुख सों सुन्यो हों ॥ ओ मन हमें काल दुख आ
वत है न ऊय ह काल सों कठिन है वेदात्मा स्वरि स
गो जान धर्यो रहत है वेद सत्त्व ॥ कि कही वनि आव
त है ॥ सो या भांति नित्य ही लोकिक कार्य में स्थिति है ता
करि अपने इत्यमं बहु भय वांछा पावत है जे संप
रीत राजा को काल को भय भयो त वशु क देव जी भ
गवदीय प्रभु की कृपाति आगे ॥ सो उह कहत भय नि
वर्तकी ॥ सो अवश्या मन में दुःख भय भयो हों ॥ सो श्री
आचार्य जी महाराज प्रभु के कृपा पात्र भगवदीय के सांगे
राह भय हरि हो ॥ सो मो को दुःख नई ॥ तातें भय करि वा
रं बार इत्यमं पायमान होत है ॥ द आगे अवश्या स्व
हृत है ॥ सो ॥ किंवा को वेद भगवान् वरुणात्मा चि
की धितः ॥ न जाने ते न म चेतः ॥ खिन्तं भवति सवथा
ध्या को अथ ॥ वेद के तथा भगवान् के अभिप्राय
को जान न होय ते सही को दिन वर सों वेदाध्या
य पाठ करी ॥ अनेक साखं पदों ॥ परंतु वेदो अभिप्राय
को जान न होइ काहे तो ॥ भगवान् की वरुणा दोय तो
स्वै जान्यो जाय भगवद् धर्म मन वचन हम करि
गवद् से वांछा वनि आवै ॥

सद्वृत्तनाही होत नाते मै अपनेचित्तमें निश्चय ही खेद
 पावत है। तहां ताई प्रभुकी छपा नाही तहां ताई सर्वथा
 सर्वकार्यमें दुःख ही हैं। आगे अवशोर एक हत है श्लो
 क॥ विशेय प्रेमजापत्रादोदयं सकलोपि हि अनेने
 वदयं किंचित् स्वास्थ्यं मत्पामहे हृदि ॥ १० ॥ याज्ञिके अर्थ श्री
 विशेय समाचार प्रेमजो वैलवके पात्रमें लिखि पठा
 गे हैं। सो यदपत्र ते बोधन होइ तो वामें दोखें के मन
 लगा खेवाचि बोधयं ताते किंचित् करुणात्मा प्रभु
 होय दजानि हृदयमें स्वास्थ्यधीरज हो जो प्रभु छपाव
 री ही कहें ते भगवद्धर्म जानि के करिये अथवा
 अने जाने कछु वनि जाय तो ऊ प्रभु जी कहें हैं अजा
 नास्थवाशानात् तमात्मनि वेदनं ताते सो निवे
 दन तो कोइ प्रकार भयो है ताते मनमें स्वास्थ्य हो जो
 प्रभु करुणा हो ॥ १० ॥ इति श्री हरि रि इजी हतय
 या हत सिद्धाप ताकी दीका श्री गोपेजी छत सं
 पू ॥ १६ ॥ अव उपर कहै वेद को भगवान के अभिप्रा
 य को नाही जानत नाते मनमें खेद हो तहा प्रभु करु
 णात्मा हो ताकरि कछु मनमें धीखत है सो प्रभु करुना
 करे जव उतम मध्यम भगवद्धर्म वनि आवि तहां
 कोइ न होइ तम मध्यम कहो भगवद्धर्म तो एक
 सो है तहां आगे सिद्धापत्रमें कहत है श्लोक॥ य
 दज मत्पामहे तच्च योगो न मुख्य भेदतः त्पयोगो ग्रह वि
 नादिनामथवाह प्रयोजन ॥ १ ॥ याज्ञिके अर्थ ॥ अव
 श्री हरि रि इजी कहत है ॥ अव श्री आचार्य जी महा प्र
 भु भक्ति वर्द्धनी आदि ग्रंथमें उतम मध्यम प्रकार कहि
 हैं अथावतो भजेत त्वं पूजया श्रवणादिभिः व्यावतो
 पिहो चित्तं श्रवणं दौयते तस्मा ॥ १ ॥ इति न च नात
 श्री हसनकी कथा सेवा स्मरण अथावत होई के करे

यद्मुख्यं चैव्यावन्तद्वर्गं परंतु मनहरिमेंगखें यह
गौण सोई श्रीहरिराज्जी कहत है जो धराधन लौकिक
वैदिक सब सव त्याग करि प्रभु को भजन करें जे संग
हा धरदास च्यावन्त रहे जल की लोटी भरि पधन
भदास छोला धरे यह मुख्य प्रकार यह नवनेता स
र्व हस्त्वैथर्थ लगावेत उ प्रभु ह्वा करे ॥ अगो
अवयोरै कहत है ॥ श्लोक ॥ वैराग्य परि तो घाटे
रत्ना गोपी निरूपित ॥ तथा विषय भोग सत्पा गो
पि विनिवोधतः ॥ अथा को अर्थ ॥ वैराग्य और संतोष
को त्याग न करे काहेतै यह लौकिक संसार में वैरा
ग्य होइ तो हे ह्म स्वधी दुख सुख ह्म में बाध कन
करे ॥ भगवद् धर्म व नी जाय और संतोष होइ सह
ज में आय प्राप्त होय ॥ ताही करि आनंद पाइ रहे
लोभ करि पाप आचरण न करे काहेतै जो श्री आचा
र्य जी महा प्रभु श्री सुबोध नी नी निबंधादि ग्रंथ में
कहे हैं ॥ श्लोक ॥ अचौर्यानां च पापानां चोरी करि
पाप कछु न्यावेत इत्यन्त प्रभु के सें आगे आरो
गो ॥ नाते वैराग्य संतोष आदि धर्म न छोडनो और
विषय भोग को न्याग करे काहेतै विषय बहुत करि
नै ह्म ह्म में विषय को ध्यान होइ जाइ पाछे विषया वि
समारी हे ह्म में होइ तो प्रभु को आवे न होइ सो स
न्यास निगम सें श्री आचार्य जी महा प्रभु कहें हैं विषया
क्रांत देहानां नावे स सर्वथा हरे नाते विषय भोग ह्म
त्याग आवस्यक करनो ॥ अथा अर्थ ॥ अवयोरै कहत है
॥ श्लोक ॥ तथा सत्संग मत्पागः सर्वत्र बध्नि शेषतः
अन्याश्रय परित्याग उतो बाधक रूपतः ॥ अथा को अ
र्थ ॥ भगवद् दीय को संग न त्यागे सदा सत्संग करे ॥ भ
दीय को संग न त्यागे सदा सत्संग करे ॥ भ

० संगवदुतवडोहेंसर्वोपरकरतव्यहें। सोश्रीभागवत
प्रथमस्कंधमेंसौनकवाक्य। तुल्य। मलवेनापिनख
गेंनपुनर्भवं। भागवतसंगीसंगस्य मृत्या नाविमुनाशि
यः। सत्संगकेसुरससमानत्वगेलोकचूपदगमोह
इनाहीहें। तातेभगवदीयकोसंगछोडनानाही। जहा
भगवदीहोइतहाआपुजायकेसवथाहीसंगकरेओ
रअन्याअयकोसीधृतीत्यागकरे। यहभावेमंवाधक
हें। नंदरायजीअंविवापूजनगारेतो। मयनेग्रसे। तक्ते
छोडये। श्रीगुसाईजीकीसेवकनीडोकरिनेकहीतु
समोकोजिवाइतनोकहतप्रभुअंतरध्यानभगेहा
मोहहासकीकेखीनेकीयो। सोपुत्रमलेछभयो। नाते
अन्याअयकोसवथात्यागकरनो। यहवडोवाधकहें
३ आगेअवओरइकहतहें। श्लोक। एवंनिरूपितेत्पा
गात्यागोसर्वत्रसर्वेशः। नजीवात्वक्तातकिंचित्क
तुंशक्तुंवतिरयतः॥ ४ याकोअर्थयाभांतिनिरूपणश्री
आचार्यजीमहाप्रभुनेंश्रीसुबोधनीजीआदिग्रं
थमेंकहेहें। सोतातेविचारकरित्यागकरनोहोइता
कीत्यागअत्यागकरनोहोइताकोसंग्रहभगवद
धर्ममेंसाधकताकोसर्वकोअत्यागयहविचारम
नमेंराहें। परंतुजीवकीवलनाहीहें। नत्यागसकेन
गखिसको। ब्रह्माहिसिवादिनारदाहिको। कछुवसु
नाहीचलतवेवडेत्यागीहें। तोजीवतुछकहाकरे
याकोकछुनाहीहोतजीवते। मायाकेवसखभाव
करिदुष्टहोइरघोहें। ४ आगेअवओरइकहतहें
श्लोक॥ अतःकथंभवेन्मार्गस्थितिजीवेषुसर्वथा
फलसापि। कथंकार्या। ननैस्तत्रास्थितेपुनः॥ ५ याको
अर्थ। ऐसेदुष्टजीवचित्यादुष्टकोकारणवारेसोय
हसर्वोपरपुष्टिमार्गमेंस्थितिसवथानहोइअथ

प्रहसंसारलौकिकविषयादिमंप्रणोसोपुष्टिमार्गमे
 कोनभांतिस्थितिहोशसर्वथानहोशसोजीवयह
 पुष्टिमार्गीयकोफलताकीआसकेसंकरोयहस्थि
 तिनाहीतोफलकहातेमिद्धहोइगोनहोकोईकहेजो
 जीवतोतुष्टहदुष्टहीहोकोईप्रकारफलसिद्धिहो
 इलौकिकतोजीवतोनाहीष्टनतहोवहनहप
 श्लोकोक्तियापि श्रीमदाचार्यचरणश्रयणादपि
 अयकमपियष्टकंनइवेत्सर्वथेवसिद्धिआकाश
 अवश्रीहरिगज्जीकहनहेजद्यपिजीवअनेकहोप्रसो
 भस्योहोयाजीवसोहोअनाहीष्टनएसेजीवश्री
 आचार्यजीमहाप्रभुनकेचरणकमलकोश्रय
 मनमेइहकीपोहोअथकेखुआडिवमेंअसकाहेनऊ
 वाकोफलसिद्धहोइयद्यपिपुष्टिमार्गकोफलसर्वथा
 सिद्धहोइश्रीगुप्तोईजीविजसकरनहेचितेनदुष्टो
 वसापिदुष्टकायेनदुष्टत्रिययाचदुष्टकानेनदुष्टो
 भजनेनदुष्टोममापराधविनधाविचार्योसंसारसा
 गिमगंजीवो : आश्रयत्तत्पदाभोजं
 इयो श्रीआ

न	सरणस्यसमुद्धारं इतिवच
तिनिः	सराणहरिः याभा
गाकमलकोट्ट	प्रभुनकेचर
मार्गीयफलनिश्चय	कोयहपुष्टि
इकहनहो	इत्यागेअवशोर
लेमनोयदिवाकाल	सगहोयेपानभवेच्छिथ
द्विः श्रयानेचुदं उपरकहे	गविस्वासोपिभवेन्न
अथफलसिद्धहोयतासेहोयमहाबाध	क्कोनि
वचेतोफलसिद्धहोयएकजोदुःखगहो	तिनसो

सते भावघटिताय मनसि स्थल होइ जाइ नो आश्रय जा
त रहै ॥ भयको भगद्गीदुःसंग ते ती न जन्म भणे ॥ दुर्विद
वान राम भक्त हतौ ॥ ते नरकासुर के संग ते प्रभु तो जस्टो
ओर दोही त जीव दुःसंग ते गिरे ॥ तथा काल दोष ते वि
स्थासन रह्यो ॥ जहां अविद्या सभयो ॥ तहां आश्रय छुट्यो
सो जीव निश्चय गिर्यो ॥ ७ ॥ आगे श्रवण ओर इक रहने
हो ॥ श्लोक ॥ अविद्या सो न कर्तव्य इत्युक्तो भिनु बाध
क ॥ अथ मेवा समार्ग समलमाश्रय साधका यथाका
अर्थ ॥ अविद्या सकौ न करै ॥ सो श्री आचार्य जी महाप्र
भु विवेक धैर्यो अथ मेव कहै ॥ अविद्या सो न कर्तव्य म
वथा बाधक सुसः ॥ ब्रह्मस्त्रचातको भाव्यो प्राप्त संसेवे
ति निर्ममः इति वचनात् ॥ अविद्या स सर्वथा न करै
रामनको ॥ अविद्या सभयो ॥ तव ब्रह्मस्त्र छटि गयो ॥ ह
नुमान नेलंका जगई ॥ चात्रक को विद्या सहै ॥ सो मेघ
ही मनोरथ पूरन करत है ॥ नाते अविद्या स आसुरध
मे है ॥ नाते सर्वथा न करै ॥ यह श्री आचार्य जी महाप्र
भु के पुष्टि मां मेमल सर्वोपर आश्रय ही साधक है ॥
८ ॥ आगे श्रवण ओर इक रहत है ॥ श्लोक ॥ आश्रये नैव स
लं सिद्धि मेति न संशयः ॥ पृथक् सरण मार्गोक्तिरन एव
प्रभो रापि धिया को अर्थ ॥ जा जीव को द्रष्ट आश्रय प्र
भु मे भयो ॥ तिन को सकल कार्य सिद्ध भयो ॥ निश्चय या
मे संशय नाही ॥ वरुणः ॥ गोपुष्टि श्री आचार्य जी
महाप्रभु सव तेन्यारी प्रगट की गि है श्री हृक्ष फला
त्मक पुष्टि पारसो ॥ ९ ॥ अणु प्रपते देवी जीवन
के अर्थ सो आगे कहत है ॥ श्लोक ॥ सरणस्थ समु
द्धारं ह्यविज्ञापनात्पि विवेक धैर्य भक्त्या हि साध
नाभाव बाधत ॥ १० ॥ या को अर्थ ॥ श्री आचार्य जी महाप्र
भु ह्य आश्रय ग्रंथ मेव कहै ॥ सरणस्थ समुद्धारं ह्यवि

सोपनाहवि विवेकधैर्यभक्त्यादि साधनाभाववा
 १० याभांति श्रीमहाप्रभुने श्रीसुखजीसौकही जो
 पने पुष्टिमागीय सेवकन को सराग सिद्ध की गे
 रविदेव धैर्य श्रय में वहे है ता करिके जीवन में स
 धन को अभाव है तिन को सराग की गे है और विवेक
 धैर्य श्रय में वहे है ता करिके जीवन में साधन को अभा
 व है तिन को सराग की गे है विवेक धैर्य भक्त्यादि र
 हित है दुख सुख में असको वा सुसको वा सर्वथा राग
 हरिः याभांति पुष्टिमागीय सराग हृष्टा श्रय में विना
 साधन के जीव तिन को सिद्ध की गे है और मया हमें भ
 गवहीता में भगवान् शरण मार्ग की गे है सर्व धर्मान्
 परित्यज्य मासे कं सराग वृजेत् अहंत्वा सर्व पापेभ्यो
 मोक्षयिष्यामि मा शुच उ भगवान् वहे सर्व धर्म छोडि
 के है अर्जुन त मेरी सराग श्रव मे सराग पापन को हरि
 मोक्ष करु गो यष्ट मया दा जो पाप हरि करिके मोक्ष कर
 मो फल और श्री आचार्य जी महाप्रभु अपने जीवन
 को दोष सहित है तो ऊ सराग सिद्ध की गे है न ध वि
 वेक धैर्य श्रय को अभाव है तिन को सराग सिद्धि
 की गे है १० व्या में अक और कहत है श्री कृ सन्मा
 विभावन परायण ११ व्या को अर्थ अक श्री हरि
 ती कहत है जो पुष्टि मार्ग में जीव श्री आचार्य जी म
 प्रभु द्वारा सराग आगे है सो तिन को श्री आचार्य
 निश्चय निरंतर अपने सराग प्रभु के पद को आश्र
 ही सिद्ध करे अपने जीवन के अर्थ तो यह स
 तातें श्री आचार्य जी महाप्रभु

श्रव की
 निशा

भावमें अष्टप्रहरण गणार है दृढविश्वास राखें श्रीहृत्सु
के सनमुख हस्माश्रय प्रथको पाठ करे तो सकल कार्य
मिद होइ ॥ ११ ॥ आगे अब ओरुं कहत है श्लोक ॥ यथास
त्ति स्वभागीय प्रभुसे वा पौर पि निंतर स्वभागीय स
ना संग समन्विते ॥ १२ ॥ याको अर्थ ॥ अब श्रीहरि राज्ञी
कहत है जो सरण की भावना करे ॥ ओर यथा सक्ति पुष्टि
सागीय भागवत से वा करे ॥ जितनी बने तितनी करे
अब लोवा दुका लोवा चिकालोवा या भांति तीनों
बचन श्रीआचार्य जी महाप्रभु कहै हैं श्रीभागवत अ
ष्टम स्कंध में ब्रह्मा कहै हैं ॥ श्लोक ॥ यथा हि स्कंधसाखा
नां नरो मूला बसे वनं ॥ एवमारधनं विलो सवेद्यं भा
त्मनश्चा हि ॥ १ ॥ भगवान की सेवा करि सो रहवे मूल
में जखरी ले ॥ सो राख पत्र सब दूरी होय ॥ और देवन की से
वा एक पत्र साखा लत है ताते प्रभु की सेवा करनी यह पु
ष्टि सागी भागवदीय वेस्मव को मुख्य धर्म है ॥ ओर पुष्टि
सागीय को संग निंतर करे ॥ सो भक्ति वर्द्धनी में श्रीआ
चार्य जी महाप्रभु कहै हैं सेवा यां वा कथा यां वा यस्यास
क्ति दृढा भवेत् सेवा ते पो हो चिके भगवदीय के मुख ते
सुनने ॥ काहे जे निरोध लक्षण में कहै हैं ॥ महता ह पया
य द्वा कीर्तनं सुखदं सदा ॥ न तथो लो किकानां तु स्त्रिध
भोजन रस वन ॥ १ ॥ भगवदीय की कथा सो स्त्रिध सुंद
र है महाप्रसाद भोजन ताते सर्व होय जाय ॥ लोकि
क जीवन के मुख ते रसो आसुरी नाजन ताते स्वभा
गीय वेस्मवन को संग कते बड़े ॥ १२ ॥ आगे अब ओरुं
कहत है ॥ श्लोक ॥ स्थि यं संसार विमुखे स्वगुरु प्राण ते
रपि विरुद्धति संदेह दाह नोद्यो गत त्वरे ॥ १३ ॥ या
को अर्थ ॥ यह लोकि क संसार ते विमुख रहे ॥ अपने गुरु
की सरण रहि दे न्य होय ॥ परिणाम ते है ॥ श्लोक ॥

यस्य भोजन गन्ताय गुरो र्यं सारवन्दिना ॥ २ ॥ अथ मन्त्राः ॥
चत्वर्यं शरणं गन्ताय गुरो र्यं सारवन्दिना ॥ २ ॥ अथ मन्त्राः ॥
नरैर्काहेतुं गुरो र्यं सारवन्दिना ॥ २ ॥ अथ मन्त्राः ॥
सन्तुष्टोऽहो गुरो र्यं सारवन्दिना ॥ २ ॥ अथ मन्त्राः ॥
प्रसन्नोऽहो गुरो र्यं सारवन्दिना ॥ २ ॥ अथ मन्त्राः ॥
पुष्टिमागमं जितनोऽहो गुरो र्यं सारवन्दिना ॥ २ ॥ अथ मन्त्राः ॥
याभांति न्यमिमानि केऽहो गुरो र्यं सारवन्दिना ॥ २ ॥ अथ मन्त्राः ॥
तन्मार्गस्य विरोधी हनन्तौ न्यागदी उदिमराखे नोऽहो गुरो र्यं सारवन्दिना ॥ २ ॥ अथ मन्त्राः ॥
मवरहेताको पुष्टिमागमं जितनोऽहो गुरो र्यं सारवन्दिना ॥ २ ॥ अथ मन्त्राः ॥
आचार्यजी महाराज प्रभु की हृदय पाते यह सिद्धांत भयो १३३
श्रीहरि उवाच ॥ सत्यं सत्यं सत्यं सत्यं सत्यं सत्यं नोऽहो गुरो र्यं सारवन्दिना ॥ २ ॥ अथ मन्त्राः ॥
कारकहे और सेवाको प्रकार कहें फल रूप साधन तामें
यह कहत हैं सो जीवना ही जानत सो जीवको या
भांति जानत सो साधन बनि आवें सो आगे सिद्धांत
में कहत हैं सो काल स्वकार्य करुने न जानाति जनो
गन्ता ॥ प्रमादति हर कार्य स्वात्म कार्य नो यतः प्रमाद
नरे कार्य स्वात्म कार्य विविक्तः ॥ १ ॥ अथ मन्त्राः ॥
गिरा इजी कहत हैं जो यह काल है सो अपनी कार्य की
नाते हैं ताने गन्ता में जीवकी आयु को हरत हैं और जीव
ही जानत हैं जो मेरी आयु दिन दिन घटत है काल नि
लीन जात है ॥ यह जान जीवको नाही होत है सो कह
त हैं तने कार्य में प्रमाद पा जीवको होइ शीघ्र होत है सो
वैदिक संसार को काम देह इडी को पोषण विषया
नेक भांति के कार्य की चिंतो प्रसित है नाते प्रमा
द कार्य में प्रमाद होइ शीघ्र होत है ताकरि जान
ती ॥
श्री आयु को भक्षण करत है मेरी ॥

५. मोको कह करत यह है। यह ज्ञान नाही होत अनेक कार्यमें
३. प्रमाद्य है। और अपने स्वात्म कार्यमें विकल है। हिंस
बंधी संसार को कार्यमें हों। तूमें तत्पर है। आत्म संबंधी भ
गवद्धर्म सेवा सुमन की। तेन बार्ता कथादि इत्यादि
में विकल है नाही स्वतः है। ॥ आगे अब और कहत
है। श्लोक ॥ केवलौ हरि चेतु न हीयां नानुचिंतन
पूर्येत्तिसुहृत्सेवका नो ह्यपानिधिः ॥ ॥ या को अर्थ अण
कहे जे लोकिक कार्यमें प्रमाद्य है। स्वात्म कार्य विक
ल है। सो केवल उद्भरण के कार्यमें यह निमित्त तत्पर
है। सो यह पुष्टि मागि। यवैश्वर्य को उचित नाही है। काहे
ते श्री हृत्सुतो ह्यपा के निधि है। समरी जत के भरण पोष
न कर्तौ है। सो कहा अपने सेवक न को पालन नाही कर
गे सेवक न के ऊपर तो सदा ह्यपा करत ही आगे है। या भां
ति वैश्वर्य श्री ह्यपा जी को विश्वास मन में राखि भगवद्
धर्म आचर करे। सगरे दिन तथा ध्योहार विना न च
लै तो चने स में प्रहरण क तथा घड़ी ॥ ध्योहार हूं करे
और मन में यह जाने जे जित नो मिलन हार होइ गो
सो पहर एक चारि घड़ी में स्वमिछि रहे गो यह विचार
वैश्वर्य को भगवान को महात्म्य विचारि जे प्रभु सर्व
सामर्थ्य युक्त है। सब सिद्धि करे गो ॥ आगे अब और कह
त है। श्लोक ॥ चिन्ता कापिन कार्योति प्रभुवाक्य विचि
पता ॥ आज्ञानि नो ज्ञानिनश्च यदि स्यात्समता कृतौ
इयादाच्य मन में चिंतन करे। सो नवरत्न में श्री आ
राज्य मदा प्रभु कहें है। चिन्ता कापिन कार्योति वेदिता
प्रभिः कदापि ॥ भगवान पि पुष्टि स्थान करिष्यति
तो कि क्विच गति ॥ इत्यादि बाक्य को चिंतन भावना
प्रद निर्यमन मे करे। यह न जाने जे मे तो कछु सम
नाही प्रभु ह्यपा के से करे गो यह विचार नो प्रभु को

अज्ञानी भक्त ज्ञानी भक्त बराबर हैं सो नवरत्न में श्री
आचार्य जी महाप्रभु कहें हैं अज्ञानादि थवा ज्ञानात्
इतमात्मनि वेदनै भवनि वेदन श्री आचार्य जी महाप्र
भुद्वारा ज्ञान करि कीयो है अथवा अज्ञान तेका ही देखे
देखी कीयो न अचिंताना ही करन थ है काहे ते अग्रि के
यह स्वभाव है जो अज्ञान जने हाथ धरें अथवा ज्ञान के हा
थ धरें सो ही भस्म ही धरे हाथ यह नौ किक अग्रि में इन नौ
सामर्थ्य हैं तो यह नौ श्री आचार्य जी महाप्रभु द्वारा निवेद
न कीयो ना को लौकिक गतिक बहन होइ श्री भागवत
के अष्टम स्कंध में कहें हैं अज्ञानादथवा ज्ञानादुत्तम
ज्ञोक्तनाम यत् संकीर्तितम धूप सो रहै दधौ यथा नलः
१ अज्ञान ते ज्ञान ते भगवदनाम जे होत सकल दोष भस्म
होइ ज्ञाइ इत्यादि वचन की भावना मन में राखि चिंतारं
चकइ ना ही करनी एक प्रभु को अथ य मन में राखे
३ आगे अथवा एह कहत होत हातु साधना भावान
किं एति ज्ञान ते फल वा विरहे न हरि पुन्यो सर्वत्र ज्ञे
रा भावनान् ४ आगे अथ जहां जीव बुद्धि ते यह वि
ता होइ तो साधन में मन में कछु ना ही है फल सिद्धि के
में होइ गो सो यह चिंतारं ना ही करन थ है काहे ते का
इ जीव में साधन को अथ भाव है साधन ना ही वनि अथ
त कहें साधन वने हो ज्ञान है जो से निवेदन कीयो है सो
दोऊ के फल श्री आचार्य जी महाप्रभु न के अंगीकारने फ
ल सिद्धि हैं साधन ते फल सिद्धि ना ही है फल सिद्धि कव जा
निये जब श्री आचार्य जी महाप्रभु जीव को विप्रयोग हान
है जिन व विरह हृदय में होय तै सकी भावना होइ हृजो
सर्व दुख हरताति न ही को विरह होइ श्री ठाकुर जी
के संबंध विना और कछु न सु
तै सकी भावना होइ अथाभां

अग्निहृदयमें प्रागट होइ तिनही को यह पुष्टि मारगी
 यफलकों अनुभव होइ ॥ ४ ॥ अब और एक कहत है श्लो
 क लीलातिरित सष्टौ हि निगानंद त्वनि श्रियात यथा
 कथंचिद्विस्मृत्य प्रपंच हृदये न्यसेत ॥ पा पा के अर्थ ॥ अब
 श्रीहरि राइजी कहत है जो लीला संबंधते रहित प्रवाही
 सृष्टि है सो निगानंद है ॥ उनको प्रभु अपने आनंद कव
 दंडन नाही करत है वे चर्यनी नाई सदा संसार में भ्रम
 त है ॥ उनको यह संसार ही फल है ॥ भगवदलीला संबंध
 की ऊर्त्तकी आनंद नाही है ॥ आनंद करि रहित है ॥ यह नि
 श्रय ज्ञान नों ॥ और भगवदलीला संबंधी देवी सृष्टि है
 तिनको कहलक्षण है ॥ महा प्रभुजी द्वारा शरण असत्त
 ग करि एक ही वार यह प्रपंच जिनको नाही छूटत ॥ सो
 थोरो थोरो क्रम सत्त छोड़त है ॥ अहर्निश अपने मन
 में विचार करि करि प्रभु को स्मरण करत है यह ज्ञान
 हृदय में होत है ॥ जो हम तो सदा प्रभु के पास है ॥ अज्ञान करि
 प्रभु को भूलि गयो ॥ हमारे तो प्रभु धर्म ही है ॥ जो प्रभु की
 सेवा सुमरन कसं या भांति देवी जीवकों ज्ञान होत है ॥ आ
 मरी जीवकों नाही होत है ॥ ५ ॥ आगे अब और एक कहत है
 श्लोक ॥ हृत्प्रगटं सदानंदं तथा लीलायुतं सदा रसव
 तं प्रकाशितं भक्त भावात्मकं पुन ॥ ध्यायो अथ श्रीह
 रिके से है महागट सर्वोपर है ॥ जिनको वेद आदि पार
 नाही पावत है नेति नेति कहत है ॥ बुद्धि बानीत अग
 च है ॥ और सदा आनंद रूप है ॥ एक स जिनको आन
 द है ॥ सो ब्रह्माश्रय में श्री आचार्य जी महा प्रभु कहत है ॥ प्रा
 वृत्ता सकला देवा गणितानंद कं रहत ॥ पूर्णानंदो हरि
 तस्मात् श्रीहृत् स्मरणं सम ॥ और देवता तो प्राप्ति न है ति
 नको आनंद प्राप्ति न है ॥ सो आनंद हृत् स्मारे आनंद की
 गनना में है ॥ अपार नाही है श्रीहृत् स्मरणानंद है

जो आनंद को हं पासना ही है जे में हंस को हं पासना ही है ताने
श्री हंस सदा आनंद रूप है और श्री हंस सदा चेतन भक्त
के हित रस रूप लीला मेरे सब करन हैं आ पुरस्कार अपने
भक्तन सो मान करत हैं देन होय मान मनोवत हैं मोरी न
जो बिंद में कहै है आ गार खंडन मम सिर सिमेंदु न देहि प
द पद नव मुदारा या भांति श्री स्वामिनी जी सो प्रार्थना करत हैं
जो अपने लक्षण विंद मेरे मस्तक ऊपर धरो तुमारे पद प
द नव के सो हैं मेरे मस्तक को आ गार हैं या भांति अने कहै
न्य प्रभु करत हैं वृज भक्तन के भावात्मे व हैं श्री हंस के रस
मो वृज भक्त भाव कपिके अनुभव करत हैं ईश्वर और
ई कहै न है लोच प सो दो तें गाला लित मुग्ध भाव समावृ
प्रपंच वैरिणा नाध हेतु लौकिक नाश नैं ७ या लोच
श्री श्री हंस जी के से है श्री यमोद जी अपने उत्संग से ली
खिलावत हैं सो या भांति परम सो भाते हैं मुग्ध वा
क की नाई श्री यमोद जी के वंठ में वे छित हैं प्रपंच जो यह
संबंधी श्री पुत्र पति धर लौकिक वैदिक कार्य ताके
हैं श्री यमोद जी रंजक हैं भूमि में प्रभु के धरि के दूध
नत दनो सो सवारन गरी सो श्री गुरु जी न साहे से
धिवे मोर पोरि डोर और माखन दनो सो हंस ने वद
कोर कवा इरीण्य दक दिके यद जे तारे जो मो को
अंग्रह का रज करे गो ता को ग्रह का रज लो दिव तैदिक
ह न सिद्धि होइ गो ओ स्य द प्रपंच के वेरी हैं जो जो भक्त प्र
प्राप्रय की यो तिज सबन को प्रपंच नास भयो प्रपंच
क हैं लौकिक कास को धम दम मूरता अहंता मम
ताहन लौकिक सब के नास कता भक्तन को प्रपंच
मेक सर्व सुंदर करत हैं ७ आगे श्री
गुरु स्व प्रवेशाय कामादिसर्व लो
खिलें धीयं परमाति महोत्सवं च

सि.प. श्रीरुद्रसूक्तमन्त्रनैर्हृदयप्रवेशकरनकोविचारकरतद्वैता
८५ समयउद्भूतकेहृदयमेंकामक्रोधमत्सरताआदिसकलद्वे
षहरिकरतहै। यहकहिकेउद्भूतनाराजैजहांताईभक्तकेहृद
यमेंकोमाहिमायाकेदोषहृदयमेंभरैहैं। नहोतईश्रीरुद्रसूक्त
हमेंनाहीपधारेजानिये। जवाहोयहरिहो। नवजानिये
प्रभुहृदयमेंनिश्चयपधारे। भक्तकेहृदयमेंश्रीरुद्रसूक्तपधा
रिकेंकहाकरतहै। उद्भूतअपनोलौकिकदेहमेंबंधीरा
येछोड़िके। श्रीरुद्रकेरासनकीआर्तिअतिविरहहोतहैं
सोउद्भूतसुआर्तिविरहदुखहैं। सोमहामहोत्सवरूपहैं
सोउद्भूतभक्तकोसिद्धिहै। श्रीरुद्रसूक्तमेंभावात्मकवि
राजतहैं। तातेप्रहकास्जनाहीवनिआवतसगरोद्दिन
बेएगी। तयुगलगीतगानकरिके। निरबाहकरतहैं। ओ
राखेंचाध्याईमेंअंतरधानप्रभुभरणपाछेभक्तनको
महाविरहभयो। तोप्रभुपरप्रगटेसदानकीरेविरहन
होतोतोप्रभुकेसेप्रगटे। तातेश्रीरुद्रमेंविरहआर्तिजित
नीअधिकहोये। सोमहोत्सवरूपआनेह्लाताहैं। यथागेंअ
वओरहंकहतहै। श्लोक॥ श्रीमदाचार्यहृदयशेषपर्यवसा
यिनंअनेतभावस्पात्मागोपारमाणतत्परंविद्याकोअर्थ
एसेभावात्मकश्रीरुद्रश्रीआचार्यजीमहाप्रभुकेहृदयमें
भक्तनसहितकेसेलीलाकरतहैं। सोकाहेतैजैसोतीर
सागरमेंशेषसाईभगवानकोदृष्टांतहैकैकहतहैं। जैसे
तीरसागरमेंसेयसिन्याहैं। तेसेहीश्रीआचार्यजीमहा
प्रभुकोहृदयसिन्याहृदयनहांसेयसिन्यापरश्रीनारायण
गहैंहैं। इहांश्रीरुद्रभावात्मकरसात्मकपौढेहैं। उद्भूत
श्रीलक्ष्मीजीसंगविहारहैं। इहांअनेकभावात्मक
जभक्तनकोदानकोदियामिनीतिनसंगारमाणकर
मैंतत्परसोश्रीआचार्यजीमहाप्रभुवहैंहैं। अपनेहृद
यमेंभावजनाएहैं। ताकरिके। जान्योगयोहैं। श्लोक॥ न

मासि हृदया शेषे लीला ही राधि शायनं लक्ष्मी सहस्रली
लाभि सेव्य मान कलानिधि १२ या भाति श्री आचार्य जी महा
प्रभुं अपने हृदय में प्रभु लीला करत है सो तिन को नमस्कार
रमंगला चरण करि श्री सुबोधनी जी निबंध प्रगट की रो
है या भाति श्री आचार्य जी महा प्रभुं अपने निज भक्त नको
अपने हृदय की लीला प्रगट करत है सो भक्त या भाति ली
ला सहित श्री आचार्य जी महा प्रभु को सुमन करे तो अतु
भव हो १३ आगे अब और एक कहत है श्लोक ॥ मधुपालि
जवा धुतरो सास्ति सुविराजितं प्रसन्नवदनो भोजकर
णारसवदरी १० या ॥ श्री ॥ कुरहा जो मोर के पक्ष को स
वारे के साथ में मुकट धरे है श्री हस्त के से है रो मादली है
नाभिक मस्त पास सो मानो मधुप जो भम स्त्री पंक्ति माला
की नाई चतुर्न सो भादेत है मुखारविंद अत्यंत प्रसन्न है ना
को भाव्य ह जो अनंत को दिव ज भक्त के संग लीला करि
अधरासन पान करत है हृदय में महा आनंद भयो है
ता करि के वदन कमल अति प्रसन्न है करुणा एस संयु
क्त है भक्त के ऊपर करुणा दृष्टि करि स पान करत है
१० आगे अब और एक कहत है श्लोक ॥ वर्दिषिष्ठ शिरो
भयं श्रंगार सरूपिण एवे विधानं त गुणानि धाय हृदये
सदा ११ या ॥ श्री ॥ कुरहा जो मोर के पक्ष को सवारे के सा
थ में मुकट धरे है सो श्रंगार सरूप है जे से मोर जवा सदा
न करत है तब नित करत है सो ते सही श्री गुरु जी मोर मु
कट को श्रंगार करि भक्त न को एस दान करत है नाते मोर मु
कट को श्रंगार है सो श्रंगार सरूप है नाते मोर मुकट को
श्रंगार है या भाति रासादिक लीला में अनेक लीला वृज
स्थल की डामाना दिव सर्व लीला संयुक्त ऐसे श्री हस्त को
अनंत लीला संयुक्त अपने हृदय में
हरसन करि हृदय में सदा ही धारन कर नि

१५०. एवमेव करैव हं न ही त्रिये न करै ॥ १५॥ आगे अब और हं
हं हं हं हं हं ॥ तस्यैवा प्रवर्तनीया जीवस्य धर्मः न फलार्थे
न लोभार्थे न प्रतिष्ठान प्रसिद्धये ॥ १५॥ या को चर्च कपर कहै
से श्री हृषीकेश अंगार सहा तिनको सदा हृदय में ध्यान करे
मान ससिद्ध लोक बसिद्ध होइ सो कहत है जो प्रथम तनु
जावि तजामन लगाइ केवै वा करै सो सिद्ध तमुक्तावली
में श्री आचार्य जी मह प्रभु कहै है जो हृषीकेश सेवा कार्य
मानसी सा परामना ॥ श्री हृषीकेश की सेवा सदा करै तिनको
यह मान ससिद्ध वा सिद्ध होइ तनि यह पुष्टि मारि यवै स्व
को धर्म है जो श्री हृषीकेश की सेवा करै सदा ॥ जे संत्रास राग गय
त्री न पै तो ब्राह्मण पनो जाइ शुद्ध वत है ते संहि वैष्णव होइ
के भगवद सेवान करै तो वैष्णव तजानै श्री हृषीकेश
सेवा करै अपने स्वधर्म जानि कछु फल की आस करि से
वान करै जो मै हतार्थ होऊ गो ॥ कछु लोकिक वैदिक मोह
भक्ति लक्ष्मण फल की वासना मन में न राखै ॥ कछु लोभ न
राखै जो मै सेवा करु तो कछु वैष्णव जानि मोको कछु दे
जाय ॥ कछु मन में अपने मे लोभ न राखै ॥ और प्रतिष्ठा
र्थ न करै जो मै विडाइ होइगी ॥ लोग भलो वैष्णव जानै गो
या भांति अपने को प्रसिद्ध करै जो मोको को अंजाने
सोऊन करै गोप्य ॥ तिसो करै सो श्री भागवत नवम स्कं
ध में भगवान कहै है जो दुबोषा प्रति ॥ मत्सेवया प्रतीतं च
सालोक्यादि चतुष्टयं ॥ नेष्टं तिसेवया पूर्णः कुतो न्यक्का
ल विलुप्तं ॥ १६॥ इति वचनात् श्री भगवान जी कहत है जो भ
क्त सेवा मैरी करि पूर्ण है यही प्रतीत है तिनको मै चार प्र
कार की मुक्ति देत है ॥ सालोक्य ॥ सामीप्य ॥ सायुज्य ॥ सारूप्य
सोऊना ही लेत है ॥ एते पूर्ण निष्काम है तिनको काल में
हावाध कहै ॥ या भांति मन पूर्वक वैष्णव को स्वधर्म जो
सेवा करै अब और कहत है ॥ लोक ॥ श्री महाचार्य सा

गेणानत्येनापिकदाचनः न कल्पितप्रकारेन न दुर्भाव
 समन्वियात् १३ या ॥ तस्य वैश्वसेवाकरेण श्रीआचा
 र्यजीमहाप्रभुकेपुष्टिमार्गकीरीतिहंताहीअनुसारकरेक
 दादितभूलिकेहंअन्यमागकीरीतिहंसोनकरेओरअप
 नेमनतेकल्पितप्रकारहनकरेजोनजानेसोपुष्टिमार्गी
 यभास्वदीयसोपुष्टितेहोमनकल्पितसर्वथानकरेदु
 र्भावसोनकरेजोकेहाभयोनेसेलौकिककार्यहेनेसय
 र्करियेहेयाभांतिअप्रदादुर्भावसम्पदनकरियेप्रीति
 पूर्वकसर्वोपरपरमफलरूपजानिकेसेवाकरिये १३ आगे
 अवओरइकहतहेहो ॥ तत्वेविदित्वापरमंपसोहोत्सं
 गलालितः श्रीमहाचार्यतत्पुत्रोदित्वास्मत्स्वामिनीरपि
 १४ या ॥ तस्य वैश्वभवावदसेवाकरेओरयहचारोपदा
 र्यकोपरमतत्त्वजाने श्रीयसोहोत्संगलालितप्रथमतत्त्व
 श्रीगुसांईजीकहतहेजोजानितपरमतत्त्वयसोहोत्सा
 लालितेतदन्यद्वितीयेप्राहुरासुरास्तोनहोबुभायाभां
 तिप्रथमतत्त्वयसोहोत्संगलालित १ इसेश्रीआचार्य
 जीमहाप्रभुअपनेआचार्यजीश्रीवक्षेभाचार्यजीपरम
 तत्त्व २ तीसरे श्रीगुसांईजी श्रीमहाप्रभुजीकेपुत्र श्रीवि
 दूतनाथजीपरमतत्त्व ३ चौथेअस्मत्स्वामिनीवृजभनते
 परमतत्त्व ४ येचारोपरमतत्त्वअपनेमनमेंजाने १४ आगे
 अवओरइकहतहेहो ॥ नतुल्यबुधनाशः स्यात्
 सर्वथेतिविनिश्चयेः एतावतीसतीसिंहासंक्षिप्ताहृदी
 यतां १५ या ॥ अथ उपरकहेजो श्रीहृदय श्रीआचार्य
 स्वामिनीजीइनचारोकोपरमतत्त्व
 नओरकोइकोनजानेजोकोइ
 कितसेकाहोकोजानेताकोसीधहीना
 जाननोसोवोतामे

जानेइन्चा

सहोइ
 ईकेधरुने

नैकहीजोंकछुश्रीठाकुस्तीकेपहगावोंयह्युनतहीरां
महासनेकहीरागिण्डयह्यहतेरेखसमकेहैआनुपाठे
नेगेमुखदेखगो॥पाछेमीयवाइनेवोहोतमनुहारकरिकें
गखिपरंतुयेतरहेंउहगामछेहिदीयोचोरछीनस्वामी
वीरबलकेइहोगागेइतेवरमोटीलेनतहंगगोछीतस्व
मीगिरधनश्रीविठ्ठलयेइतेइनेइयेइकछुनसंदेहयह
मुनिकेवीरबलनैकहीदेसाधिपतिपूछेगोतोकाझाजुवा
वदेहगोप्रह्युनतहीछीतसामीकहेजोमैरेभारितोनुम
हीमलेछहोनाआनुपाछेतरोमुखनदेखगोपाछेव
रमोटीछोडिकेचलेआगेएसीदेकवैरम्वरायेचारेन
त्वकोहोविवसैकोईइनसमानजानेंताकोनिअथही
नामहोइअथहीहरिगिजीअपनेनहैश्रीगोपेश्वरी
सोंकहतहैजोयाप्रकारमेंसितासंसेपमेंलिख्योहैसात
मअपनेइह्यमेंआवस्यकहीकरीयो॥१५॥आगेअवक्ये
इह्वहतहैश्लोक॥अत्येपिचोपदेष्टव्यायदिसुराधिक
रिण॥मितेतिस्विष्ठयश्रद्धायुतापुंतिचेतदा॥१६॥य
केअर्थ॥यदुकरसिलाकहीहैंसोओखेआगेमति
कहियोकोईयासिलाकेअधिकारलायकहोइताके
आगेकहियोसोभगवइछातेआपुहीआयकेप्राथ
नावरैश्रद्धाहोइपूछेचितलगारहेतासोंकहियो॥
पतीइछातेमतिबुलाइकेकहियोयहसबोपरसिद्धातहै
अधिकारीपात्रविनासठहरेनाहीपहनानिकेओ
आगेमतिकहियो॥१६॥आगेअवचोरइह्वहतहै॥स्व
जीवनतत्परतासिद्धोदपालुतेसुतुष्यति॥पथाविष
तोषोइतिकासुतथाहरे॥१७॥याकेअर्थ॥उपरकहे
कारयहजीवभगवद्धर्ममेंजवनतत्परहोइतवयह
मागीयफलसिद्धहोइनेमेंप्रह्लादकोहरणकु
तदुखदीयोपरंतुप्रह्लादअपनीतत्परताभगव

मैजवतत्परभगवानकोआश्रयनहोदेतोन्सिद्धिप्रा
 र्होइप्रतिबंधइरिहीकीएफलसिद्धभएतेसेहीपुष्टिमर
 गीयभगवदीयतत्परहोइपुष्टिमार्गसेतोफलसिद्धिहोइ
 काहेतैप्रभुहपालहेंसंतोषपादेंप्रसन्नहोइनेसेविष
 ईकोइतीमिलेंनेसंतोषहोइतेसेईश्रीभगवानअपने
 भक्तकीधनन्यतादेखिकेंमनमेंबहुतसंतोषहोतहेंप्र
 सन्नहोइलगाएकार्यअपनेरासकेप्रत्यकरतहेंसदाह
 पाकरतहेंप्रतिबंधइरिहिकेंफलदेतहेंयामेंयहसि
 द्धांतनिश्चयभयों॥१॥इतिश्रीहरिणामस्तोत्रसिद्धि
 पत्रंतात्कीटीकाश्रीजगद्गुरुजीहैंसे॥१॥अथक
 परकहेताप्रकाशैकमतत्परहोतोफलसिद्धिहोइसोयहक
 लिकालेमहाकठिनहेंयहबाधकहेंयासोंबचेतोफलसिद्धि
 होइसोआगेकहनहेंहोइइहोनीवर्ततेकालकाल
 कलिरीहोया।यस्मिन्निनस्यातिमतिमतामधिकसंगतः१
 याकलत्रयःअथश्रीहरिणामस्तोत्रकहनहेंजोपहअवजो
 कालवर्तमानप्रसिद्धिहेंसोमहाकालहेंप्रसिद्धस्य
 मानहेंप्रसिद्धियाकोप्रवाहदेखियनहेंकाहेतैजोसत
 पुरस्यहेंनिश्चयतिनहूकीमतिकसंगतितैविन्यजोभृष्ट
 भईहेंयहकहिकेंयहजताऐजोयाकलियोधतेमनप्राणी
 कीबुद्धिभृष्टहोनहेंजोअपानीनोभृष्टहोइयामेंकहा
 कहना।एसोकठिनकालआयोहेंनहोकोईकहेजोस
 तप्राणीकीबुद्धिभृष्टहोनहेंनहोकोईकहनहें॥१॥लोका
 सत्संगोदुश्चेभोयत्रसततसत्प्रसंगतःकथाकथयारि
 त्रैकयुतानित्यंभजंतिदि॥२॥याकोअथश्री
 राइजीकहनहेंजोसत्संगतोबहुतदु
 हीतिरंतरदुःसंगतेसत्प्राणीकीबुद्धिनास
 एप्रसंगहेंभगवदीयकोदुश्चेभभयो
 कहाहोइकाहेतैजोजवनिर

एकल

नैकही जो कछु श्रीगुरुजी की पदगावै यह युनत ही रंग
महार नैक ही राशि इयह पद तेरे खसम के हे अनुपादे
तेरे मुख देखे गो पाछे सीय वाई नैक हो तमनु हर करि के
राखे पांतु ये नर हें उद्गाम के दिदीयो और छी तस्वामी
वीर बल के इहांगो हते वर मोटी लेन न हांगो छी तस्वामी
मी गिर धरन श्री विठ्ठल ये इते तेरे ये ई कछु न संदेह यह
युनि के वीर बल नैक ही देसाधिपति पूछे गो तो कइ जनुवा
वदेहो यह युनत ही छी तस्वामी कहे जो मेरे भाए तो तुम
ही मले छ हो जा अनुपाछे तेरे मुख न देखे गो पाछे व
र मोटी छोड़ि के चले आगे एसी टेक वै शम वरा खे चारो न
त्वको लोकि वसै कोई इन समान जानै ताको निश्चय ही
नाम होइ अव श्री हरि इजी अपने न श्री गोपेश्वरी
सों कहत है जो या प्रकोर मैं सिद्धा संसे पमें लिख्यो हे सो तु
म अपने इह्य में आवस्य कही करीयो १५ आगे अब
इहं कहत हो श्लोक अत्ये पिबो पदेषु व्यायदिस्यु अधि
रिण मिलेति स्विष्ठया अद्या युता पुरुंति चेतदा १६ य
के अर्थ ॥ यह ऊपर सिद्धा कही हें सो श्री के आगे मति
कहियो कोई या सिद्धा के अधिकार लाय कही ताके
आगे कहियो सो भगव इच्छाते आपु ही आय के प्रा
न वर अद्वा होइ पूछे चित लगार के ता सों कहियो
पनी इच्छाते मति बुलाइ के कहियो यह सबो पर सिद्धात है
अधिकारी पात्र विना सठ हरे ना ही पद जानिके आ
आगे मति कहियो १६ आगे अब और इहं कहत हो १७
जीवत त्परता सिद्धो ह्यपालुते सुतु घाति पथा विष
तोयो इतिका सुतया हरे १७ पाके अर्थ ऊपर कहे
कार यह जीव भगवद धर्म में जवत त्पर होइ तव यह
माणीय फल सिद्ध होइ निमें प्रह्लाद को हरण क
न दुख दीयो परंतु प्रह्लाद अपनी तत्परता भगव

मैं जव तत्पर भगवान को आश्रय न छोड़ें तो नृसिंही प्रण
 र होइ प्रतिबंध हरि की ऐपल सिद्ध भए ते से ही पुष्टि मा
 गीय भगवदीय तत्पर होइ पुष्टि मार्ग से तो फल सिद्ध होइ
 काहे ते प्रभु ह्वा पाल हें संतोष पावें प्रसन्न होइ ते से विष
 ई को इती मिलें ते संतोष होइ ते से ईश्वरी भागवान अपने
 भक्त की धन न्यता देखि कुं मन में बहुत संतोष होत है प्र
 सन्न होइ लगे काय अपने दास के पूजन करत है सदा ह्
 पाकरत है प्रतिबंध हरि की फल देत है यामें यह सि
 द्धो त निश्चय भयो ॥ १७ ॥ श्री हरि इत्युक्त सिद्ध
 पत्र ता की टीका श्री जेष्ठरत्न देत संपूर्ण ॥ १८ ॥ अंक
 पर कहता प्रकाश स्वैश्वर्य तत्पर हो तो फल सिद्ध होइ सो यह क
 लिकाले महा कठिन है यह बाध कहें या सो वचे तो फल सिद्ध
 होइ सो आगे कहत है लोक इदानीं वर्तते काल काल
 कलिरीदृशा यस्मिन् विन स्याति मति सतामधिक संगतः १
 या जेष्ठरत्न अव श्री हरि इती कहत है जो यह अव जो
 काल वर्तमान प्रसिद्धि हो सो महा काल है प्रसिद्धि ह्वा
 सो न है प्रसिद्धि को प्रवाह देखियन है काहे ते जो सत
 पुस्त्य है निश्चयतिन की मति कुसंगति ते विन्य जो भय
 भई है यह कहि कुं यह तता ऐ जो या कलि दोष ते सत प्राणी
 की बुद्धि भ्रष्ट होत है तो प्राणी नीतो भ्रष्ट होइ यामें कहा
 कहता सो कठिन काल आयो है तहां के कहें जो स
 त प्राणी की बुद्धि भ्रष्ट होत है तहां कहत है थै लोक
 सत्संगो दुश्चै भोयत्र सतत सत प्रसंगतः कथा ह्वा सचरि
 त्रैक युतानि तं भजंति हि २ या को अष्ट अव श्री हरि
 रा इती कहत है जो सत्संगतो बहुत दुश्चै भई मिलत नो
 ही निरंतर दुःसंगते सत् प्राणी की बुद्धि नास भई है एकल
 ए प्रसंग भगवदीय को दुश्चै भयो है जो सदा निरंतर
 कहा होइ काहे ते जो जव निरंतर भगवदीय को संग हो

सेन इ वृक्षकी कथा वृक्षकी लीला सुने प्रीतिसो नित्य श्री वृक्ष
की सेवा करे ॥ और भागवदीय वृक्ष की लीला सुने भागवदीय
आपु रूकत हो ॥ ऐसे सो भागवदीय हो ॥ आपु रूकत हो ॥ और
को नवतों वै जैसे भी जो कपूर हो ॥ सो सब के कपूर को भिजावे
तैसे ही आपु और रूकत हो ॥ जो भागवद धर्म में तत्पर हो ॥ उतो
उह और रूकत हो ॥ २ ॥ आगे अब और रूकत हो ॥ श्लो
क ॥ निजा चार्य पदा भोज से विन सु सु दुर्ध्व भोज ॥ अहं भिज
ः वृक्ष सेवा दया चिंतन तत्परा ॥ ३ ॥ पाको अर्थ ॥ और भागवदी
य को सो हो ॥ आपु ने श्री आचार्य जी महाराज श्री वृक्ष भाचा
र्य जी हैं ॥ सो तिन के चरणों में रूकत हो ॥ की सेवा में अहं निस जा
को मन हो ॥ ऐसे अनन्य पुष्टि पाणीय भागवदीय ध्वन
दुर्ध्व न हो ॥ अहं भी हो ॥ पाखंड न हो ॥ श्री वृक्ष जी की ली
ला चिंतन में तत्पर हो ॥ का इके दिखे ॥ वे दे लगे भागव
धर्म न करत हो ॥ शुद्ध न हो ॥ ऐसे भागवदीय हो ॥ सो तो
या काल में बो हो ॥ न दुर्ध्व भोज ॥ ३ ॥ आगे अब और रूकत
हो ॥ श्लोक ॥ अहं तु सर्वथा नित्यं तथा सत्संग वर्जितं ॥ के
षां मिमनसानुनंति गानं देन नित्यं ॥ ४ ॥ पाको अर्थ ॥ श्री
राम के सो हो ॥ सर्वथा नित्य सत्संग करि के वर्जित हो ॥ मेको
तो सत्संग मिलत न हो ॥ ताते मैं मन मैं बहुत ले से पाव
त हो ॥ जो मेको भागवदीय को सत्संग न भयो ॥ काहे नै भागव
दीय को भोग हो ॥ श्री वृक्ष सदा आनंद रूप हैं ॥ तिन के चा
ने रूकत ॥ अनुभव हो ॥ भागवदीय विना आनंद करि हि
त हो ॥ नित्य ॥ ४ ॥ आगे अब और रूकत हो ॥ श्लोक ॥ वाय
निःशरणो पापं न पश्य मिमं ही तले ॥ को वा मदीय इ
दं दुःखं हरि किरिष्यति ॥ ५ ॥ पाको अर्थ ॥ अब श्री ह
रिजी निःसाधन हो ॥ इहे न्य हृदय में भोगेता चाबि समे
कृत हो ॥ जो मैं यह मदी तल पृथ्वी में आये वा सकीयो
सो पृथ्वी ही भयो ॥ काहे नै हरि सारण को उपाय जव

नवनिश्रयो नाकोजन्मयदृष्टीप्राप्त्याहं सोप्रह्लादजी
श्रीभागवतमेंकहेहैं जोकौमारश्रावणप्राज्ञोधर्मानुभा
गवतानिहृदुधैभोमानुषजनमतदण्डध्रुवमर्षहं १ श्रावण
कादसखंधमेंजनकजीकहेहैं जोदुधैभोमानुषोदेहीदेहीना
हणभंगुरः तत्रापिदुधैभमन्येवकुंडप्रियदर्शन २ इति
वाक्यान् यद्गगनुषहृदमहाउतमहं कौमारश्रुवस्थाति
प्रभुकोशरिगदरिभगवदधर्मकरनौगचितहै काहेतै
लगामेंभंगाहोइजाइतोअनः कालसमयकछुनाहीवनि
आवेगो। पेरियहृदेहीमितनीदुधैभहैं तातेभगवानकोध
र्मभावानकोदरसनयहमहादुधैभहैं। आवस्ययहृदेहसो
वनेसोकतेयहैं सोमोसोकछुभयो। पाछेयहृकोमहासो
बहैं जैसैचिंतामनिपायकैकोडीदिपलदेहै। पाछेचिंता
मणिको। गुनसुने। तवअनेकदुखआवै। पाछेयहृदेहृपा
इकैलौकिस्मिलगावै नाकोजन्मवृथाहैं नातैमेंहरि
सरणकोउपायनाहीवीयो। तातेहृदयमेंमहादुखीहो
यहमेंहृदयकेदुखकोइस्किरो। एसेकोनहैं पाआओ
अवश्रैरहृकहतहै। श्लोः वृजवासस्तथाश्रीमदयमु
नादरसनंगतं दुरंगोवर्द्धनदृशिदुरंतनाथदर्शनं ध्या
नोम १ अवश्रीहरिराइजीकहतहैं जोश्रीहरिकेचरण
कमलकोसाधनकछुनवनिश्रयो। सोवृजवासंनभश
काहेतै वृजदेसहै सोमहाउतमहै प्रभुकेचरणकरिकेको
स्थलहैं तहंपरिगिहिएतोप्रभुअपलोजानिकेहंपाकरे
सोऊमोकोनभयो। ओश्रीयमुनाजीकोदरसननाहीहै
केसीहैंश्रीयमुनाजी जोदृष्टप्राणीअनजानैएकवारहैं
जलपानकीयोहोइतोउहजीवकोसमपातनानहोइय
हप्रतापहैं जोश्रीयमुनाजीकोआप्रयकरें तिनकोश्री
यमुनाजीश्रीठाकुरजीकीलीलाकोअनुभवकरावें स
बैकार्यसिद्धहोहैं। अलौकिकहैहसिद्धकरे। एसीश्रीयमु

नाजी कोरसमनाहीहैं। श्रीगिरिगजजीहोतेदृष्टिहैं सो
श्रीगिरिगजजीहोतेहैं। तिनकेसंगतेभीलनीजोपुलिंदी
तिनकोहोभक्तिभरो। ऐसेश्रीगिरिगजजीहोतेदृष्टिहैं। श्री
श्रीगोवर्द्धननाथजीकोरसमनाहोतेहैं। सोहोतेहैं।
सोमैंपरदेसमेंयाभांतिहो। अवमैंकहाहूँ। तहाकोईकहे
मनकरिभावसोंजावसुकोस्मरणकरेंसोपामहीहैं। सो
तातेंमनकरिभावसोंवृजश्रीयमुनाजीश्रीगिरिगजजी
श्रीजीकोरसमनसवकएलेहूँ। इतनादेसमनमेंको
पावनहोयाभांतिकोईकहे तहाकहतहैं। ६। श्लोक॥
विषयाक्रांततोहैंभावइससंतति। देसांतस्थितिस्था
घुइरेसंगसतामपि। ७। याकोअर्थ। अवश्रीहरिगजजीकहे
तहेंजोविषयाक्रांतदेहमेंभरीहोइ। तिनकोभागवद्भा
वबहुतदृष्टिहैं। मनकरिकेंभावनासिद्धितोतिनकोहोइ
जिनकोसुइइह्यहोइ। अष्टप्रहालोकिकनपरेभगव
दस्मरणमेंमग्राहें। तिनकोसगाविजुसिद्धहैं। श्रीसोको
विषयावेशकरिभावदृष्टिहैं। अनेकदेसांतरमें
स्थितिहैं। अनेकप्रकारकेलौकिकप्रवाहीसृष्टिकोसंग
हैं। भावदीयकोसंगमेंतेदृष्टिहैं। भावदीयमितेंतऊउन
सोंमितिकेंभावदृष्टिभावविचारियें। सोऊमेंतेदृष्टिहैं। तातें
मनमेंवहुतखेदहोतहैं। ७। श्रीअथचौएकहोतहैं श्लो
क। तदभावान्वयाइततोविमुखताइहूँ। एवंविधस्य
सततेश्रीहृत्सयणमम॥ याकोअर्थ॥ अवश्रीहरि
गजजीकहतहैंजोभावदीयहोयभावात्मककथाश्री
सुवाधनीजीआदिकहो। तथासुनिवेदयमेंभावउ
त्पन्नहोयसोभावदीयमेंतेदृष्टिहैं। ताकरिभावात्म
ककथाहोतेदृष्टिहैं। तातेंहृदयमेंविमुखताछायाही
हो। सोयाभांतिमेंसर्वसाधनकरिगहितहो। यहदेसांतर
मेंस्थितिहो। श्रीसोजोमेंनिरंतरश्रीहृत्सयणीसंगहो

और मैं कह करों जब वह नवनैत वसराण की भावना कर
तहो सो श्री आचार्यजी महाप्रभु श्री हनुमत्प्रभु मे कहें दे वि
वेक धैर्य भक्त्यादिरहित स्पष्ट विरोधतः पापसक्त स्य ही न
स्य श्री हनुमत्प्रभु ममः १ विवेक धैर्य भक्त्यादि सर्व धर्म
करि रहित होय पाप सति होय अति ही न दुखी सो उ
श्री हनुमत्प्रभु की सराण करों ताते में सर्व साधन करि रहित
हो निरंतर श्री हनुमत्प्रभु की सनकी धि हो आगे अब और
ह कहत है श्लोक को वेद हनुमत्प्रभु की न जाने हनुमत्प्रभु पानि
धि तथा पि श्री महाचार्य सराण कर वै मनः दीया के अ
सो यह मैं नाही जानत जो श्री हनुमत्प्रभु कहि वाहे
मेरी कह गति करों सो जानी नाही जात है काहे ते वे
ह श्री हनुमत्प्रभु अभिप्राय को नाही जानत है तो मे कह
कर पंतु इतने श्री आचार्यजी महाप्रभु की हनुमत्प्रभु पाते जा
नत हो जो श्री हनुमत्प्रभु पानि धि है अपने निज भक्तन पर
स्नेह करत है निश्चय हनुमत्प्रभु पात है ताते में एक श्री आ
चार्यजी महाप्रभु न के चरण कमल की सराण आपने म
न में करि रहे हो ता करि श्री हनुमत्प्रभु पात करों और सा
रो कार्य सिद्ध होइगों यह कहि के यह जता ऐ जो श्री आ
चार्यजी महाप्रभु की सराण की रहे जीवति न को श्री ह
नुमत्प्रभु पात करों सागे कार्य सिद्ध होइ श्री हनुमत्प्रभु
नाजी श्री गिराजजी श्री जीमारी लीला को अनुभव
होइगों जो श्री आचार्यजी महाप्रभु की सराण ना
ही कोयो है तिन को बहुत फल सिद्धि नाही तले में अ
पने श्री विष्णु भाचार्यजी के सराण मन करि कीयो है या
आश्रय करि अपने मन को समझाये राखे है श्री आगे
अब और कहत है श्लोक विरोध प्रेमजी पित्रा दोष
व्यः सर्व रते युक्त अने न केवल ते नैव किंचित् स्वस्थम
नो ममः १० या के अर्थ अब श्री हरि राइजी कहत है

०५ सो श्रीगोपेश्वरजी सो कहत हैं जो विशेष समाचार प्रेमजनित
पत्र में जानागे श्रीमहाप्रभुजी की सरण करि किंचित मन
में स्थास्थ हैं जो प्रभु रूप करेगे अपनी ओर देखि के १०५
ते श्रीहरि इजी कहत सिलापत्र को न बिशोता की दी का
श्रीगोपेश्वरजी कहत संपूर्ण १२५ जो व श्रीगोपेश्वरजी को प
त्र थायो है सो तां को प्रतिजत श्रीहरि इजी लिखत है
ताते सुगरी पुष्टिमार्ग की रीति सो रहें तो फल सिद्ध होय
सो सब लिखत है ॥ श्लोक ॥ समाचार वगैरे संतोषो
जनि तो महान सहोषो पिह रीति वेनु ग्रहं कुरुते स्वतः
१५ पा को थो अथ श्रीहरि इजी कहत हैं जो तुमारे पत्र था
यो सो वाचिक मन में संतोष भयो कहते जद्यपि ग्रह भो
को बडो दुख दतो सो दुख तुमारे निवत भयो तुमारे ह
य में संतोष भयो ताकरि हम ह मन में संतोष पाए ॥ आगे
यह सिला कहत हैं सो मन में धास्न करियो हरि नो भगवा
न के सैं हैं जद्यपि जीव के दोष को जानत हैं तऊ अपनी
ओर ते जीव पर अनुग्रह ही करत हैं जीव को ओर नाही
देखत हैं सि सुपाल श्रीहृक्ष की निदाही करतो अयो
दुष्टता को गति दीनी इन्द्र नै जल वृष्टि करि देय की धि
त ऊबा पा प्रसन्न भये ॥ एसे श्रीहृक्ष हैं ताते श्रीहृक्ष ही
को भजन करण आश्रय करत थैं जो सदा ही दया
करता हैं अनेक प्रमेय बल ते यही जीव पर अनुग्रह
करत हैं ॥ आगे अथ ओर कहत हैं श्लोक ॥ प्रमेय ब
ल मासा धुं कि म साध्यं तदा भवेत् ॥ अतः प्रथम दोषा
णा चिंतानैव विधीयते ॥ २५ पा को थो अथ श्रीहरि
इजी कहत हैं जो यह पुष्टिमार्ग में तो केवल प्रमेय ब
ल ही ते सर्व कार्य सिद्ध हैं जीव के साधन ते सर्व कार्य
सिद्ध होत नाही ओर जीव कहतां प्रसाधन करेगों ता
ते जीव तो परम दोष वत है सो अपने दोष की चिंता क

गो। याकेसाधनतेदोषहरिहंनहीहोइसकतातातैव
 गचिंताक्योंकरतहो॥ श्रीमहाप्रभुजीकेहेहेजो॥ जीवोस्व
 गवतोदुष्ट॥ जीवतोस्वभावतेदुष्टहै निश्चय। परंतु अ
 निमनमेंनेअज्ञानकरिउत्तमजानतहै। मेंहप्रसदी
 वंतहै सोदोषकीचिंतानाहीकरना सोतातैचिंताकी
 रकहासिद्धि॥ चिंताबाधवकोनभांतिहै॥ सोअवश
 आगेवहनहै श्लोक॥ संजातभगवद्भावमप्यथमिव
 नदुर्गा॥ लोकोनिंदाभवदुखंनधृतव्यदिमानसे॥ अथा
 तोअर्थ॥ लौकिकचिंतातेभगवद्भावनासहोतहै सोअव
 कोदृष्टांतकहतहै जेसेसुंदरओषधखाया। ताकेऊपरअ
 थपकरेखादोखारोखाया। याभांतिकुपथ्यकरेनोविनाय
 प्रउहओषधकोगुणजाय। औरोगवत्तै। सोतेसेमनमें
 कहुभावरभावहोइसुमरनभजनसुंदरओषधकीना
 करेतामैंयइलोकिचिंतादि। कुपथ्यकरेतोभगवद्
 भावउलटोजाय। सोताहीतैश्रीआचार्यजीमहाप्रभुनव
 त्रग्रंथमेंचिंतानिवृत्तकरीहै। चिंताकापितृकायोणि
 निवेष्टितात्ममिवदापि। निवेदनजोजीवकीयोहै। तिन
 निश्चयहीचिंतानाहीकरतवहै औरपहलोकि
 जीववुद्धिजेनिंदाकरतहै। सोऊमहादुखरूपहै सो
 हीधरनी। काहेतेजोलोकिमैंजीववुद्धि
 रतहै। सोऊमहादुखरूपहै सोअपनेमनमें
 काहेतेजोलोकि। कमैअनेकभांतिकेजी
 नकरियेंतोभगवद्भावजाया। ता
 हीउचितहै सोश्रीभगवत्तमेंकहेहै
 सोलोकावेरछोडिकेप्रभुकोभजन
 निंदा मातापिताकीयोसोनधारनकी
 तातै॥ किंनिंदाभावदीयको॥

यो सोतातें लौकिक निंदा भाव दी को सहनो यह परम धर्म है
 १ आगे अब ओह कहत है ॥ श्लो ॥ अग्रे तु सावधानि त्वविधे
 य सर्वथा पुनः दुःसंग हि महा दोषानासयेते वततस्तथा
 त ४ या ॥ अ ॥ अब श्री हरि राज्ञी कहत है जो श्री गोपे
 श्री जी लो आगे ओर सावधान रहियो सर्वथा सो काहेते
 जो दुःसंग महा बाधक महा दोष है जो जन्म मृत्यु ते भाव
 द भाव जो रिकै एक ठो रोकरे सो एक क्षण में ही तत्काल
 सगरे भाव को नास दुःसंग ते होय सो श्री भाव त पुराण
 में कहै है ओर वडे बडे भगवदीय दुःसंग ते गिरे हैं ना ते
 म दुःसंग ते निश्चय क्षण क्षण में सावधान रहियो इतनी
 हमारी बातो सर्वथा हृदय में धारन करियो जो दुःसंग ते
 बचे रहियो सर्व भाव को क्षण में नास करी है ॥ ५ ॥ आगे अब
 व ओह कहत है ॥ श्लो ॥ अथ जन्म मृत्यु निहातु पृथक् सत्त्व
 विनिश्चयात् यतते घानरो चेते संत एव हि सर्वथा ५
 या ॥ अ ॥ अब श्री हरि राज्ञी कहत है जो अस जन्म जो अ
 वैश्वदेव तथा अन्य माणीय तथा वह मुँख जो निंदा करे तो
 उन की निंदा सुनि कै मन में दुःख मति पाईयो मन में प्रस
 न्त संतुष्ट पाईयो जो ये निश्चय सत्य ही कहत है मे तो हो
 य वं न निश्चय ही हो या भांति मन में जान करि विचारि
 निंदा सहनो सो पातें जो संत जन्म ते है सो उन दुष्ट न की
 घानी में सर्वथा रुचि ना ही राखत जो जे से प्रहलाद जी
 सहि जीयो ना में प्रहलाद जी को कहु विचार्यो ना ही
 दृष्टा वृत्त को प्रभु माख्यो सो तातें संत जो हैं सो दुष्ट न
 की वानी में सर्वथा मन न ही राखत ५ आगे अब ओ
 कहत है ॥ श्लो ॥ मार्ग विद्या सरहिताः पूर्व होयै कष्ट
 यः यतो ना मैव हि द्वेः सर्व दोष निवर्तकः ६ या ॥ अ
 अब कहत है जो वे दुष्ट के से है जो यह पुष्टि मार्ग में
 विश्वास करि रहित है सो काहेते जो पूर्व जन्म में दोष

ही देवत हो सोयह जाननै॥ तथा मार्ग में सगल आगे हैं त
 ऊ प्रथम की दृष्टता ही जाते दोय ही देवत हो पुष्टि मार्ग को
 प्रकाश गारे जगत् में प्रसिद्धि हो सो देवत हैं त ऊ अपनी कु
 टिलता ना ही छोड़त हैं सो को हे ने जो पूर्व जन्म में वेध
 सुर हो जाते मार्ग में उन को विस्वास ना ही हो सो हे ने दृष्ट हैं ता
 ते दृष्टता प्रगट करत हो या भांति जाननै॥ और भगवान को
 नाम साधारन में दंग सो है ना को नाम लेत मात्र सर्व दोष
 हरि होत हो सोयष्टम स्कंध श्री भागवत में कहै हो श्लोक ॥
 जाना दृष्ट वा ना ना दुत म लोक ना मयत् संकीर्तित म धं पुं
 सो दे दे दोय या न ल ॥ १ ॥ सत्ते तं पारिहा स्पे वा तो मं हे ल
 न मेव वा वैकुंठ नाम ग्रहण म रोषा धं हरं विहा ॥ २ ॥ त मो चा
 रण मा हा त्म्य हरे प स्य ति पुत्र का ॥ ३ ॥ अ जामि लो पिये नै द म
 तु पा सा द मु च्य ते ॥ ४ ॥ अष्ट मे यं शु म वा क्यं मंत्र त रं त्र न
 स्त्रि दं दे श का ला हं व लु नः सर्व कुरो ति निः स्त्रि दं ना म सं
 कीर्त ने न त द ॥ ५ ॥ ते य भाषा म नु ये यु छ ता र्थो न प नि श्रि
 तं स्म रं ति स्म र य ती ये हरे नो म क लो यु गो ॥ ६ ॥ द्वि द स स्कंध
 शु क वा क्य का ले हो य नि धे रा ज न न स्ति धे वा म हा नु णा
 न कीर्त ना दे व ह स म्प मु क वं ध प रं व्र जे त ॥ ७ ॥ अष्टो ब्र ह्म हा
 पित रा गो ध्रो मा त्र हा वा ह हा ध वा ना स्वा दः पु ष्य सं को
 वा पि शु द्धा र न्य स्य कीर्त ना न ॥ ८ ॥ इ ता दि ठो र ठो र ना म को
 मा हा त्म्य है ॥ ता ते स ह ज द्म भ ग व द ना म मु च्य ते अ न ज
 नै नि क सि जा य तो उ हे ना म सर्व दोष हरि कर त हैं ता ते
 हरि भ ग वं न को ना म है ता हू ते अ धि क अष्टा दश ना म है
 सो आ गे क ह त है ॥ श्लोक ॥ त हा पि श्री म हा चा र्य व द ना
 बु ज निः सु त ॥ त त्पे का सि त मा गे स्य सर्व संपा द ना द म ॥
 पा को अर्थ ॥ ज हा पि श्री भ ग व द ना म सर्व गु हा ता है
 सं सा दुर व त छो डा दो ता हू म्प ह
 रण म म ॥ य द ना म श्री आ चा र्य

प. कसलते नि कस्यो है सो पुष्टि मार्ग में स्थिति करत है काहेतें य
ह पुष्टि मार्ग है श्री आचार्य जी महा प्रभु द्वारा नाम प्राप्त भयो
तिन को सर्व सिद्धि होइगी सो श्री गुसाई जी विज्ञ प्रमैं कहै
हैं। लोका यहुतं तात चरणे श्री हस्तः शरणं ममः तत एवास्ति
नैष्ठितं मे हितं पालौकिका १ इत्यादि कवचन के भाव सो अ
ष्टाक्षर मंत्र को जप वेत्त करै यह सर्व सिद्ध करण में सामर्थ्य है
आगे अब और हुं कहत है। श्लोक ततो पितृस्ते सर्वे वंध सर्व
दोष निवर्तकः निर्दोषानंदस्यैवापि दोषभाव प्रसाधिकं
कथ्यते अर्थ उपर कहै नाम में सर्व दोष नास होत है तो
ब्रह्म संबंध जा जीव को होइति न के सर्व दोष नास होय य
हुं उचित ही है सर्व दोष निवर्तक सार्थ तो ब्रह्म संबंध जी
जीव को होइ आगे प्रभु दीनी है सो सिद्धांतर दृश्य में श्री
आचार्य जी महा प्रभु की है। लोका ब्रह्म संबंध करना
तु सर्व धां देह जीव्यों सर्व दोष निवृत्ति हि दोषा पंच वि
धा स्युता २ इत्यादि कवचन सो जान नों जो ब्रह्म संबंध
श्री आचार्य जी द्वारा जा जीव को भयो तिन के सकल दो
ष हरि भये काहेतें भगवान् निर्दोष है सो भगवान् की
सेवा उं जीव निर्दोष होइ ता को अंगीकार होय तातें ब्र
ह्म संबंध महा प्रभु जी कारणे अपने जीवन को निर्दोष
कीये पाछे सेवा में लगारे सो भगवत् सेवा के सी है जो जा
में दोष होइ ना ही निर्दोष आनंद रूप है सगरे दोष प्रति
बंध तिन को ना ही कहत है सो काहेतें जो दोष ना सर्व
ब्रह्म संबंध तेना सभारे पाछे सेवा करे ते प्रभु की स्तुति
प्राप्त में प्रतिबंध रूप दोष सो सब भगवत् सेवा ते हर हो
य स्वस्मानंद को अनुभव होइ यह भाव विचार के
ब्रह्म संबंध और भगवत् सेवा करै इत्यागे अब और
हुं कहत है श्लोक गुणगानं तु सर्वेषां दोषाणां विनि
गुणगानं ज्ञानमंगी दुत्कर्षः प्रणोदितः २

याको अर्थ॥ अब श्रीहरिगईजी कहत हैं॥ जो भगवद्गुन
नहीं॥ सो सगरे दोषको निवारक हैं॥ तिमैं दोष प्रकारको
गान हैं॥ एक पुष्टि मार्गी यजे से गुन गान एक सूर्यास्य मार्ग
यजे से गुन गान एक सूर्यास्य मार्गी य गुन गान सो दोऊ के भेद
कहत हैं जो पुष्टि मार्गी यजे से वृजभक्त गुन गान गावत
हैं श्रीठाकुरजी के संयोग से सेवा हरण करत हैं॥ और श्री
पश्रीठाकुरजी गोघास को पधारत हैं॥ सो तव विरह करि गु
न गान वे गुणीत पुगल गीत गाया संध्या पय ते विना
वत हैं॥ पाछे श्रीठाकुरजी संग्या समय पधारि वृजभक्त न
के विरह हरि कृष्ण के सकल मनोरथ पूरन करत हैं॥ सो ते से
ही श्रीआचार्यजी महा प्रभु के पुष्टि मार्ग में विरह करि गुन
गान विप्रयोग की भावना यह पुष्टि मार्ग में या भांति गुन
गान संयोग विप्रयोग की दोऊ रस को अनुभव॥ और
मयी राज्ञान मार्ग में केवल गुन गान ही करत हैं तहो
सेवा नाही॥ शि॥ आगे अब और कहत हैं॥ श्लोक॥ ज्ञान
सकल दोषाणां दाहकं पास्कीर्तितं तथापि न प्रभो प्रा
दुभावे यत्प्रतिबंधकं॥ १०॥ याको अर्थ॥ ज्ञान मार्ग को गु
न गान के सो है नो सकल दोष संसार के हैं॥ सो भस्म होय
गान्त हैं॥ पाछे निर्विद्य सदा होइ तो मोक्ष की प्राप्ति होइ ना
गान मार्ग के गुन गान ते प्रभु को प्रादुभाव स्वरूपानंद को
अनुभव होइ प्रभु प्रगट होइ के दरसन न देखि ताते गुन गा
ज्ञान मार्ग को है॥ सो भक्ति मार्ग में प्रतिबंध रूप से सो काहे
गो प्रभु को दरसन नाही लीख को अनुभव नाही स्व
द को अनुभव नाही है नाते ज्ञान भक्तिको प्रतिबंध ही
नो॥ सो श्रीहरिगईजी श्रीगोपेश्वरजी को वरजत हैं जो
ज्ञान मार्ग की नाई गुन गान ही मुख्य मति जानियो सो
आगे कहत हैं॥ श्लोक॥ तन्निवर्ते णि पुंशत मनो न्यूनं
पि ताततः स्वाचार्यसानिध्यं
दायकं॥ ११॥

मि.प.या.क.अ.व.श्री.ह.पि.इ.जी.व.ह.न.है.जो.ता.जान.नु.म.मा.

६३ करिओ अपने भगवदसे वाही मुखदे यह जान नो काहे
यह जान भक्ति मार्ग यह पुष्टि मार्ग में सत्य है पा भोति श्री
चाये जी महा प्रभु निरूपण की गेह संन्यास निर्णय में कहै
जो जानै यह मुक्त गंत सिद्धि जन्म सत्ते पर सो जन्म नो र
न मार्ग को साधन सिद्धि होइ प्रतिबंध न होइ तव व्रता वे
लो क जाय पाहै जव व्रता को लय होइ तव वाई को मो
ह होय ताते जान मानो य जीव भक्ति ते न्या होइ ताते तुम
पुष्टि मार्ग की गीति में तन्य रहियो श्री आचार्य जी महा
प्रभु को यह पुष्टि मार्ग के सोहै एकदाण्ड श्री आचार्य जी
महा प्रभु को सा निधु होइ तो एक लक्षण भगवद भाव को
हान करे स्वरुपांतर्को अनुभव होइ ताते सर्वोपर फल
रूप भगवद सेवा पुष्टि मार्ग में है नाम भगवद रूप को अनु
भव होइ यह भाव विचारि के श्री आचार्य जी महा प्रभु ज
गीति सों सेवा में प्रगट करे है ता भोति करियो श्री आचा
र्य जी महा प्रभु भाव संन करे यह निश्चय सर्वोपर सि
द्धांत है ॥ आगे अब और कहत है श्लोक तद्दिदृक्षा
तितापानं क्रमादेव संभवोत्तत उतर भाव सभाव
ने वन्दि रूप तं ॥ २ ॥ पाके श्री पुष्टि मार्ग को न्योन्यो मन
लगाइ के भगवद सेवा करे तो त्यों श्री हृदय की दायन
की ताप क्रम क्रम ते वृद्धे पा भोति जव अधिक ताप हो
य ता करि सगरो दोष भक्ति करे ते दरिद्र होय जाय
तव देन्य सिद्ध होय देन्य सिद्धि भरण पाछे ता को उत्तर भा
व सिद्ध होय भाव जव हृदय में सिद्ध होय सो तव वृज भक्त
न के भाव की भावना करे ता को मानसी सेवा करत है
सर्वोपर सो वृज भक्त न को भाव के सोहै अग्रि रूप है
भाव अग्रि रूप हृदय में होय तव जानिये जो श्री आचा
र्य जी महा प्रभु हृदय में पधारे भाव अग्रि रूप श्री आचा

यजीमहाप्रभृदो॥१४॥आगैश्वर्योएकइतहो॥श्लोक॥
एतेनदोयसंगस्यनासकंसर्वथासतो॥एवंभूतेस्थितेमार्गे
मूनयेषामभाष्यता॥१५॥याकोअर्थपुष्टिमार्गीयवैभवको
एकहाणहूंदुःसादोयकोसंगहोइतोहणमेंभावकोना
सदोयजाय॥श्रीआचार्यजीइहयतेपधारे॥हामेइह्याहो
स्त्रीकोरंचकअन्याअर्थभयो॥तोश्रीआचार्यजीअर्थसन्न
भो॥तानेअन्यसंबंधगंधोपीकंधरामववाधतो॥याभांति
दुःसंगतेभावजाय॥सोपुष्टिमार्गीहंतथायेइअर्थहैजो
रंचकइंभावअर्थकोइह्यमेंसंगहोइतोएकहणमेंसंग
रेदोयकोसर्वथानासकरो॥याभांतिपुष्टिमार्गीसर्वोपरह
यहपुष्टिमार्गीकोमतहै॥एसेवृजभक्तनकेभावात्सकयहपुष्टि
मार्गीमेंभूतजोप्राणीस्थितिहैतिनकोजोकोईमूनकहत
हैनिहाकरतहैतिनकेवडेअभागहैअथवापुष्टिमा
र्गीमेंस्थितजीवहोइकेओरपुष्टिमार्गीमूनजानतहैतिन
कोमहाअभागहैउनकोपुष्टिमार्गीयफलनाहीसिद्ध
होनहारहै॥१३॥आगैश्वर्योएकइतहो॥श्लोक॥अवि
स्वासतनःक्षयानगतिःकापिविद्योतेअनःस्वयंश्रुति
पक्षभाष्यहदिसमागत॥१४॥याकोअर्थ॥जानीयकोअ
विस्वासयहपुष्टिमार्गीमेंहैताकोकहंगतिनाहीहैकोऊजी
वहोउअविस्वाससबकोबाधकहैसोअविस्वाससबको
बाधकहैतोअविस्वासकेसहोइतहोइतहोइतोअवि
स्वासकोकारनहोयाभांतिअविस्वासहोतहोएकअपने
मनमेंस्वयंकल्पितविचारिउठेजोयहभागमेंतकधुमो
कोसिद्धिनाहीहीसूतएकतोयहाराइसेकाइतानमार्गी
यकसमार्गीयमयाहामार्गीयतेसुनिकेकाहेतैअन्यमा
र्गीयमयाहामार्गीयतेसुनिकेकाहेतैअन्यमार्गीयह
यहपुष्टिमार्गीकोउत्कयेनाहीहैखिसबतहै॥तानेउनको
इसगमहाबाधकहै॥उनकेमुखतेमार्गीकीनिहासुनिके

अविश्वासजीवको दोष यह दूसरे कारण तथा पुष्टिमार्गको
 फल सर्वोपरि सो भागमें न होइ जीवही भीतर प्रवाही हो
 इमार्गसामागीय होइ पुष्टि न होइ तो वह कहते पावे वा
 को अविश्वास ही होय यह तीसरे कारण ३ तथा इत्यमे
 ते अनेक भांति के विषय की तरंग लोखि व वैदिक की गुरु
 जो पुष्टिमार्ग में ते विश्वास छुटि जाय और ही क्रिया करन
 लागे यह चतुर्थ प्रकार ४ तथा काहू हमसे लोखे भागमें ते
 दुःसंगते होइ तो अविश्वास होइ ताको पुष्टिमार्गको फल
 सर्वथा न होइ १४ आगे अब और एक कहत है श्लोक तदै
 बहिर्दृष्ट्याप्यसर्वथा जीवनं बधिः नास्ति चे वचना चा
 व्यावुद्धिरापानसुंदरात् १५ या के अर्थ ऊपर कहै इत्यादि
 होय ते अविश्वास इत्यमें दृष्ट होइ जाय ताकारि के सर्वथा
 उस जीवको बाधवही करे जैसे जल अग्निको नाम ही करे
 तेसे दुःसा दोष भावको बाधक है अल्प जीव अज्ञानी जी
 व के वचन चातुरी ते बुद्धि जो पंडित भगवदीय बुद्धि सुंदर है
 सो बहुरमुख के आगे न चले सो कहै ते जो पंडित भगवदी
 य मर्यादा सो देखे शास्त्रोक्त बोले सील स्वभाव संयुक्त और
 रत्न जीव अज्ञान करि निहाइ वचन मन होय ते से
 ही कि नाम मर्यादा बोले ताको आछो ज्ञान कहो तो ते अज्ञा
 नी के संगवाद सर्वथा ही नाही करत बहै १५ आगे अब
 और एक कहत है श्लोक सत्त्व निश्चयन संगः साधको न
 हि संशयात् यत्र वै विपरीतैव वृत्तिः सत्र भ्रमं कथं १६
 या के अर्थ ताते यह निश्चय मनमें जाननो जो या भी वको
 सत्संग ही भगवद्धर्मको साधक है या मैं समय नाही सो
 श्री भागवत प्रथम स्कंध में सो न कवा कं तुल्यता मल वे
 नापि न स्वर्ग न पुनर्भवे भगवत्संगी संगस्य मर्त्यानां कि
 मुताश्रयः एकादसे भगवद्वाक्यं नरोक्षयति मायोगो
 न साख्यधर्म उद्धवः न स्वाध्यायतपस्यागो न शपूतेन

हृदयानाम्। तानि यज्ञं दत्तं तृतीयं नि नियमायमा
थावरुहं सत्संगसर्वसंगपदो हि सा। १३ इत्यादि वच
ते जाननां जो सत्संग ही बड़ो जीवको सार्थक है नाते
है वैष्णवपुष्टि मार्गीय है सो यह निश्चय सत्संग है करे
और पुष्टि मार्ग ते विपरीति है नून जीवन की एसे जो अन्य
मार्गीयतिन के संग ते वैष्णवको निश्चय भ्रम होइता
ते यह विचार करि के पुष्टि मार्ग ते विपरीति न करे ना
वैष्णव होय तो वाहको संग सर्वथा न करे और अन्य मा
र्गीयको दृष्टा संग न करे। १४ आगे श्रवण कहत है
श्लोक॥ न ब्रह्मा तो परम द्वास्तत्संगः खलु वाधिकः अत
सत्संग सहित तिष्ठेत्सर्वत्र सर्वदा। १५ याको अर्थ। जे जी
व भ्रात होया पुष्टि मार्ग में विश्वास करि रहित है सो म
हामुल्य अजानी है। न को खलु कहिये दुष्ट ही जानिये
उनको संग महा बाधक है। ताते यह वैष्णव तहां जाइ
तहां सर्वद्वार पुष्टि मार्गीय के संग स्थिति सदा हो सो
तव ही दुसंग ते वचो ताते सर्वथा सत्संग में हो ता ही ते
न करत प्रथम श्री आचार्य जी महा प्रभु कहै है निवेदन
सर्जन्य सर्वथा ताइसे जने यह निवेदन को स्मरण स
ग सर्वदा ताइसी सो मिलि कै करे सो ताते सत्संग है
गभाव दृष्टि करत है ताते नित्य पुष्टि मार्गीय भगवदीय हो
ग करे। आगे श्रवण कहत है। श्लोक॥ सेवा कुर्वन्
राधारो धर्म मार्ग स्थिते पि चोद्यदि हृदय बाधता ध्वनि
वैद्यो वैक्तो गति प्रिया। १६ याको अर्थ॥ अव श्री हरि
जी कहत है जो पुष्टि मार्गीय वैष्णव या भाति रहै नि
न श्री आचार्य जी महा प्रभु द्वा रा करि पाछे भगवद्
करै पुष्टि मार्ग की रीति सो आचार्य सहित का ते
सुख मे कहै है। आचार्य प्रथमो धर्मो आचार
वको प्रथम धर्म है ताते आचार धि

सामर्थ्यसे वाणी खरचु सब डी नहन को जान राखें धर्म
में रहि रहै तथा दृष्टा धर्म राखें अपने तेवने तहो तो डभूख
को ही नियें दृष्टा राखियें और पापा चरण को पुष्टि मा
गिने अविद्वान वचन कहैं और जो को इष्टि मार्ग सो अवि
द्व संदरा सिद्धा देय ता को मानिले श्र अविद्वान क्रिया मा
गरीतिकी सेवा है सो इमन में धिय जानै १८ आगे श्र
व और नहन है श्रो स्वाचार्य मानवा के कह निष्ट
सततः भावुक नदीय जन संसृष्ट सर्व संग विवर्जित
१९ या २० एक अपने श्रीवद्व भाचार्य जी के वचन प
र निरंतर नेष्टा राखें श्री आचार्य जी महाप्रभु के किरिये प्र
थ श्री सुबोधनी जी निवेधादि करत न्माणीय ग्रंथ को क
हेष्ट ने ताही के नेष्टा राखि जो जो क्रिया भाव कहै ताही में
मन लगाइ के करनो ताही भांति रहनो और जो भगवद्दी
य श्री आचार्य जी महाप्रभु के वचन अनुसार चलत है
श्री आचार्य जी महाप्रभु के वचन में जिन की पूर्ण नेष्टा है
एसे भगवद्दीय भाव करि भावित हैं तिन ही को संग करे और
र सर्व को त्याग करे जो अपने पुष्टि मार्गीय भाव दीय मिल
तो संग करे नाही तो सर्व संग छोड़ि के भगवद्सेवा स्म
रण मार्गीति प्रमान करे परंतु अन्य को संग सर्वथा ही न
करे या भांति वैभव रहे तो पुष्टि मार्ग दो फल श्री आचार्य
जी महाप्रभु की कृपा ले पावे यह सिद्धांत भयो १९ २०
श्री हरि २० छत्त सिल प्रवर्तित ता ही टी २० श्री योगे
२० छत्त भाव में पू २० अकर पर कह सो ता प्र
कार वैभव रहे तो फल सिद्ध होइ सी यह कालिका लंदो
यते भक्ति मार्ग को भाव और सत्संग तिरो भूत है या को दे
से फल होइ सो आगे सिद्धा पत्र में कहत २० २१ भ
क्ति मार्ग तिरो भूत सत्संग संग सत्ताम
थित्यंतद भाव दिखे वृथा १ या

रगाइनी कहत है। नो भक्ति मार्ग यह काल महा कठिन ते
रो भूत भयो है। और पुष्टि मार्गीय भगवदीय को संग हति
भूत है ना ही मिलत तो ता करि के पुष्टि मार्ग को भाव हसि
थल भयो है सो भाव विना सर्व वृथा काहेते यह पुष्टि मा
में सगरो भाव ही है। भावात्मक ही है सो भाव तो पुष्टि मा
गीय में स्थिति हो। भगवदीय को संग हा शतवही जाने
अन्यथा कैसे जानै। काहेते। भक्ति मार्ग में केवल प्रभु को सु
ख अष्ट प्रहर विचारो। अपनो देह संबंधी सुख रंच कहन
विचारो। पा भोति सेवा करे। सो दुर्ज्ञेय भूता करि भाव सिधे
न हो। इरा हो। ताते भाव विना सर्व वृथा है। पावार्ग अकथ
सं कहत है। लो क भक्ति मार्गीयता भाव क्रिया मात्रं हि
कर्म वेत्त। तत्रापि न मनः स्थैर्यं विज्ञेय। यवहारतः। यावो
अर्ध भक्ति मार्ग की रीति यह जो अष्ट प्रहर भाव में रहें सो तो
कहीं नाम भक्ति मार्ग को। ली री पातु क्रियावत कर्म वेत्त जे
सं कर्म मार्गीय कर्म करे। तहां ताई तो प्रयोजन पाछे कछु
गाही। भगवद सेवामें संयोग को सुख भयो। न अनीस रमे
विप्रयोग भयो। ताते क्रियावत कर्म प्रयत्न हो। सो क्रियावत
ह मन लगाई ना ही। तहां सेवामें ह मन रका ग्रहना ही
अने क भोतिके विज्ञेय मन में हो। तहां ना ना भोतिके व्यव
हार के तरंग मन में उठत है ता करि मन थिर ना ही। विज्ञेय पा
तहां सो क्रियावत भगवद सेवाना ही वनत है। आ
अव और कहत है। लोक हारोप्य सिद्धं सिद्धि
यस्य लोभ को मत्तः तदभावे तु गा प्रकारें से
इया को अर्थ। अव श्री
सेवामें विवहार की
हो। शत व मन में और
गात है। तव भाव ग्रहस्थ को
के से करे ताते यह पु

प. र जीवतु इत्येक कालमहाकठिन है सेवा करने में व्यवहार के
स्मरण स्वतः अपने काल दोष ते होय सो व्यवहार खाती प
रेन सिद्धि होइ तव धीरज के सें रहे अति ही दुख मन में पावे
तव मन में भाव दभाव लौकिक चिन्ता ते के सें रहे और ग्रह
स्थात्रम में स्वही माये है लौकिक वैदिक सो करने कुटव
को धरा पोषण इत्यादि के सें भाग्य दसे वा करे मन में तो चिं
ता नै आइ ग्रह सो है तहें कोई स्वहे जो व्यवहार मति करो प्रभु
तो सर्व सामर्थ्य मोत है लौकिक वैदिक सर्व कार्य सिद्ध करे गो
तु सभाग्य दसे वा करे मन लगाई के या भांति कोई कहें न
हो कहत है ३ श्लो ॥ व्यावृत्त भाव यदस्तु विदित्यते तु
दुःख भाः बुद्धि रात्रा तु सततं निवेदन विचिन्त्य नैः ४ य
॥ अथ श्रीहरि आइजी कहत है जो व्यावृत्त को अ
भाव के सें करे जद्यपि अवावृत्त होय भाग्य दसे वा करे सो
तो सर्वोपर है परंतु रासी तत्काल ही है पूर्ण विश्वास प्रभु
को सो तो दुःख भ है या भांति या काल में तो है विना पूर्ण
विश्वास अवावृत्त होय तो बहुत ही दुख पावे श्रीरादुर
जी में दोष बुद्धि होय जाय जो सें इन के अत्रिप्य सेवा कर
तहें मेरी लौकिक इनाही सिद्ध करत है या भांति होइ
तो अर्थ होय दास भाव जात रहे ताते अवावृत्त के सें हो
इ एसी तीव्र बुद्धि उत्तम ही है विश्वास पूर्ण सो दुःख भ
है तहें कोई कहें जो बुद्धि उत्तम होय पूर्ण विश्वास जो भांति
होइ सोइ कार्य करो तहें श्रीहरि आइजी कहत है जो बुद्धि
प्रबल उत्तम विश्वास पूर्ण तो तव होय तव निवेदन को
चिंतन अष्ट प्रहर करे अष्ट सरस स्मरण की भावना करे
गाय के लौकिक में कहा निवेदन कीयो है अब के सी क्रिया
करत है कितने कठिन भूयो सो अव श्री आचार्य जी म
हाप्रभु द्वारा संबंध भयो है प्रभु के सें ही वक्के सो है जी
व को कोन प्रकार दासत्व करनी है या भांति पंचोत्तर

में एक प्रभु ही गति या भांति निवेदन को चिंतन होइ तो बुद्धि
 प्रवल होइ तो तब विश्वास पूर्ण होइ तब को ई कहें जो निवे
 दन को चिंतन प्रथम करों पाछे भाव हमे वाको विचार करि
 यों या भांति को ई कहें तहां कहत हैं लोक । तत्रापि सद्भा
 व अनुसता मेव निरूपितः ते दुर्ध्वे भो दुर्गाश्च ततो बुद्धिर्मता
 दृशी ॥ ५ ॥ या को अर्थ ॥ अथ श्री हरि राइजी कहत हैं ॥ निवेद
 न को चिंतन न आपुनी बुद्धि ने नाही होय सकत हो सो न व
 रत्न ग्रंथ में श्री आचार्य जी महो प्रभू निरूपण की ऐ हो ॥
 निवेदन तु स्मर्तव्यं सर्वथा तादृशोर्जनै ॥ ताते निवेदन को
 चिंतन भाव सहित तादृसी पुष्टि मागी य भगवदीय से मि
 लिकें करो ॥ तब भाव सिद्ध होइ तहां को ई कहें जो भगवदी
 य से मिलिकें चिंतन प्रथम करि लें ॥ तहो श्री हरि राइजी
 कहत हैं ॥ जो पुष्टि मागी य भगवदीय तो मिलने वदत ही
 दुर्ध्वे न हो कहें सो इरि हैं ॥ तिन के संग को न भांति सो हो
 अउ न भगवदीय के संग किना तादृसी बुद्धि के से होया ॥
 अगो अथ श्री राइ कहत हैं ॥ लोक ॥ स्थिता पिशार्थ ने नि
 त्य पोषका भाव तो समः खिन्त च जायने चिते वान् अथ
 गतो न्यथा ॥ ६ ॥ या को अर्थ ॥ अथ श्री हरि राइजी कहत हैं जो
 ओर भाव वद सो तो परम दुर्ध्व भ हैं ॥ कुछ क भाव आगे ते इ
 यमें स्थित हैं ॥ सो ऊछि न्न होत हैं ॥ दिन दिन घटत जात है
 काहे ते पोषण भाव है भगवदीय को मिला प होइ तो भा
 व को पोषण होइ ॥ भाव बढे विना सत्संग भाव स्थिर
 होत हैं ॥ तहां को ई कहें जो जितनो भाव है जितने को चिं
 तन करो ॥ भाव तो रंचव द होइ तो सर्व कार्य सिद्ध होइ तहो
 श्री हरि राइजी कहत हैं ॥ जो में चिंतन को न भांति करूं लो
 वित मनुष्यन को संग ॥ अथ न्यो हो सो लो किक वान् अ

प. कोमहोभांतिस्मरणकरिभावकोंराख्यचहर्निशअन्यवा
 नीअन्यअवणमेरेकार्णमेंहोतहै। जोकरिकैहृदयतेभा
 वसिथलहोयजानहै सोमैंकिनसोंकहूमनमेंखेदहोतहै
 हैआगोंअबओरहंकहतहै। श्लोक। श्रुतोतमप्रकारअ
 भगवान्मानसाअपिअस्मदीयालोकिकेसुप्रतिष्ठा
 मात्रसाधकाऽयाकोअध्याभांतिमेंअपनेमनमेंदु
 खीहो। भगवदभावदिनदिनसिथलहोतहै। ओरमेंअ
 पनेअवणमेंउतमप्रकारअपनीवडाईसुनतहो। कोइतो
 भगवान्कहतहै। कोइकहतहै। अष्टप्रहरइनकोमनभा
 वानमेंहीखगेरहतहै। इत्यादिअनेकवडाईमेंअपनीस
 त्तिमेंसुन्यतहो। ताकरिकैकहासिद्धहै। एसोजेमेंलौकि
 कमेंवडीप्रतिष्ठाभईहै। सोप्रतिष्ठामात्रयहीसाधकभई
 लौकिकमेंयहफल। ओरतोमोकोकहुदीसतनाहीयह
 प्रतिष्ठातोभगवदभावमेंबाधकहै। १। सोअवचारोंनि
 रूपणकरतहै। श्लोक। चितव्ययंप्रकुर्वतीव्यादेहंवक्त
 तः। भगवत्प्राणीनिष्ठातुलोकनेष्टाविरोधिनी। यया
 अथअवश्रीहरिगङ्गीकहतहै। जोयहचिन्तभा
 वानकेचरणगविंदमेंनरुगो। ओरयहमनुष्यदेहई
 हीभगवान्मेंविनियोगभई। जोउहदेहव्याहीजात
 है। सोजवचथाजातहै। जोएसीदेहउतमभगवदका
 यमेंविनियोगभई। सोश्रीभगवतएकादसखंधमेंराजा
 जनककहेहै। श्लोक। दुर्ध्वभमानुषोदेहोदेहीनांश
 णभंगुर। तत्रादिपिदुर्ध्वभंमन्यवैकुण्ठप्रियदर्शनं।
 ओरप्रह्लादजीकहतहै। कोमारआचरेत्प्राशोध
 मोनभगवदनिह। दुर्ध्वभमानुषंजन्मतदयध्रुवम
 र्थदं। २। इत्यादिवचनसोंजान्योजातहै। जोमनुष्यदेह
 दुर्ध्वभहै। सणमेंयाकोनामहै। तातैभगवान्को
 द सेवायहपरमदुर्ध्वभहै। सोवनेतोआघोय

हको मार अवस्था भगवद् धर्म करण योग्य है लग में नार
होय जाय ताते भगवद् विनियोग विना देहोवन सर्व
था ही हो श्री भगवद् मार्ग की नेथा हो सो लोक नेथा वि
रोधिनी है कहते अपनी वडाई सुनिके आनंद भयो वडो म
नै सो भगवान को बुरी लागे मद होइ तो भगवान हृदय से तेजा
तर है ताते यह लोक की वडाई है सो भगवद् धर्म की विरो
धिनी है निश्चय पायागें अवश्य रह कहन है लोक संसा
खेरी हृस्मो धि मूढ ते ता नु पेहने काल एनाम पिहरत्य सो
मं प्रति मन्मति धिया को अर्थ संसार वेरी पहतो श्री हृस्म
को नाम है जहां श्री हृस्म हृदय में आवे तहां संसार नास्क
रें निश्चय वासों लौकिक देह संबंधी नवने सो यह जीव म
द अज्ञानी है श्री हृस्म को चाहत है और संसार को अपेक्षा
करत है संसार होइ गंत हां तो श्री हृस्म कहें जेव श्री ह
हृस्म पावेंगे तव संसार कहें सो यह काल होय ते प्रभु
कों जान नाही होत है ए सो काल कटिन आयो है सो स
त्पाणी की ह्मति जो बुझि ताहू को हरि लीए सो ताते वारं
वार संसार की अपेक्षा चाहत है जेव पि संसारी को तुष्ट
नत है भगवान को गुण है संसार नास्क यह जानत है
अयह काल करि बुझि ही न होइ जानत है सत पुरुष न
ही श्री आगे अवश्य रह कहत है लोक काल होय
रा कृती न संगो तिस ता मधि अतः स्थेय सावधा
समस्त मोग वृत्ति भिर ४ पा के अर्थ अवश्य हरि
सि गै पुष्टि मार्ग म स्थिति जे वैस्म्य है तिन को
ताते ते जो सावधान रहियो कहते जे काल होय
है सो यह महा दुष्ट है सब धर्म म प्रतिबंध कहें सो
यह काल होय को नासनाही करि सकत है सो
को है तें सत्संग नाही मिलत है सो भगवद् दीय को
मिले तो काल होय बाधान करे सो

भैरव भई ताते हे वैष्णव तुम समस्त सावधान रह एत एमैं
हियो यह पुष्टि मार्ग सर्वोपर है ता मार्ग तुम अस्थिति
हो सो दुःसंग ते वचेर हियो यह पुष्टि मार्ग सर्वोपर है
ता मार्ग तुम अस्थिति हो सो दुःसंग ते वचेर हियो भग
वदीय को संग करियो और श्री आचार्य जी महा प्रभु
न के चरण कमल को आश्रय अपने चित्त में धरियो
यामें यद निगोय भयो १०५ श्री हरि रंग जी है
सिंह सिंहा पद श्री जी पे रङ्ग रङ्ग संपूर्ण
अब उपर कहै जो यह सत्संग दिना जीव काल हो
यद रिना ही करि सकत ताते समस्त पुष्टि मार्गीय भ
गवदीय सावधान रहियो का है ते यह भावात्मक मा
ग है ता को प्रकार आगे कहत है श्लोक भावो न साध
नं मार्ग प्रमेयं भगवान हि स प्रमान ह्यस्य सेवा हो
स एव च फलं पुनः श्रया के अर्थ यह पुष्टि मार्ग में य
ह प्रमान ना ही है जो इतनी सेवा ते फल होइ तब प्र
मेय विचार ना ही एत ए फल दान होइ सो श्री कृष्ण की
सेवा है सोई प्रमान है सोई फल एक रूप है जान मार्ग
में काम मार्ग में साधन फल न्यारो न्यारो हो फल पाए पा
छे साधन करे सो यह पुष्टि मार्ग में ना ही है साधन हम
श्री कृष्ण की सेवा फल हमें श्री कृष्ण की सेवा ताते फल
रूप जानि सेवा करत व्याप है श्री कृष्ण की सेवा उपरांत श्री
र फल कहावे सो नव्य संकंध में श्री भगवान कहै है म
तैव या प्रतीतं च सा लोपादि चतुष्टय ने छेति सेवया
पूर्ण कुतो न्यत्काल विलुप्त १ ऐसे भक्त मेरी सेवामें
विश्वास करे जो चार प्रकार की मुक्ति ना ही जानत
सेवा ही करि पूर्ण है तिन को कहा ना ही बाध कहै ताते
प्रमान ह्यस्य सेवा फल ह्यस्य सेवा आगे अब श्री
रङ्ग कहत है श्लोक तस्मात्स एव संरक्षो निधिरूपस्तु

सर्वथा पतद्विद्वन्तस्सर्वज्ञात्वाज्ञात्वानिवर्तते॥१॥ याको अ
 थ॥ ज्ञाते निधि रूप श्री हृक्ष्म नो जान नो ज्ञे सै ही निधि रूप
 भगवद्भाव को जानि लौकिक दुःसंग ते निश्चय रक्षा करन
 व्यदो पद पुष्टि मार्ग ते जो विरुद्ध होइ सो विचारि विचारि
 के सदे को त्याग करे जो अनुकूल होय ता को संग प्रद प्रति
 ल को त्याग ही श्री आचार्य जी महाराज मुकी आण हों॥२॥ आ
 गे अवचरे ईक दत है॥ श्लोक॥ हरि हृक्ष्म यथा पूर्ण मिह
 स्थाप्यो विशेषतः॥ गोष्टी च तादृशी कार्यो ध्रुव मस्मत्प्र
 यत्नतः॥३॥ याको अथ॥ हरि जो श्री हृक्ष्म सर्व दुख के हर्ता
 हैं तिन की सेवा फल रूप जो निवे करनी॥ सो उपर कहै है जो
 तिन ही श्री हृक्ष्म में सर्व और ते मन खेचि के इन ही में विशेष
 करि के लगवें और पुष्टि मार्ग यथा दृशी वै ह्व होय तिन
 ही सो गोष्टी प्रयत्न करि के करे॥ न सो मिलि के पुष्टि मार्ग
 को भाव विचारें तो हृक्ष्म में भगवद्भाव अवचल होइ ता
 ते अवश्य भगवद्दीय को संग कते व्यदो॥३॥ श्लोक॥ एत
 स्थानः स्थिति प्राय समीचीन विलोक्यते॥ नान्य च लोकि
 कंचिते विद्यार्य मिह सर्वथा॥४॥ याको अथ॥ भगवद्दीय संग गो
 ष्ठी में नित्य करत करत अंतःकरण में भाव की सिद्ध होइ तव
 हृक्ष्म में सदा भगवान् स्थिति हैं तिन को दरसन होय विलेखें
 तव यह नीव को चित लोकि के में सर्वथा न लगै॥ ज्ञाना प्रकार
 के लोकि क विचार मिथ्या ध्यान मिथ्या क्रिया मिथ्या वाणी
 सब निश्चय छुटि जाय॥५॥ श्लोक॥ विशेष लु स म ग्री धि भंडा
 गारिक पत्रतः विज्ञेयः सर्वथा री धृ ली ख्यतां बत दुनरां॥॥
 याको अथ॥ विशेष समाचार भंडारी के पत्र ते जानो पत्र
 वाचि सर्वथा वेगि ही प्रति उत्तर लिखो गो॥५॥ इति श्री हरि
 इजी सतदा विंशो लिना पत्र ता की टीका श्री भोपे श्री ह
 त भाषा में संपूर्ण २२॥ अव उपर कहै जो भगवद्दीय संग
 ही कीयें ते हृक्ष्म में भाव सिद्ध सिद्ध होय तव

प. को देखे तब लौकिक विचारमें चिंतन जाय परंतु यह चिंतना जी
 वको छुटे तो भाव हृदयमें आवे सो चिंतना को न भांति छुटे सो
 सर्व प्रकार आगों वर्णन करत है श्लोक भवंतः श्रुति सिधां
 नाः कथं मुह्यन्ति लौकिके अलौकिके तु चिंतनाय विषयाभा
 वतो न सी १ या को अथ अवश्री हरिण इजी कहत है जो
 अपने छोटे भाई श्री गोपेश्वर जी सो कहत है जो तुम को से
 हो श्रुति जो वेद पुराण स्मृति सास्त्र श्री भागवत सर्व के
 सिद्धांत को जानत है ऐसे तुम सो यह लौकिक में मोह को
 काहे को पावत है यह तुम को उचित ना ही है अवमें क
 हत है जो यह पुष्टि मार्ग को सिद्धांत सो तुम को उचित लगा
 ड्वे सुनियो जहां ताई लौकिक विषय हृदय में तेना ही जा
 नत है तहां ताई लौकिक विषय हृदय में तेना ही जानत है न
 हां ताई अलौकिक चिंतना ही होत स एह एह में लौकि
 क चिंतना होत है जब हृदय ने विषय को अभाव होइ
 तब अलौकिक चिंतन होत है यह सास्त्र की रीति है या भां
 ति कहत है और आपने पुष्टि मार्गीय को लौकिक अ
 लौकिक दो उचित ना ही कते यह सो आगे कहत है श्लोक
 यतः सर्वसमर्थोऽस्य प्रभुः सर्वकरोति हि पतिपतिजहासा
 नामैहिकं परिलौकिकं २ या को अथ श्री हनुमन् अपने प्रभु
 अस्मत् प्रभु को से है सर्वसामर्थ्य युक्त है सो श्रीगुणों ईजी वि
 शति में कहत है श्लोक कर्तुं पुनर्यथा कर्तुं मनुष्या कर्तुं भी
 श्वरे सामर्थ्यं न भयादृष्टं त्वपवातो न संशयः १ श्री हनुम
 न् को से है कर्तुं अकर्तुं अन्यथा कर्तुं सर्वसामर्थ्य युक्त है सो लो
 किक अलौकिक सर्वप्रभु आपुनी सिद्ध करे चिंतना भागव
 दीय को ना ही कते यह सो दृष्टांत कहत है जो लौकिक में
 अपिता अपने पुत्र की रक्षा करत है सो अपने निज हास
 न को लौकिक अलौकिक सर्व सिद्ध करे निश्चय यह जा
 ननों २ श्लोक अतएवास्मदाचार्यवचनं वै विराज

ते। भगवानपि पुष्टिस्थोन करिष्यति लौकिकं च गतिं ॥३॥
 याकोश्च ये ॥ अथ श्रीहरिराज्ञी कहेत है जो पुष्टिमाणीय
 वैष्णव को चिंतारं च करे नाही कर्तव्य है। काहेते अस्मान् श्री
 आचार्यजी महाप्रभु के वचन मानत विराजमान हैं न वरत्न
 अर्मे श्री आचार्यजी महाप्रभु कहें। भगवानपि पुष्टिस्थोन
 करिष्यति लौकिकं च गतिं ॥ इति वचनात् ॥ यह पुष्टिमा
 र्गमें श्री कृष्ण भगवान साक्षात् विराजमान हैं। सो अथ
 ने निवेदन है जीव को लौकिक चिंतो गति कवहुन करे
 यह निश्चय वैष्णव मनमें विचारण है। ताते यह पुष्टिमा
 र्गमें अर्थात् सरोमार्ग को इनाही है। तमै सारण आरण
 छें। लौकिक गति कवहुन होइ। तहां कोई कहे जो वैराग्य
 करि लौकिक गति न होइ। और अलौकिक में रहै। सारो
 लौकिक कार्य करे तो तिन को लौकिक गति के संन होइ
 सास्त्रमें तो या भांतिक देहें। या भांतिक हेतु कहत हैं ॥४॥
 मर्यादा मार्ग की यही रीति है। जो ज्ञान वैराग्य करि संगति
 होइ। जित तो साधन जीव करे। तित नी गति उत मवा को मि
 लै ॥ सत्पलोक वंश के लोक में जात ज्ञान मार्ग करि यूस
 र्यादा मार्ग में प्रमान मार्ग की रीति है। सो यह पुष्टिमा र्ग है
 यह मार्ग में प्रमेय बलते फल हो। साधन य मार्ग में नाही है
 सो एकादस स्कंध में भगवान कहें हैं। अथ वलनैव भावेन गो
 प्योगावोऽखगा मृगा येन्यो मूढा धियो नागा सिद्धमासी
 पुरंजसा ॥ अजमें श्री कृष्ण भगवान नि साधन है तो सो प्रभु
 चपने प्रमेय बलते फलदान की गेहें ते सैं ही यह पुष्टिमा र्ग में
 श्री कृष्ण विराजत हैं। सो साधन की अपेक्षा नाही देखत प्रमे
 य बलते बिना साधन ही फलदान निश्चय करे। ताते पुष्टि
 माणीय वैष्णव को लौकिक अलौकिक चिंतो कवहुन नाही
 करत व है। और श्रीगुरु साईजी न वरत्न की टीका करी है। सो
 न हो प्रथम सगला चरण की गेहें चिंतो संतान नाराय

सि.प. न्यासो बुजरे गुणः स्वीयानां तानि जाचार्यो न्प्रणामाभिमुख
१०० मुखं २ श्री आचार्यजी महप्रभु के चरण की रेणु के प्रसाद
कै ते सगरी चिंता आपु तेना स होत है ऐसे श्री आचार्यजी
महाप्रभु के चरण कमल को मैं बार बार नमस्कार करत हों
४ आगे अब और कहत हों श्लोक अतस्तदीया किं भ्रा
तश्चिंता विंदधते जना ज्ञानिनोऽपि न वै दुःखं चिंतने दध
तिलोकि कुं ५ पा १ अ १ ऐसे पुष्टि मार्गीय वैष्णव श्री
आचार्यजी महप्रभु के सेवक तदीय भ्रांत होइ चिंतन में
को पोर है काहे ते ज्ञान मार्ग में जीव है ऐसे ज्ञानी सोऊ लौ
किक दुख मन में ना ही धरत ऊन हूँ को लौ किक दुख मन में
अभिचित को ना ही दहन है यह तो पुष्टि मार्ग जहा साक्षा
त भगवान सो संबंध श्री आचार्यजी महप्रभु द्वारा भयो
है सो ज्ञान करि चिंतन में दहन है सो न करना चिंता प्र
भु सर्व सामर्थ्य युक्त है ५ श्लोक से वार सादिरहि ता श्रितं
भक्ता कथा नथाः ये स्वस्म्य सेवायां दस न स्पर्शनादि
भिः ईयाः ॥ ऐसे पुष्टि मार्गीय भक्त जन सो श्री द्वेष
की सेवा रस चमत्त विना सेवा रस को चिंतन में आवि स वि
ना की रहै साक्षात श्री द्वेष के स्वरूप की सेवा करत है द
शन करत है चरण स्पर्श करत है तऊ चिंता में भगवत्
स करि रहित है सो को रहित है ना ते यह जान्यो जात है
चिंता चित्त में भरी है ना ते रस को अनुभव ना ही होत है ६ श्लोक
अनुभूतं सदा ते वा चिंतनं खयुतं कथं परमानंद संबंधे
खंति वृत्ति नैव हि ७ पा १ अ १ ऐसे पुष्टि मार्ग जामें भावा
त्मक सर्वोपर पदार्थ को अनुभवति न को चित्त में दुख को
होत है सो यह लौकिक चिंता ही ते अज्ञान करि दुखी है भा
वात्मक को अनुभव ना ही होत है और श्री द्वेष परमा
नंद रूप परमात्मक तिन को संबंधी श्री आचार्यजी म
हप्रभु द्वारा भयो है साक्षात परमानंद सो संबंध है ऐसे

निवेदनीयवैश्वके इत्यमं दृष्टव्यं केसेति एतद्देहोऽसौ अज्ञा-
नकरि लौकिकचित्तार्ते दुःखहोतरो ॥ १७ ॥ श्लोक ॥ पिनास्य
स्तु सर्वपि संबन्धावस्रहेतवः । वहर्मुखजनस्यैव वहर्मुखं
ततस्स जेता ॥ याको अर्थः ॥ लौकिकमपि ताहो सोऽत्रप-
ने पुत्रकोऽसर्वस्य हेतुहोऽकाहेनै पुत्र आत्मज अपनी आत्मा
है यह संवेधते सर्वस्य हेतुहो ॥ सो तो यह पुष्टि मार्गमें श्रीछ-
स्रसो संबन्ध भयो है न हो कहा सिद्ध हो ॥ ३ ॥ सर्ववस्तु सिद्ध ही
है अज्ञान करि चिन्ता करत है अपनो संबन्ध तो विचारै-
और वहर्मुख के संग ते वहर्मुख जीव होत है नाने सीध-
ही वहर्मुख को त्याग करे उनको संग न करे ॥ १८ ॥ श्लोक ॥
वहर्मुखस्य बाधते दोषादद्विकमानस्य ॥ स्त्रीण धातो-
रिवार्तस्य रोगावातिकपैतिको दोषाको अर्थः वैश्व-
को वहर्मुख को संग बाधत है संग ते द्विक दोष मान-
स दोष निश्चय ही आइलागे सो दृष्टान्त कहन है तो रो-
गी होइता की छीन धातु होइति न को वायु पिते सब काइ
में या भांति वहर्मुख को संग होइति न को सर्व दोष आ-
यल रोगी श्लोक ॥ तन्निवर्तितु संपाद्य सता संगे न सेव-
या श्रीभागवत पाठे न तदर्थं श्रवणादपि ॥ १९ ॥ याको अर्थः
सो रोगी सुंदर ओषद खाय तो वाको रोग जाय ते सें ही वैश्व-
वताइसी वैश्व भगवदीय को संग करे उन की सेवा करे
तो यहर्मुखता जाय भगवदीय के संग ते द्विक मानसिक
दोषादिसर्वदुःख होइत लंकोइ सें दह करे जो ताइसी भग-
वदीय मिलन तो दुष्ट भई विमिते तो कहा करे न हां क-
हत है जो श्रीमद्भागवत को पाठ करे काहे नै जो श्रीभागव-
त को पाठ श्रवण होइतो पुष्टि मार्गीय भगवदीय के
मुख ते श्रवण करे तो सगरे दोष ना सजाय ॥ १९ ॥ श्लोक ॥
निवेदनस्मरणतः सद्भिः सह कथादिभिः सदानाम-
ग्रहणतः सदा स्मरण भावनात् ॥ २० ॥ याको अर्थः जो श्री-

प० भागवतश्रवणकरिवेकौसंयोगनवनिश्चायैतौनिवेद
१ नकोस्मरणश्रद्धासंकीर्णकरैतथासदाभगवद्दी
यकेमुखतेपुष्टिमार्गीयश्रीआचार्यजीमहाप्रभुश्री
गुसांईजीकेग्रंथतिनकीकथाभावसोपुनैखोद्व
नेतौसदाश्रीहृषिकेनामकोस्मरणकरेयामेंतोक
छुश्रमनाहीहैनामहीस्मरणकरेपरंतुनामकोस्म
रणयहजीवकोदुश्चैभहैसोश्रीगुसांईजीवित्तमे
कहैहैत्वन्नामोच्चारणयोतिनजीवस्वधिकास्तिअ
लौकिकत्वात्त्वन्नामस्तद्वाचो लौकिकत्वतः१इतिबु
चनात्श्रीगुसांईजीश्रीगोवर्द्धननाथजीसोकहैतहै
जोतुमारोनामहैउच्चारकरिवेकीयोग्यताजीवकोनी
हीहैकाहैतेजोतुमारोनामतोमहाअलौकिकहै
सोकेसेनामलेहि। सोनामहनघनिश्चायैतौसरा
हीकीभावनाकरे। सोविवेकधैर्यश्रयमेंश्रीआच
र्यजीमहाप्रभुवहैहैश्लोक। यहिकेपरलोकेचसर्व
थासराणहरिः। दुखहानोतथापापेभयेकामाद्यपू
र्ये१ भक्तप्रोहैभक्तभावेभक्तैश्चातिहमेकतेअ
सक्येवासुसक्येवासर्वथासराणहरिः। इत्यादिबच
नकेअनुसारशरणकीभावनाकरे। श्लोक। अष्टाह
रमहामंत्रकीर्तनेनविशेषतः पंचाक्षरेणमंत्रेण
तदीयत्वविभावनात्॥१२॥ याज्ञिकेअष्टाक्षरमहो
मंत्रहैश्रीहृषिकेनाममेमः। यहीमंत्रकीपुकारिहैअ
ष्टप्रहरकीर्तनकरेतोसर्वसिद्धिहोय। सोदादसस्कंध
मेंश्रीशुकदेवजीकहैहैकलेहोयनिधिराजनसि
धैकोमहानुन। कीर्तनादेवब्रह्मसुतबंधपरंतु
जैत॥ जद्यपिकलियुगहोयनिधिहैपरंतुयामेंएक
बडोगुणहैश्रीहृषिकेनामकोकीर्तनजोकरतहै। सो
यहकालबंधननेछुटैजातहै। तातेअष्टाक्षरमंत्रको

॥ तनकरै तथा पंचाक्षर मंत्र को भावना करै न दृष्टि
 स्वयं संग मिलि कै करै ॥ सो श्री आचार्य जी महाप्र
 नवरत्न मे कहै है निवेदन तु स्मर्त्य सर्वथा नादो
 ने कहै पंचाक्षर मंत्र भगवद्गीय के संग बिना भाव
 गट होइ नही ॥ निवेदन के स्मरण में भगवद्गीय की
 अपेक्षा है ॥ १२ ॥ लोक विराग परितोषा भ्यां हस्त संनि
 हा स्थितै ॥ लौकिक लेश नो दास्यात् पुत्राय न नुरा
 तात् ॥ १३ ॥ या को अर्थ संसार यह देह संबंधी पदार्थ लो
 के कर्म वैराग्य राखे नो ॥ संसार में वैराग्य होइ तो लो
 के तदुख सुख चित को बाधा न करे ॥ नाते वैराग्य राखे
 और यथा लाभ संतोष होइ तो सहज में बने आय प्रा
 सिद्धोदाहा ही में संनोय होइ तो मन में विलेपन होइ
 और श्री हर मन हो विराजत होइ पुष्टि मार्ग की सेवा
 होइ तिन को पास स्थिति होइ तो हर मन सेवा वनिष्ठा
 वों सो भक्ति बड़नी में श्री आचार्य जी महाप्रभु कहै
 है अइसे विप्र कुर्ये बापया चित न दुष्यति निकटे
 रहि के सेवा करे तो चित के सगरे होय नाम होइ बहुत
 निकट में चित को रोय होत है तो नैक हरि हो पस्तु नि
 त्य सेवा हर मन बने सो करे लौकिक लेश ते अपने
 मन उदास राखे अपने चित में लौकिक लेश न करे
 और देह संबंधी पुत्रादि स्त्री बंधु का हमें अनुराग न
 राखे ॥ १३ ॥ लोक ॥ ग्रह चित्त मृनाश त्याग ही यह अनुराग
 ना नवरत्न स्य पाठेन सवा चित्त निबर्तते ॥ १४ ॥ या को
 अर्थ ॥ ग्रहादि धन इत्यादिक में आसक्ति न राखे ये सग
 रे चित के सुख है ॥ नाते इन में प्रीति न करे ॥ पुष्टि मार्गी
 य भाव ही यमें अनुराग राखे ॥ तथा नवरत्न ग्रंथ को
 पाठ नित्य नेम सो बने तिन को करे नो सगरी चित्त
 मन में ने निबर्त होइ चित्तानास के अर्थ श्री आचार

जीमहाप्रभुनवरत्नग्रंथप्रगटकीरेहैं सो गोविंददुखवै
स्पष्टकेमिसएतन्मारीयसवनकेअर्थ तातेनवरत्नग्रं
थकेपाठनेसर्वचिंताहरिहोय॥ निश्चय॥ १४॥ श्लोक॥ ए
वंनिवर्तमुखजनंदुखनेवाधते॥ अतःतन्मात्रयत्नेसु
भवितव्यंभवादृशो॥ १५॥ याकोअर्थ॥ अवश्रीहरिराज्ञी
कहतहैं जोऊपरसगरेभागवधर्मकहेहैं उनमेंतेएकहं
दुखकरिकेजोवैष्णवधारनकरेगों सोतिनकोसर्वदुख
लौकिकनिवृत्तकेअनेकभावसोंहरिहोइओउहमन
मनमेंपरमसुखपावेगो॥ याभांतिदुखनिवृत्तकेअनेक
पत्तहैं सोभाबीकवैष्णवकोकर्तव्यहैयेयत्नभावके
वर्द्धकहैं नाकेभागमेंवेगिफलदांनहैं॥ तिनकोभाविक
वनिश्चयिगे॥ १५॥ श्लोक॥ दुखेननवृथानियकालप
रमदुर्लभ॥ हृष्टसेवानुकूलसुनिजाचार्यश्रयश्रते॥ १६॥
याकोअर्थ॥ अवश्रीहरिराज्ञीसमतवैष्णवनसोंकहत
हैं जोयहकालपरमदुर्लभहैं जोयहकालपरमदुर्लभहैं
करिखेसोसमयनवनेगों॥ यहमनुष्यदेहश्रीहृष्टसेवाके
अनुकूल सोयहलौकिकदुखचिंताकरिकेवृथानखोवै
काहेतेयहीदेहतेश्रीहृष्टकीसेवावनतहैं॥ औरयुगमें
यहपुष्टिमागीथसेवानाही॥ त्रंस्तद्विकनकोदुर्लभहैश्री
आचार्यजीमहाप्रभुंदाराब्रह्मसंबंध औरयुगमेंकहो॥
श्रीआचार्यजीमहाप्रभुद्वाराकोआश्रयफेरिकहो तथा
श्रीआचार्यजीमहाप्रभुकेआश्रितजोताडूशीनिजसे
कतिनकोआश्रयफेरिकहो॥ याभांतिमनमेंविचारिके
यहकालपरमदुर्लभजानिदुःखलेशलौकिकमेंमन
लगाइवृथानाहीखोवने॥ भगवदीयकोआश्रयअपने
श्रीवद्वनभाचार्यजीकोआश्रयकरिश्रीहृष्टकीसेवाआ
वस्यकहीकर्तव्यहै॥ यहदेहकालसबसेवाअनुकूलहै
यहजानिकेएकलगाईसेवाविनानहै॥

नंदेयारुथाचिंताप्राप्तापिनिजदोषतः चितोद्देशं विधा-
यापीत्येतद्वचनचिंतनात् ११॥ याको अर्थः श्रवणं श्रीहरि-
राजजीपत्रपूर्णकरतर्पणं यामें सर्वोपर्यही सिद्धांत हैं जो
हैं तंसीधही चिंताको त्याग करे एक चिंता तें अनेक
दोषको प्राप्त होय ताते नवरत्न को वचन निश्चय क-
रि चिंतन करिय ही चिंता को त्याग करे नवरत्न में
कहे हैं चितोद्देशं विधायपि हरि र्यद्यत्क रिष्यतिः
तथैव न स्पृहीति मत्वा चिंता दुतं त्यजेत् १२ इति
वचनान्तराभांति सीधही चिंतन त्याग करि ऊपर भ-
गवद्धर्म कहे ता में प्रवर्त होइ भगवद्सेवा सुमरन
ताइसी को संग करे यह नवरत्न ग्रंथ को मन लगाइ
कें नित्य चिंतन करे पाठ करे भाव विचारे तो चिंता
हरि होय ११ इति श्रीहरि राइ जीकृत सप्त सप्त
तिस्रो माता कीर्ति का श्रीगोपेय रजस्त संपूर्ण १२ अऊ
पारक दे जो चिंता तजे भगवद्सेवा दि भगवद्धर्म क-
रे जो जीव को कष्ट प्रामर्थ्य हे काल दोयते प्रसित
हो ताते श्री आचार्य जी महो प्रभु को द्रष्ट आश्रय
होय तो प्रभु ह्म पावरो सो आश्रय को न भांति करे सो
आगे सिद्धा पत्र में कहत हो लोक भांति मागे सो
मंत्र का रण पर मुख्य ते ते नैवे मागे सकल सिद्धि नील
न संशयः ११ याको अर्थः यह श्री आचार्य महो प्रभु
भुनवे पुष्टि मार्ग यह भक्ति मार्ग त ११ अऊ
ल को कारण हो साधन ते फल न ११ अऊ
ल सिद्धि हो ताते श्री हरि प्रभु की सिद्धि
ताते यह पुष्टि मार्ग में जो वै

वनत तो कहा भयो पुष्टि मार्ग

०३ सर्वसिद्धिइतकोकरेगो। सर्वथायामेंसंसयनाही। श्लो
 का॥ सातुआचार्यशरणगतोतेतोपित। प्रभु। यहदेव
 स्तेह्मस्तदाभवतिसर्वथा। २। श्लो॥ अथपुष्टिमार्गमें
 सरणआयअपनेश्रीवक्षभाचार्यजीकेसरणागत
 होरहेतवश्रीआचार्यजीमहाप्रभुदयाकरिके। श्री
 वक्षसोशापनाकरेजोयहजीवसरणआयोहै। सो
 तवश्रीहृक्षकोवहजीववहुतभावे। सर्वथा। ऊहजी
 वपरश्रीहृक्षरूपाकरे। ३। श्लो॥ अतस्मदाश्रयोजी
 वेदएवविधीयतां। यथावतरेलीलायां तासोश्रीयमु
 नासता। ४। श्लो॥ अथतातेयहपुष्टिमार्गीयजीवश्री
 वक्षभाचार्यजीकेचरणकुमलेकोदृढआश्रयनिश्च
 यहीकरे। तवफलप्राप्तिहोइ। जेसेअवतारदिसामें
 यमुनाजीद्वाराकुमारिकाकोप्रभुप्राप्तिभरे। तेसेहीअ
 वश्रीआचार्यजीमहाप्रभुकेआश्रयते। श्रीआचार्य
 जीद्वारा

३। श्लो॥ यथावा
 दासादिपुलिही। यथावाप्रिकुमा
 रणावृत्तेकात्यायनीमता। ४। श्लो॥ यासमयमें
 नोएकश्रीआचार्यजीमहाप्रभुद्वाराहै। औरअतार
 लीजामेंहृष्टासगिरिजपरमभक्तहै। तिनकेसंग
 तेपुलिहीकोभक्तिसिद्धिभईलीलामेंप्राप्तिभई। औ
 रअप्रिकुमारिकानकोकात्यायनीमिसतेश्रीयमुना
 जीद्वारालीलामेंप्राप्त। जेसेहीअवश्रीआचार्यजी
 द्वाराउहोपुलिहीकीसेवागिरिजद्वाराप्रभुअं
 गाकारकरी। कुमारिकाकीसेवाश्रीयमुनाद्वारा
 तेसेहीयहवैष्णवकीसेवाश्रीआचार्यजीद्वारा
 अंगीकारश्रीजीकरतहै। ४। श्लो॥ प्रादुर्भूतस्व
 येह्मलोयथास्वप्रायणमता। यथावादेन्यभावा

मा प्रादुर्भावे स्वयं मतः ॥ ५ ॥ या को अर्थी श्रीर श्रीरुसके
 प्रादुर्भावे प्रगाट दसामें स्वयं प्रभु आपुही द्वारा फल प्र
 करण पंचाध्याई में अति है नमकी भावना करि स्वयं प्र
 भु आपुही प्रगाट है न्यते ॥ श्लोक ॥ इति गोप्यः प्रगाथं
 न्य प्रलयं त्यश्च चित्रया ॥ सुंदरुः ससुराज नृहृदयस्य
 ललसा १ तासाम विमोहोरिय मयमान मुखं वुजः पी
 तां वरधर स्वामी सातामथ मन्मथः ॥ यथा भांति है न्यते
 प्रगाटो ॥ ॥ श्लोक ॥ तथा परो हे जीवनां पुष्टि संबंध सिद्ध
 ये श्रीमदाचार्य संबंधो नान्यदाति हि साधनार्थं या
 अथ ॥ प्रागाट दिसा में है न्यते ते सैं ही अवपरो द दिसा
 में जीवन को पुष्टि संबंध भये ते ॥ श्लोक ॥ हे ते जो यह क
 लि में श्री साधन ना ही उद्दे न्य कहो ताते श्री आ
 चार्य जी महा प्रभु अपने निन के संबंध ते निवेदन होइ
 त वही तो श्रीरुदरो साधन ना ही ॥ एक श्री आचार्य
 जी महा प्रभु के संबंध ते प्रभु फल दान करन हो ॥ श्लो
 क ॥ अतएवौ न माचार्यैस्तौ त्रेहस्मा अयमिधे स
 रणस्य समुद्धार हृदय विज्ञाप्यामहे ॥ ७ ॥ या को अर्थ
 र्थी ॥ अब श्री हरि राइ जी कहत है जो हे मारे श्री वल्लभ
 भाचार्य जी हृदय प्रिय में श्री हृदय सो जीव के ली ए वि
 ज्ञप्त की रहे ॥ तो मेरे सरण जीव हो ॥ सो निन को उ
 दार करे यह लोकिक ते निवासि अपनी लीला
 में श्री गीकार करे ॥ या भांति प्रभु सो कहै ॥ श्री प्रति
 सा करि जीवन की विस्वास कराय धीरज ही ए
 जो उद्धार होइ गो धिंता मति करे ॥ सो अब कहत
 है ॥ ७ ॥ श्लोक ॥ विस्वासार्थ वरमदादिति श्री वल्लभो
 रवीत ॥ श्री नान्य प्रकारेण फलं स्वहृदि चिंत्यता
 दाया को अर्थ ॥ श्री हृदया अयमिदं स्तोत्रं यत्पठेत्त ह
 रसं निधौ ॥ तस्या अयो भवेत्त ह

०४ वीन ॥ श्रीआचार्यजीमहाप्रभुं प्रथमश्रीहृदयजीसे
कहीजोअवअपनेपुष्टिमाणीयवैभवसौकहतहै
जोयहश्रीहृदयअग्रंथकोपाठश्रीहृदयकेसनमुख
करियेताकरिकेश्रीहृदयअपनोआश्रयनिश्रय
करेगोयहमेरीप्रतिज्ञाहैयाप्रकारप्रतिज्ञाश्रीम
हाप्रभुजीकीगोतोजीवनकोविश्वासहोयजोहम
कोपुष्टिरसमिलेगो जेसैंचीरहरणमेंढाकरजीभक्त
नसोंकहेजोराससरहरितुमेंकरितुमारमेंनोरथ
पूराकरेगोयहकहेतबभक्तनकोविश्वासभयोना
हीतोसरहरितुपर्यंतविश्वासनरहजोतेसेहीश्री
आचार्यजीमहाप्रभुप्रतिज्ञाकरिअपनेनिजसेव
कनकोविश्वासहीगोतातेएकश्रीआचार्यजी
महाप्रभुद्वाराफलसिद्धिहैओरप्रकारफलकोधि
तननकरनो॥श्लोक॥विश्वासेनयथाप्रोतिचा
तकःस्वातिजंजलंनथाचेत्तुल्यजलदःस्वानं
दपर्यधिष्यति॥येयाकोअर्थ॥विश्वासकरिचात्र
कजेसेस्वातिकेजलकीअपेक्षाराखतहैओरए
थ्वीपरकवातलावनहीसमुद्रपर्यंतभर्योहैतामे
आसनाहीकरतयहविश्वासदेखिघनहीमनोर
थप्रानकरतहैतेसेहीजोवैभवएकश्रीहृदयही
कोंआश्रयमनमेंदूढकीयोहैओरअवतारतथा
देवतासोंफलकीअपेक्षानाहीहैतिनकोश्रीहृ
दयजलदरूपअपनोआनंदवर्येगोनिश्रयआ
नंददानकरतहै॥श्लोक॥एवंविश्वाससद्भवसर्वो
वभविष्यति॥यतःपरिहृदोस्माकंसर्वकर्तुंरामोम
तः॥१०॥याकोअर्थ॥याभोतिपुष्टिमाणीयवैभव
विश्वाससुद्धभावसोंकरेंतिनकोंसर्वसिद्धहोय
सोश्रीहरिराजीकहतहैएसेहमारेप्रभुसर्वकर

एमैंसामर्थ्युक्तहैंनातेहूपाकरेदिगे॥१॥श्लोक॥सहि
 खनःसमर्थत्वात्तनसाधनमपेक्षतेकालकार्येविलो
 कात्रतदीयानांविशेषतः॥१॥याकोअर्थ॥अवश्रीहरि
 राइजीकहतहैंजोअहिहूअपुहीखनःसमर्थयुक्तहैं
 कर्तुअकलुअन्यथाकर्तुआपुहीहैंसोआपनेसेवकन
 केसाधनकीअपेक्षानाहीकरतहैंसोयहइतनोसाध
 नकरेतोफलहोयहतोअन्यदेवतासेहैंजोतितनोसा
 धनकरेंतितनोलौकिकफलदेशसोअहिहूअमैंनाही
 हेंयहकाक्योहूतमहाकठिनविषरीतिधर्मयुतहैं
 खिकेंअपनेतदीयपरदयाकरीविनासाधनहीवि
 शेषहूपाकरतहैंश्लोक॥निसाधनंतुसंस्तुर्णाइदस्य
 तत्पदाश्रयः॥असंगमविल्लासीतद्धातुत्संगि
 नामयिः॥१॥याकोअर्थ॥याभांतिजवजीवसाधनक
 रतकरजपाछैनिसाधनहोइजिसेंवजभक्तसंपंध्या
 ईमेंअंतरध्यानसमयअनेकसाधनकीरिलीला
 कीगोपुनगानकरिपाछैनिसाधनभइतवप्रभुही
 कोआश्रयहोंतवप्रभुप्रगतेतेसेहीजववैष्णवमनते
 निसाधनहोयतवदेन्यकरिअचार्यजीमहाप्रभु
 केचरणकमलकोआश्रयहोयतवअप्रभुहूपाकरे
 औरजिनकेमनमेंअविस्वासहैंसोकेवलअसुरही
 हैंजिनकोसंगजोकोईकरतितहूकोआसुरवेस
 अविस्वासहोइतातेउनकोसंगनेकरनो॥श्लोक॥
 मतिमोहोमहोदोषनिधानंसंभवेध्याति यथापूर्व
 कथंश्रुत्वाभगवत्पदसेवनः॥२॥याकोअर्थअवश्री
 हरिराइजीकहतहैंजोयानीयकोमतिकोमोहभ
 योहैंनातेदोषरूपहोइरह्योहैंनातेनिसाधन
 तानाहीआवतहैंअहंतादोषरहितहैंअपनेक
 यहजानतहैंजोमहीकरतहोयहअ

प. कवार्नहरिहोइजवपूर्वजोप्रथमकेभक्तश्रीभागवतसे
०५ कहेहै प्रह्लादजीतथावृजभक्तादितथापुष्टिमारगी
यश्रीआचार्यजीमहाप्रभुकेचोरासीवैष्णवकीवार्ता
यहकथासुनेतोप्रथमयाभांतिसेवाकहीहैमैंहूंकहाक
हतहोयाभांतिदेन्यहोयभगवदसेवाकरेतवनिसाध
नहोयसर्वहोयहरिहोइतातेअवणमुख्यसेवाकों
पोषणहैतातेश्रीआचार्यजीमहाप्रभुभक्तिवर्द्धनी
मेंकहेहैसेवायावाकथायावाहोयकर्तव्यहैतवभग
वदसेवाप्रीतिसोंकरें॥१३श्लोक॥श्रुतिनृह्येन्यस
मुत्पत्तिस्तथासाधननाशन॥तदीयाणांसर्वमस्ति
सदातद्भावभाविना॥१४यावत्तथासैभाष्यदीय
कीकथासुनेतेहैतद्दोयसोदेन्यउत्पत्तितेअहंता
पसाधनजोमेंकरतहोसोनासहोइतवतदीयभक्त
हैसोतिनकेभावतहोइउनजोभावतेकरतहैसोता
भावमेंयहलगेतवप्रलसिद्धहोइतातेअवणहंआ
वस्यहैसोगोपिकागीतमेंकहेहैतवकथामृतंतस
जीवनैकविभिरीहितंकरुमयायेहैअवणअंगलं
श्रीमहाततंभूयगांतियेभूरिहाजना॥१तातेअवणत
सर्वहोयहरिहोइसौरभगवदभाववदें॥१४श्लोक॥इ
तरेयाकालिकानांकालेननिखलंगतंयतःकालस्त
द्विभूतिःकालकलयतामहं॥१५यावत्तथासैश्रव
श्रीहरिहाइजीकहनहैऐसोजोयहजालहैरालसंधा
रकतोसोंनिखिलनामैअखिलगतकोंखातहैसोका
लकेसोहैजोयहश्रीहृषभभगवानकीविभूतिहैसोय
हकलिमेंमहामूर्तीनसृष्टिसर्वकालमेंलयहोतहै
याभांतिगगरोजतकालमेंलयहोतहैयाभांतिगग
रोजतकाहमेंलयहोतहैश्लोक॥मुख्याधिकार्या
पिहरीरिद्धाशक्तिसरूपवांततदेतरंगदासेधुनतत्सा

मर्थमिष्यतो र्थयाको अर्थ । कालके सोहैं जो सुख
भगवान् को अधिकारी हैं । इच्छासक्ति को स्वरूप हैं नाते
ब्रह्मादिक न को नाही छे । उन हैं । ए सो जो काल सो ज प्र
हस के अंतर्गत सको उह काल को सामर्थ्य नाही है
भगवदीय को बाधक नाही करि सकत है । र्थ स्तो का ।
सहि सव्यो यथान्यथा मार को पितृ हिलम । पीतामृत
जने जातु श्वृमा घातु मेव च । १७ । यो को अर्थ । यह
काल स्वसपै हैं । सो सगरे जात को खान है । परंतु
छल के चरणारवि हतथा अधरा मृत जिन पांन की
पोहैं । ए से भक्त को परसहं नाही करत हैं । ओर सघत
नाही है । सो श्री गुसांजी सप्तम लोक में कहें हैं ।
घो घत मसाधु त कलि भुजंग मसाहित जगदिय
सागर पतित मखध मेरु तपदी तला सुधानिधि स
मुदितो नु कं पाम ताद मत्पुस करोत द्याणा हरण
मे सुमेत तपदं । १८ । या भक्ति श्री आचार्य जी महा प्रभु
कचरण मृत जो कोई पांन की पोहैं नित को कालम
व परसहं नाही करत हैं । ओर घृत हनाही । १७ । ला का ।
तथा कालो पिमनु ज महा पुरुष संप्रत । भक्ति पीयूष
पातरं न किंचित्कर्तुमीश्वर शब्द या को अर्थ । जो मनु
ष्य महा पुरुष श्री आचार्य जी महा प्रभु सय संप्रत मत्त
था भगवदीय पुष्टि साणीय नित के अर्थ । यन दो इहं हैं
पुष्टि भक्ति रस अमृत को पान करत हैं । नित के किंचित्
तं च काल हो । य बाधक नाही है । ज स इव मकी
आम्ना मेरु हत है । ने सही भाव है । य पद पतन
था काल की कहा है । इहं इव मकी । ए से भगव
दीय को करत सो वाता से प्रसिद्धि ।
के पलटे मुक्ति दीनी । भक्ति सागति तन ।
को काल व प्रकृति के । १८ । हो ।

प.प. २०६ र्येधुनकोलश्चित्तं तं हृदि तथैव तस्य लीलतिवचन
त्येव चिंतयतां ॥ २० ॥ पादौ अथ ॥ अव श्री हरि राज्ञी अप
नेष्टो टेभाई श्री गोपेश्वरी सांकहत है जो तुम तो तदी
यहो सर्वकाल भावधर्म में निधुन हो तो ते तुम अ
पने मन में काल की चिंता मत करियो कोई काल में
तुमको चिंता ना ही कर्तव्य है श्री आचार्य जी महा
प्रभु नवरत्न में कहें हैं जो तथैव तस्य लीलतिमत्वा चि
ताद्भुतं त्यजेत् पृथक् चेतको चित्त न हृदय में करि
के चिंता ना ही कर्तव्य है सगरी श्री कृष्ण जी की लील
ही जाननी ॥ २० ॥ श्लोक ॥ सर्गहि लील कर्तृत्वा किंचि
जंताइ सै प्रभो ॥ विवेकोप्ययमेवान्न सहितं वै विधा
स्यति ॥ २० ॥ पादौ अथ ॥ श्री भागवत में सर्ग विसर्ग
आदि लील हर स विधि लील के कर्ता या भांति ता
इसी प्रभुको सारे जगत में लील जानै ॥ ए सो जा
के मन में होइ सोई विवेकी कहिये ॥ सो विवेक धैर्य
अयमें श्री आचार्य जी महा प्रभु कहें हैं ॥ विवेक सुह
रिय नै निजे छातः करिष्यति ॥ यही विवेक जो सब का
र्य में निजे छामाने ॥ २१ ॥ श्लोक ॥ स्वकीयानां निजे छा
त सस्मा चिंता न्न को भवेत् भवंतः श्रुत सदा तः
सत्संगाद्यनयोपि हि ॥ २१ ॥ पादौ अथ ॥ या भांति भगवा
न के स्वकीय निज भक्त हैं सो निजे छा भगवद् इच्छा
सर्व कार्य में जानत हैं और तुम तो भगवान् के सर्व धी
हो भगवद् भाव सुने हो सुंदर वार्ता सुने हो और स
त्संगाद्वदुक्त की ऐ हो तो ते तुमको चिंत कोई प्रकार
न ही कर्तव्य है ॥ २१ ॥ श्लोक ॥ प्रभु पादे कनिल यस्ते
षां को परिदेहि ना ॥ धर्म संस्थापना यस्य प्रागदमु
च्यते ॥ २१ ॥ पादौ अथ ॥ अव श्री हरि राज्ञी कहत हैं जो
तुम के से ही प्रभु जो श्री कृष्ण तथा श्री आचार्य जी

महाप्रभुनिनकेपदकमलमेगातिनामप्राप्तहोय
सोनुमहोसोपरिवेदनोचितोसर्वथानाहीकरनय
होधर्मकेस्थापनकेलीऐमहाप्रभुजीकोतथातु
मार्गेप्रागट्यसोउचितहोप्रभुसदाधर्मकीरक्षा
करीहोमोभगवहीयगाऐहोबहुगवेदबचन
प्रतिपास्योधर्मगितानभइजवहीजवतवतमव
पुधास्योसतयुगस्वेतवाराहरूपधरिहरिहर
नाकसमास्योवितागमरूपद्वयर्थकेरावनकुल
जोसंघास्योश्रद्धापरचजबूझतेराख्योसुरपति
पाइनपास्योकिंसाहिकहानवसवमारैवमुधा
भारउतास्योअकलियुगश्रीवध्नभग्रहप्रगटे
मायावाहनिबोस्योमानिकचंदप्रभुश्रीविठ्ठल
पुरुषोत्तमरूपनिहास्योध्याभांतिश्रीवध्नभ
पुरुषोत्तमरूपहैधर्मस्थापनार्थप्रागट्यहो॥२॥
श्लोक॥येनुविशेयीधर्मसहिधर्मबनिकरसह
तेसहतेकथोअहन्नयेनुविप्रेगोत्रेधर्मकेपा
लनक॥२॥अथाकोश्रथोअवकहतहेजोजेकोइवेद
धर्मकोअतिहमकराअपनेमनमानीक्रमकरे
उनमतहोशसोप्रभुकीरनसंभवेसोकाहेतेजो
प्रभुब्रह्मण्यहैधेनुविप्रवेदधर्मकेप्रतिपाल
कहो॥२॥श्लोक॥सकथंसहतेहधनस्तद्विरोधसं
जनैहृतोपरमानंदसंदोहोदयालुसुतगामपि
रधायाकोश्रथोअवकहतहोरासोजोभगवान
मोबहुमुखजीववेदचिरुद्वैतवेकरनामनुष्य
सोश्रीहृद्विरोधहतकसेमहोश्रीहृद्विरोधकेसे
हपरमानंदरूपहोपरमदयालुहोकाहूकोदुख
नाहीदेखिसकतेहो॥२॥श्लोक॥सकथंसहतेह

मिष्य दोषोण सर्वथा ॥ २५ ॥ याको अर्थ अवकहन हे जो ॥ ए
१०७ हसप्राणी मात्र के आनंददाता सो अपने स्वकीय
जभक्त न के दुख के से सहेंगे ॥ सर्वथा न सहेंगे ॥ ताते
सब भगवदीय को यह लक्षण है ॥ जो लौकिक वैदि
कष्ट कामना सिद्ध हो ॥ का इव सुकी हानि हो ॥
हो ॥ अपने ही दोष विचार नो ॥ हेद संवेधी ॥ अनेक
खुमें अपने दोष विचार नो ॥ प्रभु तो भली ही वरन
मेरो दोष है ॥ ताते यह लक्षण ॥ सभयो ॥ हे ॥ या भांति जानि ॥ २४
श्लोक ॥ निर्दोष प्राण गुणता हों ॥ नित्य विराजने ॥
कदाचित् स्वप्रभो दोषाना नेय सर्वथा हृदि ॥ २५ ॥
या अर्थ ॥ सो आ पुत्री आचार्य जी महा प्रभु बालवो
धमें कहें ॥ निर्दोषो प्राण गुणता इत्यादि कवचन
ने यह निश्चय मन में जानिये ॥ जो श्री कृष्ण निर्दोष
सदा है ॥ सकल गुण करि के पूर्ण है ॥ ऐसे श्री हरि दुख
हर ना है ॥ सदा विराजमान है ॥ ताते कदापि कोई प्रका
र सो प्रभु को दोष हृदय में सर्वथा ना ही लावना ॥ यह
सर्वोपर सिद्धांत भक्ति मार्ग में है ॥ २६ ॥ श्लोक ॥ केवा वय
वरा काय वरा काय उद्धवाय अपि प्रभो ॥ पुन वं तो वि
मद शी स्त्री लापश्चात् स्थिता अपि ॥ २७ ॥ याको अ
र्थ ॥ अथ श्री हरि राजी कहन है ॥ जो मैं अपने को कदा
कहूं महारं कुष्ठ हो ॥ उद्धवादि वदे भाधद भक्त कीय
ह गति है ॥ जो अपने अपने प्रभु को अंतर ध्यान सम
य सुने जिन की लीला सुनी देखी अनुभव करि ॥ सो
ऊद्धव जैसे समय स्थिति है ॥ प्रभु विना तो मैं कदा कहूं
२७ ॥ श्लोक ॥ कुंती वदी दश भाग्यं कश्यप भागवतो भ
वेत् ॥ सद्य प्राण विमोको न श्री कृष्ण विरहेण हि ॥ २८
याको अर्थ ॥ कुंती वदी भक्त परम भगवत है ॥ जो श्री कृ
ष्ण जी के अंतर ध्यान सुनत ही श्री कृष्ण विरह करि के

अपने मन में तत्काल प्राण छोड़ि दीये ताते कुंती महा
भाग्यवान भक्त हो। रघु स्तोत्र ॥ अस्माकं तु प्रभुर्नित्य
महता व्याह नो धु नो विराजते न तो दुखेन विधेयं
मनस्यपि। रघु पाठे अर्थ ॥ अव श्री हरि राइजी कहत
हो जो हमारे प्रभु तो नित्य ही प्रतिह विराजमान है।
जेसे तौ विक्रमेश धुनी कजीव हो पाह करि पतिपास
हो तेसे श्री आचार्य जी महा प्रभु दाग श्री प्रभु जी सोया
हसे बंध भयो। सो प्रभु सदा घर में विराजमान है ताते
मन में दुख धारन सब याही न कर्तव्य हो। रघु स्तोत्र ॥ भ
वद्वि मिली ते से वैरियं सितो विचार्य तो ततः संदेह
जात यद्दुःस्थित्यं तद्युगो हतो। अर्थात् अर्थ ॥ अव श्री ह
रि राइजी आपु अपने छोटे भाई श्री गोपेश्वर जी सो क
हत हो जो यह मैं सित पत्र तुमको लिखि पठाई है सो
ताको मारे पुष्टि मारणीय भगवदीय सो मिलि के वि
चार करियो। समस्त वैभव न सो मिलि के वासिना के भा
व विचार करे ते मन को चिंता रूप सकल संदेह हरि हो
इना सो सुंदर बुद्धि की पोषक होइगी। स्तोत्र ॥ और ह
मारे तो साधन है सिद्ध एक श्री हृषः सरणं समः य
ह गति है। सो यह श्री ब्रह्म भाचार्य जी अष्टाक्षर मंत्रा मंत्र
प्रगट करि श्री हृष ही की सरण सिद्धि की रहे। ताते हम
तो एक श्री हृष ही को आश्रय हृदय में करि के श्री ह
रि ही की सरण मन ह्वम वचन कस्किं सब भोतिय ही
साधन साधन जानि है। ताते संपत्ति अनेक सुख हमें श्री
हृष की सरण है। और आपत दुख हमें एक श्री हृष ही
की सरण की रहे। काहे जे हमारे आचार्य चरण करि प्र
गटे है यह मंत्र सो इ श्री गुरु साई जी विज्ञप्त है कहें। स्तो
त्र ॥ यदुक्तं तात चरणे श्री हृष शरणं समः न तत्र वा
प्ति नैवित्य मे हि के पारलौकिके।

से.प. १८८
अष्टाक्षरमंत्रही हमारे साधन साधने यह सिद्धत भयो
३१ इति श्रीहरिः जीहितसिद्धि पत्रं त्रैलोक्य कीटीका
श्रीगोपेश्वर जीह न संपूर्ण २४ अक्षर कहे जो चिंत
नाही करत है अष्टाक्षर ही परम गति है सो कोटा न को
टि साधन करो सगरे धर्म होइ ॥ श्रीवृद्धभाचार्यजी
के चरण कमल के आश्रय होइ तिन को फल दान हो
॥ सो फल दान आगे सिद्धा पत्र में निरूपण करत है
श्लोक ॥ श्रीवृद्धभा पदा भोज भजनां दानां दपि दया
पर कदाचित्त न जहाति जने हरिः १ या जो अर्थ आ
पुत्रव श्रीहरिः जी श्रीमुख ते कहत है जो वैसव को
श्रीवृद्धभाचार्यजी के चरण रविंद को भजन आहर
पूर्व करत है एक श्रीमदाचार्यजी के चरण कमल में
अनन्य भाव है जे सै सरदा सजी कहत है जो भरो सो ब्रह्म
इन चरण न करो श्रीवृद्धभा नख चंद छटा विनु सब
जग मांग्य धरो १ श्रीआचार्यजी महा प्रभुन के च
रण कमल का सेना से सदा वैभव आहरत है तिन के ऊप
र हरि जो श्रीवृद्धभा सदा स्या करत है प्रसन्न होइ के ह
पाही करत है अपनी स्वस्वानंद को सदा दान करत है
१ श्लोक ॥ सपाकटाक्ष संपात पक्षपात परो हरिः तम मे
ते हृते दोष लक्ष्मण तमं स्वतः २ या जो अर्थ अत्र
श्रीहरिः जी आपु श्रीमुख सो कहत है जो ज वैसव
न के ऊपर आप श्रीआचार्यजी महा प्रभु पक्षपात कर
करत है सो आप पक्षपात के अपनी धर्म तटस्थि सो
अवलोकन करत है तिन को पक्षपात श्रीठाकुर जी क
रत है पक्षपात भदास साहिब को लाधरने सो श्रीठाकुर
जी आपु श्रीआचार्यजी महा प्रभु की कानि करि के पक्ष
मना भदास के छोला भोग धरे आगे गते सो या भाति जाप
श्रीमहा प्रभु जी पक्षपात करि के सदा न करत है

सो उन वैश्यवनने ललावधिको टिको टिक्थपराधपतहे
सो तो उ श्रीहरि चंद सर्व अपराध तमा कस्के चाप रण
ही करन हो ३ श्लोक ॥ यही यद्दये श्रीमहाचार्य चरण
द्वय ॥ त राव सरण होय सना वृति मतो मम ॥ ३ ॥ या को अ
थ ॥ अक्क हन हे जो पुष्टि मारा गीय भगवही यके हृदय
में श्री आचार्य जी महा प्रभु के हो उ चरण कमल विरा
जत हे ॥ या भाति श्री महा प्रभु के सन्ध चन ह म करि के
सरा ह ॥ तिन के सना दि अपराध होय हो इति न ह
को प्रभु ना सक रि प्रतिबंध ह स्ति रत हो ॥ श्री गीकार
करन हो ३ श्लोक ॥ य ह गुलिन खाने ह चंद से तप
सरा ह ॥ या ता प हरति भक्तानां तदा नंद पदं कुंज ॥
या को अथ ॥ अक्क श्री हरि राइ जी कहत हे ॥ जो श्री आचा
र्य जी महा प्रभु के चरण कमल की हे सो अगुनी पसम
सुंदर हे ॥ तिन में हसन ख चंद ॥ २४ ॥ हस रासे सो एक न
खा चंद की दृष्टा आगे के टि चंद सा की किलाल न्या पस
त हे ॥ सो रासे श्री महा प्रभु जी के नख चंद जो वैश्य व हृदय
मै धास कीयो हे ॥ सो तिन भक्तन के हृदय के त्रिविधि ना
पडि होत हे ॥ या धिदैव कथ ध्यात्म कथा धिभौतिक ॥
मथा काय कवाच कमानसिक ॥ अनेक जन्म के हे स्वरूप
श्री हरि मिलन में प्रतिबंध रूप ताप सारे दूरि होत हे
एसे श्री आचार्य जी महा प्रभु के चरण कमल हे ॥ सो हो
न आनंद रान सेवन को करत हे ॥ ३ ॥ श्लोक ॥ अल्प यस्तु
शतं लोके वैदेव परिकीर्तितः ॥ पश्यन्ते न निजा चर्ये च
रणान् च द्रुयं मम ॥ ३ ॥ या को अथ ॥ अक्क श्री हरि राइ जी आ
पक हेत हे ॥ जो वैश्य में हे कीर्ति जी की एसे जो वसु म्म
पदार्थ सत्पत्नी क जो वंश लो क सगरे ज्ञान मारगी
य मर्यादा मारा गीय की सर्वोपर फल हे ॥ स जो क
जो फल हमारे पुष्टि मारा में चला

२०८
चतुष्टमोत्तमोऽसवतुष्टः। एसोयहपुष्टिमागोहं सोजा
में श्रीहृन्नाधरमुधापान्यहीपरमफलहं सोसाधन
कारिकें सिद्धिनाहीहं ताते मेरे तो परमफलरूप आप
श्रीवक्ष्य भाचार्यजी के बहदो उचरणों वुजयही फल
हैं। इनही करिहृन्नाधरमृतसिद्धिहं। ५। श्लो॥ नक्क
वेदविहितं फलं जनयति ध्रुवं यतो वहर्मुखं चितं
जायते न श्रुतेहं रिहं या॥ श्री॥ वेदविहितं अने
क प्रकार के कर्म हैं वेदमें ज्ञानमार्ग योगमार्ग कर्ममा
ग उपपासनामार्ग अनेक व्रतसंयमनेमइत्यादि श्री
नेक साधन हैं सो काहेते जो ताके लीएते यह पुष्टि
मार्ग को फल जान्यो नाही जानते हैं निश्चय काहेते जो
पुष्टिमार्ग तो केवल वृजभक्तन के भावात्मक सर्वोप
हं। सो श्रीमद्वा प्रभुजी की पाछे साध्यहं साधनते सि
द्धिनाहीहं जेसे वहर्मुखजी वके चितः। ६। श्लो॥ एते
श्रीहरिजो भगवान की कथा सत्सक मृतजताए श्री
भगवान की कथा वहर्मुखको न सुहाइ। और भगवद्व
से सेवा दिवहर्मुख के चितमें न सुहाइ। ७। श्लो॥ ज्ञान
तु भक्तिहेतुत्वात् सत्त्वे फलरूपणी यतो जीवस्य ह
सत्त्वहेतु भेदनिवर्तिका ७। या॥ अर्थ सास्त्रमें असे
वहें जो ज्ञानहं सो भक्तिहेतुहं सो ताते भक्ति की
ज्ञानभयोहं ताक भक्ति होइ। सो यह पुष्टिमार्ग के सि
द्धिमें फल नाहीहं यह मर्यादा मारगीय भक्तिहं
सो जामे अर्थ धर्म की ममोक्ष फलहं सो जामे प्रथम ज्ञा
नही मुख्यहं ता पाछे मर्यादा भक्ति होय। सो पुष्टिमा
ग के फलमें उह ज्ञान और मर्यादा मारगीय भक्ति दोऊ
विरोधीहं। सो काहेते जो उह ज्ञानमेदासत्त्व नाही
रहतहं और पुष्टिमार्गमें तो जीव को दासत्व मुख्य
हं प्रभुस्वामीहं या भांति श्रीभगवदसेवाहं नाभा

वको निवर्तकनी ज्ञान है तहां स्वामी सेवक यह भाव
 नाही है ॥ १॥ श्लोक ॥ मर्यादा भक्ति रण्ये या तावदेव फल
 त्तिका यावन् न्यजते पुष्टिः भक्ति सकल मई गादा ॥
 याको अथ उद्दमर्यादा भक्ति है उद्दमर्यादा अर्थात्
 को देव अर्थात् ब्रह्म मानत है जो में ही ब्रह्म हो ॥ ताकरि
 के प्रभु सो सेवक भाव धृति जात है ॥ यद्द जानते यह ज
 ता सो जो पुष्टि भक्ति सर्वोपरि सो मानि है ॥ ज्ञान तथा
 मर्यादा मारकी भक्ति के मई माथे पर विराजत है ॥
 ताते पुष्टि भक्ति सर्वोपरि जाननी ॥ २॥ श्लोक ॥ पुष्टि भक्ति
 होरा संते त्वस्मात्प्रभुः स्वयं नृणां वसं अताः संतः
 फलरूपा भवन्ति हि ॥ वै याको अथ ॥ यह पुष्टि भक्ति है सो
 श्री गुरु जी रासादि लीला करि भक्त जन को रास ही रा
 रास लीला श्री गुरु जी करि के सो के नव ज भक्त न के
 लीये करी है ॥ ऐसे श्री गुरु सो श्री वृद्ध भाचार्य जी यह
 कलियुग में पुष्टि भक्ति है ॥ सो तिन के लीये प्रगटे सो
 श्री आचार्य जी महा प्रभु जी है स्वयं भगवंत श्री गुरु च
 दुर्जी है ॥ सो प्रगटे है ॥ सो ताते श्री आचार्य जी महा प्रभु
 के चरणों के सरल को दृढ आश्रित है ॥ एसी सति ते अंत
 राहें तिन ही को भजन सर्व रूप भाव सो कीयो ॥ नव
 रास लीला में फल प्राप्ति भयो ॥ सो ते ही यह पुष्टि माग
 में जो श्री महा प्रभु जी के आश्रित है ॥ तिन ही भाव ही
 न को फल सिद्धि है ॥ ३॥ श्लोक ॥ तद्गुरुं न कर्तव्यं मनु
 जने परं किमु ॥ तथा स्नाने फल प्राप्तेन भोगादधिक
 हैति ॥ ४॥ याको अथ ॥ ताते उत्तर जो पुष्टि माग त प्रति
 कृत जान कर्म वेद मर्यादा भक्ति इत्यादि विरोध धर्म
 के नही कर्तव्य है ॥ जो स्मन करि के भूत प्राणी को

मार्गीयधर्मसेवादियहलौकिकफलात्मकनहीकरेजो
 मेंसुखपाउंनुतेबीदेहसेबंधीसुखीहोइ। पालोकवैदि
 ककामनार्थकरेंनभोगादिविचार्यहलौकिकवैदि
 ककामनांसर्वहोदिवेंकरें॥१॥ श्लोक॥ नस्मात्फल
 बिनाचार्यपदाभोजइयंसदाहृदिधार्येनैवकार्योसं
 शयापितमानसं॥१॥ याकोअर्थ॥ यहपुष्टिमार्गीय
 भगवद्धर्मसेवादिकरियहअपनेश्रीवक्षभाचा
 र्यजीकेहोअचरणकमलकोअपनेहृदयमेंधारनक
 रीअहर्निशचरणकमलकोध्यानमनमेंराखेंया
 अलगतइसरोकार्यपुष्टिमार्गीयकोनाहीकरतव्य
 हैमनमेंसंशयअविश्वासनकरें। सोकाहेतैजोगी
 तामेंकहेहैजोयंयथात्माविनस्पति। संशयतेफल
 कोनासहोतहै। तातेंसंशयनकरें॥१॥ श्लोक॥ अत्रसं
 शयमापन्नासर्वथाद्यासुरासतादेवाअपिपुरानेपि
 हरिणापतितादुरात॥२॥ याकोअर्थ॥ श्रीवक्षभाचार्य
 जीकेरूपमेंसंशयहोय। तथायहपुष्टिमार्गमेंसंश
 यहोइ। ताकोसर्वथाअसुरीहीजानियें। देवीजीवहो
 इ। अथवाअसुरकोईहोय। ताकोअविश्वासश्रीआ
 चार्यजीमहाप्रभुमेंहोय। सोताकोश्रीठाकुरजीअप
 नेहाथसंसारमेंडोहोइ। सोताकोअंगीकारकवहन
 करें। सोतवताहीतैविवेकधेयोअग्रंथमेंश्रीआच
 र्यजीमहाप्रभुंकेहै। जोअविश्वासनकर्तव्यसर्वथा
 बाधकस्तु। तातैअविश्वासमहाबाधकहै॥२॥ श्लो
 क॥ अहोमदचित्रमदमवतीर्णहोभुवि। विद्यमा
 नेभगवतेविद्यतोअपिसर्वथा॥३॥ याकोअर्थ॥ अ
 वश्रीहरिइजीआपुश्रीमुखतेकदतहै। जोमेरेमत
 मेंवदतखेदहोतहै। ओरबडोआश्चर्यहै। जोभूमिवि
 द्यें। श्रीवक्षभाचार्यजीश्रीहरिजोश्रीहृत्सहीअव

तारलीये सोतिनको वलनि कलंक भगवद रूप अवही वल
 भकुल भूमि पर विराजमान हैं और श्री भागवत द्विधमा
 न हो श्री भागवत की टीका निबंध श्री सुबोधनी जी द्वि
 जमान हैं सर्व आनंद यद्गीत मार्ग में नाही प्रवर्त होत है
 यह सो को बड़ो आश्चर्य हो ॥ १३ ॥ लोक ॥ सत्पा भुवि सुबो
 धिन्या सत्सुखा चित्तु चित्तु ग्रंथे सुविद्यमाने सुसर्वाथ
 ताप के क्षमि ॥ १४ ॥ या को ग्रंथ ॥ अक् श्री हरि राजी कइत
 हैं जो भावार्थ श्री सुबोधनी जी निबंध भूमि पर विराज
 त हैं और कइ कहें सत्य हैं भगवद धर्म ह सत्य हैं तथा
 श्री सुबोधनी जी निबंध के वक्ता ऐसे सत्पुरुष हैं विराज
 त हैं और छोटे बड़े श्री गुसाई जी के श्री आचार्य जी म
 हा प्रभु के पुष्टि मार्ग ग्रंथ हैं विद्यमान हैं सो ग्रंथ
 कैसे है सर्व पुष्टि मार्ग के भावतिन के ताप के हैं इन ग्रंथ
 न द्वारा सगरीरीति पुष्टि मार्ग की जानी जात है या
 भांति सगरीरीति व सुविद्यमान हैं ॥ १५ ॥ लोक ॥ तथा
 पिन प्रवर्तते यथा भक्तियथे पुन ॥ प्राय ह्येव हरिणा
 कारणत्वेन रहित ॥ १५ ॥ या को ग्रंथ ॥ अक् श्री हरि राजी
 आ पु श्री मुख के कहत हैं जो ऊपर कहें हैं सो सगरे पद
 र्थ भूमि पर विराजमान हैं तऊ जीव यह पुष्टि भाक्ति मार्ग
 में नाही प्रवर्त होत है सो को हेतु जी एक श्री हरि की कृपा
 को कारण हैं सगरे पदार्थ है और श्री हरि की कृपा से
 इत वही जान्यो जाय श्री हरि की कृपा होइ त वही जान्यो
 जाइ श्री हरि कृपा विना जीव भक्ति मार्ग में नाही प्रवर्त हो
 त है ताते यह पुष्टि मार्ग तो केवल प्रमेय मार्ग है सो श्री
 हरि की कृपा प्रमेय वस्तु विना यह मार्ग में कैसे आवा ॥ १५ ॥
 लोक ॥ मूर्छिते द्रियव
 कृपा विना सर्व साधना
 अक् कहत है जो ताते श्री

सि.प. सिद्धि होइ ताको दृष्टांत कहन है जो जेसे प्रान विनास
१११ गरी इंद्री मूर्ध्ति होइ तिनते कहुन कार्य होइ जव प्राण
आये तव सगरी इंद्री चैतन्य होइ अपने अपने कार्य
में ते सही जहां ताई श्री हृस्म जी की हृपा प्राण स्थापनी ना
ही हो जव परमत हां जाई पुष्टि माणीय साधन इंद्री स्थाप
नी ते कहुन होइ जव श्री हृस्म जी हृपा करे ते वही यह पुष्टि
भक्ति में आइ सेवा दिव करे भाव सिद्ध होइ निश्चय है
इति श्री हरि राइजी हृत् सिद्धापत्र पंच वित्त ना की टीका श्री
पेय जी हृत् तम पूरण ॥ २५ ॥ तव ऊपर कहे जो पुष्टि माणी
यस गारोप दारय प्रगट है परंतु श्री हृस्म जी की हृपा विना
नाही जीव प्रवर्त होत है ते हां को ई कहें जो श्री हृस्म हृपा
न करत होइ सो ते हां श्री हरि राइजी आगे सिद्धापत्र मे
कहत है जो श्री हृस्म तो परम हृपाल या भांति हृपा क
रत है श्लोक स्वकीयानां गैहिक यदथवा पारलौकिकं
अकरोत कुरुते कतो प्रभुरेव न संशयः ॥ १ ॥ अथ
व कहत है जो श्री हृस्म के से हो परम हृपाल हो अपने स्वकी
य निज भक्त न को यह लोक परलोक हो न सिद्ध करत है
यह लोक में विषयादि मति को जानो यह लोक में स्त्री पु
त्र धन दैवी सिद्ध करत है जा में भाव दधर्म सेवादि में विरो
ध न करे या भांति लौकिक सिद्ध करत है और अलौकिक
में लीला रस रूपानंद को दान सो न सिद्ध करत है सो नि
विधि ना ना वृत्ति मिश्री आचार्य जी महा प्रभु कहें है भ
क्त सर्व दुख निवार काय नमः भक्त के लौकिक अलौकि
क सर्व दुख दूर करि के सर्वथा सर्व कार्य सिद्ध करेगे ता
ते जीव को कहु चिंता नाही करत व्यर्थ है श्लोक तथा
पे कुरुते जीव प्रयत्नं निज दोषता अज्ञानात् कुरुणा
या हि समतेता दुःखं स्वतः ॥ २ ॥ अथ अथ या भांति श्री
हृस्म लौकिक अलौकिक सर्व कार्य सिद्ध करत है सो तऊ

जीव अपने मनमें अनेक प्रकार के साधन को उपासक
रत है जीव बुद्धि अज्ञान ते अनेक प्रयत्न करत है अ
से अज्ञानी जीवन पर श्री हृष्म करुना निधि दे सो सग
रो अपराध दमा करत है अपनी ओर ते सो अनेक
एमें श्री आचार्य जी महा प्रभु कहें हैं प्रभु के से हैं सत्य
संकल्प तो बिस्नु नी न्यथा तु करिष्यति ॥ श्री हृष्म
न्य संकल्प हैं श्री आचार्य जी द्वारा अंगीकार की रे
हैं सो इह से जीव अज्ञान करि भूलत है प्रभु के से भू
ले गो प्रभु तो कह ॥ अवि रूद्र प्रकुरुते निरुद्धा स्य स्य
पिया से युद्ध सो बाले युधि ने बहुरु ते हित ध्या
को अर्थ यह पुष्टि मार्ग में अवि रूद्र भगवद से बोदि श्री ह
म को आश्रय सो तो नाही करत है ॥ ओं अनेक साधन
प्रयत्न जो पुष्टि मार्ग ते विरुद्ध मे है नाही के कारण में त
र है ए सो अज्ञानी जीव है उलटो चलत है ॥ ए सो इहा स
पर श्री आचार्य जी की कानि ते श्री हृष्म के सीरहा कर
त है सो पिता वाल ब सो हित ही करे बाल क अज्ञान ते
कहु दोष करे ॥ परंतु पिता सो ब को नाही विचारत हि
न ही करत है सो संन्यास निर्णय में श्री आचार्य जी महा
प्रभु कहें हैं हरि सरण सतो नि कर्तुं बाध कुनो परं अ
न्यथा माने रावाला न स्व न्यैः युयुषष्ठ चित् ॥ १ ॥ जैसे मा
ता पुत्र को बार बार अपने तन सो पोषन करत है ते से
ही जो जीव श्री आचार्य जी महा प्रभु द्वारा सरण आ
ए सो तिन को प्रभु बाधना ही करत है जो प्रकार भक्ति
दे दास को कल्याण होइ सोई प्रभु करत है असे ह
गल श्री हृष्म हैं ॥ श्री हृष्म न जानाति निजो ज्ञानात्
न च तिसह न धृता ॥ कहु खराशि जीवोयं ॥ १ ॥
गिरिधि ध्याये अयो भांति प्रभु हा करत
जीव अपने अज्ञान ते नाही जान

मे.प. तद्दिहें उपकारको नाही जानत हो ॥ ऐसे दोषकी रासि दोष
१२ भयो जीव हो ॥ ओर हरि जो श्रीछल्ल हो ॥ सो गुननिधि हो ॥ जी
व दोषनिधि हो ॥ भगवान गुणनिधि हो ॥ ॥ श्लोक ॥ कथम
न्योन्यसंबंधः सानमस्ते जसौ स्थिः ॥ तथापि दोषराशी
नादाहृतेन निवेदनान् ॥ ५ ॥ पादोत्तरार्थ ॥ उपर कहें श्रीसे
श्रीछल्ल सो जीव को पस्यार संबंध वेसे होइ ॥ जैसे ते मजो
अधियारो हो ॥ ताको संबंध सम्य सो वेसे होइ ॥ न हाने जहो
इत हो ॥ अंध ते मके से आवें ॥ ते से ही यह जीव को न प्रका
र श्रीछल्ल सो मिले ॥ सो कह न हो ॥ जो ओर तो उपाइ कोइ
नाही है ॥ जीव सर्व भगवान में निवेदन करे ॥ तव ही सर्व हो
य हरि होइ ॥ सो तो रासी वानो में प्रसिद्धि हो ॥ श्री आचार्य जी
को चिंतो भइ ॥ तव श्रीछल्ल ने यही आगावरी ॥ जो समपन
करावो ॥ निवेदन ते सगे दोष जीव को हरि होइ ॥ गोताते जी
व को दोष निवेदन ते निश्चय हरि भये ॥ ५ ॥ श्लोक ॥ स्वाचा
र्यद्वारका तुष्ठा घोषता हरियो जेने ॥ अतः स्वाचाये चर
णो स्थाप्यो हृदि निरंतरं दया को ॥ श्री हरि होइ जी
कहत हो ॥ जो ऐसे दोष रूप जीव को जव अपने श्रीवल्लभ
भाचार्य जी द्वारा निवेदन होइ ॥ तव सगे दोष ना सहे
इ ॥ तव श्रीछल्ल की सेवा योग्य होइ ॥ ओर उपाइ कोइ
नाही ॥ ऐसे अपने श्रीवल्लभ भाचार्य जी के चरण कमल
अपने हृदय में स्थापन करनो ॥ यही योग्य है ॥ ताते पुष्टि
माणीय वैश्व को परम धर्म यहि हो ॥ जो श्री आचार्य जी
के चरण हृदय में अहर्निश धारन करे ॥ याही ते सर्व फल
सिद्ध होइ ॥ ६ ॥ श्लोक ॥ यथा बाल करत यै डाकिनी तो
भवेति हि माता तथैव भवेत्तु दुःसंगाद्वा बुरह्मके ॥ ७ ॥
या ॥ ते ॥ ॥ जैसे बालक की रक्षा माता करे ॥ डाकिनी
बालक को घात करत है ॥ सो बालक की रक्षार्थ डाकिनी
ते माता भयभीत होत है ॥ बालक को छिपाय रखे ॥

सैहीपुष्टिमागीयभावादीयदुःसंगरूपडाविनीजेड
अपनेभगवद्भावदुःसंगरूपवालकलीरुताथडाविनीरूप
संगत्यागकरें तातें वैलवकौदुःसंगवोहोतहीबाध
है तातें सबभावजाय यहजानिकें दुःसंगतिअह
सडरपतहैं तो भावकीदुःहोया ॥ ७ ॥ श्लोक ॥ समस्त
निजस्तेहगोपायति तथासति तयैवभगवद्भावगो
नत्रियतां जने ॥ दायको अर्थ ॥ अथ श्रीहरिराज्ञीपु
ष्टिमागीयवैधमवसौ कहतहैं जो आपने हृदयमें
यहभावधार्यजकिचरणकमलमें रहे हों सो सबके
आगे गोप्य रखना ॥ काहे आगे कहने नोही जे संस
ती प्रतिवृत्तास्त्री होइ सो अपने हृदयको अभिप्रायअप
नेपतिके आगे कहो ॥ काहे आगे सर्वथा हीन कहें
ते सैहीपुष्टिमागीयभगवद्दीयभक्त अपने भावसवन
के आगे गोप्य करे ॥ याभांति जन जो दास रहे तो याकाल
में धर्म रहे नोही तो बाधकही होया ॥ ८ ॥ श्लोक ॥ हृत्तिवा
जापसंमर्गैयथावद्व्यतेरति स्वरिणी भक्तसंगो भाव
हृतहैं जे सै इती किंचित्तापश्यने वक्चनते स्त्रीको का
मवते इती किंसंगतेरतिवदे विभवास्त्रीको ते सैही
वैलवको भगवद्भक्तताइसी मिले तो भगवानमें भाव
बदेयहप्रसिद्धही भावहैं काहे नें इती अनेक शायक
रातके ममवचनविषयसंबंधी कहने का समुदें नये
ही भगवद्दीयभगवानकी कथाए सो भावानमें कहें जो ह
र्यसैं भगवद्भावप्रगटहोइ आवैं तातें पुष्टिमागी
यभगवद्दीय होइ निजको संग आवयकते चले ॥ ९ ॥
श्लोक ॥ असत्ये सर्वदा चितं तं यद्विदुः
भवताहो नु चेतास्यापं प्र
जेसै विभवास्त्री असत्य

५. शान्तली सदागृहमेतेमनउचाटहीरहै॥ अनेकपण
१३ हयपासमनभटके॥ तेसेहीनाभागवदीयकोचितश्री
ठाकरजीकेसरूपमेंलगपोहै॥ एकश्रीहरस्मकेचरण
विंदकेआश्रिततहांचितस्थितिहै॥ तिनकीमनअ
पनेग्रहमेंदेहसंबंधीलौकिकवैदिककार्यमेंनर
जो॥ तातेश्रीप्रभुकोआश्रयहै॥ सोईमुख्यहै॥ निश्रय
१५इति श्रीहरिगुणी हतसिखापत्रयष्ट विसोताका
टीकाश्रीगोपेश्वरजीहतभाषामेंसंपूर्णरहै॥ अवउपाव
हेजोभक्तप्रभुकेआश्रयहै॥ तिनकोचितलौकिकमें
जाहीलगतहै॥ तहांफलमेंअनेकबाधकहैं॥ तिन
कोतजियें॥ तवफलसिद्धहोइ॥ सोकहाबाधकहैं॥ केसे
तजियें॥ सोआगोंनिरूपणकरतहैं॥ श्लोक॥ निजाचार्य
पदाभोजयुगलाश्रयणंसदा॥ निधेयंतेननिखिलंफ
लंभावविनाश्रयं॥ १॥ याकोअर्थ॥ अवश्रीहरिगुणीक
हतहै॥ जोपुष्टिमार्गीयवैष्णवयाभांतिसोंरहै॥ सोतिन
कोफलनिश्रयहीसिद्धहोइगो॥ अपनेनिजाचार्यश्री
वैष्णवाचार्यजीकेहोऊचरणकमलकोआश्रयसदा
है॥ सोतावैष्णवकोनिखिलविनाश्रमहीसिद्धहोइ
सोविनासाधनहीश्रीप्रभुजीकीहृपातिसकलफल
सिद्धिहोइगो॥ १॥ श्लोक॥ धनं ग्रहं ग्रहासक्तिप्रतिपालो
कवेदये॥ कामादिनिष्ठामनसः स्वर्गादिफलकांक्ष
णो॥ २॥ याकोअर्थ॥ अवश्रीहरिगुणीआपुश्रीमुख
नेकहतहै॥ जोपुष्टिमार्गकेफलमेंयहचालीसदोष
हैं॥ सोयेबाधकहैं॥ ओरदोषतोयोंअनेकहैं॥ परंतु
येचालीसदोषमुख्यहैं॥ सोतिनकोतजियें॥ तवफ
लतेश्रद्धहोइ॥ श्लोकहतहै॥ प्रथमधनतेपहमहदो
षहैं॥ दोषतेयहजीवआधरोहोइ॥ जानतहै॥ काहें
तिनतेनाही॥ तातेंधनकोनिवेदनेप्रभुमेंकरि॥ भा

भगवदस्वामेवगावै प्रभुजामें अपने को दास जानें
 रहस्ये ग्रहते जो यह मेरो दोष रहै में बनायो है मेरे पि
 ता को है पदमसना वाधक है सो छोड़ो ॥ तीसरो ग्रह
 सति है अष्टग्रह ग्रहास्ति के कार्य में आसति है आ
 नुयह कर नो दे यह वनाव नो हो यह आसति वाधक है
 अथै नेक वेस्की प्रतिष्ठाते जो यह जो कि मैं जो कछु
 तनी कार्य करे गो तो प्रतिष्ठा जाइगी तातें फलानो पजग
 वेगो तो प्रतिष्ठा जाइगी मिट्यख गागो जामें मेरी बडाई
 होइगी और वैदिक आहुयाह्य ह हो मयज इत्यादि
 क में सर्व ते बहुत करन हो यह प्रतिष्ठा वाधक है ॥ क
 मस्ति में नेष्टा संज्ञात पन नृजने म इत्यादि भगवद
 सेवामें नाही वाधक है ॥ ५ ॥ मनमें सुगादिक के फल की
 काला जो स्वर्ग लोक में जाय नाना प्रकार के भोग
 विलास करे ग्रह भक्ति मार्ग में वाधक है ॥ अथ चो
 र कहत है स्तोत्र ॥ लौकिके परमां प्रीति विरुद्ध विष
 ये सणा अथि रुद्र पथासक्ति विराये भोग भोजनै ॥
 पाकै अथो लौकिक जो देह संबंधी स्त्री पुत्रादि में पर
 म प्रीति सो भक्ति में वाधक है ॥ भक्तिने विरुद्ध जो लौकि
 क विषयता की ईसन जो चाहना सो ऊ फल में वाधक
 है ॥ लौकिक विषयते विरुद्ध विषयासक्ति सो ऊ वाध
 क है ॥ आछो आछो यानो विषय भोगार्थ भगवदसे
 वाय मदा प्रसाद देख कनेत हो सो भावना ही विषया
 य आछो भोजन घनादिसो ऊ वाधक है ॥ १० ॥ स्तोत्र हे
 दि भिमान बुल जो विद्या विदितो पि च ॥ भगव
 नाभा वास दिन देह पोषण ॥ ५ ॥ पाकै अ
 मान जो मन मदन को हुको न गि
 रहै वेरी नित्य सवारो अपनी दे
 लो यह वाधक है ॥ ११ ॥

मनसे

प. मेहो ब्राह्मण सूत्रीसब मोतेनी चेहे मोसमान कोई न
ही यह भक्ति में बाधक है १२ विद्यामद जो में बहुत फल
है घटसास्त्र को जान मो कोई और तो सब मर्यदे यह वि
द्यामद बाधक है देन सिद्धि नाई होत मरते १३ भगवद
नाही करत लोखिक वैदिक अनेक कार्य में दिन बिता
वत है भगवद से वामें मन नाही है यह पृथ्वि भक्ति में
बाधक है जे में ब्राह्मण गायत्री न जे पें तो ब्राह्मण पना
जाय ते से ई वैभव होखे भगवद से वान करे तो पृथ्वि
भक्ति में बाधक है १४ देह को पोषन रंच हू सीत न सस
दिय के अनेक औषध ते पा न पा न ते देह की रक्षा में
है देह की रक्षा तो भगवद से वार्थ कही है सो नाही के
वल लोखिक कार्य देह पोखे सो बाधक है १५ अथ
और इव दत्त है श्लोक ॥ असत्संग महा दुष्ट प्रसा
द्विष्ट भरण निवेदन तु संधान त्याग शरन विस्म
ति ॥ ५ ॥ अथ असत्संग महा दुष्ट को बह मुख ना
दुष्टता होइ सो बाधक है १६ और श्री हनुमदा उचि
ष्ट प्रसाद छेडि के असमर्पित या यप ह महा बाधक है
सो पद्म युग न में कहै है श्लोक ॥ अनिवेद्यत यो भुक्ते ह
स्य परमात्मने पनंति पितरस्य नरके शास्वती स
मा १ ॥ अवैश्यानां मन्त्रे पातो जातो मन्त्रे संभवेत्त
थैव च ॥ अनर्पितो तथा वैश्वेनो खमासमद्रु संभवेत् २
कर्म युगाणो अनर्पयित्वा गोविंदो भुक्ते धर्मवर्जि
तः खानविष्टा समंचान्यं निरंतत्सुरया समं ३ इति
वचनात् असमर्पित ते बुद्धि भ्रष्ट होइ सर्व धर्म को
नास होइ ताते महा बाधक है १७ निवेदन कीयो है
तथा अनुसंधान कवहु नाही करत है जो में समय न
कीयो है पंचाक्षर को कही अभिप्राय है या भाति नि
वेदन को अनुसंधान नाही करत यह बाधक है श्री

वृक्षजीकीशनस्मृतिहो। अष्टात्तरमहासंनृत्रीहृत्सम
 रणममः यद्वसराणकीविस्मृतिबाधकहो। श्लोक॥
 देवांतराश्रयसेभ्यप्रार्थनापिपलायितः। भगवच्चित
 र्हिताव्यावृतिरपिलौकिकी। ध्याकोअथो। ओरदेव
 कोआश्रययहमहाबाधकहो। साक्षात्प्राणपुरुषान
 मन्त्रीहृत्सकोआश्रयहोहिअन्यदेवकोआश्रयक
 रौताकोअहपुष्टिमार्गकोफलनाहीहोमिद्ध। स्मृति
 मेवदेवो। शरितस्मृतोः नान्यदेवनस्तुयोनान्यदेव
 निरलेयन। नान्यप्रसादनादेवान्यहायननंनृजेन
 शयाभातिअनन्यरहेतोपरनेसिद्धिहोश्रीगुसांश
 जीकहेहो। श्लोक॥ भगवन्पाह्मपदपरगायुषोन
 दियुते। त्रमरणपितरो। इतरायश्रयणंगजराज
 गतो। नहिरासमभयुरीकृतो। अथन्यसेवेधगंधो
 पिकंधरासेववाधेनो। शर्तिवाक्यात्। एभांतिअन्यदे
 वाहिअन्यश्रयवधकहो। रवश्चन्यदेवइद्विब्र
 ह्मादिशिवादिगणेशस्यदेव। सोफलकीप्रार्थना
 यहवधकहो। श्रीहृत्ससर्वसामर्थ्ययुक्ततिनकोहोहि
 अन्यदेवसदोपराधीनतिनसोफलकांला यदपुष्टि
 भक्तिबाधकहो। २१। भगवान्केचरणारविहनेधितर
 हित। लौकिकवैद्विकायमनमेंअसंभावनाविपरी
 तिभावनामिथ्याध्यानयहपुष्टिमार्गकोफलमेवाध
 कहो। २२। अष्टप्रहरलौकिकव्यावृत्तिकरिलौकिक
 वेशहोइतातेअष्टप्रहस्यहलौकिककार्येवाधक
 हो। २३। अथअरहंकहनहो। श्लोक॥ गुरुदोहस्त
 येभ्यस्तयस्याधिकाविभावेन। अथन्यदेवसामर्थ्य
 सिद्धियाणोचपोषणं। अयाकोअथो। गुरुदो कर
 गुरुअप्रसन्नहोइतोयहवाधकप्रभुअप्रसन्न
 तोगुरुह्लाकरो। गुरुप्रसन्नहोइतोह्लाकरि

प. सामर्थ्यनाही २४ और पुष्टिमागीय भावदीय को
अपनेनेननननने ॥ अपनेको अधिक भावदीय
कोजने ॥ यामांतिमनमें भावना करे यहवाधकहै
२५ देहमें अत्यंत सामर्थ्यसे काहू को गिनेनाही ॥
हंकार होइतयावडो विषय होय यहवाधकहै २६
अपनेइंद्रियमें पोषनमें तत्परहै सोइंद्रियको विषय
यही भागइं प्रियहै तातेइंद्रीय पोषणते विषयथा
वेसईवहै २७ अब और कहुनहै लोक ॥ ग्रंथेक्षति
गतिभोग्यापुत्रादिभुमनोगतिः क्लेशानुभावरहिते
शोयतनसंस्थिति ॥ देयाको अर्थ ॥ ग्रहादिकलौकि
ककार्यकीरति अष्टग्रहग्रहादिकमें प्रीति २८ स्त्री
पुत्रमें मनकाहिं प्रीतिदेहसंबंधी स्त्रीपुत्रादिमें मन
इतके दुखते दुखीहोइ ॥ इतके सुखते सुखीहोइ यह
पुष्टिफलमें वाधक २९ श्रीकृष्णके अनुभवविनाहै
श्रीगोवर्धनाथजी तथा सातोमंदिर तथा क्लेशभक्त
के मंदिर तथा पुष्टिमागीयताइसीके इहं राजसेवात
था वृजइतनी ठौर वैभवको अनुभवहै अत्यंत होत
वभावधनताविना जीवको अनुभवकहुनहोइ ३०
अब और कहुनहै लोक ॥ हयशेको लोकलभो
तहभावहै तो तथा स्वातंत्र्य भावने स्वस्यजीवस्व
भावहै ॥ देयाको अर्थ ॥ यह तो लौकिक हयशे
कहैहसंबंधी कहुं कहुं अनेके अलौकिक आछो
होइ तो मुखपविहय होइ वुरीहोइ तहांहानिहोइ
तोइदुखपावे शोकहोइ सोयहसंसार रूपी वृत्तमें दो
इफलहै कवहुं सुखकवहुं दुखयाहीमें मग्राहै सो
फलमें वाधकहै ३१ इत्यादि स्वभावमें लोभहोइ तो
इतनो नौद्वयभोग्य और होइ गो आछो कहुं कहुं तो
आछो इत्यादि लोभ पुष्टिमागीमें वाधकहै ३२

अपने को स्वतंत्र की भावना मन में राखें। हास्यपनो भले
 पाश्चाध्य है ॥ ३३ ॥ जीव को स्वभाव दुष्टता ही की भावना
 भाविक के साविना दुष्ट स्वभाव स्वको बुरे वाहे यह
 बाधक है ॥ ३४ ॥ अधिकार पाप प्रतिपत्त पातो
 दुरात्मनः हृदय क्रूरता ही न जनोपेक्षी तु मा पुनः ॥ ३५ ॥
 या के स्थिति अधिकार का ईको ते ज्ञाते अनेक जीव
 को भलो बुरे करने पडे सो बाधक है ॥ सो श्री आचा
 र्य जी महा प्रभु सुबोधनी निबंध में कहें हैं जो नाराय
 न ने ब्रह्मा सो भाग्यंत कहें ॥ सो ब्रह्मा को अनुभव
 न भयो का हितें सृष्टि कस्विके अधिकारी है ताते ब्र
 ह्मानाद सो कही नाराद को सगरे पिरना है ॥ एका
 ग्रह मन्ना ही ताते वेद व्यास सो कही ॥ सो व्यास जी वेद
 पुराण के अधिकारी है ताते इन ह्को अनुभव न भयो ता
 ते व्यास जी शुक देव जी सो कहें सो शुक देव जी का ह्वा
 न के अधिकारी ना ही ताते अनुभव भयो ताते अधि
 कारी को फल में बाधक है ॥ ३५ ॥ जीव को मन पाप
 ति है ॥ सो पापी जीव परीत ना ही ॥ ओर खोटे मनुष्य
 योग दिक दुष्ट क्रिया करे ता को पत्त पात करे साचे
 को जे दो करे जे दो सो वाचो करे ता को फल में बाधक
 है ॥ ३६ ॥ हृदय ते कर दो इ का ह्को भलो न विचारें महा क
 र दृष्ट राखें सो बाधक है ॥ ३७ ॥ ही न जन जे को ई है ॥ श्री
 के सरण होइ तिन की अपेक्षा करे वा को त्याग करे
 ह पुष्टि भक्ति में बाधक है ॥ ३८ ॥ आत्मा मान होइ वि
 कार न त्रोध होइ भव दुर्घटी होइ सदन न होइ य
 पुष्टि मार्ग में बाधक है ॥ ३९ ॥ लोक ॥ एते चान्ये चो
 धा हो वा विस्मय को हर सावधानी भूयसा सहस्र

को फल में बाधक है ॥ ३६ ॥

त्य. जिनमें होइ तिनको हरि न जाने जाय यह जीव हरि
को न जानै ताते श्रीहरि राजीव कहत है समस्त पुष्टि
मार्गीय होयने जो संगे वैष्णव सावधान रहियो
यह दोष नै र पत राह्ये अव रूप दोष रूप रोग कहै
ताकी ओषधी कहत है काहेत यह वाली से दोष प्र
कल है ताते या भांति जो जीव रहे गो तिनको यह दोष
समन ले गो गो श्रीहृक्ष के चरण एविंद मै अत्यंत आद
राखे सर्व स्वजाने १ अब और कहत है श्लोक भाग
वन्मार्ग मात्रै सन्मार्ग को दिनि विरतै न्यतः हृक्ष
गुण इतो न रात्मभि १५ या को अथ भगवन्मार्ग जो पु
ष्टि मार्ग भगवान ही स्वरूप श्री आचार्य जी को धरि अ
पने जीवन थै प्रादुर्भवे एसे पुष्टि मार्ग में स्थिति
होइ २ और एतन्मार्गीय यह पुष्टि मार्ग के फल की
कोहा होइ और मया ह के फल की न होइ काहेतै
पुष्टि मार्ग को फल श्रीहृक्ष की सेवा स्वरूपानंद को
अनुभव यह फल है और अन्य मार्ग में स्वर्गादिकत्र
सलोक तथा मोक्ष पर्यंत चतुर्थ मुक्ति सो यह फल
सर्व पुष्टि मार्ग ते विरोध है ताते पुष्टि मार्ग के फल की
चाहन करे ३ यह लौकिक अन्य कार्य ते विरत श्री
हृक्ष का सेवः ४ राग विना सर्व ठारने मन विलु
गखे ५ और अः हृक्ष के गुण ते आस कर हे सगरी
आत्मा मन करि ध्यान करि श्रीहृक्ष ही की सेवा बच
न करि गुन गान श्रीहृक्ष को क्रिया करि श्रीहृक्ष
ही की सेवा या भांति स्वात्म भाव श्रीहृक्ष के गुन मर
है तथा ए सो भगवदीय होइ तिनको संग करे ५ अ
ब और कहत है श्लोक स्वाचार्य सराण्योते सुदि
यास समन्विते परित्यक्तः खिले स्थयं सदानद्वारेना
त्युक्तः १३ या को अथ अपने आचार्य श्री वल्लभा

चार्यजीकेचरणधूमसत्त्वकीरहोहीऔरइदविश्वासम
नमेंहोइप्रहजानेजोश्रीवध्नभाचार्यजीकेचरणधूमसत्त्व
कीधृपातेसकलकार्यसिद्धहोइगेनिश्चयापदधिश्वा
सगखे॥१॥औरलौकिकवैदिकपुष्टिमाणमेंतेविरोध
होइज्ञाकोसर्वत्यागकरो॥२॥औरश्रीआचार्यजीके
हरसनमेंश्रीवध्नकेहरसनकीमनमेंउद्धाहरखे॥३॥
हीनराक्षणमेंहरसनकीअपेक्षारखे॥४॥येसहनवभा
तिवेगुणादृश्यमेंहोइसोसर्वगोदृष्टिहोइरासेगुणस
दितभगवदीयहोयतिनहीकोसंगकरोनवसमालसे
वहरिहोइप्रभुधृपाकरेपरंतुकालमहाकुक्षिहोभगव
दीयकोसंगनाहीमिलतसोआगोंकहतहो॥श्लोक॥ इ
हानीमागतःकालःसर्वबुद्धिविनाशकः॥करेपतितदुः
संगोमिलितास्तस्यवापिस्त्रिधायावोअथ॥अथश्री
हरिगइजीकहतहो॥नोउपरदोषद्वारागंधवालीस
धृषत्वेततेइकरेणथप्रभुकेगुणादृश्योषधहं
हकहोपरंतुयहकालनोअथआयोहोसोसर्वबुद्धि
कोनासकआयोहो॥कालदोषनेस्तप्राणीहोतिनइकी
बुद्धिनासभइहोअज्ञानीकीबुद्धिनासहोइयामेंकहो
कहोनोएकतोकाकालदोषबाधकहोइहोदुःसंगविना
चाइआपुतेसुनसिद्धिआयमिलतहो॥सानीकरमेंहरज
मेंधर्योहोताकरिकेंजोधर्मकोलेसहोतहो॥सोअहाथ
तेपतिनगिरिपरतहो॥औरभगवद्धर्मपदिवेकीकहाव
लीहो॥अलहोहोसो॥जोकधुहो॥सोअंदिनाज्ञात
होतानेकालदोषऔरदुःसंगवहुनवाधकहो
॥५॥श्लोक॥ किंकार्यकिमकार्यपायतःसुरतिनेव
शिप्रभुनास्ववत्त्वजावतदुपसंहृष्टमेवही॥१॥पया
कोअर्थ॥यहकालदोषनेकधुकार्यकरिगेभगवद
संबंधीनोकधुऔरहीअलहोहोइज्ञा

सि. २१७ तविचारिये फेरि कृतार्थमें कछु मनमें पुरे साभात भ
ले कार्यमें अनेक प्रतिबंध पड़त हैं केवल प्रभुन को सु
बल प्रताप मनमें आवत है जो श्री हंस सर्वोपर सर्वकार्यके
सिद्धि कर्ता है अपने जानिके प्रसेल बलने हपा करे
इतको प्रताप देखो दिसा प्रगत है वेद पुराण श्री भाग
वत गीता में प्रसिद्धि है ऐसे श्री हंस हमारे प्रसिद्धि पति
हैं सो हमको कहा डर दो सर्व सिद्धि है या भांति कहें प्र
भुको बल प्रताप इत्यमें आवत है सो फेरि उपसंह
र नास होइ जात है विश्वास छूटि जात है लौकिक
सुख दुखतिन को पावत है ॥ १५ ॥ लोक ॥ साधनानि
न सिध्यन्ति कालदोषात्तरोत्मनः प्रतिबंधश्च काला
दिकृतः प्रत्यहमेधति ॥ १६ ॥ अथ तहां कोई क
हे जो कछु साधन करों ना साधन ते मनमें दुर्वासना न
उठे भगवद् अर्थ होइ या भांति कोई कहै तहां श्री हरि
इनी कहत है जो साधन करि सिद्धि नाही होत है तो
फल तो महा दुर्लभ है ताते यह काल दोष ते साधन ना
ही सिद्ध होत है ताते यह कालादि ते प्रतिबंध होत हैं ह
त जो उत्तम करिये तो प्रत्यह दूरी होइ जात है सो आगे
कहत है ॥ १६ ॥ लोक ॥ उद्देग प्रतिबंधो वा भोगश्चापि प्र
जायते प्रतिबंधसेवनं ते प्रत्यशा फलस्यति १७ या
अथ श्री आचार्य जी महा प्रभु सेवा फल में निस्पृह की
ये हैं तामें तीन ३ प्रतिबंध कहें हैं उद्देग प्रतिबंधो वा
भोगाश्च स्यातु बाधकं या भांति कहें प्रथम उद्देग मन
को होइ तब सेवामें मन न लगे प्रतिबंध होइ पाछे इ
सरी रादिक के भोग को मन होइ भोग ते विषया वेस
होइ जाय तब प्रभु अग्रसक्त होइ सो या भांति प्रति
बंध ते तब भगवद् सेवामें न होइ तब पुष्टि मार गीय
फल की आशा काहे को करीये या मार्ग में तो भगव

दसेवाहीफलहैसोइनभईतोंआगेकहाफलहोइगो॥११॥
 कतहैथापिश्रीमहाचार्यचरणश्रयणसमनिवर्तते
 निरासेशान्तमनोफलतलधित॥१२॥याकेअर्थतातेयामा
 गमेंसेवाफलहैसोयहकहूदोषमहानिश्चयतऊश्रीह
 रिराज्ञीकहतहैसोएसोसेसेवाविनाफलकीनिरासे
 होतऊएकमनमेंभरोसोहैमेरेश्रीवद्वभाचार्यजीके
 मेरेचरणकमलकोआश्रयमनमेंकीयोपूजाभावसेवा
 करिरहितहैतऊश्रीमहाप्रभुजीकेचरणकेआश्रयते
 यहपुष्टिमार्गकोफलसर्वोपरतलधितहैनिश्चयसिद्धहो
 इगोयाविश्वासहै॥१३॥इतिश्रीहरिराज्ञीकृतस
 प्रविस्मृताकीटीकाश्रीगोविंदजीकृतसंपूर्ण॥१४॥
 वऊपरकहेसर्वसाधनरहिततथासेवाकरिरहितहै
 तऊश्रीमहाप्रभुजीकेचरणआश्रयतेयेफलहोइगो
 सोफलकोनभातिहोइसोआगेकहतहैसोआश्र
 यतेंहैन्यतासुर्यसोफलइपहोसोहैन्यताआगेवर्ण
 नकरतहोइतोक॥कहानंदनात्मजस्वयंरुपावृष्टिक
 रियातिप्रतिहयैवास्मदोदिसनआतंमहेद्रिय
 १याकेअर्थअथश्रीहरिराज्ञीविज्ञप्तमस्तहैतेनदा
 त्मजश्रीहृदयहकहिनंदराज्ञीकेपुत्रकहोवसुदेव
 नंदनाहीयहपुष्टिमार्गमेंनंदबुमारसेवहैश्रीशुक्
 देवजीनंदमहोत्सवकेअध्यायमेंकहेहैनंदस्वात्मज
 मुत्पन्नेजातोलाहोमहामनानंदरायकीआत्मानि
 प्रगटोएसेश्रीहृदयभावात्मकएसेपुष्टिपूर्णपुस्त्यो
 तमसोकोअपनेस्वकीयनिजभक्तनानिआपनीक
 पाहृष्टिकवकरणोतुमारीप्रतिष्ठाकरनकरनअस्मदा
 दिवकेमनइंडीसहितदेहयवसिधिलइगोश्री
 गुणेशजीविज्ञप्तमेंकहेहोपा
 राजैवकविकरातदुक्तकथमयाशुबुद्ध

त्वत्पा

तविचारिये फेरि कृत एमै कछु मन मै पुरै साभांति भ
ले कार्य मै अनेक प्रतिबंध पडत है केवल प्रभु न को सु
वल प्रताप मन मै आवत है जो श्री कृष्ण सर्वोपरि सर्व कार्य के
सिद्धि कर्ता है अपने जानिके प्रसेल वल ते हपा करे
इन को प्रताप देखो दिसा प्रगत है वेद पुराण श्री भाग
वत गीता में प्रसिद्धि है एसे श्री कृष्ण हमारे प्रसिद्धि पति
हैं सो हम को कहा डर है सर्व सिद्धि है या भांति कहें प्र
भु को वल प्रताप इत्यमै आवत है सो फेरि उपसंह
र ना सहो ज्ञात है विश्वास छुटि जात है लौकिक
सुख दुखतिन को पावत है ॥ १५ ॥ श्लोक ॥ साधनानि
न सिध्यंति कालदोषात्त एतन्मनः प्रतिबंधश्च काला
दिभूतः प्रत्यहमेधति ॥ १६ ॥ या ॥ च ॥ तहां कोई क
हे जो कछु साधन करे जा साधन ते मन में दुर्वासना न
उठे भगवद् अर्थ होइ या भांति कोई कहै तहां श्री हरि
इजी कहत है जो साधन करि सिद्धि ना ही होत है तो
फल तो मदा दुर्लभ है ताते यह काल दोष ते साधन ना
ही सिद्ध होत है ताते यह कालादि ते प्रतिबंध होत है व
त जो उतम करिये तो प्रत्यह दूरी होइ जात है सो आगे
कहत है ॥ १६ ॥ श्लोक ॥ उद्देग प्रतिबंधो वा भोगश्चापि प्र
जायते प्रतिबंधसेवनं ते प्रत्यशा फलस्यति ॥ १७ ॥ या ॥
अ ॥ श्री आचार्य जी महा प्रभु सेवा फल में निस्पृहा की
ऐहें तामें तीन प्रतिबंध कहें हैं उद्देग प्रतिबंधो वा
भोगश्च स्यात्तु बाधकं या भांति कहें है प्रथम उद्देग मन
को होइ तब सेवा में मन न लगे प्रतिबंध होइ पाछे इ
सरी रादि कं भोग को मन होइ भोग ते विषयावेश
होइ जाय तब प्रभु अग्रसन्न होइ सो या भांति प्रति
बंध ते नव भगवद् सेवामें न होइ तब पुष्टि मारणीय
फल की आसा काहे को करीये या भांति ते भगव

हसेवाहीफलहै सोइनभईतोआगेकहाफलहोइगो॥१७॥ सो
कृतहैथापि श्रीमहाचार्यचरणश्रयणनमोनिवर्ततो
निरासेशान्तमनोफललब्धितो॥१८॥ याकेअर्थनातेयामा
गमेंसेवाफलहै सोयहकहतेधर्महानिअथतऊश्रीह
रिगइजीकहतहै सोएसेसेसेवाविनाफलकीनिरासे
हैनऊएकमनमेंभरोसोहैमेरेश्रीवद्वभाचार्यजीके
मेरेचरणकमलकोआश्रयमनमेंकीयोसुभागवदसेवा
करिरहितहोतऊश्रीमहाप्रभुजीकेचरणकेअश्रयते
यहपुष्टिमार्गकोफलसबोपरलब्धहैनिश्चयसिद्धहो
इगोयाविश्वामयहो॥१९॥ इतिश्रीहरिराइजीकृतस
प्रविसनाकीटीकेअंगिमेश्वरजीकृतसंपूर्ण॥२०॥ अ
वउपरकहे सर्वसाधनरहिततथासेवाकरिरहितहो
तऊश्रीमहाप्रभुजीकेचरणआश्रयतेयेफलहोइगो
सोफलकोनभातिहोइसोआगेकहतहैजेआश्र
यतेहैन्यतासुर्योसोफलरूपहोसोहैन्यताआगेवर्ण
नकरतहोइगो॥ कहेनंदोत्तमजःस्वेयुहपावृष्टिक
रिष्यति॥ प्रतिक्षयेवास्मदोदिसन॥ आतंमहेद्रिय
१याकेअर्थअथश्रीहरिराइजीविज्ञात्मकहोतेनंदो
त्तमजश्रीकृष्णयहकहिनंदराइजीकेपुत्रकहेचमुदेव
नंदनाहीपहपुष्टिमार्गमेंनंदबुमारसेवहैश्रीशुक्
देवजीनंदमहोत्सवकेअध्यायमेंकहेहो॥ नंदस्वात्मज
मुत्पन्नेजातोल्हाहोमहामनानंदरायकीआत्मानि
प्रागदोएसेश्रीकृष्णभावात्मकरामेपुष्टिपूर्णपुरुषो
तमसोकोअपनेस्वकीयनिजभक्तजानिआपनीक
पादष्टिकवकरणोतुमारीप्रतिष्ठाकरनकरनअसद
दिवलेमनइंद्रीसहितदेहयवसिधिलहोइगोश्री
गुणोइजीविज्ञातमेंकहेहो॥ पाइसीताइसीनाथत्वत्या
हाजैवकिंकरा॥ तदुक्तं कथमप्याशुवृहदगोचरं ममः

सि.प. तातेमैनेनेत्रकेगोकरमोकोवदनचंद्रक वहरसनदेहुगे
१ श्लोक करुणावारिधिः स्वीयनिधिसर्वाधिकः प्रभुः ३
पेहतेकुतः स्वीयानिधिं नानुरमन २ यात्रे श्री
हृत्तनुम्वेसेहो करुणावेनिधिहो औरसर्वप्राणीमा
त्रकेस्मारकः सगरेजातकेप्रभुहो नाइसेस्वीयजोतुमा
भक्तहैं तिनकेतोसर्वस्वनिधिहो एसेप्रभुस्वीयअप
नेभक्तकीउपेक्षाकोकरतहो यहचिंतानित्यकरिकेंम
ननेआतुरताभयोइं श्रीगुसांईजीविजतमेंकहेहैं हा
नाथजीनिधिसगरीजीवदललोचनः यथोचितं वि
धेहीति प्रार्थनंतवकस्यमहेनाथकमललोचनमे
तुमसोप्रार्थनाकहाकरूं तुमारीरूपातेजीवतहो सो
अहविप्रयोगउचितहैं तातेप्रार्थनामेंकहाकरूं तुम
सर्वज्ञहो सबजानतहो ॥ २ श्लोक ॥ निजानंदनिमग्नस्य
भवेद्यद्यपि विस्मृति भक्तार्थं भवतीर्णस्य हृत्पात्रो रू
चिंतानमा ॥ ३ यात्रे श्री ॥ हे श्री हृत्तनुम्वेसेहो अप
पनेआनंदमेंरात्रिदिनमग्नरहतहो यहकहिकें यहज
नारे सो एसेमग्नरहतहो जो यहभावसंसारहिकको
विस्मृतिहैं तद्यपि तऊअपनेभक्तत्वकेअर्थतुमअ
लीगेंहो प्रागव्यताते औरतुमपरमहृत्पात्रहो
तुमारेभक्तजोसंसारमेंहैं तिनकोअसुचिनाई
करोगे रुचिहीरूपाकरिअंगीकारहीकरोगे सो श्री
गुसांईजीविजतमेंकहेहैं त्वहंगीहृतयोजीवैस्वधि
कारायतः प्रभो अतस्त्रनविचाणहीरूपाकरूपाति
धे ॥ हेनाथतुमारेअंगीहृतजोजीवहैं सोतुमारेअ
धिकारयोग्यहैं सोइहांलोकिवरस्वंधनेतुमभूलेहैं
अधिकारयोग्यनाहीहैं तऊतुमअनवेदोषनकोवि
चारमतिकरो रूपाईकरो काहेनेतुमहृत्पात्रनिधिहैं
हमपररूपाहीकरो ॥ ३ श्लोक ॥ कं प्रार्थयेयुस्तेदीना

[illegible]

सि.प. तातेमैंनेत्रकेगोचरमोकोवदनचंद्रकवहरामदेहुगे
१२८ १ श्लोक करुणावारिधिःस्वीयनिधिसर्वाधिकःप्रभुः
पलतेकुतःस्वीयानितिचिंतानुरमनः॥२॥ यथाश्री
हस्तनुम्वेसेहोकरुणावेनिधिहोयोरसर्वप्राणीमा
त्रकेस्मारकःसगरेजातकेप्रभुहोनाइमेस्वीयजोतुमा
भक्तहैंतिनकेनोसर्वस्वनिधिहोएसंप्रभुस्वीयअप
नेभक्तकीउपेक्षाकोकरतहोयहचिंतानित्यकारिकेंम
ननेआतुरताभयोइंश्रीगुसांईजीविजितमेंकहेहैंहा
नाथजीविनाधिसरोजीवदललोचनःयथोचितवि
धेहीतिप्रार्थनंतवकस्यमहेनाथकमललोचनमे
तुमसोंप्रार्थनाकहाकरुं तुमारीहृपातेजीवतहोंसो
अहविप्रयोगउचितहैंतातेप्रार्थनामेंकहाकरुं तुम
सर्वज्ञहोंसबजानतहों॥२॥ श्लोक निजानंदनिसग्रस्य
भवेद्यद्यपिविस्मृतिभक्तार्थभवतीर्णस्यहृपालोर
चितानमा॥३॥ पाकेअर्थीहेश्रीहस्तनुम्वेसेहोंअ
पनेआनंदमेंरात्रिदिनसंग्रहतहोंपहकहिकेयहज
तारेसोएसेमंग्रहतहोंजोयहभावसंसारदिकको
विस्मृतिहैंतदुपितऊअपनेभक्तनकेअर्थतुमअ
वतारलीगेहोंप्राग्व्यतातेयोरतुमपरमहृपालहों
तातेतुमारेभक्तजोसंसारमेंहैंतिनकोअरुचिनाई
करोगेरुचिहीहृपाकरिश्रंगीकारहीकरोगेसोश्री
गुसांईजीविजितमेंकहेहैंत्वहंगीहृतयोजिवेसाधि
कारायतःप्रभोअतस्त्रनविचागहोहृपाकरुहृपानि
धे॥१॥ हेनाथतुमारेअंगीहृतजोनीवहैंसोतुमारेअ
धिकारयोग्यहैंसोइहांलोकिवरसंबंधतेतुमभूलेहों
अधिकारयोग्यनाहीहैंतउतुमज्ञकेहोयनकोवि
चारमतिकरोहृपाईकरोकाहेतेतुमहृपानिधिहों
हमपरहृपाहीकरो॥३॥ श्लोक कंप्रार्थयेयुस्तेदीना

यनिजनायकां नदेकराणानित्यं विमुक्ता सर्व
वने। ५५५ को अर्थ है नाथ हम तुमने कहा प्रार्थना
हम दीन है तुमको हम अपने नाथक प्रतिजानत
तुम विना और कोई हम नाही जानत है। और हमके
है सर्वसाधन करि मुक्त रहित है। तति नित्य तुमारे सारा
यही भरो सो है। साधन है तो कछु प्रार्थना करे ना।
तुमारे आश्रय करि तुमारे शरण है। सो श्री आचार्य
जी विवेक धैर्य आश्रय ग्रंथ में कहै है। असको वायु सको
वासव था सारां हरि। इत्यदि वचन को विचारि और
उपाय हमको नाही सक्त है। ताते तुमारे सारणि हो। ५५६
मन्नाथ नाथ ये नने भवामि विरहा कुल। हर मनस्य
शनं वापि देहि वेणु श्रुति। ५५७ को अर्थ है श्री
हम तुमारे नाथ हो। और में के सो है। महान न तुम्हें
सर्वसाधन करि रहित है। भव जो यह सारा दिक में महा
विरहा कुल हो। काहे न। यह सारा दिक कार्य में तो तया
हो। और तुमारे विवादि भाव धर्म कैं रहित है। और
तुमारे सेवादि भाव धर्म कैं रहित है। ताको ये
हम सारा ग्री पीडित व्याकुल हो। सो श्री गुसाई जी वि
राम में कहै है। त्वदर्शन विहीन स्य त्वदीय स्य तुजी
वित व्यर्थ मेव तथा नाथ दुर्भागान वं क्य तुमा
दर्शन विना तुमारे दीय जीवें। सो व्यर्थ कहैं है
नाथ वे दुर्भाग। उनके भाग पखे है। ताते श्री हरि राज
कहत है जो हमको हर मन दे हो। और परम है श्री अ
को कर्गवौ। तामें यह जनारो जो सेवा कर्गवौ और
नुना करि शक्य करि हमारे हर मन में अधरामत क
पावन करों। तब हमको सुखदा प्रकाहेन। विरहा
संसार गिरि व्याकुल हो। ताते केवल दर्शन ही
मखद रिहाइ। दर्शन पर सबे गुना देके सुरते

प्र.प. यमेंयाभांतिमुखदेहं॥५॥ श्लोक॥ निजाचार्यश्रतानस्मान्
१६ यदिहसः प्रहासति॥ गमिष्यतिद्रेनाथप्रतिज्ञैवत
शनवर्ध्याकोत्र॥॥ अथश्रीहरिराज्ञीकहतहंजो
अपनेश्रीवक्षभाचार्यजीकेआश्रयपुष्टिमार्गीय
तदीयहंतिनकोहेनाथतुमछेउतहीनाहीनिश्चय
प्रसन्नहीरहतहो॥ तिनकीप्रसंसाहीकरिनिश्चेअप
नेजानतहो॥ जद्यपिवहजीवभगवदनामहंनाहीजे
तकछुधमनाहीहंनउत्तुमअपनी॥॥ तैहोकेलीऐवा
कोंअंगीकारहीकरतहो॥ तातैंहेनाथहमहंअपनेश्री
वक्षभाचार्यजीकेआश्रितहं॥ ऐसेवेऊपरप्रसन्नहो
उगे॥ नाथहमकोखोटेजानिदोषदेखिकेंछोडोगेतौतुमा
रीप्रतिज्ञाभंगहोइगी॥ निश्चय॥ तातैंहपावरो॥ काहेतैं
तुमश्रीआचार्यजीतेप्रतिज्ञाकरीहें॥ जिनकोत्रससंव
धकरावोगेतिनकेसकलदोषइरिहोइगे॥ तिनकोमें
अंगीकारकरतहो॥ सोसिद्धांतरहस्यमेंकहेहें॥ ब्रह्मसंव
धकरणान्सर्वेषांदेहजीवयो॥ सर्वदोषनिवृत्तिहिंदो
यापंचविधास्मृता॥१॥ इत्यादिवचनतेतुमहमारेदोष
देखोगेतौ॥ तुमारीप्रतिज्ञाजायगी॥ तातैंआपनीप्रति
ज्ञाकेलीऐश्रीआचार्यजीमहाप्रभुजीकेआश्रितजो
निहमपरहपावरो॥६॥ श्लोक॥ वयंतुसर्वथादुष्टास्व
धर्मविमुखाश्रतिः॥ त्वमस्मदीयात्तमाधर्मान्ग्रहा
णागुणपूरितः॥७॥ याकोत्र॥॥ अथश्रीहरिराज्ञीक
हतहं॥ हमकेसेहं॥ वयजोवालापनतेदुष्टहीआच
णकीरिहें॥ अपनेपुष्टिमार्गीयधर्मतेरहितहें॥ कव
हंपुष्टिमार्गकीरीतितेभावसहितसेवानाहीकरीहें
तातैंअपनेस्वधर्मतेहमविमुखहें॥ औरहेनाथतुमके
सेहो॥ अस्मदीयअपनेजनदासकेधर्मकीचाहना
हीकरोगे॥ काहेतैं तुमसर्वगुणकरिकेंप्राणहो॥ तातेण

एकीचाहना न करोगे। ह्मपाकरिओ गुन ह्मसारिखे पर
 निश्चय ह्मपा प्रमेय चलने करोगे। सो विज्ञप्तिमें श्रीगु
 साई जी कहें हो। प्लोक॥ वलिष्टा अपि मद्दोषा त्वत्कृपा
 येतु दुर्वेखा। तस्य ईश्वर धर्मत्वात् दोषानां जीवधर्म
 तः। अथपि ह्मारे दोष बहुत वलिष्ट हैं। तऊ तुमारी
 ह्मपाके आगे दुर्वेखे काहेतें। तुमारी ह्मपा हैं सोई श्व
 रता धर्म लीगे दोष देखो जीवधर्म ते हो। सोई श्वर धर्म के
 आगे जीवतु छे। तातें ह्मपा करो। ॥ प्लोक॥ ह्मपा लोप
 लनीयानां गुण दोष विचारणा न कार्यो स्वीयकरण
 विहितं वरण्यदि। अथा को अर्थ। हेनाथ तुम के से हो
 परम ह्मपा लोप। लोप न करो। ह्मारे गुण दोष को विचा
 र तुम मत करो। काहेतें ह्म तुमारी ही प्रीति चाचाये जी
 दारा ह्मारे धर्म तुम ते भयो। तातें ह्म ह्म करण अपने
 कार्य के लीगे कीगे जो सेवा दल स्त्री को धर्म हो। सो का
 र्य सो सो न वनि आयो उलटो अपराध अने क दोष वन्मो
 तुम हित के लीये ह्मारे वरण कीयो। सो विहित कार्य सो
 मोवन ते हो। सो तुम मेरी ओर मति देखो। आपुन वरन
 जानि ह्मपा करो। सो विश्रममें श्रीगुसाई जी कहें हो। त्व
 दंगी ह्म तयो जीवे स्वाधिकारायतः प्रभो। अतस्तेन वि
 चार हो ह्मपा कुरु ह्मपा निधो। तुमारे अंगी ह्म तजे जी
 व है। सो तुमारे अधिकार योग्य है। अथ वा दोष करि अ
 योग्य है। तऊ तुम अपने दोष मति विचार। काहेतें तुम
 ह्मपा के निधि समुद्र हो। सो ह्म पाई करो। ॥ प्लोक॥ अ
 भ्रातो पिहरे दोष गणनायां मम प्रभो। अममेष्यति
 गोपीश ततो विस्मय सर्वथा। अथा को अर्थ। हेनाथ तु
 म के से हो। तुम को ईवान में दारा नाही। तुम को कब ह्
 करो

प० नना करोगे तो श्रम ही तुमको होइगो अपार दोष है मेरे ना
२० ते हे गोपी जस्य हस्य बोधन करिय हजनागे सो तुम गोपी के
ईश हो बिना साधन गोपी जन पद्म पावरी ते पै हमारे ऊ
पर ह्म पावरो सर्वथा हमारे दोष को विमरि जाऊ श्रीगुण
ईजी विजस में कहै है अपराधे पिगणाना ने बकार्य वृ
जाधिक सहज स्वयं भावेन स्वस्थ छुटन याचन १६
वृज के अधिपति राजानि साधन के फलान्म कहमा
१७ अपराध की गणना करने तुम न चितना ही है का
है ते तुमारी सहज में ईश्वरता आगे दोष हमारे छुट्टे
सो तुम कहा दोष विचारोगे ना ते छपावरो १८ श्लो
हीनेषु गुणालीनेषु तावकीनेषु मत्प्रभो पराधीनेषु
वरुण करणिय त्रयवथा १९ या १० अ हे नाथ मे
अत्पंत हीन हो दुखी हो कहै ते पहमाया के गुण स
सारादिक काये में लीन हो ॥ ए सो दोष करि दीन हो
तऊ में तुमारी हो तुम मेरे प्रभु हो मे तो अपराधिनी
हो माया के ए सो ह्म ताते ऊपर सर्वथा ही करुणा क
रिये सो विजस में श्रीगुसाई जी कहै है बालक मो
धीनताय न करे पिमपि सुंदर न दृष्यनु चिंतयस्म
तवादीयो स्फुरीहत ११ हे सुंदर श्रीहृल्ल मे तो का
लकर्म इत्यादि माया के आधीन हो नऊ तुमारी हो
अपनी त्वदीय जानि छपावरो १० श्लो नि साध
नामनो दीनागत धन पुटुः खिता निजाचार्य प्रि
ता शोकः शोक लोभ मोह भयाकुला ११ या १० अ
श्रीहरि गइ जी कहत है जो मे ए सो हीन हो नि सा
धन हो मेरे से कोई साधन ना ही है और भावरूपी धन
हं गयो है ना करि अति दीन हो जा को धन जाय सो ही
न होइ यह लोक में प्रसिद्धि है और बहुत दुखी
हो और आपनि श्री आचार्य जी के आश्रित हो श्री

रसोकलोभमोहभयमायाकेगुणानाकरिकेव्याकु
 लहो। कहुअपनेधर्मकीसुधिनाहीहो। औरअसेइ
 निसाधनजीवपरहपाकरनहो। सोआगेकहतहै
 ११। लोक॥ भवन्तितेहपापात्रमहोदरहयानियोप्रय
 छकरुणतेभ्योदत्तपात्रलयंभवेत्॥ १२। याको॥ अर्धऊपर
 कहेएसोहोइतौप्रभुकेहपापात्रयोग्यहोशनिःसाध
 नहोइमनतेधनकरिरहितहोइधनगरेतेदीनतादुरव
 होइअपनेश्रीवल्लभाचार्यजीकेआश्रतहो॥ श्लोक
 लोभमोहसंगकोओरकालभयतेव्याकुलभयो। तव
 प्रभुहपाकशितानेश्रीहरिराजजीकहतहै। जोमेंऊर
 सोहातुमारिहपापात्रहो। तुममहोदरहो। हयाकेनिधि
 हो॥ तोतेहयाकरो। काहेते॥ अपनीइछानेकरुणक
 रितानदीयोहो। सोदीनतारूपीपात्रतुमारेदीरेतेभ
 योहो। सोदिनदिनतयहोतहो। दिनदिनदीनतावढत
 हो। तातेवेगिहीहपाकरो॥ १३। श्लोक॥ संसारदावर
 गधानांजीमूतजलकांक्षणं। ननीलजलदानंत
 जलदानेविनोसुखं॥ १४। याको॥ अर्थ॥ अवजौवित
 दृष्टांतकहतहो। खनमेदावानलअग्नितेवनसगरे
 जीवआदिदग्धजगतहो। तिनकेसीतलकरिवेको
 एकमेघजलवरखेयहीउपायहो। औरउपाइवास्स
 यकोईनाहीहै। जद्यपिजलतेसमुद्रनदीअनेकभरी
 हैं। परंतुवनकेदावानलकोमेघहीजलदानकरिति
 वर्तवरे। तवहो। तैसेहीयहमायासंबंधीदेहसंब
 धीहो। अहंताममतारूपयहदावानलमेंजोराधहे
 जगतहो। तिनकोनीलमेघरूपश्रीगोवर्द्धननाथजी
 अपनेआनंदरूपअनंतजलकोदानकरें। तडीहपा
 धमवकोसुख। औरउ

पाइकाईना

तनो करोगे तो अस ही तुमको होइगो अपार दोष है मेरे ना
 ने हे गोपी उभय दोष न करिय हजतागे नो तुम गोपी के
 ईश हो बिना साधन गोपी जन्म परम्परा करी तेरे हमारु
 परम्परा करो सर्वथा हमारे दोष को विमरि जाऊ श्रीगुण
 ईजी विजय में कहै है अपराधे पिगणाना ने वकार्य वृ
 नाधिक सहज स्वयं भावेन स्वस्य छुड़नया च न रहे
 वृज के अधिपति राजानि साधन के फलान्म कहमा
 रहे अपराध की गणना करने तुम में चितना ही है का
 हते तुमारी सहज में ईश्वरता आगे दोष हमारे छुड़ है
 सो तुम कहा से ये विचारोगे ताने छपा करो ॥ १॥ श्लो
 कीने युगुणालीने युतावकीने युमत्प्रभो पराधीने यु
 वरुण करणियि न्यसर्वथा ॥ १० ॥ या ॥ अ ॥ हे नाथ मे
 अ ॥ मेने संत होइ खी हो कहै ते यह माया के गुण स
 सारादिक कार्य में लीन हो ॥ ए सो दोष करि दीन हो
 तऊ में तुमारी हो तुम मेरे प्रभु हो मे तो अपराधिनी
 हो माया के ए सो ह ताते ऊपर सर्वथा ही करुणा क
 रिये सो विजय में श्रीगुण ईजी कहै है ॥ बारहवमा
 धीन तो यत्न करो पिमपि सुंदर तदप्यनु चिंतयस्व
 त्वादीयो स्फुरी हत ॥ १॥ हे सुंदर श्रीहृदय मे तो का
 लकर्म इत्यादि माया के आधीन हो तऊ तुमारी हो
 अपनो त्वदीय जानि छपा करो ॥ १० ॥ श्लो ॥ निसाध
 नो मनो दीनागत धनाषु दुःखिता निजाचार्यो प्रि
 ताशोकः शोक खोभमाह भयाकुला ॥ ११ ॥ या ॥ अ
 श्रीहरि राईजी कहत है जो मे ए सो दीन हो निसा
 धन हो मेरे में कोई साधन ना ही है और भाव रूपी धन
 हंगणो है ना करि अति दीन हो जा को धन जाय सो ही
 न होइ यह लोक में प्रसिद्धि है और बहुत दुखी
 हो और आपने श्री आचार्य जी के आश्रित हो श्री

रसोकलोभमोहभयमायावेषु एतान्करि कें व्याकु
लहैं। कछु अपने धर्म की सुधि नाही हैं। और ऐसे ई
निसाधन जीव पर दुपा करत हैं। सो आगे कहत है
११ लोक॥ भवन्ति ते दुपा पात्र मही दार दया निधो प्रय
ष्ठ करुणा ते भ्यो हत पात्रे लयं भवेत्॥ १२ या को अर्थ उपर
कहे एसो होइ तो प्रभु के दुपा पात्र हो। पदो शनि साध
न होइ मन ते धन करि रहित होइ धन गये ते ही न ता दुख
होइ अपने श्रीवक्षत्र भाचार्य जी के आश्रित होइ सो क
लोभमोह संग को और काल भय ते व्याकुल भयो। तब
प्रभु दुपा कशिता ते श्रीहरि राइ जी कहत हैं जो मे ऊर
सो हातु मारे दुपा पात्र हो। तुम मही दार हो। दया के निधि
हो। ता ते दया करो। काहे ते। अपने ईच्छा ते करुणा क
रि दान दीयो हो। सो दीन तो रूपी पात्र तुमारे ही ते ते भ
यो हो। सो दिन दिन सय होत हैं दिन दिन दीनता बढ़त
हैं। ता ते वेगि ही दुपा करो॥ १३ लोक॥ संसार दावद
धाना जी मृत जल कांक्षण। न नील जल दानं त
जल दानं विना सुख॥ १४ या को अर्थ॥ अवजौ विक
दृष्टां त कहत हैं। खन मे दावानल अग्निते बन सगरे
जीव आदि दग्ध जरत होइ। तिन के सीतल करिवे को
एक मेघ जल वरखे यही उपाय है। और उपाइ वासम
य कोई नाही है। जद्यपि जल ते स मुद नदी अनेक भरी
हैं परंतु वन के दावानल को मेघ ही जल दान करिति
बर्तव्य है। तब होइ श्रुति से ही यह माया संबंधी हेतु संव
धी है। अहे ना ममता रूप यह दावानल में जो दग्ध हे
जरत हो। तिन को नील मेघ रूप श्रीगोवर्द्धन नाथ जी
अपने आनंद रूप अनंत जल को दान करे। तडी दुपा
करो। तब ही यह पुष्टि मारगीय वै श्रव को सुख। ओ सु
पाइ कोई नाही है। १५ अव और कहत हैं लोक। ये

प. मायागीहतासर्वोत्तमैर्वापैग्रहस्थिता। तएवभावना
१ मायभवतीकरवेकिमु॥ १४ यागेअथोअवश्रीहरिगड
जीआपसेवककीऐहैं। तिनकीप्रार्थनाप्रभुनसोंकरिअं
जीकारकरावतहैं। हेनाथमेंअपनेअंगीकृतसेवकबहु
तहीकीऐहैं। सोग्रहस्तसेवकबहुतहीकीऐहैं। काहेते
ग्रहस्ताश्रममेंसेवावनिनाहीआवतभली। याश्रममें
मेंग्रहजानीजोभलो। सोसोंसेवानाहीवनततोग्रहस्त
कोसेवककरिसेवारीतिवताइगे। येमेरेसेवकभली
तुमारीसेवाकरेगे। जोहंसोकोखुखहोइगों। यहअ
पनीसहायकेलियेग्रहस्तअपनेअंगीकृतकीऐहैं।
सोवेग्रहस्थभगवानकीसेवातेनासभगे। एसेउलटी
हंतकारतहैं। सोमेकहाकरे। तथातुममोकोअंगीकृत
करिअपनीसेवाकैअर्थग्रहस्थाश्रममेंहमकोस्थिति
कीऐहैं। सोहमतोसेवातुमारीछोडिलो। किंकर्णउल
टचलनेहैं। तावातुकोतुमकहाकरों॥ १४ लोक॥ वह
मुखाः प्रवृत्तिखसंवंधवहमुखः सहायताभमादेव
नहातुमदहमुत्सहै॥ १५ यागेअथोएकजोजीवसुभा
वनेदुष्टवहमुखहै। दूसरेवहमुखदुष्टकेसंगतियगरेजी
ववहमुखभगे। सोमभमकरिअपनीसहायग्रहस्तवे
स्वकीजान्यो। जोमेंअंगीकृतकीऐहैं। सोगेमोकोस
हाइहोइगे। एसेभमसोसेवककीऐहैं। सोकेउलटेच
लतहैं। भावदसेवानाहीकरततऊनकेछोडिवे
कोउत्साहमेंकेसंगएलेकेकेसंछोडोजाया॥ १५ लोक
कसहायभममुत्पाद्यवचयंतियथाजनं। मार्गस्थितं
तथानाथवंचितोहंग्रहस्थितो॥ १६ यागेअथोमेसेव
कअपनीसहायअर्थकीयो। भमकरिके। जोमेंउलटो
चयंति। जोमेंठगोठगोहैं। हेनाथयदनुमारीमार्गपुष्टि
मेंस्थितिहोइके। एसोमेंस्थितिहोइके। एसोमेंतिनके

एग्रहस्तवैश्वनेमोकोष्ठगो॥ एकतेमैत्रपनेकीफिकरक
 रतहो॥ तोऊसगरेइन्हूकेऊडारकीफिकरमोहूकोकस्नी
 पडी॥ याभांतिग्रहस्थजनेनेतथाग्रहस्तश्रमनेठगाग
 योहो॥ १६ श्लोक॥ यथाधिकपपतितंमंडकादुस्वरै
 जने॥ व्ययंतिनयामुद्योदुर्वचोपिग्रहस्थिता॥ १७
 याको॥ अर्थ॥ लौकिकदृष्टोतनेकहनहो॥ श्रीहरिगड
 जीजोयाभांतिमोकोदुखभयोहो॥ जिसेअंधकूपमेंमंडक
 पछोहोया॥ सोदुःखतेबोलै॥ सोसबकोभयउपजावै
 तेमेंग्रहस्थमेंअनेकअनेकलोगतिनकेदुर्वचनसु
 निक्वै॥ वाकोमहाभयहोतहो॥ ग्रहस्थाश्रममेंस्थितिरेमै
 दहसबंधीतिनकेअनेकभांतिकेवचनताकोसुनि
 केमेंरेमैस्थानमेंवयाहोतहो॥ ग्रहकहियहनतारे
 जोमेंएग्रहस्थवैश्वनेमेरीवडाईकरतहो॥ सोदुःखमे
 रेमनमेंहोतहो॥ मोघकेरेहसबंधीअनेकेभांतिनिंदा
 करतहो॥ सोदुःखमेरेमनमेंहोतहो॥ १७ श्लोक॥ किय
 त्पर्यंतमेवहिमदुपेक्षाकरिष्यति॥ त्यक्तोवादेयसाहि
 त्यादिमुखोदं दयालुना॥ १८ याको॥ अर्थ॥ तातेदेनाथर
 सोदुखीमें॥ सोमेरीउपेक्षाकहोपर्यंतकरोगेतथासो
 कोदेयसहितजानिकेत्यागकरोगे॥ परंतुमेंग्रहमन
 मेंजानतहो॥ तोनुमदयालुहो॥ तातेत्यागतोक्वहुन
 करोगे॥ श्रीगुसाईजीविजसिमेंकहेहो॥ चितेनदुष्टोव
 चसापिदुष्टः कथेनदुष्टक्रियाचदुष्टः ज्ञानेनदुष्टोव
 चैसापिभजनेनदुष्टोसमापराध॥ इतिधाविचार्यचि
 तहूदुष्टहो॥ तुमारेमेनाहीलागत॥ जानीहंसिथ्याभा
 सनतेदुष्टहो॥ कायाहंतुमारीसवानाहीकरततातेदु
 ष्टहो॥ क्रियाहंसिथ्यालौकिककरियनहो॥ शांतहूदुष्ट

रोदोयअपराधक

प. १८ श्लोक ॥ तनुः कुत्र गमिष्यामि न मे स्ति शरणं समः नाव
२२ मारोप्य दीनं सं मध्ये धास्न मज्जयेत् ॥ १८ ॥ पा. ॥ अथ श्री
हरिराज्ञीक हत हें हेनाथ कदाचित्तुमहेश्वर हें कर्तुं अ
कर्तुं अन्यथा कर्तुं सर्व सामर्थ्य हें सोय हजं नो जो मेरे सरन
लायक यह नाही हें यह विचारि कै त्याग करे तो हम क
हा जाय हमारे और कहूं तुम विना ठिकानो नाही हें तु
मारी सरण विनारं च कदाहू को नाही जानत त्वमेरी
कहां दिसा होइगी ॥ जेसे नाव में वेढाय और मध्य धार में
नाव में छेडि देय तो उह कहा करे तहां खेवट ही सहाय
होय तो पारतागे और उपाइ नाही तेसे इह मनुमारे पुष्टि
मार्ग स्पी नाव में वेढे हें अवतुमारे सन में आविते सी करे
१८ श्लोक ॥ निजाचार्य कुले जन्म विमर्श विहितं समः
विहिते च नमपि सदा द्रोष्यपि नेष्ट प कुरा ॥ १९ ॥ पा. ॥ अथ
नले तुम मेरे त्याग करेगे तो तुम सो हमारी कहा कहो च
लत हें परंतु यह मेक हत हें जो निज हमारी श्री वृद्ध
भाचार्य जी के कुल में हमारे जन्म भयो सो कहा अर्थ हें
तुम ने हमारे जन्म श्री आचार्य जी के वंश में दीयो हें सो
कहा प्रथम नाही जानत हते अवछोडत हें तातें यह
तामो को बडी हें जो तुम कहो जो तुम कहा करेगे सो
जानी नाही जान सोण सो में तो सदा द्रोष करि कै पीडन
भयो हें तातें छपाही करे यह निश्चय निर्धार हें तुमारी छ
पाही ते हमारे सर्व कार्य सिद्ध होइगे ॥ २० ॥ श्लोक ॥ असंगः स
र्वथा दृश्ये सत्संग सहितो प्यहं यथारोपे परित्यक्तः कादि
शिको मगाहते ॥ २१ ॥ पा. ॥ अथ ॥ हेनाथ असत्संग मो के
ह्यो दिसा ते धरे हें यह बडो दुख हें मो को रं च कहूं कुसंग
ते बुद्धि विगडें तो सर्व और ते मो को दुःसंग वेष्टत हें तातें
सुंदु सर बुद्धि नास भई हें और सत्संग ते सर्व धर्म को तोय
होइ सोय सत्संग मो ते बहुत दूर हें तातें मेरी कली ह डु

संगके मध्यमे वेद्यो हूँ। सो मेरी कहा दिसा है जेसे अनप्य
नसे अकेलो छोड़ि दे शत हास गादि पशुपंती को ईनाही
तो उन को न दिसा को जाया तथा एकले मग को महा भीर
वन में छोड़ि सो बाबुल होय। अनेक सिंघ की दसो दिसा
गरज सुनि उह को न दिसा को जाइ ते से ई मो को भगव
दीय सत्संग ते छोड़ि देहु। संग दसो दिसा है। सो मे को न
दिसा को जाय सो उपाइ ही मज नाही ॥ २१ ॥ अव औरहुं
कहत है लौकिक दृष्टान्त ॥ श्लोक ॥ जान फलाः स्वर्गा
स्वीये जननी च तप जंति हि। यथा तथा कराले स्मिन्
काले हं भगवतु नै ॥ २२ ॥ या को अर्थ मेरी कहा अवस्था है
जेसे रवग जो फनी है ताके ववा को ज वपं ख होइ तव वदपु
त्र अपनी जननी जो माता को तजि के अने ववन में उडि जा
त है ते से ई हमो पास भगवदीय कथा वार्ता करि ते सो वदका
ल महा कराल रूप प्रतिबंध ब सोइ पंख भरो ता करि भगव
दीय जन मो को छोड़ि गये सो मे कहा करुं लोका ॥ चिंता
या राव रिपति तस्या त्रैव च मग्रय ॥ एत जन वडवा गि
शरण ध्वस्त भाचार्यो ॥ २३ ॥ या को अर्थ भगवदीय संग
विना मेरे हृदय में एसी चिंता है जा को पारावार नाही
चिंता रूप समुद्र में मग्र हो ॥ ता को दृष्टान्त कहत है ते
से को ई महा भीर पानी के समुद्र में मग्र भयो परयो
होय। ता को एक वडवा गि ही सहाय भूत है और को
ईनाही ॥ एक घरी लण में सगरो पानी सो कलेय ते से ही
यह संसार रूप भगव सागर में पयो हो। यामें एक श्री व
स्तु भाचार्य जी के सगा हो रहे उपाइ है। महा प्रभु अ
लौकिक अग्नि रूप है सो एक लण में सगरी चिंता
संसार दुख सब सो कलेयो गे। यह उपाइ है सो राव
लण में सगरी उपाय है ॥ श्लोक ॥
हाय सो दा प्रिया भव ॥ हा गा पि

सिन्धु यस्व करेणामो ॥ २४ ॥ या को अथो ऊपर कहैया भोति श्री हरि
३ राइजी दैन्यता करत विप्रयोगात्मक ग्रिहस्थ में प्रगट भई
सो अत्यंत विरह सो दहानुसंधान भूलिके बोले हा हा सत
मही गति हो पलात्मक नाम कहै १ हा नंद सनु नंद राय के
पुत्र जे सें नंद राय हमें पाले ते सें तुम हू पातौ यह ब्यस्येना
मकुमारिका के भावते ऊपर हा हा कहै सो अति स्या
के भावते २ पीछे कहै हाय सो राजी के प्राण प्रिय पुत्र
यह श्रीयमुनाजी के भावते ३ पीछे कहै हा गोपी जन के
प्राण आधार यह मुख्य श्री स्वामिनीजी के भावते ४
चारे नाम ले कहै ए से प्रभु अपने करत विप्रयोग स
मुद्र में हें मपर हें सो काठिले हूं या भोति कहै ॥ २४ ॥ ५
ति श्री हरि राइजी कृत सिद्धापत्र अष्ट विंशता की टी
श्री १ पेछी कृत संपूर्ण ॥ २८ ॥ अब ऊपर दैन्यता
कहि दैन्य ने विप्रयोग प्रगत होइ अस को अनुभव
रें सो यह सर्व भगवद धर्म सव सिद्धि होइ सो बुद्धि के न
प्रकार होइ सो अगो सिद्धापत्र में कहत है ॥ १ ॥ बुद्धि
नासक कालोयं सर्वेयासमुपागत ॥ अतो हि सर्वथा
गोयं बुद्धिरत्नसुबुद्धिभिः ॥ १ ॥ या को अर्थ ॥ अब श्री हरि
राइजी कहत है जो यह कलिकाल में वर्तमान हैं सो
सब की बुद्धि को नास भयो है काहेतें कलियुग में वि
चार जो और धर्म को लेहुगौ ता जीव भृष्ट न होइगे अ
नेक धर्म में एक धर्म न भए तो कह विगडन है नाते बु
द्धि हरिलीयों बुद्धि नास भएने सर्व सुधर्म बुद्धि ते करि
ये सो तो काल ने हरिलीयों तब सुंदर सार धर्म नास
भगे बुबुद्धि ते विपरीत आचरण करै नाते श्री हरि
राइजी पुष्टि मागीय वै सब सी कहत है जो तुम साव
धान होइ रहियो यह काल सर्व बुद्धि हरन को आयो है
नाते सुबुद्धि जो वै सब है सो अपनी बुद्धि रत्न को बंटी

मं धरि इत न ते रा खिये का हूं न ज ता रिये तो रत्न रदे
ना ही तो चोर ले जाया ते से ई जो आपनी वैष्णव सुंदर
बुद्धि धि पाश्चें ल करि राखो गे तिन ही की स्हे गी शस्त्रो
क सत्संग ह स्म स्या गं गारणा गति साधन न दा भावे
हृति सर्वा प्य तो वै पर्थ मे ति हि स्या को अर्थो अव श्री ह
रि रा इ जी बुद्धि ज्ञान को वि शेष न कर न हें सदा पुष्टि मा
गी य वैष्णव के सत्संग मे र हें जो अप ने मन मे ध्यान
करि श्री हृ स्म के स्वरूप को स्मरण करे ओर श्री हृ स्म के
स्मरण की भावना सदा मन मे राखे अष्टाक्षर श्री हृ स्म
अर्थ मे स्मरण कहे सो स्मरण की भावना करे काहे ते
भाव विना जो क्रिया करे सर्व कार्य हें ते से राखे में हो में
ता के लक्ष फल ते से ई भाव विना जो करे सो सब कार्य ही
हैं लोक ॥ अत ए को त मा चाये स्व की य करुणा त म
बुद्धि प्रेरक हृ स्म स्या पाद पद्म प्रसीदतु अथा को अर्थ न
हो को ई कहे जो य ह बुद्धि ल को प्रकाश तु म ही कहत हो
कु म हूं मु ने हो त हो श्री हृ गी इ जी कहत हें जो श्री आ चा
ये जी म हा प्रभु श्री मुख ते के हें जो बुद्धि प्रेरक हृ स्म स्या
पाद पद्म प्रसीदतु जो बुद्धि प्रेरक हृ स्म स्या पाद पद्म प्रसी
दतु जो बुद्धि प्रेरक श्री हृ स्म हें तिन के चरणारविंद व
प्रसन्न की ता ते सुंदर बुद्धि होत हें ता ते मन वचन क
ये करि श्री हृ स्म की स्मरण जो को ई दि गो ॥ तिन के चर
रविंद की प्रसन्न की ता ते सुंदर बुद्धि होत हें ता ते स
वचन कार्य करि श्री हृ स्म की स्मरण जो को ई दि गो ॥ तिन
चरणारविंद की प्रसन्न की ता ते सुंदर बुद्धि होत हें
जो तिन की सुंदर बुद्धि होइगी ॥ तिन को
उपकारो पि गाय त्रा ध्यान हेतु रयं मत ॥
भाय त्तु म जे न प्रति सो दत ॥ ४ ॥ पा को

हरिगङ्गी कहत है जो गायत्री ब्राह्मण के बालक को देत
हैं सो ऊपकार प्रभु को है काहेतै गायत्री उपदेसत वे इसके
कर्म में योग्यता होय ते से ईवै सब की बुद्धि निर्मल होय सो
ऊपकार है काहेतै बुद्धि निर्मल होइत श्री द
क्षजी को ध्यान होइ सो ई गीता में श्री भगवान् अर्जुन प्र
ति कहै है बुद्धियोग के अध्याय में सो आगे कहत है श्लो
क ॥ इहामि बुद्धियोगं तं येन मामुपयान्ति ते बुद्धिस्थैर्य
दृष्टो मे योगतिन संसय ॥ १ ॥ पाके अथो भगवान् अ
र्जुन प्रति कहै है जो श्री गीता में दूसरे अध्याय में ताक
रिकें बुद्धिस्थैर्य होय ताक रिकें हरि जो भगवान् हैं ति
न में रति होय और बुद्धि नायनो हरि हृदय ते जातरहे नि
अथ संसय आत्मा विनश्यति संसय भयो अविश्वास
ताक रिकें आत्मा को नास होय ताही तै गीता जी में ए
क सगरो अध्याय बुद्धियोग को भगवान् कहै है काहे
तै सुहर बुद्धि होइ तव ई सगरे धर्म बने तप करे नो बुद्धि सो
होइ यत्त तप ई बुद्धि ते होइ सो तीर्थ व्रत द्येन इत्यादि म
र्गादामार्ग के साधन ई कर्म मार्ग के साधन ई पुष्टि मार्ग
में ई लोकि कार्य सब ई सुहर बुद्धि ते सगरे कार्य लोकि
कार्य वैदिक कार्य सिद्ध होइ बुद्धि विना कोई कार्य सिद्ध न
होय सो भगवद् गीता में कहै है सो आगे विस्तार सो बु
द्धि रत्न कहै कहत है ॥ ५ ॥ श्लोक ॥ तन्मास्येव गीता
यां सर्वेनाम निरूपितं अतो बुद्धि सुखं रक्षाभावभाव न
कारणं ॥ ६ ॥ पाके अथ बुद्धि ना भानि नास होय बुद्धि
नास ते आत्मा को नास होइ सो भगवान् गीता में द्वि
तीय अध्याय में योगे बुद्धि कहै है ये ध्योते विषय पुंस
संगस्तेषु प्रजायते संगात्म जायते काम काम क्रोधा
भिजायते ९ क्रोधा इव तिसं मोह सं मोहात्स्मृति वि
भ्रमा स्मृति भ्रंसात् बुद्धि ना सो बुद्धि ना सात्प्रणस्य

॥ अतिवचनात् ॥ भावान्कहतं है हे अर्जन जीवधि
यमे प्रवर्तते होत है सो दुसंग ते तव दुसंग संसारी को
मग हो शतव अनेक संति वे विषय कामादि प्रगट हो
प्रकप्पादि भय ते को धरो इ को धादि कते मोह प्रगट
हो शो मोह करि स्मृति भ्रम हो श अहान ते लोकि संसा
री को अपनो जानें तिन को पालनार्थ अपनी पोष
नार्थ खो दी क्रिया करे या भान्ति स्मृति को भ्रम ते बुद्धि
को नास हो इ बुद्धि नास ते आत्मा को नास हो य यह
हो नामें यह सिद्धांत भयो जो दुसंग ते काम हो श को धते
मोह हो श मोह ते विस्मृति विन भ्रम तहां ताई नासना
ही जव बुद्धि जाया तब नास हो श तति बुद्धि की रक्षा
करें बुद्धि हें सो भगवद् भाव के भाव न मै कारण है सो
बुद्धि को न प्रकार सुंदर हो या सो आगे वर्णन करुन है
महा प्रसाद हि तो श्लोक ॥ प्रसाद भक्तों बिसेसे
बनो करे सोर पि न तं गेन सदा हृल कथा अवल की तेने
आपको अर्थ ॥ अब श्री हरि राइ जी कहत है जो ऊपर कह
जो ऊपर कह जो बुद्धि की रक्षा या भान्ति करे सो समर्पित व
स्तु मै रंच कह अपनो मन चलाय मानन करे सो समद
प्रसाद भक्तन को ॥ श्री हृल की सेवा नित्य करे श्री
भागवदीय को संग करे दुःसंग को त्याग करे श्री हृल
की लीला तथा नाम की कीर्तन करे तो बुद्धि निर्मल हो
इ प्रभु हृल य मै पधारि यह सिद्धांत भयो ॥ १॥ इति श्री
रि राइ जी कृत एकोन विशेष लिखा पत्र ता की दी व
श्री गे न्वर जी कृत संपूर्ण ॥ २॥ आगे बुद्धि रक्षा
प्रकार कह परंतु काल दोष हूव डो हो यह न
भावांन हूपा करे ता ते आगे काल दोष हून लागे
ते आगे बुद्धि हूं सुंदर हूं सो प्रकार कहत है श्लोक ॥
ते वाः सर्वदा हू सो विस्मृते वं जगत्पुनः ॥ प्रपंच स

परकालदेसकहे अवकै द्रव्यादिकमें सागरे पदार्थ घर आ
 यों ऐसे द्रव्य कौं सर्व स्वजान नो और मेही सर्व वस्तु कौं क
 तोह पद अभिमान सोह समता करि रहित होइ द्रव्य कौं
 सर्व स्वजीवन जान जानै यह समत्व और मेही ग्रह ता अ
 ममें जात में और अनेक कार्य में अपने को कर्ता जानै य
 ह होऊ वाध कहै जाते समत्व अहंकार छोड़ें ३ और सा
 रें में त्रै श्री हृक्ष को एक नाम है सोई सर्वोपरम सा संत्र
 जानै श्री हृक्ष शरण मम और अनेक गुण हैं सोई श्री
 हृक्ष की अनेक लीला है तिनही को गुनगान भावना
 मुख्य है सो अष्टम स्कंध में श्री शुक्र देव जी कहै हैं मंत्र तंत्र
 स्वतस्त्रिं द्रव्य कालाई वस्तुतः सर्व करीति नाश्रिं द्रव्य
 कालाई वस्तुतः सर्व करीति मम संकीर्तनं तव १ या भाति
 श्री हृक्ष नाम मलीयों कीर्तन सर्व देस में अधिकार सर्वोप
 र साधन करि चुक्यों श्री गुणों जी विजय में कहै हैं हरे कृष्ण
 मनि व्यक्तिये हृत्पुति है सदा गुणपति यद्यदा नार्थ न तथै
 वास्तु नान्यथा १ श्री हृक्ष के से है वेद श्रुति को सा है सो
 श्री हृक्ष की क्रिया पाईति लीयो जाय अन्यथा नाही ना
 ते संत्र ही श्री हृक्ष को नाम सर्वोपर है गुण है श्री हृक्ष की
 लीला को सर्वोपर है अथ और कहै हैं श्लोक कर्मो
 गत नय दू समतौ

हि सत्संग साधनं मत दे पावे अ श्री हृक्ष की से
 वा है सोई सर्वोपर उत्तमो उत्तम कर्म है जहां श्री हृक्ष
 की सेवा करी तहां सर्व साधन सिद्धि करि चुक्यों सो अ
 ष्टम स्कंध में ब्रह्मज्ञान कहै हैं यथा हि स्कंध साखानो
 नरो मलावसे च न एवमा राधने विप्रोः सर्वथा सा
 त्मनि श्रद्धा इत्यादि वचन सो जान नो जे से वृत्त की
 जड में जल सी चितो सब डार पात हरी होइ ते से ही
 श्री हृक्ष की सेवा ही ते सर्व साधन सर्व लो क संतु

[illegible]

सुंदरबुद्धिसवताइसीकेसंगनेहोयअभिमानअहं
कारअज्ञानकरिनिवर्तहोइप्रभुकोआश्रयसिद्धहो
इतथाभगवदीयकोआश्रयकरेतेसर्वसिद्धिहोइअ
वश्रारंभहन्ते॥श्लोक॥हृत्सनामस्वरूपदिज्ञानंतु
ततएवहिभगवत्सेवनंवापिपुरुषार्थस्तदेवहीदे
याकोअर्थश्रीहृत्सकेनामकोश्रीहृत्सकेस्वरूपकोज्ञा
नतवहोयतवश्रीहृत्सकीसेवाकोपरमपुरुषार्थस्वफल
रूपसर्वोपरजानेनतवप्रभुहृत्पाकुरेनतवहीजान्योजा
यताहीतेसिद्धांतमुतावलीमेंकहेहै॥हृत्ससेवासदाका
र्यमानसीसापरामताश्रीहृत्सकीसेवासदाकरेफलरू
पजानिभनलगाइकेकरेनतवश्रीहृत्सप्रसन्नहोइअपने
स्वरूपानंदकोअनुभवकरावेनतवमानसीसिद्धहोइ
तानेपरमपुरुषार्थरूपजानेभगवदसेवाकरनी॥टी॥
श्लोक॥यदातथाविधायेंतोइस्येंतेसेवतोद्यता॥अतः
सत्संगएवास्मि मार्गसर्वेषासाधनं॥१४याकोअर्थउ
परकहेजोश्रीहृत्सकीसेवातेनामस्वरूपकोज्ञानहो
इताहीभांतिसंनजनकीसेवातेभगवदीयकेस्वरू
पकोज्ञानहोइमनलगाइसर्वोपरजानिताइसीकी
सेवाकरेनतवताइसीकेस्वरूपकोज्ञानहोइप्रभुहृत्पा
हीकरेअवश्रीहरिइजीकहतहेजोहमारेयहपुष्टिमा
गमेंतोसर्वस्वएकसत्संगहीसर्वोपासाधनहैनिअ
यहैताहीतेनवरत्नमेंश्रीआचार्यजीमहाप्रभुक
हेहैनिवेदनंतुस्मर्तव्यसर्वथाताइसेजनेतानेभ
गवदीयकोसंगकरनो॥१०श्लोक॥तदभावेसर्वथे
यनकिंचिद्विद्वसिधयति तस्मात्प्रयत्नवर्तव्यः सत्सं
गाय सुबुद्धिभिः॥११याकोअर्थउपरकहेभाभाति
भगवदीयमेंभावसिद्धिभरनेसर्वसिद्धहोइएसेतदी
यकेसंगविनाकिंचित्नामकछुहंसिद्धिनाहीहोइ

ताते सर्वथा प्रयत्न करि के भगवदीय के सत्संग करत है सत्संग
करत है सत्संग करे सोई वैष्णव सुबुद्धि है तथा सत्संग ने
सुंदर बुद्धि आवै तथा जा भाव दीय की सुंदर बुद्धि होइ
निन को संग करे एकादस स्कंध में भगवान कहै है निगे
धयति सांयोगो नैष्टा प्रज्ञे न सांख्यधर्म उद्धव ॥ न स्वा
ध्यायत पस्त्यागो नैष्टा प्रते न ह स्नाना ॥ १ ॥ रतानिय ज
छंदा सि नीथो नि नित्य सायमा ॥ यथा वरुह सत्संग स
र्वे संगा परो हि मां ॥ २ ॥ या भोति अनेक साधन करि के भग
वान ना ही बस होत है जे में सत्संग करि बस हो ताते स
त्संग को यत्न सर्वथा प्रष्टि मागिय को कर्तव्य है ॥ २ ॥ स्तो
का अत्र बोक्त माचार्य हरि स्थाने तदीय को अद्वै वि
प्रवर्त्ये वा यथा चिते न दुष्यति ॥ ३ ॥ या को अर्थ ॥ अव श्री ह
रिराज्ञी कृत होत है जो हमारे श्री वक्ष भोचार्य जी महा प्रभु
भक्ति वर्द्धन में कहै है ॥ अतः स्थेयं हरि स्थाने तदीयैः सह न
त्यरे ॥ अद्वै वि प्रवर्त्ये वा यथा चिते न दुष्यति ॥ इति व
चनान् ॥ ताते हरि स्थान श्री गो वर्द्धन नाथ जी धिराज
त होत है स्थिति होइ रहै होत दीय भगवदीय सौ मिलि के
रहै पाय र द्वि के सेवा करे जामें चित में कोई दोष न होइ
या भोति रहै होत निकट में चित को दोष होइ तो नेक
इरि रहै जामें दस्य न नित्य वने चित में दोष न होइ या
भोति भगवदीय सौ मिलि के रहै हरि स्थान में स्तोका ॥ चि
त दोषे कथं सेवा चेन सत्प्रवर्गो भवेत् ॥ अतो विचार
कर्तव्यः सर्वथैकत्र वा सह न ॥ ४ ॥ या को अर्थ ॥ जव चित
में अनेक भोति के होय उत्पन्न होइ तब सेवा काहे की
सो श्री आचार्य जी सिद्धांत मुक्तावली में कहै है चित सत्प्र
वर्ग से वा तसिद्धे तनु चित जा तनु जा विन जा मन लगा
इके करे तव मान सी सिद्ध होइ ॥ जे से नदी को प्रवाहरा

सुंदरबुद्धिसवतादसीकेसंगनेहोयअभिमानअहं
कारअज्ञानकरितिवर्तहोइप्रभुकोआश्रयसिद्धहो
इतथाभगवदीयकोआश्रयकरेतोसर्वसिद्धिहोइअ
वत्रोरहंकहतहै॥श्लोक॥हसनामस्वरूपादिज्ञानंतु
ततएवहिभगवत्सेवनंवापिपुरुषार्थस्तदेवहीदे
याकोअश्रीहसकेनामकोश्रीहसकेस्वरूपकोजा
नतवहोयतवश्रीहसकीसेवाकोपरमपुरुषार्थस्वरूपल
रूपसर्वोपरजानेतवप्रभुहृपाकुरेतवहीजान्योजा
यताहीतेसिद्धांतमुकावलीमेंकहेहै॥हससेवासदाका
र्योमानसीसापरामताश्रीहसकीसेवासदाकरेफलरू
पजानिमनलगाइकेकरेतवश्रीहसप्रसन्नहोइअपने
स्वरूपानंदकोअनुभवकरावेतवमानसीसिद्धहोइ
तानेपरमपुरुषार्थस्वरूपजानेभगवदसेवाकरनी॥टी॥
श्लोक॥यदातथाविधायंतोइस्यंतेसेवतोयता॥अतः
सत्संगएवास्मि मार्गसर्वस्य साधनं॥१९॥याकोअर्थ
परकहेजोश्रीहसकीसेवातेनामस्वरूपकोजानहो
इताहीभांतिसंनजनकीसेवातेभगवदीयकेस्वरू
पकोजानहोइमनलगाइसर्वोपरजानितादसीकी
सेवाकरेतवतादसीकेस्वरूपकोजानहोइप्रभुहृपा
हीकरेअवश्रीहरिगुणीकहतहैजोहमारेयहपुष्टिमा
गमेंतोसर्वस्वरूपसत्संगहीसर्वोपरसाधनहैनिश्च
यहैताहीतेनवरत्नमेंश्रीआचार्यजीमहाप्रभुक
हेहैनिवेदनंतुस्मर्तव्यसर्वथाताइसेजनेतातेभ
गवदीयकोसंगकरनो॥१०॥श्लोक॥तदभावेसर्वस्य
वनकिंचिद्विद्वसिधयति तस्मात्प्रयत्नकर्तव्यः सत
गाय सुबुद्धिभिः॥११॥याकोअर्थ॥ऊपरकहेभाभा
भगवदीयमेंभावसिद्धिभरतेसर्वसिद्धिहोइएसेत
यकेसंगविनाकिंचित्नामकछुहंसिद्धिनाहीहोइ

तातेसर्वथाप्रयत्नकरिके भावदीयकेसत्संगकरतहैसत्संग
 करतहैसत्संगकरेसोईवैभवसुखुद्धिहैतथासत्संगने
 मुंदरबुद्धिआवैतथाजाभावदीयकीसुंदरबुद्धिहोइ
 तिनकोसंगकरैएकादयस्कंधमेंभावांनकहैहोनिरो
 धयतिमांयोगोनेष्टाप्रज्ञेनसांख्यधर्मउद्धव॥नस्वा
 ध्यायतपस्यागोनेष्टाप्रज्ञेनदक्षणा॥१॥वृत्तानियज
 छंदासिनीथोनिनियमायमा॥यथावसुहसत्संगस
 र्वेमापहोहिमां॥२॥याभांतिअनेकसाधनकरिकेभा
 वाननाहीवसहोतहैजेसंसंगकरिवसहोतातेस
 त्संगकोयत्नसर्वथापुष्टिमाग्यायिकोचतेवाहोरह्मो
 का॥अत्रवोक्तमाचार्येहरिस्थानेतदीयकोअहरेवि
 प्रकसेवायथाचितंनदुष्यति॥३॥याकोअर्थेअवश्रीह
 रिराज्ञीकहतहैजोहमारेश्रीवध्वभाचार्यजीमहाप्रभु
 भक्तिवर्द्धनमेंकहेहैअतस्थेयंहरिस्थानेतदीयेसहन
 त्परैअहोविप्रकर्षेवायथाचितंनदुष्यति॥४॥इतिव
 चनात्तातेहरिस्थानश्रीगोबर्द्धननाथजीविराज
 तवंतहोस्थितिहोइरहेहैतदीयभावदीयसौमिलिके
 रहैपासगदिकेसेवाकरैजामेंचितमेंकोईदोषनहोइ
 याभांतिहोवोहोतनिकटमेंचितकोदोषहोइतोनेक
 इरिहैजामेंदस्यननित्यवनेचितमेंदोषनहोइया
 नांतिभावदीयसौमिलिकेरहेहरिस्थानमेंलोक॥चि
 तदोषेकथसेवाचेनस्तत्प्रवर्णभवेत्अतोविचार
 कर्तव्यःसर्वथेकत्रवासहज॥५॥याकोअर्थेजवचित
 मेंअनेकभांतिकेदोषउत्पन्नहोइतस्वसेवाकाहेकी
 सोश्रीआचार्यजीसिद्धान्तमुक्ताबलीमेंकहेहैचितस्तत्प्र
 वर्णसेवानसिद्धेननुचितजातनुजचितजामनलगा
 ईकेकरैतवमानसीसिद्धहोप्रजेसेतदीकोप्रवाहरा
 त्रिदिनधाराएकरसचलतहै

एकराग्य भागवदसेवामें लगपौरहैं सो सेवामें तो होइ तनु
जावित जाकर तमें जव चित को दोष होइ तव आगें मा
न सीफल रूप कहतें सिद्ध होइगी तातें श्री आचार्य जी
वेचवनामृत को विचार एकांतमें अकेले वेठि वेकें
जोमें कितनी सेवा करी मरे चितमें तो कछु दोष नाही
अन्तरायो या भांति एकांतमें वेठि के अपने चित को
विचार करत हैं स्तोत्राद्युध्या विचार्य मन्त्रोक्तं निधा
य हरि सर्वथा स्वार्थ संसर्ग कार्यो वास एकवत न्यरे
१४ पाते अथ एकांतमें वेठि के अपनी बुद्धि को विचा
र करे सो श्री आचार्य जी महा प्रभु भक्तिवद्धनी में कहै
हैं बाध संभावना या तु नैकांते वास ईष्यते हरि तु य
व नौरक्षा करिष्यति न संशय १ इति वचनात् यह
श्री महा प्रभु जी और भक्त वचनामृत को विचार अप
ने हृदयमें सर्वथा ही कर्तव्य है तहां कोई कहै एकांत
में अनेक सुख दुख आवैं सो तहां रह्य को न प्रकार क
रे तहां श्री महा प्रभु जी कहै हैं जो हरि भगवान सव
था अपनो भक्त की रक्षा करेगे यह चिंतान करे सर्व
था एकांतमें वेठि के अपनी सुंदर बुद्धि अपने चित
को विचार नित्य करे तहां कोई कहै प्रथम कहै निक
हरि सेवा करे भागवदीय को संग करे पाछे कहै
कस्तमें वेठि के चित को विचार करे सो दोऊ एक संग
के से होइ तहां कहत हैं जो सेवा हरसन के समय तो
सेवा हरन करे पाछे अनो समय एकांतमें वेठि के
चित को विचार करे या भांति भागवदीय सो मिलि
करहे तो सगरे काय सिद्ध होइ १४ इति श्री हरि उ
पनिषत् सिद्धापन त्रिसता को दीया श्री पेरु जी
द्वत सं ५ पां ३० अवउपर कहै जो हरि स्थानमें भग
वदीय को संग स्थिति होइ सेवा करे और एकांत

मैंने ठीक चित्त को विचार करे होयन को तहां अपने
मन में साधन की भावना न करे यह मार्ग नि साधन
फलात्मक है सो को न भांति सो अवशार्गे कहत है
श्लोक ॥ नि साधने फले मार्गे वलं ते वोपयुज्यते सा
धनानां मतो मायमान्ते ते वो दितान् भुति शया को
अथ श्री हरि राइ जी कहत है साधन साधन
ही है रूप साधन है अथ नो बल कर को लान को
दिया धन करे तां क गि सिद्धि ना ही है साधन तो रा
कना सकरि के आत्मा संतोष हो प्रपद श्रुति में कहै है सो
मर्यादा भक्ति में कहै है पुष्टि में एक तण्ड प्रभु को भूले
तो आसुरा वेस होइ और मर्यादा में एक नाम ते हुनाथ
होइ यह भेद है पुष्टि मार्ग में भाव न वर्ण करे तव फ
ल सिद्धि होइ मर्यादा में जितनो साधन तितनो फल
पुष्टि में प्रभु की जितनी रूप तितनो फल यह नारन
मार्ग है सो आगे सब निरूपण करत है श्लोक ॥ किं
तु सर्वस्य मूलं हि हरि वर राग मुच्यते यथेव दण्डते व
स्य स्यात्तिष्ठति वै जन श्रया को अर्थ ॥ अवश्री ह
रि राइ जी कहत है जो पुष्टि मार्ग में यह सिद्धांत है ज
सर्व स्व मूल पुष्टि मार्ग को फल सो हरि के वर्ण ते है
न है ताते जीव के साधन साधना ही है जे सो ज
जीव को भगवान वर्ण करे ते सी हुन सो वहन
नष्ट होत है ताते जीव के साधन साधना ही है त
जीव को पुष्टि मार्ग में वर्ण प्रभु की गे हो सोइ यह पु
मार्ग की हुन में तिष्ठति है अन्यथा और ना ही त
भगवान वरन दोय प्रकार सो करत है धारण इ
कार को है सो आगे कहत है श्लोक ॥ वरं
धा सादान् पथे रं पथे विभेदत ॥ लीला स्थिते
नाद न्ये स्वस्ति परं परा ॥ अथा ॥

इजी कहत है जो वरन दोय प्रकार को है एक साक्षात् ए
 क परंपरा सोय ददोय भोति के भेद है श्री हृक्ष की ली
 ला स्थिति सृष्टि में ई दोय प्रकार है साक्षात् वरन है प
 रंपरा ऊ है सोऊ अगो कहत है ॥ श्लोक ॥ आचार्य द्वा
 रकं तवैत्र वराणं नदरे खत ॥ लीला स्थे विपि भते सुवृ
 ष्णि दिवि धसी हते ॥ पाया को अर्थ अथ श्री हरि जी
 कहत है जो श्री कृष्ण भाचार्य जी द्वारा जीव को वरण भ
 यो है ए सो वरण हरि जो श्री हृक्ष हूं सो पुन हन होइ ता
 ने हरि वरण की एते ई श्री आचार्य जी द्वारा जीव को वर
 न की एते ई सो पुन मई सो श्री हृक्ष की लीला अष्टि में
 ऊ अथ पन भक्त को वरन दोय प्रकार के सो की एते साक्षा
 त इंपरा पराते ई सो आगे दोऊ भोति को वरण कहिय
 त है ॥ श्लोक ॥ सो सात् सुति यु हरि ए वरन वरि सुन प
 रंपरा प्रकारेण मर्यादा पुरुषोत्तम ॥ पाया को अर्थ
 श्री हृक्ष आवतार में साक्षात् वरण तो श्रुति रूपा को भ
 गवान आपु वरण की एते श्री अग्रिम सुहजो सो ह
 रज ए अग्रि कुमार को परंपरा मर्यादा पुरुषोत्तम श्री रं
 म चंद्र जी द्वारा भोति लीला सृष्टि में ई साक्षात् परंप
 रा को वरण है ॥ श्लोक ॥ अन्मया प्यत्र भेदो ह्नि दास
 नात्मीयता हि भिः आत्मीयत्वं नावतारो दासे दासत
 या वृत्तिः ॥ पाया को अर्थ यह दोय भेद विना साक्षात् प
 रंपरा यह दोय भेद विना वरन होइ दास भावित आत्मी
 य दोय और प्रकार आत्मीय भगवान को संबंधीत व
 होइ अन्य अवतार दास भेदास भाव विना भगवान को
 आत्मीय संबंधन होइ सो दासत्व में दोय भेद है सो आ
 रं कहत है ॥ श्लोक ॥ दासत्वे प्यस्ति भेदो हि मर्यादा पु
 ष्ठि भेदत ॥ अतो न जीव स्वातंत्र्यं दासत्वाधि नि सर्गतः
 ७ पाया को अर्थ दासत्व भाव में दोय रीति है एक मर्या

राभक्ति एकपुष्टिभक्तियहदोयभेदहैं और चन्पजीवहैं
रासत्त्वधर्मविनाकेसत्तंत्रनेप्रवाहीहैं तिनसोरासत्त्व
धर्मसवनेअधिकहैं रासत्त्वतेआत्मीयप्रभुकोसंबंधी
होतहैं।। यथावृत्तितयासर्वलक्षस्तस्यकरोति
हि॥ मयोदयावृत्तोतस्यभवेत्साधनतिष्ठता॥ योको
अर्थ॥ जेसीजाकीवृत्तहैं जहाकोजीवहैं जेसीक्रियामें
स्थितिहै ताईभांतिश्रीहृत्सुखप्रलदेतहैं सोपुष्टिप्रवा
हमयोरामेंश्रीआचार्यजीमहाप्रभुकहैं।। इष्टामात्रे
नमनसाप्रवाहंसृष्टिदानहैं।। वचसावेदमार्गेही
पुष्टिकापेननिश्चयः इतिवचनात्।। मन्तेप्रगटीमें
अष्टिप्रवाही॥ तिनकोफलपरसंसारहीवचनतेप्रा
टीसोमयोरावेदकार्यमेंकर्मसारगीयभई तिनको
फलसत्यलोकपीछेंमोहा॥ औरभसंवांनकेसरीरते
प्रगटीसोपुष्टिसृष्टितिनकोमनभगवद्वेषामेंल
ग्यो॥ तिनकोफलस्वरूपानेहकोअनुभवयाभांति
जेसीजीवजेसीक्रिया॥ तिनकोताईभांतिश्रीहृत्सुख
पाकरतहैं जिनजीवकोवरनभगवांनमयोरामेंकी
योहैं तातैजीवकीनिव्यासाधनमेंहोइप्रदृष्टहोति
वासेजोफलानोसाधनकरतोंकछुफलमिलें।। य
मयोराभक्तिअवपुष्टिकीरीतिवहंतहैं।। श्लोका॥ पु
वनुगृह्णतिथैवसकलपुनः वयंतुनुग्रहाचार्य
हमयोदयासहासीपाकेअर्थ॥ पुष्टिमेंजीवकोवरन
पावोनकीरोहैं सोजीवप्रभुकीअनुग्रहदेखतहैं
वैकर्मकरैभगवदधर्मकरै।। परंतुसाधनकोकल
मेंकवनेलावै।। निःसाधनेहोयप्रदजानेजोप्रभु
करोनैसेईमेरोकार्यहोइगोयाभांतिसर्वठोरसव
धमेंप्रभुकोअनुग्रहहीदेखे।। सोश्रीआचार्यजी

पुष्टिमर्यादा सहित है। भीतर पुष्टि समेत मग्रहें उपरते
मगरी वेद मर्यादा के लवक है। सो आगे कहत है। १० श्लोक
॥ अंगी हन्तिः समर्यादः सर्वे व्यंगी हताः स्वतः ॥ अ
तस्तदुक्त मर्यादा स्थिति हि दित कारिणी ॥ १० ॥ या ॥ अ
॥ सो श्रीगुसांई जी सर्वोत्तम श्री आचार्यजी को न
मकहे है। अंगी हतो समर्यादो। इत्यादि वाक्य ते सर्व
छांजी पुष्टि मार्गीय समस्त जीवन को अंगी कार स्व
तः आपुही की गेहें नहं यह श्री आचार्यजी महाप्र
भुन की उक्ति आपुई श्री मुख से कहेहें जो पुष्टि मार्
गीय मर्यादारीति में स्थिति होइ करे उपरते वेदमा
र्ग न छोड़े। जो कवे विरुद्ध करे तो श्री आचार्यजी
हित करे पुष्टि संहन करे ताते यह पुष्टि मार्गी लोक
विरुद्ध नाही है। यह जो न तो १० श्लोक ॥ पुष्टि प्रभुत्वा
दस्माकं लोकि कपार लोकि की सर्वो चिंता हरे रे वनि
श्रित त्वं विभाव्यतां ॥ ११ ॥ या ॥ अ ॥ या भांति श्री हरि
इजी कहत है जो स्माकं हमारे प्रभु एसे पुष्टि हैं यह
लोकि कवेदिक सर्व वेद मर्यादा संयुक्त भीतर केवल
पुष्टि सकों अनुभव में मग्रहें ताही ते सर्वोत्तम में क
हे जो श्री आचार्यजी वचन कहत है जो क्रिया कर
त है जो मन में विचार करत है सो सब सम लीला में
आपुको तात्पर्य है। एसे श्री महाप्रभु जी पुष्टि मार्गी
य वेद अवकी लोकि कवेदिक चिंता हरेगे यह मन में
निश्चय जानि निश्चितता की भावना मन में रखे तब
प्रभु में मन लगे चिंता भगवद्भाव में बाधक है ताते नि
श्चित होइ के करे। अब और कहत है श्लोक ॥ अतए
वोक्त माचार्ये त्रिजगत् कसिपति नोपहते निजा
वार्तबंधु श्री गोद देयर ॥ १२ ॥ या ॥ अ ॥ उपर कहत
भांति निश्चित होइ प्रभु की इच्छा जाने सो न बरतन

यों श्री आचार्य जी महाराज प्रभु कहें हैं। सर्वेश्वर सर्वोत्तम
 निजै छातः करि ध्याति। प्रभु श्री हृदय के से हैं। और सर्व के
 आत्मा हैं। सर्व के ईश्वर सर्वोपर हैं। सर्व के अंतःकरण की
 जानत हैं। ताते आपनी निज इच्छा ते विना मागे सर्व सिद्धि
 करे। ताते अपेक्षा विना अपने जन की आर्ति करे। दा
 दें। आर्ति के बंधु हीन बंधु। ऐसे गोबुलेश्वर श्री हृदय
 तहों कोई संदेह करे। प्रभु की इच्छा विपरीति है। प्रभु स्व
 तंत्र से। अर्थात् अकर्म अन्वया कर्म ऐसे ही। विपरीति इच्छा
 हो। शतव प्रार्थना करे। न करे। यह दो। संदेह करे। तहों
 कहत हैं। १२ श्लोक॥ हरिश्चा विपरीता पीदा सदुखा च
 लोकनात। अनुकपान्तिधानं त्वाद्गुण विपरीतिवर्तते।
 १३ या के अर्थ। अव श्री हरि राज्ञी कहत हैं। जो हरिश्चा
 विपरीति है। काहे ते जीव अज्ञान वारि मन में कछु लो
 कि कचा है। सो प्रभु नष्ट करे। जैसे नारद को व्याह करि
 की इच्छा भगवान न करन दी। तब नारद जी
 बहुत दुख पायो। तब छपा करि के दुख इरिकी गितया
 प्रहलाद को। हि रापक स्यप बहुत दुख दी। सो प्रहला
 द प्रभु इच्छा मानी सहे पाछे प्रभु दुख इरिकी गितिया
 को मारी। ते से ई जो कछु विपरीति इच्छा प्रभु परी लाय
 करे। प्रभु तो सर्व के आत्मा हैं। सर्व आपु ही ते विना क
 रें। जानत हैं। सो सास को दुख देखि के आपु इच्छा मे
 क पाय मान होत है। जा भाति दास की मनोरथ ता
 ही भाति आपु प्रभु प्रवर्त हो। जो जा भाति दास के मुख
 हो। सो आपु करे। ताते सुख हमें प्रार्थना ना
 ही कर्ने कहें। १३ श्लोक॥ आर्ति मात्र मनःस्थाय
 प्रार्थना न विधीयते॥ कृपा लुखे भवना निजाने
 जनन मंदःस्थाय॥ १४ या के अर्थ॥ अथ श्री हरि
 राज्ञी कहत हैं। जो यह पुष्टि मागे। आर्ति मात्र

पुष्टिमर्यादासहित है। भीतर पुष्टि समे मग्रहें उपरते
 मगरी वेदमर्यादा के रक्त है। सो आगे कहत है। दो श्लो
 ॥ चंगी हतिः समर्यादोः सर्वे पंगी हताः स्वतः। अ
 नस्तदुक्त मर्यादा स्थितिर्दिहित कारिणी ॥ १० ॥ या को अ
 ॥ सो श्रीगुसांई जी सर्वोत्तम सै श्री आचार्य जी को न
 म कहत है। चंगी हतो समर्यादोः। इत्यादि वाक्य ते सर्वे
 खां जी पुष्टि मार्गीय समाप्त जीवन को अंगीकार स्व
 तः। आपुही की रोहें तहो यह श्री आचार्य जी महाप्र
 भुन की उक्ति आपुई श्री मुख से कहत है। जो पुष्टि मार्
 गीय इमर्यादारीति में स्थिति होइ करे उपरते वेदमा
 र्ग न छोड़ें। जो कवेद विरुद्ध कार्य करें। श्री आचार्य जी
 हित करें। पुष्टि संहनन करें। ताते यह पुष्टि मार्ग लोक
 विरुद्ध नाही है। यह जानें। १० श्लोक ॥ पुष्टि प्रभुत्वा
 दस्माकं लौकिक पारलौकिकी सर्वोचिते तादृशे रवे नि
 श्रित तत्त्व विभाव्यता ॥ ११ ॥ या को अ ॥ या भांति श्री हरि
 इजी कहत है। जो स्माकं हमारे प्रभु एसे पुष्टि हैं। यह
 लौकिक वैदिक सर्व वेद मर्यादा संयुक्त भीतर केवल
 पुष्टि सकों अनुभव सै मग्रहें। ताही ते सर्वोत्तम सै क
 हैं। जो श्री आचार्य जी वचन कहत है। जो क्रिया कर
 त है। जो मन में विचार करत है। सो सब आसलीला में
 आपुको तात्पर्य है। एसे श्री महा प्रभु जी पुष्टि मार्गी
 य वेद अवकी लौकिक वैदिक चिंता हरगे यह मन में
 निश्चय जानि निश्चितता की भावना मन में रखें तब
 प्रभु सै मन लगे चिंता भगवद्भाव सै बाध कहें ताते नि
 श्चित होइ के करे। अब और इंक कहत है श्लोक ॥ अतए
 वोक्त माचार्यै निजै शतः कस्यि ति नोपलत्ते निजा
 वार्तबंधु श्री गोहृ लेखरः ॥ १२ ॥ या को अ ॥ उपर कहत
 भांति निश्चित होइ प्रभु की इच्छा जानें। सो न बरतनं

यत्तेश्रीआचार्यजीमहाप्रभुकरहेहैं॥ सर्वेश्वरसर्वोत्तम
निजेश्वरः करिष्यति॥ प्रभुश्रीहृषिकेशसेहैं॥ आसर्वक
आत्माहैं॥ सर्वकेश्वरसर्वोपरहैं॥ सर्ववेद्यंतःकरणकी
जानतहैं॥ तातें आपनी निजइच्छातेविनामार्गसर्वसिद्धि
करेगें॥ तातें अपेक्षाविनाअपनेजनकीआर्तिकरेगें॥ दा
हैंतें॥ आर्तिकबंधुहीनबंधु॥ एसेगोबुलेश्वरश्रीहृषिकेश
नहैं॥ कोइसंदेहकरेजोंप्रभुकीइच्छाविपरीतिहैं॥ प्रभुख
तेंअर्थकरुंअकर्तुंअन्यथाकर्तुं॥ एसेहैं॥ सोविपरीतिइच्छा
होइतवप्रार्थनाकरेकेनकरे॥ यहकोइसंदेहकरेंतहां
कहतहैं॥ १२३ श्लोक॥ हरिइच्छाविपरीतापीदासदुखाच
लोचनात॥ अनुकपान्तिधानंत्वाद्दुःखविपरीतिवर्तते
१३४ याकोअर्थ॥ अवश्रीहरिग्राह्णीकहतहैं॥ जोहरिइच्छा
विपरीतिहैं॥ काहेतेंजीवअज्ञानकरिमनमेंकछुलौ
किकचाहैं॥ सोप्रभुनष्टकरे॥ जेमेंनारदकीआहकारिवे
कीइच्छाभइतवभगवाननकरनदीरे॥ तवनारदजी
बहुतदुखपायों॥ तवहृषपाकरिकेंदुखइरिकीगितथा
प्रहलादको॥ हिरण्यकश्यपबहुतदुखदीगो॥ सोप्रहला
दप्रभुइच्छामानीसहेपाछेप्रभुदुखइरिकीगेंहैंतु
कोमारीतेसेइजोकछुविपरीतिइच्छाप्रभुपरीताय
करे॥ प्रभुतोसर्वकेश्वरआत्माहैं॥ सर्वआपुहीतेविनाक
हेंजानतहैं॥ सोहासकोदुखदेखिवै॥ आपुइहृष्यमे
कपायमानहोतहैं॥ जाभातिदासकीमनोरथहैं
हीभातिआपुप्रभुप्रवर्तहोइगो॥ जाभातिहृष्यमे
होइगो॥ सोइआपुकरेगें॥ तातेंसुखहमेंअर्जुन
हीकरेव्यहें॥ १३५ श्लोक॥ आर्तिमात्रमदुःख
प्रार्थनानविधीयतां॥ कृपालुखेभक्त
जननमोदःस्थाप्य॥ १३६ याकोअर्थ॥ अर्चन
राइतीकहतहैं॥ जोयहपुष्टिमात्रकरे॥ नमो

कोंकतव्यहैं जो सो सो प्रभु की सेवा म्दलना ही बनतः म
नुष्य जन्म सगरो यही वीति गयो । या भांति आर्तिक करें औ
र लौकिक अलौकिक फल की प्रार्थना कछु न करें काहे
नहीं श्री कृष्ण तो परम कृपा लहे ताते अपने जन दास की
आर्ति देखि के प्रभु अत्यंत नम्र होत हैं । सो निरोध ल
क्षण में श्री आचार्य जी महाराज प्रभु कहें हैं । लोक । ले
रा सा नानु ज नानु दृष्टा कृपा सुतो यहा भवेत् तदा म
र्व सदा नंदं रुदि स्थे निर्गे ते वदति । इति वचनात् अ
पने जन को विरह आर्ति रूप लेस संयुक्त प्रभु देखि के कृपा
पुक्त होत हैं सर्व प्राणी मात्र के हृदय में सदा आनंद रूप
भगवान है सो विरह प्रगट है सो अपने दास को सुख देत
हैं ताते आर्ति यह पुष्टि मार्ग में सुख है सो आर्तिको न
प्रकार करै सो आगे कहन है १४ श्लोक । आर्त्ये वक्ति
यते यंतु सेवा गुण कथा दिक् । तदेवास्मत्प्रभु ते स्मिन्ना
र्ग प्रविशति ध्रुवं १५ पाठे अ । ताते श्री हरि राज्ञी
आर्तिके प्रीति पूर्व कृपा करै भगवत्सेवा सर्वो गते
करै वानी ते गुन गांन करै संयोग में संयोग के पद अ
नो सर में विप्रयोग के पद गान करै अवगाते श्री सुयो
धनी आदि कथा सुने मन करि के श्री कृष्ण की नीला
वोस्मरण करै सो श्री आचार्य जी महाराज प्रभु कहें हैं जो
या भांति युक्ति गोरों है सब स्थिति है ताको हमारे
यद पुष्टि मार्ग को फूल निश्चय होय । ताते ध्रुव कहें
सर्वथा होइ तहां को कहें जो वेद सास्त्र में अनेक
साधन कहें हैं ताकरि फल कहें हैं नुम साधन न फल
नाही कहें प्रभु की कृपा ते कहें सो कहें या भांति सदै
व होइ तहां कहत हैं । श्लोक । अन्यथा कृपया पांनु
कृष्ण सा युज्य साधकं न मुख फल संबंधं ततो भवति
निश्चितः १६ या अ । अव श्री हरि राज्ञी कह

जो यद्गुष्टि मार्ग की क्रिया विना जान साधन को
फल सिद्धि हो सो श्री हरि की सायुज्य मुक्ति को साध
होइ साधन की रीति अनेक फल मुक्ति ही हो प्रयत्न
मार्ग को मुख्य फल जाते संवेधक वहन हो प्रयत्न
प्रयत्न ज्ञान जाननो अवगुष्टि मार्गीय फल जा भोति
गोश सो कहत हो लोक ॥ तद्वर्ति प्राप्ति रीति धातु पावा
ये सेवनात लक्षण तत्तु दित वचो संविचार गान
प्रथा को अर्थ ॥ अव श्री हरि गीत जी कहत हो जो यद्गु
ष्टि मार्गीय आर्ति विप्रयोगात्मक एसी आर्ति की प्र
सार्थ श्री हरि विप्रयोगाग्रि आर्ति रूप जो श्री ब्रह्मा
चार्य जी विचरण क मलु की सेवा करिये अत्यंत प्रीति
सो सो जव श्री आचार्य जी महा प्रभु ने वचना मृत्यु
बोधनी जी निबंधादिस गरीष्टे के ग्रंथ को विचार
अहर्निश करिये तव श्री आचार्य जी की दया से आर्ति हो
प्रया भोति क्रिया साध्य आर्ति फल यह मार्ग में कहत
हो ॥ अथ अष्टांग कहत हो लोक ॥ निवेदनानुस
धानात तदास संग संभवात ॥ अन्वयान भवेद्वस्व
स्तानंत साधनै रणया को अर्थ ॥ अव श्री हरि गी
त जी कहत हो जो निवेदन को संधान अष्ट प्रहराखे
तब आर्ति होइ तथा सदा पुष्टि मार्गीय भगवदी
य के संग निवेदन को स्मरण कर्त व्यहं ता करि आर्ति
फल होइ ॥ और प्रकार अनेक को दान को दिसाध
न करि आर्ति सिद्ध कर पांतु आर्ति सिद्धि होइ जव आ
र्ति त भई तब फल की आसा का दे को करि दानो
कर्या भव वई यत्ने वदुत वचन कर्म सो संगो पिते या
कर्तव्यो नान्यथा मिति निश्चय ॥ १७ ॥ अर्थ ॥ अ
व श्री हरि गीत जी कहत हो जो अपस्व हेता प्र
मार्ग में हेतौ भाव की वृद्धि निश्चय होइ

करिकें श्री आचार्य जी के वचनामृत ग्रंथ हैं श्री सुबोधनी
निबंधादि छोटो बड़े ग्रंथतिनही को मनन लगाने पाठक
ए वचन की वर्य करी धारा प्रवाह सगरे दिन तब श्री आ
चार्य जी हृपाकरें परंतु गोप्यरीति सो पाठ करे और कोई
जाने नाही और आपु का हसों जतावे नाही प्रडाई प्रति
हार्य न करे गोप्य करे और लौकिक चोद्विक् में मनन ल
गावे या भांति पाठ करे ताको निश्चय अति सिद्ध होइ
श्री कृष्ण नंद लक्ष्मण लै वाधिये मुकं लंका वरं मने वाचः
प्रथमावदने दुर्जनान भवति न ॥ १२ ॥ या को अर्थ
अब श्री हरि राजीव कहत हैं जो ऊपर पुष्टि मार्ग के आर
ति की रीति कही सो ए सो दो नो नो बोहोत दुष्म भ ह
य काल में तातें और साधन नव नैं तों मन में धैर्य करि
सक होइ रहें तथा वाहिरो होइ रहें लौकिक में न काह
की पुनै न काह को बहुक है यदथा काल में अष्ट मत
हैं बानी जो वचनामृत अर्थात् सो अपने मुख सो कहें
और स्वच्छ लौकिक सो प्रयोजन न राखे कहैं दुष्ट
जो दुर्जन के मुख की बानी को फल नाही दुख ही होइ
ताते दुर्जन दुष्ट को संगी हन करे नन की बानी हन पुनै
या भांति पुष्टि मार्गी प्रभाष दीयर है जो दुर्जन दुष्ट
प्राणी भाव दवार्ता ह्वरैं ताऊ भाव दी य अत्य मा
गीय के मुख सो सर्व ध्यान पुनै उह वाध क को न भा
ति होत हं कहत हैं स्वामी का स्तुष्टि नामि व गाय
त्री ततः श्रवण तः किमु तत्सधमाज्ञत्र वणो अस्तु
भावि तरो हिति ॥ १२ ॥ या को अर्थ अब श्री हरि
राजीव कहत हैं जो ये स्तुष्टि के मुख ते गायत्री सुने ते कछ
फल नाही होत है उलटो वाध कहें काहेने उह आस
र को दुष्ट धर्म हैं वा दुष्ट के संगति गायत्री को वरन जो
अद्वय सो उदुख रूप होइ काहेने उह गायत्री मने

गधिवैदिकत्रयात्मकहोउदेवतासर्वोसतिरोधा
 होइजायकेवेवलभौतिकहोइतेसैंअवैभव
 जैनकेमुखतेसुनिर्कतेकथायार्ताफलरूपनहो
 श्वाधकहोइजेसैंगंगाजलसुंदरहोपरंतुनीचजा
 नीचमारचोडालाहिकेपात्रमेंहोइतोउहजलते
 प्राश्रितकरनोपडोहोखुवेतोहोपडोयाभा
 तिपात्रमेंहोइ॥२॥लोक॥ अतःफलनप्रवणा
 होघाप्रतपूतजायतेसावधानसमेलियमीहिक
 अवणकीतेनाना॥२॥याकेअर्थ॥ सोपुष्टिव
 हमुखअन्यमार्गभियहोइताकेमुखतेभगवद
 धर्मसुनेतकहुफलनहोइहोयप्रतिवायहोय
 उलटोउलटोप्रायश्चितकरनोपडो॥जेसैंगंगाजी
 कोपांनीधाराधृष्टिकेइजायनमिभूलकेगंगा
 जलजानिकेनयोहोइतोमहादोषहोइताकोप्रा
 श्रितकरनोपडो॥तातेपुष्टिमार्गीयवैभवसबतु
 मसावधानरहियो॥जोवैभवपुष्टिमार्गमेंस्थिति
 होइमार्गअनुसारक्रियाकरेयाभातिसुंदरपात्र
 देखिअवनकीतेनमिलिकेकरेनोभक्तिमार्गमेंप्र
 वेशहोइयहपुष्टिमार्गमहादुस्त्रमसर्वोपरतमोत
 कहतहो॥२॥लोक॥ निरपेक्षहमजनानिजाचाय
 पदाश्रिताश्रीभागवततत्वज्ञादुश्चभायेवधन
 होइनिरपेक्षजाकोकहुअपेक्षानाहीहोयप्रा
 कामइदयतेहोइलौकिकवैदिककहुइचाहना
 नहोया॥सोनिरपेक्षहोयाचतुष्टसुनिपयैतया
 मनानहो॥अथोहसजनाएकश्रीहृदयजनको

उ

नसबनमेतेएकश्रीबृहस्पतीमेंअनन्यभावहोइओ
अपनेश्रीआचार्यजीमहाप्रभुकेचरणकमल
कोआश्रयमनमेंबुद्धहोइओश्रीभागवतको
तत्वजोश्रीशुबोधनीजीनिबंधमेंजानहोइजो
एसेभागवदीयमिलेतिनहीकोसंगकर्तव्यहैतदा
अवश्रीहरिगुणीकहतहैतोयाकालमेंएसेभा
वदीयमिलिवेकोपरमदुर्लभहैतातेएसेभागवदी
यनमिलेतोओरअन्यकोसंगमतिकरियो सोआ
गेकहतहै॥२३॥ श्लोक॥ अतःसराणमंत्रं हि कर्तव्य
मखिलं ततः॥ यदुक्तं तात चरणे इति वाक्यद्विविध
ति॥ २४॥ याकोअर्थ उपरकहेएसेभागवदीयताइसी
जोनामिलेतोसराणमंत्रअष्टाक्षरमहामंत्रश्रीह
रिसराणमंत्रः यामंत्रकोसाधनकरें एसीभावनाक
रेंताहीकरिअखिलकार्यसकलसिद्धिहोइगो सोस
राणमंत्रहंजवश्रीआचार्यजीद्वारासराणआयो तव
सिद्धहोइ सोश्रीगुसाईजीविश्वरूपमेंकहेहैं श्लोक॥
यदुक्तं तात चरणे श्रीबृहस्पतराणं प्रमा नत एवास्ति
नो अंतर्मे हि के परलौकिके॥ श्रीगुसाईजीकहत
हैजोहमारेतातचरणश्रीआचार्यजीमहाप्रभुजी
कीउक्तप्रगटकीयों अष्टाक्षरमहामंत्रताकरियह
लोककेहोयकार्यसिद्धहोइतातेहमनिश्चिनहै
इत्यादिवचनकोविचारिश्रीमहाप्रभुजीकीसराण
होइअष्टाक्षरकीभावनाकरें तोसारेकार्यहोय
निश्चय॥ २५॥ श्लोक॥ तथा विधेयं कृपया यथा गेव
इनेश्वरः दर्शयत्पक्षिदेवनिजरूपे तदाश्रितः॥ २५॥
याकोअर्थ अवश्रीहरिगुणीकहतहैजोयहस
राभागवदमेंउपरकहे सोयहकवहोय नवश्रीगो
वर्द्धननाथजीरुपावरें तवहोइ अपनेआश्रतजा

निजपनेनिजस्वरूपको संन करों प्रसन्न होइ के तव ही
 सर्वकार्य सिद्ध होइ सोयह पुष्टि मार्ग साधन साधना
 ही है छपा साध्य हो गिरिगज के संबंध पुलिंदी पस्त
 छपा करि ते सैं श्री आचार्य जी महा प्रभु के संबंधने
 श्री जी छपा करों तव सर्व सिद्ध होइ ॥ २५ ॥ इति श्री
 गिरिगज जी छत सिता पुत्र गुरु त्रिस ता की दी का श्री
 गणेश जी छत संपूर्ण ॥ ३॥ अथ वक्र परक से जो श्री जी
 की छपा होइ तव सर्व कार्य सिद्ध होइ सोय च पर्व
 अविद्या ना स होय विद्या सिद्ध होइ तव भगवान
 श्री हृदय में विराजे सो अविद्या पंच भो की
 करि कहत है जाते यह सिता पुत्र भो क दस करि के
 वने न करत है अथ प्रथम अविद्या को प्रकार कहत
 है काहेतै अविद्या जायत व विद्या हृदय में आवे जैसे
 इलावतार में श्री हृदय ने भक्तन की अविद्या इरि
 गित व हृदय में पंच अविद्या स्थिति भई सो श्री सुवो
 धनी जी में वर्णन है ता ही अनुसार श्री हरिराजी व
 र्णन करत है ॥ भो का मा विष्टे क्रोध युते संसारा स
 तिसंयुते ॥ भो मभिभूते सततं धनार्जन परायणा
 या ॥ अथ श्री हरिराजी कहत है जो अविद्या के
 इतने दोष होइ ता के हृदय में भगवान क वहु न ही
 स्थिति होइ का मा विष्टे ॥ का मा द्विक विषय में निष्ट
 आवेश होइ ॥ सो श्री आचार्य जी महा प्रभु संन्यास नि
 गाय में कहै है ॥ विषया क्रोत देहानां न विशः सर्वथा
 हरि ॥ इत्यादि वचन ते जानो जो काम विश न करने
 ॥ श्री हृदय में क्रोध भस्त्र हो सो बांडा न को स्वरू
 प है ॥ ता बांडा न रूप क्रोध में होइ त
 गवान हृदय में कैसे आवे ता
 ॥ यह लौकिक संसार में आसक्त

पहले वधर इनही के भाग्यो ध्यान में अष्टप्रहर आसक्त हैं
तिन के हृदय में भगवान नाना ही आवैं ३ और लोभ व
रिभरे हैं इत्यादि के लिये अपघात चोरी करत हैं इत्य
ही को सर्व स्वपदार यजान्यो हैं अष्टप्रहर को डी जो डि
वे में मन है हृदय में लोभ है ४ वे में वे हृदय में भग
वान नर है ५ और धमा जल धन के उपाय में परायण
हैं अपने धर्म वे सवत्त धन के ली गे जतावैं ६ अने
क वार्ता सिद्धांत अन के ली गे करे ७ अष्टप्रहर धन
ही में मन राखे ८ तिन के हृदय में भगवान नर है ९ अ
व और हं कुहन हैं लोक ॥ यदा विरह ते रस नित्यं
तोय वजि ते शोक कुले भया क्रान्ति विषय ध्यान
तत्पर ॥ १० या के अर्थ ॥ ह्या करि के रहित है अनेक
जीवन के हिंस्य हैं काहू को दुख देखि प्रसन्न रह
त हैं या भांति दयारं चक मत्त में ना ही हैं ११ तिन के हृद
य में भगवान नर है १२ खेद करि के रहित है भगव
दी वे सव में जिन को रं चक हं से दना ही है किन नी
भगवद् वार्ता सुने परंतु रं चक भगवद् रस को इवी
भूत हृदय में न हो १३ एषे सुखे के हृदय में भगवान
नर है १४ नित्य संतोष करि के रहित है वे सव को स
दा संतोष करे १५ एषो एक स एहं संतोष ना ही एसे
जीव अष्टप्रहर संतोष विना हाय दाय य ह्वार्य न
भयो १६ आज तो क दुन क मायो १७ अव के से काम चलै
गो १८ या भांति सदा संतोष करि रहित है तिन के हृदय
में भगवान नर है १९ सदा सर्वदा संतोष करि संतोष
करि आकुल रहें २० स्त्री पुत्रादि कन के प्रीति के सो क
ग्रहादिक में सुख अथवा सो क जो के से निर्वाह हो
गो २१ या भांति बाल पने ते वृद्ध पर्यंत सो कहि करि व्या
कुल रहें २२ और सदा भय करि हृदय में कंपा यमान

इत्यादिनादिकों काल इर वैपारिक को
उराना तसंबंधी रहसंबंधी को डर इत्यादि नौदिक
नेह करि हृदय में तत्पर है आवेसर हो ना के हृदय में
भगवान कवद्वनर है ११ विषय आदिक के साधन में त
त्पर है देह सो विषय न सिद्धि हो ज्ञान व ध्यान ही मन
में अनेक विचार करो या भांतिक कुछ कार्य व संकोई वैस
व जाने तो आछो आछो ध्यान पान हो ज्ञा आछो कपडा
पहरो पर स्त्री कि मिलि वे को विचार करो या भांतिक
छु कार्य कइ उद न ज्ञा सिद्धि हो इत व दुख पावें मन ही
में ध्यान करे ऐसे विषय ध्यान में तत्पर हो ना के हृद
य में भगवान नर है १२ अक और कहन हो श्लो १
अहंकार सुत कुरे दुष्ट पक्षैक पोय के सो न माग स्थि
तः सर्व साम्य चित न भाव्यते आय का अर्थ अहंकार
र युक्त है जो मो समान और हस गो को ई ना ही है मेव
हुन समान हो मेरे में बडी वैस वता है मे सेवा स्म
रण व हुन करत है मैं अनेक मनोरथ करत हो सो
सगरे कुटुंब को पालन करत हूं मेरे सगरे आपा का
री है इत्यादि मन में अहंकार राखे ना के मन में हृद
य में भगवान नर है १३ कुर हृदय होय पराये वुरो
य में विचारों मन में कपट होय जो मेरो लाव प
तो त व दुख देहि गो पा भांति कुर हृदय है देहो रह
गो को वा ल्यो ऐसे नर कपटी के हृदय में भगवा
र है १४ ऐसे नष्ट कार्य को ई करी चारी अन्याई को
को वुरा करे ता को पक्षपात करे वा को सा च करि दे
स्त्री को स्व न ते आ पु वे र बाधों पा भांति दुष्ट प्रानी को
संग करे ता के हृदय में भगवान नर है शान मा
न स्थिति तथा पुष्टि मार्ग विना को ज्ञा
उपासना इत्यादि में का देने कर्म

सेवक भावना ही है। सर्वगुण भगवान के स्वरूप ईकों
 ज्ञान ना ही है। निराकार जानत है। ता के हृदय में भ
 गवान न रहें ॥ १५ ॥ साम्य चिंतन देवता अंस्ता महदे
 व इंदु गणेश इत्यादिकों चिंतन न करे। इन सौ फल वा
 है। प्रभांति अन्ता प्रय करे। ता के हृदय में भगवान
 न रहें। अब और एक कहत है। ३ श्लोक। लौकिक विमु
 खे ह्यस्य जनवे मुख्य संसृते। ह्यस्य लीला रोष दृष्टो तथा
 कर्म जडे पि च। ॥ प्राक्ते अर्थ ॥ लौकिक वेशांते श्री ह
 र्म विमुख अष्ट प्रहर मिथ्या ध्यान मिथ्या क्रिया मि
 थ्या भाषाण। लौकिक संसृति श्री हर्म ते विमुख एसे
 वे। हृदय में भगवान न रहें ॥ १७ ॥ तथा ह्यस्य के जन अन्त
 न्य भगवत्सीयते विमुख भगवत्सीय की निद्या करे। भा
 वत्सीय को दुख देखे। एसे वे हृदय में भगवान न रहें ॥ १८ ॥
 श्री हर्म की आनंद मय निदोष। ते में भगवान श्री ह
 र्म आपाते से ई सेवा निदोष। ता में दोष दृष्टि जो प्रभु
 कामादिके बस है। परस्त्री या भांति चोरी में दोष दृष्टि
 के हृदय में भगवान न रहें ॥ १९ ॥ और कर्म जड कर्म
 मार्ग में तत्पर। प्रादुर्दिसंधा सेवा प्रभु की छोड़ि देइ
 कर्म ही की मुख जानै। भगवत्कर्म में प्रीति ना ही। एसे
 ॥ २० ॥ अब और एक कहत है ॥

भयिते ग

न। मया कश्चि

श्री विष्णु भाचार्य

नीतिन के चरण कमल ते विमुख एसे के हृदय में श्री
 हर्म न रहें। सुंदर भगवत्कर्म। चोरा सी इत्यादि वार्ता इ
 त्यादि के विदूषक निंदिक जो यह भाषा है। अनेक मुक्त
 करि कहत है। इत्यादि भगवत्कर्म में जा को विस्वास
 ना ही है। निंदिक है। लौकिक कार्य में प्रसन्न होइ

यस्य हृदयमभगवाननरहो यस्य हृदयमभगवानविशदो
यश्च विधाके वरने हो सो जाके हृदयमें रहो ताके हृ
दयमें श्री हृदयक वहुन आवे भगवदावेश वतहुन हो
इताने वैभव के सहोदा विशदो यते रहित रहनो
यह दोय ते डर पतरहे और ऊँ वैभव के ललन के द
तहो जो इतनो गुन हो इतनो वैभव के हृदयमें श्री हृ
दय विराजे सो कहत हो ॥ ५ ॥ लोक ॥ हीने भुद्धे निःप्रप
चे लीना चित्त नन तपरा स्वाचार्य सराणि नित्यं सर्वका
म विवर्जितो ह्यथा कौत्रये ॥ हीन हो ह्वे को ईक धुक्
हो निहा करतो सहिले सो श्री गुणो इजी विज्ञत में
कह हो लोक ॥ आचार्य चरणो सक्त है न्यत्व ते स सा
धन ॥ श्री आचार्य जी महा प्रभु श्री सुबोधनी जी में कह
हो जो प्रभु प्रयत्न करि वे को साधन कह न्यता ही है
नाते हीन हो इता के हृदयमें भगवान विराजे और भुद्ध
हृदय हो इमन में कपट छल छिड़न हो इभुद्ध भाव
ते प्रभु को भजन सराण करे ताके हृदयमें भगवान
विराजे ॥ लोक ॥ प्रपंचा रहित रहित हो इका हृदय
संबंधी में मन न लगावे एक प्रभु में मन लगे ॥ कछु दु
यो प्रभु प्रपंच को बाधक न करे ताके हृदयमें प्रभु विरा
जे ॥ श्री हृदय की लीला रूप वाज लीला दान स्त्री
गीरा सलीला दिने क हो ॥ तिनके चित्त न में ताप
हो सो निराधर लक्षण है श्री आचार्य जी महा प्रभु कह
हो ॥ स्वाविष्ट चित्ताना सर्वा मुर वैरिणः भगवान दे गुण
त में प्रविष्ट हो इत वचने क दोष हृदयमें ते मुर है न्य
हो इति न वेरी को नास हो इताने लीला में जिन को चि
त परो ॥ तिनके हृदयमें प्रभु विराजत हो ॥ अपने पुष्टि
गीय के आचार्य श्री विद्वत् भाचार्य जी के चरण के
अहर्निश चित्त में हो ॥ सो श्री सर्वोत्तम

हे असेय भक्तसंप्रार्थ चरणान्न जोधनाथनमायाभं
निश्रीमहाप्रभुनकि चरणकमलकीरज अपनोस
वेखधनजान्योहोतिनकोहृषाधरामृतसिद्धहेति
नकोहृष्यमेश्रीहृलविराजें ॥ ५ ॥ श्रीलोकिकवेदिक
देहसंबंधीसर्वकामकर्मिनमैवजितहैं कइमनकी
आसतिप्रभुविना नाही ॥ येसेअनन्यवैभवकेह
दृश्यमैप्रभुविराजें ॥ ६ ॥ यवधोरइकहतहैं श्लोक ॥ वृजश्री
चरणभोजरेणुप्राप्तमभितायुको गुणगानिपरेछल
नामार्थपरिभावको ॥ ७ ॥ याकेअर्थ ॥ वृजभक्तस्वामि
नीजीकेचरणकमलकीरणुकेप्राप्तमभिताया
निसदिनमैहै जोमोको वृजभक्तनकेचरणकमल
कीरजकवप्राप्तिहोइगी ॥ यहीमनोरथमनमैरहतहैं
जसिउद्वजीभमगीतकेअध्यायमैकहैहैं ॥ श्लोक ॥
आसामहो चरणरेणुजुयामहंस्पावहावनेकिम
पिगुल्मलतोषधीन ॥ एहत्थनस्वजनमार्थपथ
चहित्वामेजुमुकुंदपदवीश्रुतीभिर्विमृगाना ॥ १ ॥
वंदेनेद्वृजश्रीगांपादरेणुमभिताय ॥ आसह
रिकद्गीतपुनातिभुवनत्रय ॥ २ ॥ एत्पादिबचनकेभा
वविचारे ॥ ताकेहृष्यमेश्रीहृलविराजें ॥ ३ ॥ श्रीहृ
लकीलीलासंबंधीगुनगानकरे ॥ सोहाइसस्कंध
मैश्रीभुवदेवजीकहैहैं ॥ श्लोक ॥ कूलैर्लोयनिधेरा
जननसीधैकोमहीनेगुण ॥ कीर्तेनादेबहुलस्य
मुक्तबंधपावेजेत ॥ १ ॥ एत्पादिबचनकेनेगुनगानकरे
ताकेहृष्यमैप्रभुविराजें ॥ ८ ॥ कीर्तननआवैतोश्रीहृल
यहनामकोअर्थविचारिकैअनुभवकरे ॥ अष्टारम
हामंत्रकोअष्टप्रहरकहै ॥ अष्टमस्कंधश्रीभागवनमें
कहैहैं ॥ श्लोक ॥ अज्ञानादसंयबाज्ञानादुत्तमश्लोक
नामयत् संकीर्तितमधपुरोदेहृद्योपथानल

शान्तमोचरणमादात्म्यं ह्येव पश्यत पुत्रकाः श्रजामि
लोपियेनैव मस्य पासादमुच्यते ॥ १५ ॥ श्रीरश्मि
मेकदेहं ॥ तेषां भाग्यमनुष्येषु कृतार्थान् पानिश्चितं
स्मरंतीस्मायंती हरेर्नामकलौ युगोत्तराद्यां हि वचन
ते श्रीरश्मिदेहिनामदीके अनुभवते भावां न हृदयमे
विराजत देहं अवशोरहक हत देहं श्लोका ॥ अनन्य
नन्यमेवैव निष्ठातत्परतो गतौ भगवद्धर्मनिरतो विर
नेर्गुनसंगिनि ॥ १६ ॥ श्रीरश्मिदेहिनामदीके अनुभवते
न्यभावदेहं श्रीरश्मिदेहिनीकी सेवावरनी श्रीरश्मिदेहिनीकी
राणा श्रीरश्मिदेहिनीकी कथाको अत्राणुन गानमनवच
नहमकरिपुष्टि मार्गके धर्ममें अनन्य देहं स्मृतिमें क
हेहं हारितकृतौ अनन्यसाणा यतु तथैवान्न्यसाध
ना अनन्यभोगभोगाये ते तु सर्वधिकारिणा ॥ १७ ॥
भोति अनन्यदेहना न्यदेवनमस्वयंत नान्यदेवंति
रीक्ष्येत नान्यप्रसादमानदेनान्यदायननंदजे
नरश्चैव अनन्यदेहना के हृदयमें श्रीरश्मिदेहि
गजे ॥ १८ ॥ तथा अनन्यदेह पुष्टि मार्गीय जे सवैस
वदेहं तिनमें पूर्ण निष्ठा करि उन भावदीयन को संग
करि उन की सेवा करै सो भगवदीय गारोहं ॥ एक भग
सो वृजभक्त नको दूजे नंद कि सोरको ॥ श्रीरश्मिदेहिनी
में श्री आचार्य जी महा प्रभु कहैहं ॥ अतः स्थेयं हरि
स्थाने स्तदीये सदतनपरे प्रभु के स्थान में तदीय के स
गतत्पर देहना के हृदयमें प्रभु विराजे ॥ १९ ॥ श्रीरश्मिदेहि
वद्धर्ममेरति होइ यद्द पुष्टि मार्गके धर्ममें प्रीति हो
इ श्रीरश्मिदेहिनादि में मन नखगावें श्रीरश्मिदेहिनादि
थमें श्री आचार्य जी महा प्रभु कहैहं ॥ पुष्टि मार्गस्थ
तोयस्मान् साक्षात् गोमयताखिला ॥ सेवाहतिगु
रोराजा बाधन वाहरि दियो ॥ २० ॥ श्रीरश्मिदेहिनी

५. ९ ग्याप्रमानपुष्टिमार्गमेंस्थितिहोइसंसारहिमेंसाक्षीवत
रहेजेसंजलमेंकमलहोयाभांतिभागवद्वृत्तमेंगतिहोय
ताकेहृदयमेंप्रभुविराजो॥१२॥ औरविरक्तहोइलोकिक
तेसर्वप्रभुमेंसमर्पनकरिदे॥ सोश्रीआचार्यजीमहा
प्रभुसिद्धांतरहृदयमेंकहेहैं॥ तस्माद्वाहोसर्वकार्यस
र्ववस्तुसमर्पनयाभांतिजोवैष्णवभागवानकोसम
र्पनकरिसर्वश्रोतेविरक्तहोपरहोतिनकेहृदयमें
प्रभुविराजतहोयवओरहंकहतहैं॥ लोकलक्ष्माते
भावसंयुक्तेसरसेनपरमातिगेअर्चंचलहृदयजी
लाचंचलेदर्शनकुलेदीयाकोअथो॥ श्रीहृदयमें
आर्तिभरोतेप्रभुपूपाकरें॥ सोनिरोधलक्षणमेंश्री
आचार्यजीमहाप्रभुकहेहैं॥ लोक॥ स्नेह्यमाना
नूजनानदृष्टाहृदयपुक्तोपदाभवेत्तदासर्वसदा
नंदहृदयनिर्गतंवह्निइतिचचनान्नभक्तकोश्री
र्तिलेसंयुक्तभागवानदेखिकेहृदयपुक्तहोइसर्व
केआनंददाता॥ ऐसेप्रभुवाहरप्रगटहोइदरसन
देइअपनोअनुभवकरावेंनातेआर्तितोयहपु
ष्टिमार्गकोफलहोतहांप्रभुपधारो॥ ५॥ श्रीहृदय
मेंभावभरोतेजेसंस्त्रीकोव्याहोइतवहीभा
वहोइजोयहमेरोइपतिहोतेसेइजवश्रीआचा
र्यजीद्वारा निवेदनहोइतवश्रीहृदयमेंभावया
कोहोइसर्वस्वश्रीहृदयकीजानेपदभावहोइ
तवभागवानहृदयमेंपधारो॥ १६॥ भगवदस्वरूप
ससेसरसहोइओरअन्यमार्गीयरसतथावि
षयादिसकरिहितहोयएकपुष्टिमार्गमेंहृदय
धरामृतास्वादःयहीरसकीसिद्धिचाहें॥ एगेरमि
कवेचनकेहृदयमेंप्रभुपधारो॥ १७॥ अचलंग
भीरवहोइअन्यमार्गीयकेसंगतेदुष्टके

संग ते विषयादिके संग ते विषयादिके संग ते बुद्धि च
लायमान न होइ सोइद पुष्टि मार्ग में होइ ता के रु
दय में प्रभु पधारि १२५ श्री हृषिकेश की लीला नाना प्र
कार की नामें चार्ते चंचल हाण लग में लीला रस में
मग्न होइ सो सिद्धांत मुक्ता वली में श्री आचार्य जी
महा प्रभु कहैं चित्त तत्प्रवर्ण सेवा प्रद मानसी
जो चित एक रस नदी के प्रवाह की नाई प्रहर्ष निर
प्रभु की लीला में रहैं त हो सेवा करी पा भोति जा को चि
त प्रभु की लीला में चंचल होइ ता के रुदय में प्रभु प
धारि १२६ श्री हृषिकेश के हरसन की मन तारंवार व्या
कुल रहैं सो श्री भागवत एकादस स्कंध में जनक जी
कहैं ॥ श्लोक ॥ दुर्ध्व भो मानुषो देहो देही नाल एभं
गुरा तत्रापि दुर्ध्व भं मन्ये वैकुण्ठ प्रिय दर्शनं ॥ इत्यादि
कवच न ते जाननी जो यद्म नुष्य देह परम दुर्ध्व भ
हैं लग में भंग होइगी ॥ तादृस भगवान् को हरसन प
रम दुर्ध्व भहैं ॥ सो एह देह सो होत हैं सो कुंभ नदा सजी
को यद्म भाव हैं एक दर्शन श्री गोवर्द्धन नाथ जी के
अंतराय में चिते दिन इतुगो विनु देखे ॥ असे दर्श
न में आति होय ता के रुदय में प्रभु विराजो १२७ श्री व
श्री एक रहत हैं श्लोक ॥ मनोरथ सतां क्रान्ति सवोदा
सीन्य संयुते एतादृसे सुहृदये हरि विराते हाणत
१२८ या को अर्थ ॥ जैसे वृज भक्त नाना भा प्रकार के मनोर
थ श्री शंकर जी के सुख देनार्थ होत हैं वागावस्त्र व्या
भयण सो मग्रीत न मन धन सवोत्तम भाव प्रभु में ते
में इ पुष्टि मार्ग में वक्षु न सर्व स्व श्री हृषिकेश की विति
योग वरावत हैं ते से इत न मन धन करि वैभव प्रभु
ही के कार्य में सेवामें अनेक मनोरथ
क न होइ तो मन ही तेना भा प्रकार

मानसी सेवा ताके इहयमें प्रभु विराजे २१ श्रीरत्नोक्ति
के वैदिक में देह संबंधी कार्य में सब ठोर अपन मन को
उदास राखे लौकिक में साक्षी बन रहे संसार के दुख
सुख के मन उदासी न रहे तो प्रभु इहयमें रहे २२ श्री
व श्री हरि राइजी कहत है जो यह द्वावि सगुण विद्या रू
प जा वैभव के इहयमें आवे ताके इहयमें श्री हृत्प
धारे अंतस्वरूपानंद को अनुभव करावे जेसे वृजभ
क्तन की अविद्या हरि भई विद्या सिद्धि भई तथा श्री हृ
त्प इहयमें विराजे तेसे ईवै सब द्वाविंश दोष छोड़ि
द्वाविंश गुण को धारन करे तो श्री हृत्प निश्चय ताई
हृत्प इहयमें पधारे २० इति श्री हरि राइजी हृतमि
त्र पत्ता की टीका श्री गोपेन्द्र जी हृत संपूर्ण ३२
अवजपर विद्या अविद्या के प्रकार कहै सो वृजभक्तन
के प्रभु ही सिद्ध की ऐतव भरे भक्त को सामर्थ्य नाही
है प्रभु ही अविद्या हरि की ऐ पाछे विद्या दोन की ऐ
सामर्थ्य आपनो ही ऐ तब रासपंचाध्याई में प्रतिव
ध सार तोड़ि के सगरे प्रभु पास पधारे अनुभव भरे
तेसे न हो पुष्टि मार्ग में जब प्रभु हृत्प करे तब ही फल
होइ सो आगे कहत है लोका अस्मि मार्ग प्रभोरि
लामात्र सर्व न का न जीव चा चरण भावन प्रतिक
लो फल निजे २१ या को अथ श्री हरि राइजी क
हत है जो हमारे श्री वक्षत्र भाचार्य जी के पुष्टि मार्ग में
हरि जो श्री हृत्प एसे प्रभु की इच्छाई सर्व कार्य में का स
है देवी जीव अंगो को होइ सो दुःसंग ते सब होइ न
था और को वरणा होइ ब्राह्मण क्षत्री वैश्य शूद्र कोई
वरणा होइ ब्राह्मण क्षत्री वैश्य शूद्र कोई वरन होइ न
था प्रतिकूल मार्ग को देखी वद मुख होइ मले छह
इचा डाल माला ह इत्यादिक द्वाय सर्व धर्म करि रहि

यें ऊं को प्रभु की इच्छा ते सरन आय यह पुष्टि माता क
 को निश्चय पावें ताते इच्छा ही ते मुख है सो वार्ता
 दिहैं अलीखान और अलीखान की वेदी भगवद इ
 ते सरन श्रीगु सोई जी की आश्चाचा हरिवंस जी द्वारा
 ले आये ताते इस की इच्छा परम कारण है ताते भग
 इच्छा परम कारण है ताते भगवद इच्छा परम कारण
 मुख है यह निश्चय सिद्धांत जानने लोक ॥ तदा
 एन नाश सुदेन्या देव ह्यो हतान सहीनेषु निजामि
 प्रभु क लो करेति हिरया को अथ ॥ ताके वरन
 को नास होइत वह रिक्के हत सेवामें अंगीकार होइ
 काहे ते यह वरन धर्म है सो सेवामें प्रतिबंध है प्रभु
 संबंधी नाही है हेइ संबंधी है जहां जीव जाके धर्म
 गटे सोई वरन कहवें मेरी छेउ ह धरणा धर्म जान
 है फल जहां जहां जन्म लेइ तहां को वरन धर्म उह
 आत्मा संबंधी नाही है हेइ संबंधी है जहां लो देइ
 तहां तोई वरन धर्म ताते भगवद सेवामें कामन आ
 वें प्रभु को अंगी हत न कहवावें ताते श्री आचार्य
 जी मद्रा प्रभु प्रगट होइ के आत्म निवेदन करवाये
 ताकरि सगरे हेइ संबंधी वरन को नास भयो जो मे
 फलानी जाति यह अहंता ममता छुटी यह भाव
 भयो जो मे तो प्रभु को सास हो यह देन्यु सिद्धि भयो
 भावांन को संबंधी भयो सव भाव दस दस मि अंगी
 कार भयो त्रैलु संबंध ते सुद भयो सो ही न ताक
 ह्यस्य भाव दं भयो तव प्रभु की इच्छा आपुई ते भई
 जो अवतो यह मेरो भयो अवतो छोड़ो जान जाय
 ताते प्रभु की निज इच्छा भई प्रभु अनु
 सिद्धि भयो सो कहत हो ॥ श्लोक ॥
 खाना किं फलं दुश्चै भंमर्तं ॥ कृपाव जायते

तव
 दा

प. कसिद्धिनस्यनात ॥ ३ ॥ याके अर्थ अवश्री हरिगङ्गीक
नहीं नवप्रभु श्री हनुमान भणेत वसगोपलसि
धमयो ॥ यामें संदेह नाही है तातें श्री हनुमान की ह्वाका
कारण एक दैन्यता है ॥ सो लोक कमें कहें प्रसिद्धि दे
यत है ॥ जो के सो ऊचेरी होइ के सो काम विगाडे परंतु
आय के रागा पडे ॥ जो मितो तुम गोहो ॥ अब चाहो सो
रो तव गृह पाही करे ॥ साधो न जाय ॥ ते सें अनेक जन्म
ते जीव भूयो है ॥ सो सर्व श्री आचार्य जी द्वारा समर्पन
करि के दैन्य होइ रहे ॥ जो मैं श्री हनुमान को दास हूँ तव प्र
भु प्रसन्न होइ ॥ ह्वा पाइ करे ॥ सो श्री भागवत एक ह्म
स्वंधर्म पिरोला वाक्य ॥ लोक ॥ संसार कपे पतितं वि
ये मुपिते लण ॥ अस्त काल हिना त्मानं को न्य स्वातुम
हे श्वरा ॥ १ ॥ ओर पुरखाने वित्त करी है ॥ लोक ॥ पु
न्या दिस्तं चितं को न्यो मोक्ष यतु लमः ॥ आत्मारामे
मृते भगवन्तं मधो लजं ॥ २ ॥ शुक् देव जी कहें है ॥ लो
३ ॥ घोर कलियुगो प्राप्ते सर्व धर्म विवर्जिता ॥ आयु
व परामन्यो स्तेव ताथे न संशय ॥ ३ ॥ पुन्य त्यादिस्तं चित
को न्यो मोक्ष यतु लमः ॥ आत्मारामे मृते भगवन्तं म
धी लजं ॥ ४ ॥ या भांति पिरोला पुरखारी ॥ ओर ह्म पदी
गजे इजिनने आर्तिक रिसरन आणे ॥ तिन सबन को प्र
भु उद्धार करे ॥ ओर कलियुग यह महा कठिन काल है
सर्व धर्म करि वर्जित है ॥ तातें एक प्रभु को आश्रय करि
देन्य ही करि ह्वा प्रभु की होत है ॥ यह सिद्ध है ॥ ३ ॥ अब
ओर ह्म प्रकार दैन्य को कहत है ॥ लोक ॥ अतो दैन्य
दि मार्ग स्थित परम साधन मते ॥ अभिमानो दश्वापि
सतत तद्विरोधिनो ॥ ४ ॥ याके अर्थ अवश्री हरिग
ङ्गी कहत है ॥ जो हमारे श्री वल्लभाचार्य जी के मार्ग
में परम साधन एक दैन्य है ॥ दैन्य भावना करणा थ

सर्वसमर्पनहै नाते जकों दैन्यता सिद्ध भई तिन को य
ह पुष्टि मार्ग को फल सिद्ध हो भयो सो विज्ञ समे श्री गु
प्त जी कहै है ॥ याद सीता दसी नाथ त्वत्पादा मै कवि
करो तद्वन्न कथमाप्याशु करुण गोचर नम ॥ यज्ञ्या
दिव दत्त लो क दे के कहे जे सीते सीतु मारे चरण क
मल को किं करी दामी हो नाते आपनी जानि हू पाव
री मेरे नेत्र न को दर्शन वेगि ही करावों और श्री आ
चार्य जी महा प्रभु श्री सुबोधनी नीम कहै है दैन्यतने
प्रसाधन ॥ या भाति दैन्यता सर्वोपसाधन है यह पुष्टि
मार्ग के फल में विरोधी ये कम्प अभिमान ही निरंतर
पे ही बाधक है ॥ ना ही ते श्री आचार्य जी महा प्रभु विवेक
धेयो प्रथम कहै है ॥ अभिमान संत्याग्य साधन तत्
भावना न विरोधत ये दाज्ञा स्यात्सकस्त गोचर
॥ अभिमान तो स्वतंत्र होइ सोई करे दास को ना ही
कर्तव्य है ॥ काहे ते खासी के आधीन की भावना दास
को कते कहै ॥ काहे ते खासी के आधीन की भावना दा
स को कते कहै ॥ सो अभिमान ते दास पनो जातर है ना
ते बड़ो बाधक है यह पुष्टि मार्ग के फल में विरोधी है
४ अक्त्रों रंक हन दो स्लोक ॥ तौ विज्ञाय प्रयत्नेन
परित्याज्यो फलार्थिभिः ॥ दोषां समखे द्रियाणां सा
धने रेवनाशयेन ॥ पृथक् पृथक् ॥ और प्रभु सो कहै
फलार्थे विज्ञाति कुरत हो ॥ काहे ते लो किक की प्रार्थना
ते लो किक सुख ते ॥ सर्व इन्द्रियन को साधन ना ही है
त है ॥ सार साधन को ना स है ॥ सो निरोध लक्षण में
आचार्य जी महा प्रभु कहै है ॥ ससार वेद दुष्टानो इ
न्द्रियाणां हिताय वै संसारा वेष्टसो इन्द्रियको
प्रिय है ॥ नाते कछु फल न मागने ॥ सो विवेक
य में श्री महा प्रभु जी कहै है ॥ स्लोक प्रार्थने

किं स्यात्स्वामिभिः प्रायः संशयात् प्रभुते प्रार्थना करि
ये काहे ते स्वामी जो श्री कृष्ण तिन के मन में अभिप्राय क
हा है हे प्रभु कदा जानिये कदा संन विचार्यो है देन क
ओर जीव बुद्धि ते कदा मागों तो प्रभु प्रसन्न होइ जो
मे तो बड़ो पदार्थ विना मागों देतो यह तु छ माग्यो तो तु
बड़े नो पाभांति प्रार्थना करे ते फल से न न ता होइ
लौकिक सिद्ध करे तो सगरी इंद्री विमुख होइ जोइ
ना ते प्रार्थना प्रभु सो सर्वथा ही न करनो श्लोक अ
थवा अथमात्रेण नासयिष्यति मत्प्रभु निजा वा
सी श्रितानां तु होषवन्ति स्वरूपन ईया के अथ उप
कहे जे से प्रार्थना ते फल को दान होइ ना ही ना सहो
इ सो कहत है जो दामोदरदास संभरवार की वार्ता
में है श्री नरेंद्र चक्रवर्त्तया प्रकीयो मो पुत्र मलेष्ट
होय गयो ए सो बाध कहै श्री गुसाई जी विरत में क
हे है श्लोक अहं बुंगी दुगगी संगी सांगी ह तो
समय अन्य संबंध गंधोपी कंधा से बंधते १ अ
न्य संबंध गंध इ होय तो गरो कटे प्रभु सो अन्या
अथ न सहो जाये ने दराइ जी अं विका पूजन ग
रे सो प्रभु को बुरी लागी तब तहां सुंदर सन सर्प न
दराइ जी को निगल गयो तब प्रभु की सरण होइ
प्रार्थना करी तब छुटे ताते अन्या अथ महा बाध कहै
ओर अथ ने श्री धर्म भाचार्य जी के आश्रय ए से जो
भगवदीय जन है तिन में जो दोष दृष्टि जो को छु देखत
है भगवदीय को दोष देखि तिन को ना सहोइ निश्चय
जे से अग्नि में पतंग जर मरत है अग्नि को कछु ना ही वि
गडत है ना ते भगवदीय में दोष न विचार जे से अग्नि
सूर्य सर्व में है परंतु सुद्ध है जे से मल देव जी विषय न
कीये तो उन को कदा बाध कहै ईश्वर सर्व जड चेतन

तो वहा बाध कहै ते से ई भगवदीय मेरा धनुष
न को फल ना सहोइ शरीर लोक संवंध मात्र तो
भी भवेति दण्ड मात्रतः अतः स्वाचार्य मात्रैक ज
स्तत्पुत्राश्रितैः २५० अर्थ श्रीगुरुश्रितैः संवंधमा
ते जो एक लण जो डारे सो ई भस्म होय जाय यामे
हा कहनो सो प्रसिद्धि देखियत हो ते से ई जो स्वाचा
री वक्षेत्र भाचार्य जी के सरण मात्र ते सकल दोष भ
म एक लण में होइ तो ज व श्री आचार्य जी के चरन क
मल को छुट एक आश्रय करै ता के दोष भस्म होय
यामे वहा कहनो उचित ही है श्री महाप्रभु जी के च
रण कमल के आश्रय ते दोष हरि होइ और देन्य
ता से सिद्ध होइ फल रूप लोक ॥ तदुत्थायो व बोधा
यो विहितानि प्रयत्नतः दुःखं वा वर्जितैः संगसंग
प्रागपुनरपि दुःखा को अर्थ यह पुष्टि मागी य ग्रं
थ श्री आचार्य जी महाप्रभु श्रीगुरु साई जी के आदि श्री
मुबोधनी जी निबंध अनुभाषा टिप्पणी विद्वन्मंड
न इत्यादि छोडे वडे ग्रंथ श्री सर्वोत्तमादि इन के भाव
के बोध भगते आश्रय सिद्ध होइ सो सर्वोत्तम ग्रंथ
में श्री आचार्य जी के पुत्र श्रीगुरु साई जी के हैं लोक
तदुक्त मपि दुर्वोध सुबोध स्याद्यथा तथा इति वचना
त वेद में यह कहै है तो जहां तो ई वेद के अर्थ को बोध
न होइ तहां तो ई प्रभु की प्राप्ति ना ही तहां तो ई प्रभु
पान करै सो या कलिके जीवन को तो वेद दुर्वोध है
जान्यो ना ही जानत है ता के लीये श्रीगुरु साई जी सर्वोत्त
म प्रगल्भी है यामे १०८ श्री आचार्य जी महाप्रभु जी
के अलौकिक नाम है यह सर्वोत्तम के जप की
निश्चय वेद दुर्वोध होय श्री
को दान करै निश्चय

प. १
श्लोक॥ ह्येतां धयमना स्वादमिद्विरत्ननसंमयः या
भातिताते सर्वोत्तमको जपवैलवको आवस्यकर्तव्य
होयहकरिसर्वोयुवोधहोइहैन्यहोयचाश्रयसिद्ध
होइतातेफलार्थश्रीगुप्तोइतीप्रयत्नकीयोहैतेमै
इवैश्वकोइप्रयत्नकरिसगरेपुष्टिमागीयग्रंथन
कोअवलोकनकरनो॥ ओरदुःसंगकोत्यागकरै
सत्संगप्राप्तकेयत्नकरिआश्रयहोयहैन्यहोइताही
तेप्रथमस्वंधमैश्रीभागवतमेंश्रीशौनकजीकहेहे
श्लोक॥ तुल्यामल्लवेनापिनस्वर्गनपुनर्भवभाग
वत्संगीसंगसंमत्पानं॥ ६६॥ शिष्यः॥ याभाति
सत्संगवरावरिसुखनस्वर्गमैहैनमोहहमैहैता
तेसत्संगकरेताहैन्यओरभागवदचाश्रयसिद्धहोइ
॥ श्लोक॥ स्थियंसेवापरैरन्याश्रयत्यागविचर
णो॥ कामलोभादिहोयैकपरित्यागोद्धृतिंसदा॥ दीया
योअथ॥ अवश्रीहरिगइजीकहतहैजोश्रीहृष
कीसेना॥ ६७॥ स्थितहोयकाहैतेपहपुष्टिमाग
मेंपरमपूज्यभगवदसेवाहीहैओरश्रीभागव
तनवमस्वंधमैश्रीभगवानमैकहेहे॥ श्लोक॥ मत्से
वयाप्रतीतंचसालोकादिचतुष्टयेनेच्छंतिसेव
यापूर्णकृतोन्यत्कास्तविलुप्तं॥ इतिवचनान् ए
सेभगवद्वीसेवामेंविश्वासकीगिहैजोचतुष्टमुक्ति
पर्यंतनाहीचाहतहैयाभातिसेवामेंपूर्णहोइतिन
कोकालनाहीबाधकहैयाभातिश्रीहृषकीसेवामें
स्थितिहोइओरअन्याश्रयनकरैदेवताआदिइ
त्यादिकोआश्रयारंभकहोइतोफलकोनासहोइ
तातेअन्याश्रयनकरैएसोविचलणअपनेमार्ग
कोटेकलीगिहैओरकामादिविषयओरलोभको
त्यागकरैकाहैतेकामादिविषयतेश्रीगुरुजी

हृदयमें ते पधास्त हो। ओं रत्नो भक्ति संसाग सति हो
त हो। सो रत्नो भक्ति के पाप पुण्य विचार नही है। अ
पनो स्वायं ही केवल होय। ता के वस होइ देहादि इंद्री
तया देह संवेधी कुटुंब तिन ही की रक्षा कस्त हो। असे
लोभी ओर कामी के हृदय में प्रभु न आवै। ताते काम
लोभ सदा त्याग करे। तव है न्यसिद्धि होय फल ह्वा
इति श्री हरि राइजी कृत सितपत्र ताको टीक श्री गी
पे न्द्रजी कृत संपूर्ण ॥ ३३ ॥ अथ कृपस्क है न्यमुख्य
है सो ग्रंथ के बोधते सत्संग ते सेवा है न्य होय। सो से
वा है दोय प्रकार हो। एक मुखारविंद की भक्ति सर्वा पर
एक चरण वसुन्की भक्ति। सो आगे देखि भक्ति को प्र
कार कहत हो। श्लोक ॥ श्री हृत्सः सर्वदा सेव्यः फल प्रा
प्त स्वतः सुखः मुखारविंद भजते। तैव सात्ता तैव वरुप
या शया के अर्थ ॥ अथ श्री हरि राइजी कहत हो। नो
यह पुष्टि मार्ग में तो सदा सर्वदा श्री हृत्स जी ही से
अर्पे। सो श्री आचार्य जी महा प्रभु चतुर्लोकी में क
हे हो। सर्वदा सर्व भावेन भजनं यो भूजाधिपः इति व
चनात। सर्वदा सर्व भाव करि च जके अधिपति श्री
हृत्स तिन ही की सेवा कर्ते यह है। स्वस्पाय मे बध मे
ही नान्य द्वापि कुराचन। महा प्रभु जी कहे हो
रावहु मारो यह धर्म है। प्रो पुष्टि मार्ग में नो कोई अस्थि
त हो। तिन को पड़ी धर्म हो। निश्चय श्री हृत्स सेवा ही क
र्ते यह है। ओर कोई कदापि कोई कात्व में ह्मरो साधन
नही कर्ते यह है। नई करि के पुष्टि मार्ग के फल की प्राप्ति
स्वतः आपु ही ते सिद्ध होय। ताते प्रार्थना है नही कर्ते
य। सेवा ही कर्ते यह है। काहे ते मुखारविंद की भक्ति सो
सात्ता तस्वरूप सेवाने सिद्ध होय
तम

प. मेसाहातकारहै प्रहमुखारविंदरूपकीभक्तिकहतहै
सर्वोपरहै औरअवलगणारविंदकीभक्तिकहतहै
श्लोक चरणारूपकभक्तानुधर्मसेवात्मरूपयाधर्म
द्वारातद्विशिष्टप्रभुप्राप्तिनसंशय २ या अ
चरणारूपकभक्तिहै सोधर्मसेवात्मकरूपहै जैसेअ
गेब्रह्माशिवनारदसनकादिकसबकरिआगेहै
ताहीभक्तिमर्मादासंयुक्तधर्मवत्करनो प्रहधर्म
द्वाराभक्तिहै ताऊपरप्रभुकीप्राप्तिहै यामेंसंयन
हीहै तदांसेदेहकोइकरेजोऊपरमुखारविंदकीभक्ति
कहे धर्मसेवात्मकहीद्वाराप्रभुकीभक्तिवताहै तब
होऊएकहीभई त्वश्रीआचार्यजीमहाप्रभुप्रगटहो
इकैकहाअधिकारकीहै याप्रकारसंदेहहोइतही
कहतहै जोफलमेंबहुतनेदहै पुष्टिभक्तिमेंअधराम
तरस्कोपांन औरमर्मादाभक्तिधर्मरूप तासैमुक्ता
दिपूजहै सोआगेनिरूपणकरतहै फलकोप्रकार
श्लोक तत्रसायुज्यसंबंधानलोभाभक्तसेवनं मु
खारविंदभक्तौतुसाहासेवनंमत्तं ३ या अ
प्रहअचरणारूपकमर्मादाभक्तिवैसायुज्यभक्तिकी
प्राप्तिहै ताहमेंएकनेदहै जोलोभान्तसोसेवानक
रेकछकामनामनमेंरंचकहनराखे जैसेप्रहलाद
जीभक्तिकरी पाछेनसिंधजीखेभमेतेप्रगटे सोक
हतहै प्रहलादकछमागि तबप्रहलादनैकही
मेवोहारीनाहीहो मेमेकलाचितमागिवेकी
वासनाहोय सोअतुमइरिकरिदेहं याप्रकारनि
सुकामकरे तवसायुज्यभुक्तिमेंरूपप्रभुमेंलीन
होइ औरमुखारविंदकीभक्तिहै सोतोप्रभुकी
साहातसेवारूपहै भक्तियतमेंप्रभुकीसेवाओ
फलप्राप्तिभरेपाछेहं प्रभुकीसेवायामेंसाधनफल

न्यारोनाही। सदा प्रभुको सातान खरूपानंदको अनुभव
 देताते मुखारविंदपुष्टिभक्ति सर्वोपरि है। और मर्यादाभ
 क्तिसे बड़ा तारतम्य है। ताते होय न्यारी न्यारी भक्ति वर्त्ती
 है। ३१ श्लोक। एतादृक् परलित भक्ति भवेदकेवलपुष्टि
 तः। तत्रापि मुखरूपास्येदाचार्यो संश्रयः। प्रथमं सर्वथा
 कार्यस्ततएखिलं भवेत्। ३२ श्लोक। यथा यद्मुख
 रविंदकी पुष्टिभक्ति ताको साधन एक श्री आचार्यजी महा
 प्रभुके आश्रय पद साधन है। ताते प्रथम सर्वथा यही कार्य क
 रते। यही हमारे श्री बध्मभाचार्यजी के सरन आयनामनि
 बदन करि पाछे अपने मनमें दृढ़ श्री बध्मभाचार्यजी के
 चरणकुमलको आश्रय करे। ऐसे धैर्यवत् अखिल सक
 ल कार्य सिद्ध होइ। यामें संशय नाही है। ताते मुखारवि
 ण्दकी भक्तिमें एक श्री आचार्यजीको आश्रय ही साध
 न है। और कोई नाही। ३३ श्लोक। अतः परंतु न इत्तेह व
 स्था साधनादिको निरूप्यते संतोषार्थतत्तत्कृपातो
 इति स्थितं। ३४ श्लोक। और मर्यादाभक्ति है। ताते
 तो साधन अनेक प्रकार के हैं। पाछे मुक्तिफल है। औ
 र पुष्टिभक्तिमें केवल श्री आचार्यजीको आश्रय।
 ताते चरणकुमल भक्ति वारे साधन कर्तव्य है। आगे
 निरूपण करत है। अपने मनमें संतोषार्थ तथा अपने
 तदीय पुष्टिमासीय भागवदीय के संतोषार्थ जो
 हमको एसादान श्री आचार्यजी महा प्रभु ही गेहें
 या प्रकार निरूपण करत है। तहें श्री महा प्रभुजी की कृ
 पाते यह पुष्टिमासीय भागवदीय भक्ति हृदयमें स्थि
 ति होइ श्री पूर्ण पूर्ण हृद्योत्तम स्त्रीलासहित होऊ
 भक्ति के साधन करत है। ३५ श्लोक। यथा मर्यादाभ
 क्ति त्रेस्तभावतु साधने तथा सवीर्य
 नत्वेन बुध्यतां श्रद्धाको यथै॥ जैसे

नैत्रं सभावहं सोऽस्माधनहं संगो ब्रंस्तड ब्रंस्तमय
हं अपनपेको हं ब्रंस्तमं नतहं यह ब्रंस्तया भांति सव
गोर ब्रंस्तभावयहं मर्यादा भक्तिको साधनहं तेसे यह
पुष्टि मार्ग रज भक्तन के भायात्मकहं ताते भावहीयह
भावना साधनहं ताते रज भक्तन को भावकी भावना
करे यही साधन बुद्धि में निश्चय राखे ७ श्लोक वस्तु
तस्तु फलं चैव फलं स्यातः प्रवेशात् तत्त्वद्वयं तु सर्वेषां
देहातः कारणात्मना यथा चैव अपरमर्यादा भ
क्तिकहं ताते वस्तुतः जो अक्षर ब्रह्म रूप फल ताते
प्रवेश होय फेरि माया के गुण में न आवे यह मर्या
दा मार्गीय फल और पुष्टि मार्गीय को प्रभु की
लीला रूप फल में प्रवेश तहां सरूपात्मक रूप को
अनुभवहं ताते सेवाने त्रते दरसन अंतःकरण से
प्रभु की लीला को अनुभव सर्व इंद्रीय मन को मन प्रा
न सर्व प्रभु में तत्परता जैसे ब्रंस्त संबंध में गद्यार्थ में क
हे हं या प्रकार मुख्य फल लीला रूप ताको अनुभ
व पुष्टि मार्गीय भक्त को या प्रकार से मर्यादा पुष्टि भ
क्तिको न्यारे न्यारे फल वर्णनहं ताते पुष्टि भक्ति परम
रसात्मक सर्वोपर श्रेष्ठहं ८ श्लोक येन भावेन भ
गवत्यात्मभावो हि जायते तस्मात्तद्भावात् स्वदेहा
दिसकलं स्यात्तदर्थं कं दया चैव अपरकहेता
भांति भाव जो भगवान में बदे अपनी आत्मा को
भाव बदे प्रभु में तो भाव बदे और जो अपनी आ
त्मा को भाव बदे प्रभु में तो भाव बदे और जो अप
नी आत्मा को भाव भगवान में न बदे तो भाव जा
तरह है ताते अपनी आत्मा को भाव भगवान में ब
दे जा प्रकार से उपाइ कर रह नो जब अपनी आ
त्मा को भाव भयो सो कैसे जां नियो जब देहादि

प्रभुनसवप्रभुकेअर्थलगेतनमनधनतीन्योप्रभुमे
लगेतनुजावितजाहोउप्रकारसेवाकरे॥श्लोक
नदेहाद्यर्थसिद्ध्यर्थभगवानप्यपेक्षते॥यतोदेहा
दिरहापिप्रभुःलीलोपयोगत॥२०॥याकोअर्थ
यहभाष्यदसेवाहंदेहादिसिथैअर्थतथादेहसं
बंधीकुहंवइत्यादिइव्यकामनार्थनकरेअपनी
भोगसुखकहुहंनविचारेंकेवलभगवानहीकी
अपेक्षारहेसाप्रभुकोनप्रकारसुखपावेगेमतिक
छुअपराधतेप्रभुउदासीनहोययाभांतिप्रभुकोसु
खविचारेंतथाभगवानकेदेहात्मकीस्वरूपानंद
केअनुभवकीअपेक्षारखेंदेहादिकोभोगसुखन
विचारेंतथाभगवानकेदेहानकीस्वरूपानंदकेअनु
भवकीअपेक्षारखेंदेहादिकोभोगसुखनविचारें
तहोकोईकहेजोदेहकीरक्षाकरेजोसेवाकेसंज्ञ
याअनुमदेहअर्थनाहीकीगिहोयहसंदेहहोइत
हाकरतहोजोअपनीदेहकोभोगविचारेंइंद्रियनको
सुखविचारिकेंनकरेंमहाप्रसादलेइतामेंयहभाव
रखेंजोप्रभुकीसेवामेंसामर्थ्यहोइइंद्रियादिसिथल
नहोइजाइयाभावसोंलेइजेसैंश्रीगुसाईनीपरदेस
पधारतहेंतवविप्रयोगकरिहुसहोतहेंआरजवपर
हसतेश्रीजीहारपधारतहेंतवसुंदरवहनधीसहि
महाप्रसादलेतहोसोयहभावतेजोश्रीगोवर्द्ध
नाअजीहमकोहसदेखेगोतोउनकेमनमेंदुखहो
गोसोआहोनाहीप्रभुहमकोदेखिसुखपावेंतोह
कोंआछीभांतिरहनोंयहभावतेवृजभक्तनकोंअ
नीदेहकीरक्षाकरतहेंअपनीसुखनाहीविचार
हेंयाभांतिदेहादिकीरक्षाकरतहें
विचारिकें२०॥श्लोक॥नस्वार्थ

५. भगवाने वयत्र दिये न भावेना निमित्त प्रीति भवति
वेदों ११ या के अर्थ अवश्री हसि इनी क हन हो जो स
थि बुद्धि ते न करे जो कछु लौकिक वैदिक फल सिद्ध हो
इगो तथा प्रभु की सेवा ते ह्युतार्थ हो उगो यह स्वाथ
बुद्धि ते भाव द सेवान करे काहे ते भगवान ते स्वार्थ
को विचारें भगवान ते स्वार्थ को विचारें भगवान
विना विचारें ही आपनी इच्छा ही ते सर्व कार्य सिद्ध
रगे श्री आचार्य जी महा प्रभु नवरत्न ग्रंथ में कहें स
र्वेश्वर सर्व आत्मा निजे छान करि प्यति प्रभु सर्व
ईश्वर हैं सर्व की आत्मा हैं सर्व जानत हैं सो आपनी
इच्छा ही ते दास के सकल मनोरथ सिद्धि करे गोता
ते प्रभु की सेवा ते आपनी स्वार्थ बुद्धि न करे और गो
ए भाव ते त्रि आवत न करे भाव संपुन प्रीति सो क
रें काहे ते भगवान को एक प्रीति ही ते धरे पद्मनाभ
दास के छोला प्रीति ही ते आरे गोता ते प्रीति सो क
रें ११ जो न फल को ह एं यत्र लौकिकानां य
था धन ते तद्भावे यथा लोके दुःखेना संत्यजंते ही
१२ या के अर्थ सो प्रभु की करि छुट्ट फल की को
लास मनोरथ न करे काहे ते फल की को मन एखे तो
पुष्टि मागीय मुख फल तो को ना सहो इत को का
मना भाव में बाध कहें यह जानि फल को लात करे
लौकिक में धन मुख्य है सब ही को ऊँचा कहते ते से य
ह लौकिक की ना इधन न चाहे काहे ते बोहोत धन ते
महा दोष होत है महु अहु का को कारण धन ही य
ह कलियुग में है ना ते लौकिक वैदिक तथा धन की
प्रार्थना प्रभु सो न करे तथा जो मयोदास में जान बल
ही सब ठेग में ही ऐसे जान हु को न बाधें भक्ति में बा
ध कहें स्वामी सेवक के भाव को संवेध को ना सकहे ता

तं शान्तिमिति को न चाहौ तथा स्वर्गलोकते ब्रह्मलोक
 र्यं न सुखं न चाहौ तं ह्यलौकिकं वैदिकं देहसंबन्धीयं नैव
 दुःखं नैति न केनामहो इवेकी प्रार्थना सर्वथा न करे सर्व
 थोऽस्ते निष्कामहो श्रुतिस्तोत्र ॥ सर्वन्यागस्तु सहज
 यत्र लौकिकं वैदिकं निरपेक्षं स्वभावस्तु सर्वभावो नि
 गद्यते ॥ १३ ॥ पाठ्यं यथा श्रीभगवान्निमेषं सहजं प्रीति क
 रितुं सर्वन्यागसह नदीमं करि लौकिकं वैदिकं कथुन
 चाहौ सो चतुर्लोक्ये श्रीआचार्यजी महाप्रभु क
 हे हौ यदि श्रीगोकुलाधीशं धर्मः सर्वात्मना इति
 ततः विमपरं ब्रह्मलौकिकं वैदिकं रपि ॥ या भाति स
 र्वे आत्मा श्रीहस्मिन् तिनको इत्यर्थे धारन करे से
 वा करे ओ स्तौ किव वैदिक कथुन चाहौ निरपेक्ष हो
 इत्यर्थे सुदभाव हो इस नमं कपट छु छि छु छु न
 राखे सवात्मभाव करि एक प्रभु ही में मन हो ॥ १३
 लोक ॥ तथा ब्रह्म न्यसेवकं मार्गे निब्रवणादिकं
 देव्ये नैव संतुष्टः प्रादुर्भूतः फलं देहो ॥ १४ ॥ या यो यथा
 वधी हरि प्रीति करत हो जो यह पुष्टि मार्ग मे एक देव्य
 ही साधन हो सो कव होय पुष्टि मार्गीय भगवदीय
 सो यह मार्ग के ग्रंथ श्रवण करे तब देव्य भाव की
 प्रवरि पडे नाइतें भक्ति वदनी ग्रंथ मे श्रीआचार्यजी म
 हाप्रभु कहें सेवायां वाक्यायां वा भगवत्सेवाय
 य पाद करनी पाद पुष्टि मार्गीय ग्रंथ भाव हीय के
 खसों अतो सर मे कथा सुननी काहे ते सेवा को
 तोषन होइ न्यो जो श्रवण होइ न्यो सेवा मे रुचि
 होइ भिमाना दिहोय की निबत होइ देव्य तासि
 नय तहा देव्य तासि दिभई तहां श्रीधरजी प्रग
 ॥ १४ ॥ हरमन होइ जे सेरा सपं वाधा
 न करि पाद नि साधन होइ दे

प. नकी ऐ नवली तवप्रभुतत्कालपधारे तातेजहांतें
इसाधनकोवलमनमेंहोइतहांतांइहैन्यतानत्रा
वें तवप्रभुसंतुष्टहोय प्रादुर्भूतहोइस्वरूपानंदको
अनुभवकरावें॥१४॥श्लोक॥ तदेवातुष्टिमबंधनदे
न्यप्रसि यदेन्यतासकंबदि विरोधीसकलमंत॥१५॥
कोश्र कोइदेवांतरतेहोइकें नसेवे काहेतें देवता
ब्रह्मासिवादिइंद्रादिकों यहफलकेसेइनाहीहैंतों
देवताओरकोंकहातेंदेहिगे तातेदेवांतरभजनते
अन्याअग्रहोय सगरेफलकोनासहोय तेसेइहै
न्यविनाफलसिद्धनहोय अक्वश्रीहरिगइजीसम
स्तपुष्टिमागीयवैष्णवनसोकहतहै नोजासाधन
तेहैन्यताकोनासहोइ सोसर्वयहपुष्टिमार्गतेविरो
धीमनजाननो केसेइसाधनहोय पुष्टिमार्गतेविरो
धीदेन्यनासकरें एमोसाधनसर्वथाहीनकरनो
यहकहिके यहजताऐजोपुष्टिमार्गविनाअन्यमा
र्गकीजितनीक्रियासाधनहैं तितनीसर्वपुष्टिमार्ग
केफलतेविरोधीहैं यहनिश्चयमनमेंजानिअन्य
मार्गकीक्रियानाहीकर्तव्यहै॥१४॥श्लोक॥ एतन्मा
र्गगीहृतोद्विहृदिदेन्यविवर्द्धयेत् मदादिजनकंदुष
नाशयत्पापिलोचितं॥१५॥कोश्र अक्वश्रीहरि
गइजीकहतहैं जोएतन्मागीयपुष्टिमार्गमेंजेमें
कोइश्रीआचार्यजीद्वारासरनआणेंदे असेअं
गीहृतजीवभक्त तिनकोदेन्यवढावतहै औरम
नअभिमानअपनेमनसोहोइसोदुषहफलमें
प्रतिबंधहैं ताकोनासहीकरतहैं सोरासंपंचाध्या
इमेंप्रसिद्धहै भावानकेनुनादकरिब्रजभक्तनको
बुलायरासकीऐतवमहभक्तनकोभयोतवभगवा
नप्राटे तसेइयहपुष्टिमार्गमेंदेन्यभगवानसिद्धि

करेन दोसद को नासकस्त है तथा जहां लोमह है न हा
लो अनुभवता ही कर वन है या भांति भगवान ध्येने
जन को देन वटा वन है मर को हरिवरत है जहां जहां
लो किक में आसत है सो सर्व डोरते हु डाय देन सिद्ध
करत है १६ श्लोक ॥ स्वांगी हृतो हि निर्वोहः प्रभु नैव
विधीयते जीवा स्वभाव दुष्टादि प्रवलेयु फलंतथा
१७ या को अर्थ ॥ अपने अंगी हृत जीवन को निर्वाह
प्रभु आप ही करे तव हो शक है ते जीव तो स्वभाव
करि दुष्ट हो सो बाल बोध में श्री आचार्य जी महा प्र
भु कहें हैं जे में अज्ञानी बाल क करि क्षामा पिता
करे तव ही होय ना ही तो अग्नि जलादि में गिरे तव
ही होय ना ही तो अग्नि जलादि में गिरे सो माता पि
ता करत ही है ते में ईश्री ठाकुर जी अपने अंगी हृत
जीवन को निर्वाह आगे ते करत आगे है करत है अ
र करे जीव को तो एक एक क्षण में दुःख गल गतो ना
स करि दे प्रमन एक क्षण में और को और दो इना प्रमो
प्रभु ही निर्वाह करे तव हो १८ श्लोक अतो हं प्रधा
नेन मिते वा वरितः प्रभु दंडो धनु हत्वेन मंतयत्तु तदा
श्रितैः १९ या को अर्थ ॥ अंगी हृत भक्त ते भल परे तो प्रभु
दंड देत है जो फेरि वृद्धा मन करे जे में न दगा इनी अं वि
का प्रजन गणे जे में ईक छु अपराध जीव स्वभाव ने वने
सो प्रभु देत है सो दुख में भगव दीय अपने मन में अनु
ग्रह माने प्रभु को आश्रय न छोड़े सो श्री गुसाई जी वि
रा म में कहें हैं श्लोक ॥ दंड स्वकीयता मत्वे त्वे वंचे १९ दि
मे वन ॥ अस्मा सुखीयता मत्वा यत्र कुत्र पदा कदा २
प्रतिवचनान् ॥ श्री गुसाई जी कहत हैं जो हम को अ
पने जो निहं दंड देहु ता में हम सुखी हैं जहां तहां

न.प. ४६ ॥ ये जनकों हंडैइ तव दुखकों अनुग्रह करि जनि आ
श्रय महा प्रभुजी को न छोड़ें ॥ १८ ॥ श्लोक ॥ हंडै न स्वर्क
ये सुपरकी ये पुपे लण ॥ आति रेवा प्रसन्न तं भाष्य
सः परे सत ॥ १९ ॥ या के अर्थ ॥ जा को प्रभु अपने कस्त
है ॥ तिनको ही हंडै तहें ॥ ओर जो प्रवाही अहि संसा
रा सति है ॥ तिनकी उपेक्षा करत है ॥ हंडना ही है त ॥ ओर
लोकि कसे ही आसक्त लोकि कसे करत है ॥ हंडना है
है तहें ॥ रास पंचाध्याई में आति केली ऐ प्रभु अंतर्धान
भगे ॥ इहा पुष्टि मार्ग में अनोख समें देरा ॥ सर्व आति उदा
वै ॥ अर्थ है ॥ न ही था स्वरूप नंद को अनुभवना ही कर
वत है ॥ आति देखे तो करावें ॥ ताते आति पुष्टि मार्गीय
वै ॥ सब को सर्वथा ही करनी ॥ २० ॥ श्लोक ॥ अन्त भक्ताति
हृष्टैव मुदितो हिरि भवेत् संगो भागवता मेव वृत्ति
र्यनी भवेत् ॥ २१ ॥ या के अर्थ ॥ ज्यो ज्यो भक्त ले सकत है
तो तो भगवान् न उह भक्त को देखि के प्रसन्न होत है
ताते सत्संग भगवदीय को देख्य तो बेगि ही भावकी रह
दि होय ॥ यह निश्चय जानने ॥ ताते सत्संग को पत्न क
रनो ॥ २२ ॥ श्लोक ॥ व्याघ्रस्य ग्रेयथा देही तथा दुःसं
गतो भवेत् ॥ दुःसंग एव भावस्य नामकः सर्वथा मतः
२१ ॥ या के अर्थ ॥ अथ श्री हरि राजी कहत है ॥ जैसे बाघ
के अपो मरी को न सहि होइ ॥ तेमें ई दुःसंग एव भग
वद्भाव को न सकत ॥ ताते जैसे बाघ को सो डरपि के
अपने मरी की स्तकी ॥ तेमें ई दुःसंग ते डरपि के
अपने भगवद्भाव दुकी स्तकी ॥ तव भावा है श्लो
क ॥ २३ ॥ दुःसंगतः श्रुताः सर्वे श्रुता हि भरता ह्यः दुः
संगान्ति न दोषाभ्या मद्रूपो बहिर्मुखः ॥ २४ ॥ या के अर्थ
॥ भगवद्भक्त अनेक जीव दुःसंग ही करि के गिर
त है ॥ सो श्री भागवत में वर्णन है ॥

थको मगवेदुः संगते तीनि जन्मको अंत गय भयो
 रभीष पिता वडे भगवदीय हते सो दुर्पोधन दुष्टको
 भक्त बाणे ताते ता दोष ते भावां न के संग लडन ठाटे
 गे ताते यद्दुः संग दोष ते जीव निश्चय भगवां न
 ते वह मुख होय जाय ताते भगवदीय दुः संग ते गि
 त हें तो जीव की कि न नीक वात हें ॥ २ ॥ श्लोक ॥ लो
 किका भिनि वेरा तु मनो निष्ठा सन सदा ॥ अलौकि
 क सुत झव ले ना पि च विन सति ॥ २ ॥ या को अर्थ ॥
 ताते जहां जहा लौकिक मे मन ला गि होइ सो संग
 गही जान नो ताते लौकिकानि वेरा जहां जाव
 होय जा के संग ते हो ॥ सो सर्व त्याग कर नो जहां जाव
 सु मे लौकिकानि वेरा होय ॥ तहां ते भगवद्भाव की ला
 करे ॥ लण लण मे की जो करे तव हो ॥ २ ॥ अलौका वेरा
 य परितो घो च हृदि भाव्यो निरंतर ॥ तदभ्यास तु मन
 हरि गी जी कहत हें ॥ जो दुः संग दोष के नास काय वेरा
 य पर आर संतो या यद्दुः संग दोष निरंतर हृदय में
 त हें अपने मन में वेरा य सर्व ॥ आय प्राप्त
 वधी पदार्थ मे राखे ॥ ओर सह
 झ ताही मे मन को संतोष करि देय द भव जवर
 ये तव दुः संग ते वच ॥ लोका ॥ काम भाव य वेरा य
 चितं चेतस्य सवेथा परितो यस्तु सो भाय भक्तान
 चैव बाधको ॥ २ ॥ या को अर्थ ॥ अ
 हत हें जो मन में दृढ वेरा य वे

जे में भगवद्भाव की ला
 य हृदय में राखे नो ॥

सि.प.
१४७

स्वलोभपाखंडसंभव क्रोधतुमध्यपापि
हाबाधकइत्यन्ते ॥ २६ ॥ याये ॥ कामप्रग
विषयादिकीगोसगरी इन्द्रियभावांननेम
नेवहर्षखहोयजातहै इन्द्रियाकोविषयाव
नहै औरलोभइत्यमेहोइतकरिपाखंडप्र
नहै सोसंन्यासनिर्णयमेंश्रीआचार्यजीमहाप्र
हो स्वयंचविषयाक्रान्तापाखंडस्यातकाल इतिव
ताजातेकामलोभकेमध्यक्रोधमध्यपातीहै कार
कोविषयनसिद्धैतवक्रोधप्रगटहोतेसेइलोग
अर्थनसिद्धिहोइतवक्रोधउपजेजातेक्रोधप्रग
नकोकारनकामलोभहोय क्रोधकरिपीछेमोह
होइइत्यादिहोषप्रगटहोइतचलोबिकावेयत्र
प्रहर्षलोबिकोधांनइत्यमेंरहै तवहैन्यताना
होइ ॥ २६ ॥ अतोमार्गायिसर्वस्वदेन्यभायकि
शकादेवंपवेयुकार्येयुष्टससेवाकथादियु ॥ २७ ॥ या
तोअ ॥ अक्कइतहैजोयहपुष्टिमार्गकोसर्वस्वदे
न्यभायहै ताकेनासक्यहतीनोहैकामलोभऔरक्र
धतातेइतनीन्योनकोनिश्चयत्यागहीकरनो और
देन्यसर्वकार्यविर्योगखनो सोदेन्यकेसैंसर्वकार्यवि
धरहै ताकोउगाययहहै श्रीब्रह्मकीसिवाहंतनुजा
वित्तजाप्रीतकरिकेकरनी औरश्रीब्रह्मकीसेवा
श्रीसुबोधनीजीआदिग्रंथसुननो यहसेवाकथा
कोनेमनिन्यप्रतिराखेनोहैन्यइत्यमेंहै ॥ २७ ॥
श्लोक ॥ वीजंयथामंत्रसास्त्रे तदुक्तमविलंभवे
ततदाभावेनसेवादिसकलंपुष्टिसाधका ॥ २८ ॥ या
कोअ ॥ जेसेमंत्रकोवीजमूलहै यहसास्त्रमेंक
है वीजमंत्रनेअखिलसाधनसिद्धिहोइयह
सास्त्रोक्तहै तेसेइसेवामेंभावहै भावसहितकरे

तवर्गसिद्धिदोषद्वन्द्वलोक ॥ नम्रादृतेप्रयत्नेनदैन्यभक्तियुतो
जनदैन्येनगोपिकाः सिद्धाः कोटिन्योपिपरोक्षतः ॥ १६ ॥
अथोत्थवश्रीहरिगङ्गीकहतर्देजोवैष्णवयत्नकरि
केश्रपनेदैन्यकीर्तनात्तत्पदपुष्टिमामाग्यभगवद्दीयको
उचितर्देतत्तत्कोटिद्वन्द्वजोच्यार्गोत्तकोटिदैन्यकरिसिद्धि
भर्देतत्तत्कोटिद्वन्द्वजोदैन्यकरिगोपीजनकोसिद्धभर्दे
भूमिर्कोट्यारदैन्यकरिकोटिन्यब्राह्मणश्चननश्चननरद
तरस्यांताकोसिद्धभर्देसोश्रीआचार्येजीमदाप्रभुसंन्या
सनिर्णयमेकदोषद्वन्द्वलोक ॥ कोटिन्योपिगोपिकाप्रोक्ता
गुरुस्वःसाधनंचवत्भावोभावनयामिदुःसाधनं
नान्यदिष्यते ॥ १७ ॥ तानेपुष्टिमामाग्येगुरुगोपीजनयो
रज्ञानमार्गसंयोगमार्गेकगुरुकोटिन्यस्यब्राह्मण
प्रकारसोभावविद्यारिदैन्यताहीभक्तिमार्गेभावमेका
रणादो ॥ १८ ॥ लोक ॥ परमास्त्रद्वरेभावोविग्रहात्मास
दामता ॥ समात्मकत्वात्तद्रूपेसर्वलीलासमन्विता ॥ १९ ॥
योहोअथोत्थवश्रीहरिगङ्गीकहतर्देजोयदपुष्टि
मार्गमेहदृष्टिमेभावर्दे ॥ सोऽप्यस्यपदेतातेविहता
त्मसन्तसर्देकाहेनोसंयोगकेअनुभवमेअतःकरणा
गामीप्रभुनाहीहोवाहकीइंद्रीसर्वहेसोहेहविनियो
गहेओरविप्रयोगमेअतःकरणासुनसिद्धिदोतातेवि
प्रयोगभावदृष्ट्यमेराखेयदमार्गमेयदसिद्धिहेका
हेतोसंयोगमेताजहालोदरसनतहालोसुखओर
विप्रयोगमेसात्मकपुरुषोत्तमसर्वलीलासंयुक्तन
द्रूपसर्वरोरअनुभवहोतहोतातेविप्रयोगभावसर्वो
पदेजामेसर्वोरप्रभुसात्तागकार्दे ॥
हो ॥ लोक ॥ स्वल्पतस्यसन्ततसत्ता
तायुगापत्सर्वलीलानामानुभूति
याकेश्रविप्रयोगमेरनी

प ५ सोलीलासहितस्वरूपनिर्तरसाक्षात्कारसर्वतो
रहस्योत्तरोत्तरे संयोगते अधिक विप्रयोगमैधिशेष
खदै ताते युगनो होय प्रकार की लीला संयोग विप्र
योगतामें वैभव अपनो मन लगाइ देइ संयोग स
में सेवा अनो सरमें विप्रयोग की भावना तथा मन
ही करि वृत्त भक्तन के संयोग को विचार करे पाछे प्रभु
तो चारन को पधारै तब विप्रयोग वृत्त भक्तन को विचा
रे या भांति होइ लीला में अने मन को लगाइ देइ
३१ श्लोक ॥ एवं विज्ञायमाने सा पुष्टि मार्ग विभा
वयेत् प्राप्ति श्रीवत्सभाचार्य चरण सुप्रसादतः ३
२ या ॥ अथ श्रीहरि राज्ञीव कहत है जो ऊपर
विप्रयोग आर्तिके प्रकार ज भांति अनुभव होइ सो
कहत है सो पुष्टि मार्गीय वैभव अपने मन में भा
वना करे मन में विचार काइ सो कहै ना ही या भां
ति भावना करत करत श्रीवत्सभाचार्य जी के फूल
की प्राप्ति निश्चय होइगी सो सर्वोत्तम के नाम श्री
गुणोद्गीती पीछे प्रदीना म कहै है ॥ अथैव भक्ति संप्रा
प्य चरणान्वजोधनाय नमः ॥ या भांति पुष्टि मार्गी
य भागवत भक्त श्री आचार्य जी महाप्रभु जी के चरण क
मल की आज्ञा से य बहुत सोई सर्वोपर साधन जानै है
तिन को दृष्टा धरामृत फल सिद्धि है ताते श्री आचा
र्य जी के चरण कमल के प्रसाद ते यह पुष्टि मार्गीय भ
क्त वही य को फल सिद्ध होइ ताते श्री आचार्य जी के च
रण को भाव सर्व ते करनो ३२ श्लोक ॥ अतस्त एवम
ततं सर्वभावेन सर्वथा मुद्दिभिः क्लृप्तस्यैवैः श
रणी क्रियतां ह्य ३३ या ॥ अथ श्रीहरि
राज्ञीव कहत है जो ऊपर कहै ता प्रकार सतत जो नि
रंतर सर्व भाव करि सर्वथा भाव राखे श्री आचा

वराहमल्लको आग्र्य श्रीरविप्रयागको मि
पदीतिं तस्य सर्वभावक रिसर्वथा कर्तव्य है श्री
सौकरिक पट्टल त्याग करि श्री हृदय चंद्र पर
तिनके समस्त होइ इह द्यमें तथा मुद्ग भगवदी
समेर सिकार से तिनकी शरण हृदयमें
तथा श्री हृदय श्री आचार्य नीमदा प्रभुतिन
नकी सगण होइ इह न्यभाव करि निः
तिनको पुष्टि मागीय फलकी
इस हसवो पर सिद्ध न होइ ३३
हि श्री ह ३ को हला पत्र चतुर्थ त्रिस ता
ति श्री ह ३ को हला पत्र चतुर्थ त्रिस ता
पदी का श्री गणेश जी हत संज्ञा ३३ श्री अवत पर
वे प्रयोग भाव मुखारविंद की भक्ति सर्वोपाय की त
को साधन हं द्रवाह सोऊ आर्ति निः साधन होइ सो
ऊ को साधन हं द्रवाह सोऊ आर्ति निः साधन होइ सो
वचन वसिष्ठ होइ सो साधन होइ जो पुष्टि मागी में
बाध कहि सो कहि सो बह न होइ लोकानदीयानां म
हदुस्म विजातीय न संजन सभाषण सजातीय
योगो भाषण च न ॥ या को अर्थ ॥ च व श्री हरि रा
जी कहत होइ तो यह पुष्टि मागीय वैष्णव को एक
पह कंडा इदुख होइ तो अल्प मागीय विजाती को स
ग होइ सो अर्थ की संकष्ट कहो ॥ सो को विजाती को
संग भूयो जानि मेर मत मे महा दुख होइ जो मेरु न भ
तन को श्री हृदय में प्रतिबंध के तो तिनको संग ह
वदाइ होइ सगरे भक्त मिले तव सुख ते सगरे मिलि
वै श्री हृदय की लीला वात करि परम आनंद पावै
तहां गक हं गुस्म न थावो त नर सरूप वार्ता रहि जा
इ दुख होइ सो मोको
ग भयो होइ ताक

प्रत्येक लोकोपजाती वैश्वको चहिये सो तो सो को प्राप्ति
नाही है अन्य जो अन्य मार्गीय वु संग ते अष्टप्रहर
संभाजन करनो परत है यह मो को परम दुख है सो दु
ख हरि नाही करि सकन नाही हो १ श्लो ॥ तदेतदु
भयं ज्ञानं ममैवाद्य युभा गत है दुखांतरं तु ज्ञानेन
भक्त्या वापि निर्वर्तते २ या ॥ अ ॥ यह दोय मे
र भाग में आय के प्राप्त भयो है जो भाग वही यको
संग चहिये सो तो मिलन नाही है विजाती अ
न्य मार्गीय विजाती को संग अष्टप्रहर रहत है यह दो
य मो को प्राप्ति है सो पुष्टि मार्ग में विरोधी है और ज्ञानी
को संग है सो अंत में पुष्टि मार्गीय को दुख दई है काहे
ते ज्ञानी भते की निवर्त करत है यो कहत है जो यह भ
क्ति मार्ग में तो स्वामी से बक भाव ही धर्म है सो मुख्य है
से बक धर्म यह है जो अष्टप्रहर स्वामी की टहल में है
भक्त को यह धर्म है यह भाव के ज्ञानी ना सक है काहे
ते ज्ञानी तो सगरे ब्रह्म की भावना करत है और अप
ने को उ ब्रह्म कहत है अहं ब्रह्म जो मे ही ब्रह्म हो यह भा
व में बाध कह है यह भाव में दास भाव तो छूटि गयो तब
भक्ति को ना सहोइ ताते भक्ति मार्गीय को संग मदा
बाध कह है दुख रूप है ताते वैश्वको ज्ञानी को उ संग
नाही कर्तव्य है २ श्लो ॥ लौकिक विषय प्राप्ता
न हि दुःसंग जंघ्रित दुष्टाणां दुर्वचो वाणिभि
र्न ममैव विद्विषुः ३ या ॥ अ ॥ अव श्री हरि राइ
जी कहत है जो लौकिक विषयादिको प्राप्ति होय
लौकिक वेस देह इंद्रिय में होत है या भांति लौकि
क विषय दुख दई परंतु नाही दुख ते दुःसंग दुख है
सो वडो है सो श्री भागवत में कह है जो विषय ते वि
षई संगी है तिन को संग मदा दुख दई है उन के संग

ने अष्टप्रहरविषयमें ध्यान रहै ॥ विषयावेश होइ सो
श्रीहरिराज्ञी कहत है ॥ ऐसे विषयके संगी वह सु-
खको संगमोको भयो है ताकरिमोको महादुख है
काहेते दुष्टके दुर्वचन रूपी वानसो मेरी समे सरीरमें
बैधत है ताककि बड़ी पीडा होत है ॥ इहां दुर्वचन
कहि वेवारी और नाही ॥ अधिकारी भंडारी अनेक
चातक कहत है ॥ तो तुम अष्टप्रहर कीते न वार्तामें लगे
रहत हो ॥ परदेस काहे के लीये पधार हो ॥ इयता कछु
आयो नाही या भाति अधिकारी भंडारी महादि ॥
एको कोई लो विस्त अभिनिवेश करावें ॥ सो श्रीहरिरा-
ज्ञी को बुरो लगत है ॥ भगवद्वाता को सो परमहित ला-
गत है ॥ यह भावने के हे जो दुष्टन की वानी वानरूप
मेरे समे स्थानमें बैध करत है ॥ अज्ञोक्त ॥ न कापिल
भते स्वास्थ्य समाहित मयि स्वतः ॥ इयानी तु जना प्राप्यो
दुःसंग पदवी पाता ॥ ॥ ॥ ॥ अथ श्रीहरिराज्ञी
कहत है ॥ तो ऐसे दुःसंगमोको मिल्यो है ॥ जो रंचक मेरे
मनमें स्वास्थ्य धी स्तना ही होत है ॥ ताते स्वतमोको
अपनो हित नाही दीसत है ॥ हित तो भगवद्दीय के
संग ते होइ ॥ तिनको तो एक ॥ ॥ संग संग नाही है ॥ अ-
न्यहित शुद्धि न हू ॥ संग ते होय सो मोको अष्टप्रह-
र दुःसंग है ॥ ताते मोको अपनो हित नाही दीसत है
सास्त्रमें श्री भगवत्तमें कहै है ॥ श्री आचार्य जी श्री ग-
साई जी कहै है ॥ जो दुःसंग ते वैष्णव जन दुख पावेंति
अथ ॥ सो दुःसंग की पदवी मोको आयके मिली है ॥ सो
दुख पाऊं ॥ सास्त्र कहत है ॥ सोम भोगत हो ॥ तहां कोई
कहे जो तुम दुख को पावत हो ॥ त्यजानी हो ॥ सो दु-
संग ते दु-

कत है ताते तुम दुख क्यों पावत हो या भांति कोई कहें तह
 कहत हो ॥ श्लोक ॥ शुद्ध मनः कबुधितं क्षणं नाति विवक्ष
 णं ग्रहस्थितस्य व्यावृत्ति युतस्य न हि तादृशा ॥ ५ ॥ अ
 न्यत्र श्रीहरिगणेशजी कहत हो जो मेयाते दुख पावत हो
 जो सुद्ध मन होइ आधी सुंदर बुद्धि होय ताह की लौकि
 कचित पापी दुष्ट के संगते ताह की बुद्धि भ्रष्ट होय जा
 य एक क्षण मेरा सो दुःसंग बाध कहै सो श्रीगुरु साईजी
 विजसि मे कहै है ॥ श्लोक ॥ अहं कुरंगी दमंगी संगी न
 गी छत समय अन्य संबंध गंधोपी बंधर मेव बाध
 ते ॥ या भांति अन्य संबंध को गंध ई रंच कहोय सो
 गरो कहै सो श्री आचार्य जी महा प्रभु की चोरा सी
 वार्ता मे प्रसिद्ध है रामो हरदास संभारवा की स्त्री को
 रंचक अन्याश्रय दोष भयो ता करि के पुत्र मले छ
 भयो श्री आचार्य जी महा प्रभु अ प्रसन्न भगे ताते
 दुष्ट के संगते आधी बुद्धि होत है सो जन यहो जान
 है ताते दुःसंगते मे दुखी हो तह कोई कहै जो एमे
 दुःसंग को वेगि ही त्याग करि देह तव सुंदर बुद्धि
 जी या भांति कहै ना भांति इह श्रीहरिगणेशजी कहत
 है जो

व्यावृत्ति विना के से चलै संगमनुष्य
 इन की त्याग कर पाहुं मनुष्य वि

सो इन इतने अधिक बड़

ताते ग्रहस्थ हो व्यावृत्ति के ली एरा व्याचाहि

ये और भगवदीय तो तादृशी हि तिन को तो व्यावृत्ति न
 चाहिये तब अ व्यावृत्त होय तब दुःसा छूट तह कोई
 कहै तुम ईश्वर हो सर्व सामर्थ्य युक्त हो व्यावृत्ति छोडि दे
 ह तब दुःसा छूटि जाओ या भांति कोई कहै तह कह
 त है ॥ श्लोक ॥ संगी वारयतु शक्यो व्यावृत्ति विनिरोध
 त ॥ अव्यावृत्तौ न विस्वासदा र्थमेन तथा च निश्चया

के प्रथमोऽथ श्रीहरिणाम्नीकृतं हेनो यद्दुःसंगके
निवारणमेवामर्थं होटेमनुष्यकोत्यागकीरोत्प
नेघरमेवेंदरेहेतोः कदादुःसंगतद्धेतवमनुष्यचाहि
ये जहापदेयमेजयेत्तद्धानित्यनौतनमनुष्यकोम
नुष्यकोमिलापहोतिनेकोसमाधानकर्योचाहि
येतवदुःसंगकेसंशुद्धेतातेत्यावृत्तिविरोधीहैदुःसंग
होउनमेवोत्तोजोव्यावृत्तिनकरियेत्तव्यावृत्तिरहिये
सोतोसर्वोपउत्तमहोसोश्रीआचार्यजीमदाप्रभूम
निवर्द्धनीमैकहेहोत्तव्यावृत्तौभजेत्तद्व्यपूजयाश्र
वणादिभिः इतिवचनात्तायाभातिअव्यावृत्तहोइ
तवद्रुदविस्वासधीरजचहियेसोधीरजविस्वासह
दिजातहेजोवृत्तिविनाग्रहस्थाश्रमकोकेसेनिबो
हहोययद्दुःसंगविस्वासविनाअव्यावृत्तिनभयो
जायेतातेकहकरियेहैहोको॥ भगवद्देयीतांयां
तसत्तुतलकरेवहियथाविभावकवचनेरितःको
धमूहितः॥ ७॥ याकोअर्थ॥ अथ श्रीहरिणाम्नीकृतं
तदेजोभगवद्देयीयाकालदोषनेअपनेधर्मकी
रक्षारखेउपरव्यावृत्तिकीरोतेदुःसंगहोयकहेअ
वकालदोषकहतहेजोयहकालकेसोहोभगवद
मेमेमहाबाधकहेजेसेब्राह्मणकोवालककोध
करिकेपरीक्षितरजकोआपदीयोसोयहकार्य
कालदोषनेभयोसोआगेकहतहे॥ ७॥ लोको॥ अथ
सत्तमसमागत्यमहाभक्तपरीक्षिततथादुवचवाके
कनेरितोद्यतिनामसः॥ दयाकोअर्थ॥ अथ श्रीहरि

सर्पलेवैसमीकरिषकेकंमैंडारिरीयों। यहवातश्रंगी
रिखीनैयुनीसोक्रोधकरिकेंतहकथायवैकोश्राप
रीयों। सोयहसर्वकार्यकालदोषतेभयों। काहेतेमहा
भक्तपरीतनकीयहकालदोषतेयहबुद्धिभई। तेसेइ
कालदोषतेदुर्जनकेवचनसर्पेपीहीहैं। जिनकोते
ममकेआवेसमेंअन्यथावीले। सोकालदोषजान
नो। क्रोधतामसयहकालदोषतेलगपोंहैं। तिनको
संगमहाबाधकहैं। **श्लोक**। अविजयादुर्वचनैरधि
लेपनमासय। दुष्साभौतिकोदुष्टः समाध्यः सक्रि
योत्तिभिः। दीयाकेअर्थ। अवश्रीहरिराज्ञीकह
तहैं। जोयहकलिकालमेंजीवखभावतेदुष्टभगे
हैं। तोमेंतीनप्रकारकेदुष्टहैं। एकभौतिका। १। अध्या
त्मक। २। आधिभौतिका। ३। तामेंमध्यात्मा। चौरभौ
तिकएतौवहंभगवद्धर्ममेंनआविं। एसेआधिहै
वहदुष्टके। साकेवहंकरनो। अष्टतीनोकेसेजा
नेजाय। तबुलीगतीनोकेलक्षणन्यारेन्यारेकहत
हैं। अनेकदुर्वचनकहैं। अपनेतेवडोहोइतथाभाग्य
दुभतहोइगुरुहोइसोअगपनवरिअवज्ञाकरेंदुर्व
चनसोअपनेमनकोविहेपकरें। ओसेमनकोवि
लेपकरें। ओएसरीरतेदुष्टकर्मकरें। पापचरणकरें। सो
यहभौतिकदुष्टहैं। ऐसेदुष्टकोजबचाहेभगवदी
यकोसत्संगजबहोइतवसतक्रियाभगवदयेवादिक्रि
याकरें। कठिनबोलीबोहुछरिताइमनकोविहेपहू
छिजायभगवदीयकेसंगभक्तिभौतिकदुष्टकोसंगहो
इहै। अवश्रागैअध्यात्मकदुष्टकेलक्षणश्रीहरिरा
ज्ञीकहतहैं। **श्लोक**। अध्यात्मिकोज्ञानभूयोह्यन्य
थाज्ञानवानपि। कष्टसाध्यः कथंदाचित्सतत्वबोधे
नशुध्यती। २०। याकेअर्थ। अध्यात्मकदुष्टज्ञानकरि

सन्पहोय सगरो कार्य च जानते करै ताऊ को जव को
 जानवान वडो भगवदीय मिले वो हो न दिन लो स
 संग होइ वो होत कष्ट करि सत्प्राणी भगवदीय अने
 क भोति समुगाय के बोध करै तव वहुत दिन में अध्या
 स क दुष्ट मुद्ध होइ ॥ १४ ॥ अथ कथा अधिदैव क दुष्ट कहत है
 जो कवहुं मुद्ध न होइ लोक ॥ प्रीति सन्धो महा दुष्ट मन
 साध्यः कथयन ॥ यथान पुंसको तेव द्योषधीः पुरुषो
 भवेत् ॥ १५ ॥ याको अथो प्रीति करि के रूप सो महा दुष्ट सो
 आधिदैव क दुष्ट कहत है जो कवहुं मुद्ध न होइ असाध्य
 को लिकल्प लो स संग होइ के सेह जान वा के दुष्ट मन
 लो सो केवल प्रवाही आसुरी ताको मन भगवान में भा
 वान में भगवद् से मेक वहुं न लगै ताको लौकिक दृष्टांत
 कहत है जे सेन पुंस क होइ अथवा को को हि ओय दृष्टेइ
 परंतु कोई प्रकार बह पुंय न होइ वा में पुरुषार्थ न हो
 इति से ही आधिक दैविक महा दुष्ट को भगवद् से संबंधी
 जान मलोगे ॥ १६ ॥ यथा त्रिदोष घलोन कथं
 चिदपि जीवति ॥ प्रीति शून्यो निरास शून्य तथा श्रवण
 हिभिः ॥ १७ ॥ याको अथो अथो अथो लौकिक दृष्टांत कह
 त है जे से त्रिदोष ग्रस्यो रोगी कप वात पित्त ग्रस्यो रोगी के
 इ प्रकार न जीवै ताको कहुं अथ धन लगै जे से प्रीति
 शून्य महा दुष्ट निरास है सो कि तनीं भगवद् कथा के
 श्रवण करे परंतु चक्रे दृष्ट मन में भावान में मन्त हो
 इ सो प्रवाही आसुरी जीव सो पुछि प्रवाह मया होम प्री
 आचार्य जी महा प्रभ कहत है अथवाणी सर्व वाचा सो
 सर्व सर्वत तपसु एसे प्रवाही आसुरी जीव की नाइ
 न जन्म मै संसारा सक्ति में पहार है याको भगवद् प्र

अपने चरख

सापथकोले कैंदजारवर्ष लौ जलमें डारि रखे पांतु
पानी उदपथको न भेदे जवनिकासै तब सूखि जाय ते
से प्रीति शून्य आधिदैवक महादुष्ट पुष्टि मार्ग को
प्रताप देखि के गुण सुने पांतु के बहुरंच के हृदय में भ
गवत्संकोले पढ़ेन आवे ऐसे वह मुख प्रीति सन्धानि
एकर सकारि रहित है ॥ १२ ॥ अब और कहत है श्रो
प्रायस आसुरी जीवो यस्मिन् प्रीति संभवः तादृसे
नित्य संगे न भवे दासुर भावनाते ॥ १३ ॥ या अथ उप
र कहै एसी प्रीति शून्य महादुष्ट होय ताको आसुरी जी
व जाननौ उह जीव में प्रीतिकी संभावना हुना ही है ऐसे
प्रीति शून्य जीवों संभव हमको संग आय के मिल्यो
हैं ताते तादृसी भगवदीय के संग विना आशु भाव
नित्य होत है जवनित्य तादृसी को संग होय तब यह
आसुर भाव निवर्त होइ सो श्री भागवत एक स्थिर स्थ
धर्म भगवान उद्धव जी प्रतिकहे है श्रो ॥ निरोधय
ति मां योगो न साखं धर्म उद्धव ॥ न स्वाध्यायत पश्चा
गो नेष्टा पूर्त न दृष्टिणा ॥ १ ॥ इति नियत छंदो सित तीर्थ
नि नियमायमा यथावरुद्ध सत्संग सर्व संगे पदो हि
मा ॥ २ ॥ सत्संगे न हि दैत्ये यायातु धनी खग भगा ॥ ३ ॥ इति
गंधर्वो यस्य सो नागाः सिद्ध चारणा गुह्यका ॥ ३ ॥ इति
चनान भगवान कहे है उद्धव मोको योग जाना ही व
सकर जहे साख्य धर्म न स्वाध्याय तपन त्याग व्रत
न यज्ञ छंदन तीर्थ नियम इत्यादिके से वसना ही
होत है एक सत्संग कस्किं मैव सहो न हो सत्संग
को प्रताप रासादे है तप रास स खग भगा गंधर्व
पक्षराह स्त्री सिद्ध चारणा गुह्यक इत्यादि सुव मोको
पाणे एसी सत्संग है ताते श्री हरि राइ जी कहत
हैं जो नित्य तादृसी के संग विना आसुर भाव होत

वैदुःसंगदोषतेसोमैकहाकरा॥ अलोक॥ दुष्कर्माक
 र्मदुष्टः स्यात्तज्ज्ञानदुष्टो न जादुरी॥ प्रीतिश्च न्योभक्तिदुष्ट
 सत्कारिणस्तत्पजेत्॥ २४॥ यादोष्यथे॥ अवश्रीहरिणइजी
 कहतहैजोदुष्टमोहेंदुष्टकर्मकरतहैंसोभौतिकदुष्ट
 औरज्ञानदुष्टहैंदोयपुष्टनाष्टीतोतदोयसत्संगकेभ
 धितैकहुभाबद्धमंत्रावेंवृत्तार्थहोयऔरप्रीतिश्चन्यजे
 भक्तिदुष्टहैंआसुरीअसेनोतोयहपुष्टिमागीयवैष्ण
 वसर्वथाहीत्यागकरेतवभगवद्धर्मरहेंयहनिश्चयसि
 धितहैंकाहेतैथेसेत्रासुरकेरुंदकाहूसंवधतेबुद्धिनास
 होयजायअन्यात्रयहोयाखोयहपुष्टिमागमेंसहा
 बाधकहैंतातैश्रीहरिणइजीसगरेपुष्टिमागीयवै
 ष्णवकोसिद्धाकरतहैंजोभक्तिदुष्टकोत्यागहीकरतैय
 होइतश्रीहरिणइजीकृतसिद्धापत्रपंचविंसताकी
 टीकाश्रीगोपेश्वरीकृतसंपूर्ण॥ ३५॥ अवश्रीहरिणइजीकहत
 हैसगरेपुष्टिमागीयवैष्णवकोसिद्धाकरतहैंजो
 हैसगरेपुष्टिमागीयवैष्णवनुसक्यहलौविकचिं
 तानाहीकरतैयहैकाहेतैचिंतामेंजाकेचिंताकस्विया
 कुलहोइताकेहृदयमेंसकलगुणसंयुतएसेश्रीकृ
 ष्णवैसेआयवसेकाहेतैचिंतामहादोषरूपसकल
 दोषनकीचिंतामानाहैजहोचिंताआइतहोसक
 लदोषआयोसोदोषनवरुह्यमेंहोइतवसकल
 हृदयमेंकोनप्रकारआवेताहीनैश्रीश्री

३
कार्यानिवेदनात्माभिकदापि। सोनिवेदितात्मवैश्व
वश्रपनोसगरोपराथ आत्मनिवेदनभावांतको
कीर्णोपाध्वं चिंताकोकृतहै। सर्वथाचिंतानकोभग
वानधनीमायेपेहै। सर्वकरणासामर्थतातैलौकिक
चिंताकंधुनाहीकर्तव्यहै। २। लो॥ यथाग्रहग्रहप
तिशुद्धसंमाज्ञादिभिः स्वस्यस्तिष्ठत्यन्यथातुपरा
वर्ततसर्वथा। २। पा॥ ३। अवलौकिकदृष्टांतते
कहतहै जेसैलौकिकमेंग्रहग्रहकोधनीग्रहकोसु
द्वकरिसंमार्जनकरिसगरोकडाबाहिरनिकारिआ
छोशुद्धकरिघरमेंरहतहै सोलौकिकहीप्रसिद्धही
है तेसैहीश्रीहृषीकेशवकोद्रुद्ररूपीघरशुद्धरूपी
घरसेवतहै। चिंताकोदोयजाकेदृश्यमेंनाहीहै। त
वप्रभुजहवैसबनकेदृश्यमेंपधारहै। काहेनै। चिंता
लौकिकहै सोश्रीहृषीकेशवकोचरणारविंदकेविस्तारकहे
काहेनै। चिंताभईतवप्रभुकोस्मरणभजनकेसैको
गेदृश्यमेंतोलौकिक। वेसभरिछोहै। तवप्रभुद्रु
पमेंकेसैपधारै। तातैश्रीआचार्यजीद्वरानिवेदन
कीर्णोपाध्वंसगरीचिंताकामक्रोधमदमद्वरतापद
दृश्यमेंकडामेतहै। ताकोनिकासिकेंयहश्रपनोह
दृश्यसुद्धकरिसंतचितकरिकश्रीहृषीकेशकोआ
श्रयकरिहै। तवप्रभुवैश्वकोदृश्यसुद्धदेखिकेंप्रस
न्नहोइपधारै। श्रपनस्वरूपानंदकोअनुभवइपा
करिकेंकरावै। अकश्रीहृकहतहै। २। लो॥ ३। उतैचप्र
भुमिस्तसमात्तवरत्नेहृपालुभिः अतोऽन्यविनिये
गोपीचिंताकास्वस्यसोपिचेत। ३। या॥ ४। अथा॥ तह
कोइकहेजोअन्यविनियोगहोतहै। यहप्रभुकीसेव
दृष्टनवनैतवतोचिंताकरनी। तहोश्रीहरिराज
कहतहै जोहमारेश्रीवैष्णवाचार्यजीपरमहृपालहै

सोन वरत्न ग्रंथ में निरूपण की गे है जो अपने ते अन्ध वि
विनियोग होइ नव कछु चिंतान करे काहेत प्रभु मन
फेरिके अपने जीवन को अपने इ विनियोग करावेगे
या भानि चिंता छोड़ि एक प्रभु को आश्रय दृढ़ दृश्य में
राखे नो ॥ ३ ॥ अब और एक कहत है ॥ श्लोक ॥ सर्व मार्ग वि
चार पिक लौक ते वलि प्यते न संसर्ग कुतो दोष त
या कलियुग भवेत् ॥ ४ ॥ या को अर्थ ॥ अब श्री हरि राइजी
कहत है जो धर्म मार्ग विचार धर्म सास्त्रादि में यही स
र्वोत्कृष्ट है जो कलि में दोष करे ताही को दोष लिख
होइ अन्यथा और को सर्वथा दोष न लगे यद कलि
युग की मर्यादा है ताते संबंधी कछु भक्ति रीति छोड़ि के
अन्य विनियोग अन्ध अश्रय करतो इ पद चिंता करे
जाने इन की थोड़े से दुये भोगे सो को कहा बाध कहे
गसे विचारि चापु अपने धर्म में सावधान रहै ॥ ४ ॥ लो
क युगांतर ते वायं पंचमे तेन गणपते गद्य युत
निजाचार्ये स्थेयं ना वैज्ञ वै सह ॥ ५ ॥ या को अर्थ ॥ यु
गांतर की ते कलियुग आवत है यह प्रथम सास्त्र वे
द की मर्यादा है तहां प्रथम सत्ते युग ॥ १ ॥ ते ता ॥ २ ॥
हापुर ॥ कलियुग ॥ ४ ॥ ये चार भोगे सो यह अवयव
वत्ते मान कलियुग है ॥ सो पंचमो उत्तम ते उत्तम
गिन नो ॥ यह बाख्यो युग में नाही है काहेतै या युग
में श्री वक्ष भो चार्य जी पूर्ण पुरुषोत्तम को प्रागट्य
हो ताते गसी न भइ सो श्री गुसांइजी सप्तशता की
मे कहै है ॥ श्लोक ॥ माया वाद करी दृष्ट पद लन न
स्पंदुरा जोइता श्री मद्भगवता खा दुध्न भसुधा
वर्षेण वेदोक्तिभिः राधा वक्ष भसेव प्रातदुचिंत
प्रेमो पदे शेर पि श्री मद्भगवता मधेय सदसो
भावेन भूतो स्य पि ॥ इति वचनात् ॥ श्री स्वधा

में कहें हैं। ऐसी भर्त्सना के हैं कवहुं जैसी श्रवनिधि आई
या भावते ए सो मन में जान नो। जो ए सो कलियुग क
वहुं ना ही भयो। और न आगे होइ गो। तातें श्रव है वी
सृष्टि के उद्धारार्थ प्रहृष्टी आचार्य जी महाराज प्रभु पधा
र पुष्टि मार्ग प्रगट की रोहें तातें श्री आचार्य जी महाराज प्र
भु प्रगट होइ की रोहें जो जीव श्रुत्य विनियोग में स्थित न
होइ। श्रुत्या श्रय सर्वथान करे। यह सिद्धांत सर्वोपा
र्य है। श्रव और कहत हैं। ५ श्लोक। तथा पितृव संको
चको व्यास्त्यग्रदर्शनै मनःस्थायं तन्निवृत्तौ समये
तन्निवृत्तं न ध्यायेत् अर्थ। श्रव श्री हरिगुणी कहत
हैं जो कोई वैश्रव को आबंत कलोक संबंधी संकोच क
हवा दिकों आय पडे वो होत दुख होत जानै तो उन ही
बहुं व में स्थित होइ। लै सबो होत न करे। निवृत्त के हो
य अर्थ। परंतु अपने मन को स्थिति न करे। तब समय
आय पडे तब उन को छोड़ि देइ जो बहु वी अपने सम
य नें पुष्टि मार्ग के धर्म में आवैं तो उन को त्यागैं। जो वै
न आवैं तो उन को तत्काल छोड़ि देइ मर्यादाले उपाय
करि फिर अपने पुष्टि मार्ग की रीति सों प्रमान से वास
ण करे। ६ श्लोक। तत्कालं तत्प्रयत्ने तु रोग से बोडू
स्वेत् अंतःकर्षणं नैव प्रतिबंध निवर्त्तते। ७ या
अर्थ। श्रव श्री हरिगुणी कहत हैं। बहु व को संकोचा
दि महाराज आवे स होइ तो उन ही में मिलि के रहें। परंतु म
हाराज समान उन को दुख रूप जानै। उन के त्याग की
भावना मन में राखैं। जे स रोगादिकों अनेक औषध क
रि हरि करियत हैं ते से ईत तत्काल अनेक उपाइ करि श्र
त्य संबंध करे। ता को त्याग करियें काहे ते यह सास्त्र
में कहें हैं। जो भगवद् धर्म में अनुकूल होइ। ता सो मिलि
के भजेन स्मरण करियें जो श्री को मन से वा मन होइ।

तो आप ही करिगे ताके पीछे महा प्रसाद धरि लीजिये औ
 र जो प्रतिबंध करे ताको त्याग ही करिये जो एक बार सा
 गत होइ तो सने खने उह प्रतिबंध को निवर्त करिगे या भा
 ति पुष्टि मागी यवै श्रवसे वासराण करे श्रव और ह्क
 हत है ॥ श्लोक ॥ यथा चिंतानकर्तव्या स्वमनो मोहको
 रणे यथा सद्धि इ कलसात् जलं श्रवति सर्वसः ॥ यथा
 के श्रुते ॥ श्रवन्ती हरिण इ जी क हत है जो यथा चि
 ता सर्वथा ही नाही कर्तव्य हो काहे तो मन को मोह
 होइ मोह को धारन एक यथा ही चिंता है यह निश्च
 य ही जानना ताको ह्कत कहत है जैसे कल से के पे
 र से छिद्र भरे कल सते जल सगरो जल बाहिर व
 द्दि जात है ते से यथा चिंता से मन को मोह उपजत
 है भाव इमना ही वनि आवात यह मनुष्य देह आ
 पु परम जल जलवन प्रभु की सेवा योग्य है सो सगरी
 आयु समीत जानत है सो एका ह्मसंध मेरा जा जन्म
 नै करी है ॥ श्लोक ॥ दुर्लभो मानुषो देहो देही नात
 ण भोगुः ॥ तत्रापि दुर्लभं मन्ये वैकुण्ठ प्रियदर्शनं ॥
 इति वचनात् यद्मनुष्य देह देहो महा दुर्लभ देह
 वतान को दुर्लभ है और एतल से भोग है परंतु भगवो
 न श्रुत देह दुर्लभ है सो यह देह पाय के प्रभु को आश्र
 य करे तो उन की सिद्धि हो प्रवैकुण्ठ नाथ श्री धर्म के
 दरसन को वरत है ताते यथा करि के यह देह को मो
 ह करि के यथा संसार में जात है श्रव और ह्क हत है
 ॥ श्लोक ॥ यथा युसत तं यांति शायते न ग्रह स्थिते ए
 वं हि गच्छन्त्या पुष्ये तलं मैव विरलं वयेत् ॥ यथा का
 श्रय ॥

जाने जो कीरे यह ग्र

वहसुखदुःखीमिलेहै। एभगवदुसमेंसदाबाधकही
करेगो। याभांतिप्रतिबंधहोइतोतिनकोजका
लताइलणत्पागकरिकैभाजिजाय। एकक्षणहं
विलंबनकरो। काहेतेदेहछूटनकोप्रमाननाहीहे
सोश्रीभागवतमेंप्रह्लादजीवालकसोकहेहै। सो
क। कोमार। आचरणप्रोत्साधमानुभागवतानिह
दुर्लभमानुषजनमतद्व्यधुवमध्यहं१०। इतिवच
नात् प्रह्लादजीकहतहै। हेवालकयहभगवदु
मेंकोमार। अवस्थाहीतेआचरणकर्तव्यहै। काहेते
मनुष्यदेहमहाजतमहं। सोनिश्चयनाहीहै। तोभव
एवक्षणमेंनासहोइजाइगी। तात्पर्यहेवालककोमार
अवस्थाइतेप्रभुकीसरनकर्तव्यहै। यहविचारिकेंप्रति
बंध। परयहसंबंधीकहवकोतत्कालहै। त्यागकर्तव्य
है। एकक्षणहंउनकेसंगविलंबनकरो। कहंहुःसंगरो
यतेमनफिरिजाइसोयहसंसारसक्तिइयेजाय
तातेताइलणउनकोसीधुहीत्यागकरो। अवशेष
है। कहतहै। श्लोक। भगवच्चरणोद्योतः। स्थापणेति
विचक्षणैः। शरीरं प्राहृतं तद्विहस्य त्वं सर्वथा मतं१५
याको। अथोउपरकहे। ऐसेप्रतिबंधकोहोडिकेंकह्य
करे। भागवान्श्रीकृष्णकेचरणकमलतेअपनेचित्त
कोस्थापनकरे। विचक्षणरीतिसोनाकोयहअर्थ
है। जोपुष्टिमार्गीयकीरीतिसोंकहतहै। भागवोन्के
आचरणकोस्मरणजानीहंसदाहोमार्गीयहंभ
तकरतहै। तिनतेविचक्षणपुष्टिमार्गीयकीरीतिसों
नित्यश्रीकृष्णकीसेवादिकारिसर्वइंद्रियदेहमन
सर्वभागवान्केचरणमेंलगावै। सोकववने
अथअपनेशरीरकोप्राहृतजानै। यहदेहकेपोष
नमेंदेहकोमोहनहोइतवमनलगाइकेंतनुजा

नासेवाकरौ तातैं सरी को प्रावृत्त जानैं ओर जीव
 नित्य सदा प्रभु को दास जानैं तातैं यह देह सो भंड
 पशु जानि लेया मज लिलो पो हो चिते सै यह जानैं
 यह देह एक दिन ना स होइगी यह भावना कसिया
 भगवद्भक्त करि लेइ जीव को सदा नित्य जानैं ॥ १॥
 ओर हूंकहत है ॥ श्लोक ॥ न संवंधोपि विद्या दास
 तो हम ममता मम संसार सत्त्व तं सर्वः संवंधोपि मया
 तः ॥ २॥ या को अर्थ ॥ अकरी इरा जीव कहत है जो जी
 व को ओर देह को संवंध को उका लमें ना ही है जीव
 तो आदि अनादिते हो ओर को दान को दिवार चोपास
 लत योनि भुगतो होत हो का उसरी सो संवंध ना ही
 हो काहेतें यह देह प्राकृत पंचतत्व करि हैं पंचते
 त्वे प्राकृत होत कारण प्राकृत होइ ओर जीव यह
 एक रस अखंड है जा को अंश न जरावै सत्त्व न छे
 द करे सो ए सो नित्य है परंतु अविद्या जे लगी है ता
 करि अपनो सरीर जानत है अहंता ममता माया रूप
 जीव को लागी होया भातिस गरो संसार अहंता ममता
 करि विध्यो है सो यह लोकि क संवंध सगरो न ठोईय
 हतें अज्ञान करि अहंता ममता अविद्या के वसे होइ
 अपनो मान्यो है अकरी हूंकहत है ॥ १॥ श्लोक ॥ न
 संवंध छतें दुख न हि मंत ब मुन मो प्रतिबंध निव
 र्थे हरि शरण मावृजेत ॥ २॥ या को अर्थ ॥ तातैं यह
 लोकि क संवंध मिथ्या हो सो इन मम मन लगावो
 अंत में या को दुख ही उपजे तातैं जत म भाव दीया
 जत म जन हो सो यह लोकि क संवंध जत मता ही
 नत है

वहसुखदुःखगीमिलेहैं। एभगवद्धर्ममेंसदाबाधकही
करेगो। याभांतिप्रतिबंधरूपहोइतोनकोनका
खताइल। एतापागकरिकेभाजिजाय। एकक्षणहं
विलंबनकरो। काहेतेदेहछूटनकोप्रमाननाहीहे
सोश्रीभागवतमेंप्रह्लादजीवालकसोकहेहो।
का॥ कोमार। आचरेत्प्रार्थो धर्मानुभागवतानिह
दुर्लभं मानुषजन्मतदृष्येध्रुवमस्य॥ १०॥ इतिवच
नात् प्रह्लादजीकहतहेहिवालकयहभगवद्ध
र्मकेपार। अवस्थाहीतेआचरनकर्तव्यहै। काहेते
मनुष्यदेहमहाउत्तमहै। सोनिश्चयनाहीहेतोभव
एकक्षणमेंनासहोइजाइगी। तातियहवालककोमार
अवस्थाहीतेप्रभुकोसरनकर्तव्यहै। यहविचारिकेंप्रति
बंधरूपयहसंबंधीकहवकोतत्काखहीत्यागकर्तव्य
है। एकक्षणहंउनकेसंगविलंबनकरो। कहूँ: संगहो
यतेमनु। फिरजाइसोयहसंसारासक्तिहोयेजाय
तातेताइल। एउनकोसीध्रहीत्यागकरो। अवशोर
हूँ। कहतहै। श्लोक॥ भगवच्चरणोद्यतः स्थापणेति
विचक्षणैः शरीरं प्राहृतं तद्विष्णुत्वं सर्वथा मतं॥ १०
याको। अथो। उपरकहेएसेप्रतिबंधकोछोडिकेंकह
करे। भागवानश्रीकृष्णकेचरणकमलतेअपनेचित्त
कोस्थापनकरे। विचक्षणरीतिसोताकोयहअर्थ
है। जोपुष्टिमार्गीयकीरीतिसोकहतहै। भागवोन्के
आचरणकोस्मरणजानीहंसयाहोमार्गीयहंम
तकरतहै। तिनतेविचक्षणपुष्टिमार्गीयकीरीतिसो
नित्यश्रीकृष्णकीसेवादिक। सर्वइंद्रियदेहमन
सर्वभगवानकेचरणमेंलगावें। सोकवचने
अथअपनेशरीरकोप्राहृतजाने। यहदेहकेपोष
नमेंदेहकोमोहनहोइतवमनलगाइकेंतनुजा

जाये वाक्य ताते सरी को प्राकृत जानें और जीव
नित्य सदा प्रभु को दास जानें ताते यह देह सो भंड
प्रभु जानिये या मन लिलो पो हो चिते सय जानें
यह देह एक दिन ना स हो इमी
भगवद्भक्त कहि लो इ जीव को सदा नित्य जानें
और कहत हैं ॥ श्लोक ॥ न संवंधो विविधा कस्त
तो हम मतात्मक संसार सत्त्व तं सर्वः संवंधो
तः ॥ १ ॥ या को अर्थ ॥ अथ श्री हरिण जीव कह
व को और देह सो संवंध को ई को ल में ना ही
तो आदि अनादिते हैं और को लान को दि
लत यो निभुगतो होत हो क इसी सो संवंध ना ही
हैं कहिते यह देह प्राकृत पंचतत्व कहि हैं पंचत
त्व प्राकृत होत कारण प्राकृत हो
एक सत्त्व रं द दे जा को अंति न ज रावें
न करे सो रायो नित्य है परंतु अविद्या जो लगी है ता
रि अर्पना सरी जानत है अहंता ममता माया
जीव को लागी हो या भांति सगरो संसार अहंता मम
करि विधी है सो यह लो किक संवंध सगरो न को ई
हैं अज्ञान करि अहंता ममता अविद्या के तस हो
अपना मान्यो हैं त्व को और कहत हैं ॥ श्लो ॥ न
संवंध हत दुख नहि मंत ब्य मुन मो
ये हरि शरण मावृजेत ॥ १ ॥ या को
लो किक संवंध मिथ्या है सो इन मम न लगवें
अतसैया को दुख ही उपजे
उत्तम जन है सो यह लो किक संवंध उत्तमता
नत है ताते अहंता ममता प्रतिबंध सज्ज
सरा जो नत है जहां जहां अहंता ममता
सर्व प्रभु को है समपत्त करि हरि की स

नवयद्वपतिबंधहरिहोतहै सो नवमबंधमें कहै है
श्लोक॥ एहारागारपुत्रासान्प्रानान्वितमिमंपरं हि
त्वामाशरणं याता कथं न स्यतु पुत्सके ॥ १ ॥ और एका
हसबंधमें कहै है श्लोक॥ एहारागारपुत्रासान्प्रान
न्वितमिमंपरं हित्वा सो सरलं याता कथं न स्यतु सु
त्सुके ॥ १ ॥ और एकाहसबंधमें कहै है कायेन वाचा
मनसै दिगैर्वा बुद्ध्या तपना वा तु भुजैश्च भुवा त्का
मियद्यत्सकलं परस्मै नारायणायैति संमर्पयेत्तत् ॥ २ ॥
इष्टं जपो तसंवृतं यच्चात्मनः प्रियं ॥ ह्यनग्रहा
नमुतां न प्राणान्यत्परास्मे निवेदनं ॥ ३ ॥ इष्टं जपो
तसंवृतं यच्चात्मनः प्रियं ॥ इत्यादिवचनके अनुसार
पुष्टिमार्गमें श्री आचार्यजी द्वारा प्रभुको समर्पन करे
एक प्रभु ही की सरण को आश्रय लेत है ॥ अब और ह
कहत है ॥ ३ ॥ श्लोक॥ भक्तदुखासहि सुखं तदेव हि
निवर्तयेत् ॥ असको हरिरेवास्ति यद्यमेव प्रभोर्वचः ॥
१३ ॥ पाठो श्रेयो ऊपर कहै जो सर्व परार्थ कुटुंबादिको
प्रभुमें समर्पन करि भाव दभजन हरिकी शरण लीने
तव सगखे दुख होइ ॥ जातिको दुख होइ ॥ तथा ए
कलोहे रोगादि दुख होइ ॥ तथा द्रव्यादिकी होनि हो
इतथा जेनादि अंगकोइ भाग होइ ॥ तथा राजादि होइ
देश तथा धानपातको संकोच घने कदुःखमें यह
अब कहै है तव सहाय्या की को न करे पाभाति संदेह
होइ ॥ तहां श्री हरि राजी कहत है जो यह भगवद्भज
न सब होइ ॥ हरिकी सरन जाइत है कोई दुख अविता
को सहे ॥ तव श्री गुरुजी भक्त को दुख ना ही सहि सक
त है ॥ ताजें भक्त को दुख पावत है खेग ॥ तव तत्काल दुख
ही निवर्त करेगी ॥ सो विवेक धैर्य श्रयमें श्री आचा
र्यजी महा प्रभु कहै है ॥ असको हरिरेवास्ति सर्वमाश्र

यतो भवेत् तथा च सकौ वा सुसकौ वा सर्वथा सारां हरिः १
 या भोति हरि की सान इदरा खेतो प्रभु सर्व चो गे स्ता करे
 गो प्रह्लाद ने हरि की सान नी नी दुष्य सहे न व भगवान दु
 स्व सहे न व भगवान प्रतिबंध हरि की रो भक्त की रताई क
 री सो गी नार्ज मि भगवान चर्जे ने प्रतिक हे हें स्लो का सर्व
 धर्मान परित्यज्य मामेवं कं शरणं व्रजेत् ॥ च हें त्या सर्व पा
 पभ्यो मोक्ष पिष्यामि मा सु च ॥ या भोति भगवान की सान
 न जाय प्रभु को आश्रय करे ता की रता प्रभु करत हें ॥ ओ
 भक्ति बर्द्धनी में श्री आचार्य जी महा प्रभुंक हे हें वाध सं
 भावना पोतु नै कां ते वास ईष्यते ॥ हरि सुखे नौरता व
 र्षितिन संशय ॥ हरि पाणा होइ अपने मन को एका
 त में वास करि हरि सरण होय तो प्रभु रता सर्व प्रकार क
 री ॥ यामें संशय ना ही होतो ते सर्व प्रकार हरि ही को आ
 श्रय करे ॥ ३ ॥ अथ चो ॥ इव ह न हें ॥ स्लोक ॥ या व्रद्धति
 प्रकर्तव्यो ह्युपायस्तु नियते ते ॥ निदुस्ते तु न त्याग पर्ये
 तं विहितं पुन ॥ १५ ॥ या को अर्थ ॥ यो भोति वै श्वय
 ह में प्रभु की सखे उपाय में हें ॥ प्रतिबंध रूप धर को त्या
 ग में मन राखे ॥ जो कोई कुटुंबी प्रतिकूल होय स्त्री पु
 त्रादि माता पिता तिन को त्याग करे तो च न कूल हून
 होय तो अपनो धर्म अवे लोई सेवा करे पाट्टे उन को
 मर्या प्रसाद प्रसादी वस्तु दे पोषन करे जो विलस प्र
 तिबंध रूप भगवद् धर्म ते देय राखे तो उन को त्याग क
 रें काहे ते भगवान चात्म संबंधी जनम जनम के प्रभु
 है ॥ ओर ये देह संबंधी हें जहां मरन देह न हो तो संव
 ध हें ॥ ता ही ते देह संबंधी वेली ये आत्म संबंध न ह
 डे नो ॥ या भोति प्रतिकूल को त्याग करे त व हिन हो
 अथ चो ॥ इव ह न हें ॥ १५ ॥ स्लोक ॥ सर्वथा स्वयं चार
 तो हरि रे व हिर ह क ॥ स्वकीय चित्तु रुते कृत सच

रिष्यति १५ याको अथ श्रीहरि राज्ञी कहत है जो स
र्वथा यह जीव अपने प्रभु श्रीहरि के चरण कम
ल में आसक्त होइ तबै एक हरि सर्व दुख हर्ता अपने
की निज भक्त की चिंता आगे तें कीरे और है और क
रत है और करेगी तीनों काल में कबहुं भक्त को ना
ही भूलत है सो संन्यास निर्णय में श्री आचार्य जी
हृदय कहै है श्लोक ॥ अन्यथा मातरो बालान् भक्तने
पुपुषु चित्तमात्रा अपने बालक पुत्र को रतन अति
प्रीति सो पावन ही है न प्यवि सो ए सो माता न करे कब
हुं बालक की रक्षा ही तण्डल एतें करत है ते से भगव
न भक्त की चिंता सर्वथा न करे जा भक्ति भक्त को हिन
होइ सोई प्रभु करत है यह निश्चय जाननो अव और
इं कहत है १५ श्लोक ॥ स्वयं हि मयं कते वापितार
व निरास्थिते न तदतिरूपाण्येव कं सर्वदा श्रि
तं रक्षयाको अथ श्रीहरि राज्ञी कहत है जो ज
न पुष्टि मार्गीय वे सब को कों दित्त कर्तव्य है काहे
ते श्री आचार्य जी श्रीहरि धनी माये परबेटे है तिन
को काहे की चिंता है काहे ते यह तो कि मम वा श्व कते
माये पित वे छो देय सो बालक को कदा चिंता है य
ह तो लो कि क और श्रीहरि तो ईश्वर के ईश्वर है सर्व
सामर्थ युक्त है एसे वे सब के माये यह पुष्टि मार्ग में
विराजत है सदा एव सजिन की दृष्टि पादुकि भक्त न प
र है एसे वे सब को ईश्वर की चिंता न करे ताते प्रभु
नित्य विराजत है एसे प्रभु के सेवक मन वचन सक
रि के आश्रय ही करे यह सिद्धांत सर्वोपरि है अव और
इं कहत है १६ श्लोक ॥ आचार्य चरणं तस्य चिंता
त्वोपि नेव ही तस्माद्दीवक्ष्यमाचार्य चरणं च द
याश्रिते १७ याको अथ श्रीहरि राज्ञी कहत

जो श्री आचार्य जी महाराज प्रभु से सज्जन हैं नाम मात्र
 हैं जिनको चिन्ता को ले सङ्ग नहीं
 सो श्री आचार्य जी महाराज प्रभु विज्ञप्त हैं केहे
 श्लोक॥ यदुतं ज्ञानं चरणौ श्री हृत्समराणो ममः न तस्मै
 क्षिने श्रित्य मे हि वै पारलौकिके ॥ १॥ इत्यादि वचन क
 रि चिन्ता सर्वथा पुष्टि माणी ये स्वकी ना ही करन वा
 हैं अवशेष रहत हैं ॥ श्लोक॥ न कापि चिन्ता कर्तव्या
 व्रमते वा विना पुनः निवेदनानुसंधानं चिन्ता मात्रं वि
 धीयतां ॥ २॥ या को अर्थ ॥ कृपा के जो चिन्ता को प्रका
 ना ही कर्तव्य है तहां को इकट्ठा कछु चिन्ता ना ही
 करन कहे तब जीव भगवद्धर्म की चिन्ता ना ही करन क
 है तब जीव भगवद्धर्म की चिन्ता ऊँ न करंगे ॥ ओं भग
 वद्धर्म न करंगे ॥ प्रथम जीव को भगवद्धर्म में मन रूना ही
 हो आनुमति

त

की कहरा

हत है

क यह है तो

कि वैदिक फल की तो अपने उद्धार की तो चिन्ता ना ही
 कर्तव्य है ॥ श्री हृत्सम की सेवा विना तो यदु पुष्टि मा ग स
 वोपर फल है सो यह चिन्ता को आवश्यक ही कर्तव्य है
 ताते श्री हृत्सम की सेवा करें निवेदन को अनुसंधान
 अहर्निश राखे जो मे कितने काल को प्रभु सो भल्यो ह
 तो ॥ अव श्री आचार्य जी महाराज प्रभु जी की कृपा ते संबंध भ
 यो है मेरा सहो मो को अवकाश कर्तव्य है मे सब समर्थ
 ए की रहे ॥ प्रामें आपनी सत्ता सर्वथा ही न करनी सर्व
 प्रभु को ॥ या भोति निवेदन को अनुसंधान राखे सर्व
 चिन्ता मात्र मन में कछु न ल्यावे ॥ अवशेष कहेत है श्ल
 का ॥ लोके ह्यस्य तथा वै देहति श्री मत्प्रभो वचः ॥ स्मृत
 सी घृष्ट हि स्थासा निवर्तसे वनार्थि भी ॥ १॥ या को अर्थ

अव श्रीहरिराजी कहत है जो हमारे प्रभु श्रीवध्वभा
चार्यजी श्रीनवरत्न ग्रंथ में कहें हैं श्लोका लोकेस्वा
यंतया वेदे हरिस्तु न करिष्यति १ इति वचनात् श्री
कृष्ण के से है अपन जनकों लौकिक वेदिक में स्थिति
न करे जो अज्ञान करे कोई लौकिक में वेदिक में स्थि
ति न करे दोइ तो श्रीकृष्ण वह लौकिक वेदिक कार्य
सिद्धि नाही करत है या भांति प्रभु को गुण माने म
न में चिंता दुख न पावे जो मे अवकहा करूं मेरो नि
वीह के से दोइ गों लौकिक तो सिद्धि नाही होत यह
चिंतारं च कहन करे सीध ही प्रभु को चिंतन करे जो मे
ऊपर प्रभु प्रसन्न ही है जे से संत दासजी श्री आचार्यजी
के से वक् प्रथम बहुत प्रसन्न हते सो द्रव्य गायों बीस २०
टका की प्रीति अटाई पैसा में निर्वीह करते पाछे ना
गयन दासने १०० मो होए पदाई सो न राखे प्रभु के अ
नुसार चले या भांति वैष्णव प्रभु को गुण ही माने १६
इति श्रीहरिराजी कहत है तस्यै पुत्रपुत्री सो तकी वंका
श्रीगोपे नरसिंह तस्यै ३६ अव ऊपर कहें जो चिं
तान करनी और नि साधन होइ तब फल प्राप्ति होइ सो
नि साधन की भावना को न प्रकास करे सो आगों कहत है
श्लो न सुद्धभावो नैवास्ति सर्व भावेन हीयते नाज्ञा
परत्वे विद्या सो न चास्ति परमादरा १ या ॥ अव
श्रीहरिराजी कहत है जो या भांति नि साधन जीव हो
इ तो प्रभु विनी श्रय फल हान करे सो मेरे में नि साधन
ताना ही है प्रथम तो सुद्धभाव होइ तब प्रभु दया करे
सो सुद्धभाव मेरे में तो नाही है मन में कपट छल ईया
इत्यादिक भरि होइ ताते श्रीकृष्ण में एक सुद्धनिर्म
ल भावना ही है और सर्व भाव दु प्रभु में नाही है
ते चतु श्लो की में श्री आचार्यजी महा प्रभु कहें हैं

हा सर्वभावेन भजनीयों वृजाधिपः एसे वृजकेश
धिपति श्रीलक्ष्मतिनको भजनसे वासदास्य सर्वभाव
करिकें वर्तव्य हैं सो मोखो नाही बनत देहने करत हो
इंद्री मन नाही रखा तमन में विचार हो तव देहने
वनत मन वचन हस सर्वभाव प्रभुमें नाही है

वै तव देह न तो ही करे तव
रमें तो रंच कहै देह न तो नाही है
विज्ञप्त मे कहै हो ॥ श्लोक ॥ अथ

तं न्यत्व तो ससाधनं हमारे आचार्य चर

न श्रीसु नीजीमें कहै हैं जो प्रभु प्रसन्न करि वे को
साधन एक है न्य ही सर्वोपर है सो मेरे में है न्य तो नाही है
अथ जो प्रकार श्री आचार्य जी महा प्रभु की आगण
सो ग्रंथ में सब कहै हैं सो बने तो ऊ प्रसन्न होइ सो पुष्टि
मार्ग की रीति है तो अनुसार आगण पालन उमो में ना
ही है ॥ ४ ॥ अथ देह पुष्टि मार्ग में चात्र कप ही धी नाई वि
श्वास सो यह सर्वोपर है विश्वास विना कछु सिद्धि
नाही है सो मेरे में विश्वास है नाही है ॥ ५ ॥ अथ प्रभु में अ
ह न नाही है परम प्रीति आदर होय तो प्रभु दिना चोर
टोर मन न लगावें सो प्रभु में अह न नाही है ॥ ६ ॥ अथ
अथ एक कहत है ॥ श्लोक ॥ नस्तस्यो निवेस्ये न निवेद
नं स्मृति नो अयो न विवेको देधैर्यं न सरण स्थितिः
यको अथ ॥ अथ श्री हरि राइजी कहत है जो अथ सा
धन होय तत्संग होय तो सत्संग करि पुष्टि मार्ग को फल
अथ अथ अनुभव होय सो मोखो पुष्टि मार्ग को संग
ह नाही है ॥ ७ ॥ सत्संग होय तो भगवत्सेवा में अष्ट प्र
हर मन होइ तो मानसी फल स्पष्ट होय सो मेरे में तो तनु
जो वित्त जाय ही सेवाना ही बनत है सो मानसी पर
म दुख भवे यह मार्ग में तो सेवा दिना वैभव नाई जाय

ते सैं ब्राह्मण गायत्री न जपे तो ब्रह्मत्व जाय ते सैं वैष्ण
व सेवा न करे तो वैष्णवता जाइ सो मेरे सैं सेवा इना ही है
॥ और निवेदन को अनुसंधान यह पुष्टि मागैं सबे यो
चहिये सो नवरत्न मो श्री आचार्य जी महाप्रभु कहें हैं नि
वेदन तुम्हारे धर्म सर्वथा तादृशैरपि सो मो को न तादृ
शी को संग है और निवेदन की कृति इना ही है ॥ एक प्र
भु को आश्रय यह मन लै यह परम साधन है सो विवेक
धैर्य अथ मेक है वै श्री आचार्य जी महाप्रभु कहें हैं श्लो
क अस को हरि वाति सर्वसाश्रय नो भवेत् या भांति
सो एक श्री हनुमन् ही को आश्रय इना ही है ॥ निवेदन कहें
ए सो विवेक चहिये सो विवेक तुम्हारे सर्व भिन्न छानः क
रिष्यति इत्यादि मन में विचार होय सो प्रभु आश्रय नीइ
छाने सर्व करत हैं जीव को वीयो कहु इना ही होत है इ
त्यादि भाव वैष्णव को चहिये सो विवेक इना ही है ॥ ११
वैष्णव को दुख सुख में धैर्य चहिये सो श्री आचार्य जी
कहें हैं त्रिदुख सहन धैर्य मायते सर्व नः सदाः तत्र वर्त
हव इत्यर्थे जइवत गोपभार्यवत् इत्यादि आधिदेवि
क सुख अध्यात्म कर्माति काती नो प्रकस्ये दुःख को
सहन बैष्णव करे ते सैं न कहु ही दुख सहत हैं तव माय
न निकसत है जे सैं गोपभायो दुख सह्यो यह प्रकार दु
ख सह्यो तव धैर्य देखि प्रभु प्रसन्न होत है प्रह्लाद की
नाइ के चहिये सो मेरे सैं धैर्य इना ही है ॥ १२ नया हरि
की सरण में स्थित है इ या भांति एहि के परलोके
च सर्वथा सरण हरिः दुख हानो तथा पाप भये का
माद्यु परणे भक्त दोह भक्त भावि भक्त आतिष्ठ मेधुने
अस को वा सुसंकोच स्वथा सरण हरिः ॥ या भांति
सरण होय और कृपा अथ मेक कहें हैं शरण स्थ समुद्र
रं कृपा विना प्यया मयं न तै श्री हनुमन् की सरण होइ

तो प्रभु उद्धार करे सो गीता में भगवान कहते हैं सर्व धर्मान
त्यज्य मास्ते संसराणं वृजेत् अहंत्वा सर्व पापेभ्यो मोक्ष
यिष्यामि मा शुचः ॥ या भांति प्रभु की शरण हो जौ हूँ
सो मैं सरण मार्ग में हो स्थिति नाही हो ॥ ३ ॥ अथ श्री
कहत हो ॥ श्री लोका न मोहात्प परिष्कृती स्नेहस्तु
त्रचित् आसक्ति व्यसना दीना कथा पितृ दु
ष्टा को अर्थ ॥ श्री हृत्सको माहात्म्य स्फुटि इदं य
हो इतो ऊ प्रीति होइ जौ हो अपने प्रमेय बन ते गा
य गोप गोपी ऐसे निःसाधन को फल सिद्धि भरो है अ
नामिला हि पुत्र भाव के नाम तेना सो हो ॥ अविद्या रूप
एतना को एक रूप में ना रिखे भक्तन की अविद्या हरि
जी नीहें यदपु हि मार्ग में स्त्री सदा दिवन को ऊ उद्धार
श्रीमहा प्रभु जी की रोहें रंख रूप हा छिने भक्तन को सर्व
कार्य सिद्ध होत है सो मो को कहा डर हो या भांति माहा
त्म्य की हं स्फुटि नाही हो ॥ ४ ॥ चित में रह होइ यदव डो
प्रभु प्रसन्न करि वे को साधन हो काहे ते प्रथम रने ह प्र
होइ पीछे आसक्ति होइ पीछे व्यसन होइ तब अ
नुभव हो या रने ह सो श्री हृत्स चंद्र के चरण कमल में
प्रेम सोई नाही हो सो तो आसक्ति व्यसना दिकी तो क
था कहन को उबुध भहें सो प्रेम आसक्ति व्यसन वद
होइ सो त्रिविधि नामावली में श्री आचार्य जी महा
प्रभु कहें हैं ॥ ललीला नाम पदात् श्री हृत्स प्रेम जा
यते असक्तिः प्रौढ लीलायां नाम्ना पाठाद्दवेष्यति
॥ व्यसनं हृत्स चरणो राज लीलाभिधानतः तस्मा त्र
मे त्रयं जायं भक्ति प्रामिष्ठु भिः सदा ॥ या भांति वा
ल लीला की नामावली पाठते प्रेम हो या पाठें राज
लीला की नामावली पाठते व्यसन होइ ना पाठें
पुष्टि भक्ति होइ सो तीन पाठ मन लगाने करें

तत्र पुष्टि भक्ति निश्चय होय और भक्ति वर्द्धनी में श्री आ
चार्य जी कहें हैं तत् प्रेम तथा सक्ति र्वे स न च यदा भवेत्
सो मे मे स्नेह रूप ना ही है १५ ता करिकें श्री शिख के चर
न में आसक्ति ना ही है १६ और व्यसनादिक की कथा
हूँ धर्म है १७ अब और एक हत है १८ स्तोत्र भक्ति
मार्ग प्रवेश न लो व धर्म न च स्थिति दिशा धि सु दु भावे
न काल दोया न्न वेदिके ४ पाठे श्री अब श्री शिख
इ जी कहत है जो यह पुष्टि मार्ग सर्वोपरता में मेरी प्रवे
श ना ही है काहेते श्री वक्ष भ आचार्य जी हत भक्ति वै
मार्ग है तामें वंस्ता दिशि वादिको प्रवेश ना ही है सो गो
पाल दो स वक्ष भाख्यान में गाये हो यह मार्ग वक्ष भ
वर नो मह न ही प्रवेश विधि न् र नो ए सो मार्ग शुद्ध
ता में मेरी ए सो साधन ना ही पने म
न में जानत है जो यह सर्वोपर भक्ति
पको प्रवेश ना ही है १८ और लोक
ना ही है ताते यह मन में जानत है
र भक्ति मार्ग तो भलो हो अलौकि मेना
ही है सो लौकिक में तो स्थिति दो प्र से मि अ
हादिक के धर्म में ही स्थिति ना ही है १९ देशादि शु
द्ध को आश्रय ना ही कितने जीव नी सु दु देश तीर्थ को
सेवन करत है काशी प्रयाग तथा वृज देस सो ऊ ए से
देस को आश्रय ना ही है २० वैदिक धर्म का काल
होय ते सिद्धि ना ही है तम मार्ग
में कहें हैं सो काल होय ते वैदिक धर्म सिद्धि ना ही
कर्म मार्ग ते ऊर्ध्व गो हि फल सास्त्र में कहें हैं
होय ते वैदिक धर्म सिद्धि ना सो संन्यास
में श्री आचार्य जी महा प्रभु कहें कर्म मा
व्य मुन रं कलिकाल तः

हैं। जाना बाह्य विनयेषु सर्व मार्ग वृत्तादिषु पाभो
 तिकलिकाल पायके मर्यादा मार्ग के साधन सवन
 धर्म ये सोम वेदिक कार्य में नही हो। अवश्रौरस्क
 हत हैं। ॥ श्लोक ॥ न च व्यावृत्तिराहित्यं व्यावृत्तौ न हे
 रामने न त्यागः श्रवापि सेवार्थः स्वतंत्रस्य तु का क
 था। ॥ पापाको अर्थः ॥ अवश्री हरिराज्ञी कहत हैं
 जो में अव्यावृत्त नही हो। श्री आचार्य जी महा प्रभु
 कहें। अव्यावृत्तौ भजेत् स्वस्ते पूजया श्रवणादिभिः
 पाभाति अव्यावृत्त भगवद्धर्म सेवा करि कथा सुने
 सो अव्यावृत्त नही हो। ॥ २ ॥ तथा व्यावृत्तिकरि मे ह
 रमे चित्त च हिये सो ऊन हे हें व्यावृत्तौ पि ह्यो चित्त श्रवणा
 होयने तसदा सा प्रकार व्यावृत्त करत भगवान् में हूँ मेरो
 मन नही हो। जे सें संतदा सजी को डी वे चते। का ऊते वो
 लते नही हो। ॥ ३ ॥ श्रवण भगवदसेवार्थ हे हूं डी मन ते लो कि
 क वेदिक त्याग नही हो। सो सेवा फल में श्री आचार्य
 ॥ महा प्रभु कहें जे त्याग न होय ते सेवानवने उ
 ग प्रतिबंधो वा भोगो वा स्यात्तु बाधकं ॥ बाधकानां
 रित्यागि भोगे क्ये कंत व्यापरा ह दे ग प्रतिबंध भोग को
 पूरन एक विषय या न पान आछोय हें सो भगवत्से
 वार्थ त्याग नही हो। ॥ ४ ॥ स्वतंत्र नही हो। इंदियादि
 हे हें संबंधी को स्व होय। का हे तें विषयादि भोग के
 त्याग नही हो। ता को स्वतंत्र की कथा कही है। पाभा
 ति मन सव हो रलो कि क वेदिक ते स्वतंत्र होय प्रभु
 सान नही हो। ॥ ५ ॥ अश्रव श्रव कहत हैं। ॥ श्लोक ॥ न
 च विरह स्फूर्ति संयमो न च योगो नोदासीत्य
 मम तेषु नाना राति ग्रहादिषु ॥ ६ ॥ अर्थः ॥ श्री

काहेतै विरहते है न होय जिसे रास पंचाध्याई में प्रभु
 न था न भोगे । हा नाथ मण प्रिय कृष्ण सिद्धा सिम ह भु
 ज । हा मते ह पाणा यामे स्वसे दर्शन संनिधौ । तथा जो
 र हंकहत है । कुरुदुःसुख राजन दृष्ट दृष्ट न लाल
 सा । तासा मा विरभुष्टे रि । पाभांति विप्रयोग विरह
 ते प्रभु प्रगटे । सो वद पुष्टि मार्ग में केवल विप्रयोग
 डे फल रूप है । सो श्री हृष्ट के विरह की स्युति है ना ही है
 २६ श्री रानी को नेत्र न को संयम ना ही है । श्री भाग
 वत में वदे है । जो वानी भागवत नाम गुण ना ही लेत ।
 सो सदा दूर वेत रहत है । ताने त्रयो प्रभु सी दरसन ना
 ही करत । लोग न के दोष देखत है । सो मो की चंद्र का
 वत । काहेतै यह दोष बहुत बाधव है । एक तो मुखत
 दोष १ श्री रनेत्र न सो दोष देखे नो । इत्य दोष रूप है
 त है । ताते वानी नेत्र न को आवश्य निग्रह चाहिये । सो
 मे में ना ही है ॥ २७ श्री भागवदीय भक्त सो उदासी न है
 श्री पुष्टि मार्ग में भगवदीय के संग ते यह पुष्टि मा
 गिको फल सिद्धि होत है । यह निश्चय सिद्धांत है । सो मो
 में भगवदीय सो स्त दना ही है । उलटो उदासी न है
 सो मो को यह मार्ग में के से आवे स होइ गो ॥ २८ श्री
 ग्रहादि के कार्य में मन करि आसक्ति होय यह महा बा
 धक है । काहेतै ग्रहादिलोकि क संसारा सक्ति भगवद
 में बाधक है । सो श्री आचार्य जी महा प्रभु राखार
 में द्यन कहै है । सब ठो प्रसिद्धि है । जो ग्रहादिकाय
 लोकि में आसक्त है । तिन को भगवान के धर्म दुर्ल
 भ है । सो में ग्रहासक्ति हो ॥ २९ श्री व श्री र हंकहत है
 श्री ॥ नाहं कागदिराहित्यं न स्वधर्म परिग्रह ना
 न्यधर्म निवृत्त्यश्च किं करिष्यति मत्प्रभुः ७ या ॥ श्री

॥ अहंकार भक्ति मार्ग में बाधक है सो विवेक धैर्य
 प्रथम श्री आचार्य जी महा प्रभु कहें हैं ॥ अभिमान स्व
 संत्याग स्वाम्यधीनत्व भावना ता अभिमान अहंकार
 सो स्वामी को बाधक है स्वतंत्र होई सो स्वामी श्री राय
 को धर्म नाही है सो राय हो के अहंकार अभिमान करे तो
 साधन नाही है ताते दास को तो अपने स्वामी श्री हल
 ति न के आधीनत्व की भावना कर्तव्य है ताते यह अ
 हंकार बाधक है ताते यह अहंकार बाधक है सो मैं अ
 हंकार करि रहित नाही हों ॥ ३५ ॥ श्री पुरुषोत्तम गीय
 वैश्वको अपने स्वधर्म को परिग्रह न चाहिये इदं
 अनन्यता जे सैं वीरवलने कही ॥ ३६ ॥ स्वामी साजो तु
 म परमेश्वरी गुणों की बाकुनी को एक किं गावन
 हो सो देसादि पतिसुने गो तो कह कहें गों इत नो सु
 नत ही ॥ ३७ ॥ स्वामी कहें जो मेरे भाए तो तुम ही मल्ल
 हो जो आजु पाछे तेरो मुख न चोखो वर सो ही हूँ
 उचले चारे या भांति अपने स्वधर्म करि ला करे ॥ ३८ ॥
 गहिने ला करे काम क्रोध मद महरनाइ
 ने अपनी रक्षा करे सो मेतो कीई प्रकार अपने स्वध
 परिग्रह नाही करत हो ॥ ३९ ॥ श्री राय हनु
 अन्य धर्म जितने हैं सो सांगेया पुरुषोत्तम गीय वैश्व
 को बाधक है सो पर्वोपर सिद्धि ही दोष ताते अन्य धर्म
 बाधक है सो मैं अन्य धर्म ते निवर्तनाही ॥ ४० ॥
 एख वती सो दोष संयुक्त मैं हों ॥ ४१ ॥
 मैं हों जे मेरो कह करे गोपाय करे गो वे श्री कार करे
 गो ए सो मेको जानि नाही पडत है ॥ ४२ ॥
 ॥ श्लोक ॥ मयि दोष निधान तु सर्व स
 साधने त्वमेव ही स्वस्थ नित्य विभाव
 यो अव श्री हरि गीत कहत है ॥ श्री

ऊपर वही मिल लक्षण वती यदोय मुख्य कहै सो इतने
ही मति जानियो अपार दोष है मे तो दोष को निधां
नहीं जा को पार गिनत ना ही है और सुंदर गुण क
रि रहित हो एक दृगुण मे रे मे ना ही है या भांति मैं निरा
धन की भावना नित्य ही कर्तव्य है या भांति निरा धन
होय तिन के दृश्य मे प्रभु पधारि अनुभव करावे ३
जि श्री हरि इति हत सिद्धा पत्र सः ३ त्रिंशत्ता की ही
श्री विष्णु इति हत संपूर्ण ३७ अव ऊपर कहै जो
अपने दोष की भावना करि निःसाधन होय रहै न
करै तो आगे उदै वैभव को कहा फल होइ यह वृज मे
भावात्म कर सात्मक पूर्ण पुह्यो तम श्री कृष्ण सदा भक्त
न के संग लीला करत है ऐसे श्री कृष्ण सबो पर तिन को
अनुभव होय सो श्री कृष्ण वृज मे सदा विराजत है सो
कैसे है सो आगे सब वर्तन करत है स्तोत्र हृदये सात्म
के नित्य गोपिका मंडल स्थिते यमुना पुलिन तस्य
वृंदावन विराजिते १ या जो अथ श्री हरि इति
यह श्री वध्व भाचार्य जी के पुष्टि मार्ग मे सेव्य एसे श्री
कृष्ण सात्मक सो को न प्रकार वृज मे विराजत है सो क
हत है जो गोपी जन वृज भक्त स्वामिनी के मंडल मे स्थि
ति है श्री कृष्ण सात्मक या भांति नित्य स्वामिनी संग
गमाधि लीला करत है सो लीला को न सी होर करत
है सो कहत है जो श्री यमुना जी की पुलिन के मध्य
श्री वृंदावन मे विराजत है सो जे से श्री कृष्ण ओर सा
त्मक है ते से श्री यमुना जी सात्मक है ते से श्री यमु
ना जी की पुलिन सात्मक है तहां भक्त न सहित श्री
कृष्ण विराजत है सो श्री आचार्य जी महा प्रभु यमुना
एक मे कहै है श्री यमुना जी के तट श्री
तट स्थान को न न प्रग

पूजितः इति वचनात् ॥ या भोति श्री यमुना जी के तंद पुलि
नमध्वंदावनमें प्रभु विराजि के होय प्रकार की लीला
करत है प्रथम थल कीड़ा में प्रममणे ते जल कीड़ा या भो
ति सदा सदा सर्वदा विराजत है ॥ यह स्मरण करत यह है स्म
ते योगोपिका वृंद की डन वृंदावने स्थितः श्री वृंदावन में
स्थिति गोपी जन के वृंदतिन के संग श्री हृस कीड़ा कर
त है को न भोति सो आगे जा प्रकार लीला करत है सो क
हत है ॥ लोका नित्ये गोनर सा विष्टे विशिष्टे हरते हर
द भावैक गम्ये सर्वत्र प्रसिद्ध पुरुषोत्तमो यथा कौशले
श्री यमुना जी की तीर नित्य गान रासा दिली ॥ १ ॥ जभ क
न के संग अत्यंतर सा विष्ट होय करत है ॥ २ ॥ नित्य
लीला के होय प्रकार हो ॥ एक अवतार लीला ॥ एक मूल
लीला अवतार लीला में क्रम है प्रमान प्रमेय साधन
फल सो श्री भागवत में निरूपण की गे है प्रथम श्री ठा
कुरा जी के प्रागट्य पटलै तपस्या प्रमान गीतियों ने संसा
त् प्रमेय कहै ता पाछे प्रभु प्रागट होय वर दी गो प्रमेय जता
गे पाछे वसुदेव देव की जी के इहो व्यूह सहित संयोग
तमक स्व रूप प्रगटो ॥ सो श्री नंद राय जी श्री य सोदा जी
के इहो विप्रयोगात्मक भाव प्रगटो ॥ सो प्रमेय बल प्रग
ट करि अनेक लीला करि सुख दी गो ॥ सो खन चोरी रिंगन
लीला पाछे कात्पायनी का अर्चना दिव प्रभु में प्रेम मि
लिवे की कामना यह साधन पाछे पंचाध्याइ में फल
अवतार इसा में मूल लीला में सदा नित्य लीला सो ला
देहादि पंचतत्त्व लगेत जय प्रभु को अंस इन होऊन ते
पुरुषोत्तम अष्ट सो श्री गीता में भागवत में लख अक्षर
ने अष्ट सो श्री गीता में प्रसिद्ध पुरुषोत्तम कहै है सो भ
व करि जाने जानै है ॥ ओर साधन बल तेना ही ॥ १ ॥ ॥
यथावतार पुरुष आद्यो ब्रह्मा इ विग्रह तस्यो गारा

ऊपर वसी मिल लक्षण वती स दोष मुख्य कहै सो इतने
ही मति जानियो अपर दोष है मे तो दोष को निधा
न हो जा को पार गिनत ना ही है और सुंदर गुण क
रि रहित हो एक दृगुण मेरे मे ना ही है या भांति मैं निरा
धन की भावना नित्य ही कर्तव्य है या भांति निराधन
होय तिन के दृश्य मे प्रभु पधारि अनुभव करावे ३
श्री हरि इति हत सिला पत्र स त्रिंशत्ता न ही
श्री पेर री हत संपूर्ण ३७ अं व ऊपर कहै जो
अपने दोष की भावना करि निःसाधन होय रहै हेन
करे तो आगे उह दै स्वव को कहा फल होइ यह वृज मे
भावात्म कर सात्मक पूर्ण पुरुषोत्तम श्री कृष्ण सदा भक्त
न के संग लीला करत है ऐसे श्री कृष्ण सबो पर तिन को
अनुभव होय सो श्री कृष्ण वृज मे सदा विराजत है सो
के से है सो आगे सब वर्तन करत है स्लोक कृष्ण रसात्म
के नित्य गोपिका मंडल स्थिते यमुना पुलिन तस्थ
वृंदावन विराजिते १ या श्री अव श्री हरि इति
यह श्री वध्व भाचार्य जी के पुष्टि मार्ग मे सेव्य ए से श्री
कृष्ण रसात्मक सो को न प्रकार वृज मे विराजत है सो क
हत है जो गोपी जन वृज भक्त स्वामिनी के मंडल मे स्थि
ति है श्री कृष्ण रसात्मक या भांति नित्य स्वामिनी संग
ग साधिली ला करत है सो लीला जो न सो होर करत
है सो कहत है जो श्री यमुना जी की पुलिन के मध्य
श्री वृंदावन मे विराजत है सो जे से श्री कृष्ण और सा
त्मक है ते से श्री यमुना जी रसात्मक है ते से ३ श्री यमु
ना जी की पुलिन रसात्मक है तदा भक्त न सहित श्री
कृष्ण विराजत है सो श्री आचार्य जी महा प्रभु यमुना
एक मे कहै है श्री यमुना जी के तट श्री वृंदावन है
तट स्थान के को न न प्रगट मोद पुष्पांजुना सुरा सुरा

पूजितः इति वचनात् ॥ आभांति श्रीयमुनाजी केतंत पुलि
नमध्वंदावनमें प्रभु विराजिते होय प्रकार की लीला
करत है प्रथम थल क्रीडामें श्रम भरे तें जल क्रीडाया भ
तिसदा सदा सर्वदा विराजत है यह स्मरण करत यह है स्म
ते योगोपिका वृद्धे क्रीडन वृंदावने स्थितः श्री वृंदावनमें
स्थिति गोपी जन के वृंदतिन के संग श्री वृष्ण क्रीडा कर
त है को न भ्रांति सो आगे जा प्रकार लीला करत है सो क
हत है ॥ श्लोक ॥ नित्य गोनरसा विष्टे विशिष्टे हरते हर
द भावैक गम्ये सर्वत्र प्रसिद्धे पुरुषोत्तमो ॥ आधा जो अश
श्रीयमुनाजी की तीर नित्य गान रासा दिली ॥ १ ॥ ज भक्त
न के संग अत्यंत रसा विष्ट होय करत है ॥ २ ॥ नित्य
लीला के होय प्रकार है ॥ एक अवतार लीला ॥ एक मूल
लीला अवतार लीला में क्रम है प्रमान प्रमेय साधन
फल सो श्री भागवत में निरूपण की गे है ॥ प्रथम श्री ठा
कुरजी के प्रागट्य पटलै तपस्या प्रमान रीति सो ने सें सा
त्य में कहै है ॥ ता पाछे प्रभु प्राट होय वरदीये प्रमेय जत
गे पाछे वसुदेव देव की जी के इहां व्यूह सहित संयोगा
त्मक स्वरूप प्रगटे ॥ सो श्री ने हरण्य जी श्रीय सो हा जी
के इहां विप्रयोगात्मक भाव प्रगटे ॥ सो प्रमेय वल प्रग
ट करि अनेक लीला करि सुख दीये ॥ सो स्वन चोरी रिंगन
लीला पाछे कात्यायनी को अर्चना दिक् प्रभु में प्रेम मि
लिवे की कामना यह साधन पाछे पंचाधाइ में फल
अवतार रसामें मूल लीलामें सदा नित्य लीला सो ल
इहादि पंचतत्त्व लगेत जय प्रभु को अंस इन होऊन ते
पुरुषोत्तम अष्ट ॥ सो श्री गीता में भागवत में लख अंतर
ने अष्ट ॥ सो श्री गीता में प्रसिद्ध पुरुषोत्तम कहै है ॥ सो भ
क्करि जाने जात है ॥ और साधन वल ते नाही ॥

वये भूमौ मत्साधा इति बुध्नो अथाको अर्थे ॥ ऐसे
रमात्मक पुरुषोत्तम को एक अवतार वैराट् स्वरूप है
जाको श्री भागवत गीता में पुरुष कहत है यह ब्रह्मा
इस विग्रह श्री अंग है अपारमत्त का और अपारभुजा
अपारचरन तथा आकाशमस्तक और पाताल अरु
धृताक्षो मावली समस्त ब्रह्मा इवे मलयद्विप्रभु को
आद्य अवतार है नो अर्जुन को सब दिखारे तब युद्ध
कीयो ऐसे वैराट् स्वरूप के अंसावतार मत्स्यादि कसे
वतार कारन का रज रूप है जितनी का रज होय तितनी
का रज करि के माहात्म्य जतवै जेसे समुद्र मथन समु
य में दिग चल इवन लागो तब कछ रूप होइ धारन की
र ॥ ओर पे चार अवतार भक्तो द्वारक की री वामन जी
१ नसिंघ जी २ श्री राम चंद्र जी ३ ओर चतुर्विह संयुक्त
वसुदेव देव की जकि इही ताते ये चार जयंती को भक्त जन
मानत है ओर अवतार को नाही या प्रकार पृथ्वी पर अ
नेक अवतार ले प्रभु लीला करी अपनो माहात्म्य प्रग
ट् करत है भक्तन के अर्थ अव ओर इंक हत है श्लो
अक्षरं धोम वैकुण्ठ व्यापि वैकुण्ठ संजिव ॥ ब्रह्मानंदस्त
त्र लक्ष्मी पूर्णो नंदो हरि स्वयं धरमा वैकुण्ठासीतु वि
भक्त र्थस्य वैश्ववीरमाने पालिका तत्र शक्तिरित्यवग
म्यता ॥ पाया के अर्थ ॥ ओर अक्षर धोम है सो अक्षर
है भीतर प्रभु विराजत है सो लोका लोक पर्वत तें
पर जहां अर्जुन को लेगो है सो सर्व वेद सवन को म
ल है सो व्यापि वैकुण्ठ को संगी है जेसे व्यापि वैकुण्ठ स
वसे व्यापक है जहां पुष्टि मागी यरी तिसो विराजे
जहां व्यापि वैकुण्ठ सो इही जाको अनुभव सोई भौमि
पर है ओर सब तेन्यो रो है तेसे अक्षर सर्वसे व्याप
क है सब तेन्यो रो है ओं कार की नाई ताही तेजानी

अक्षरधामवैकुण्ठव्यापिबैकुण्ठकहनहैं। ओरभक्तनकेमन
 मेंव्यापिवैकुण्ठवारहैं। न्यारेहैं। तानीसबकोव्यापकमां
 नतहैं। तातेंदासभावदृष्टिजातहैं। भजनहीप्रभुकोदे
 खितहोमानतहैं। अपनेकोदासमानतहैं। एसेअक्षरध
 मवैकुण्ठमेंब्रह्मानंदरूपलक्ष्मीजीहैं। तातेंअक्षरब्रह्म
 केउपासनावारेलक्ष्मीआदिमेंसर्वेनंदब्रह्मानंदरूप
 ओरपूर्णनंदविभगवान् विराजतहैं। तहांकेअधि
 कारीब्रह्मानंदरूपलक्ष्मीहैं। तातेंअक्षरब्रह्मकेउपा
 सनावारकोब्रह्मानंदमोहहीमयाहोभक्तकोहोत
 हों। ध्याओरणकरमावैकुण्ठउपरहैं। तहांसत्काहिकमें
 आपजयविजयकोदीगेहैं। यहवैकुण्ठअक्षरधामवै
 विभक्तिहैं। तहांकेवासीजोवैश्रवीमृष्टिसोविष्णुपाल
 नकतोहैं। यहश्रीभागवतमेंकहेहैं। तातेंतहांकील
 क्ष्मीपालिकासक्तिहैं। दादशशक्तिपुरुषोत्तमकीहैं।
 तामेंयहपालिकासक्तिहैं। सोअतिगंभीरहैं। याप्रका
 रसोतहाजयोप्रभुविराजतहैं। तहांतिनकीसेवाय
 तेसेइलक्ष्मीविराजतहैं।

अक्षरीश्लावतास्यवको

मलभूतहैं। सोप्रकारआगेकहतहैं। पा। श्लोक॥ म
 लभूतस्यावतारोमूर्तिव्यूहोविधीयते॥ प्रद्युम्नो
 वासुदेवश्चानिरुद्धोऽनंतएवंचाक्षयाकेश्य॥ अ
 वश्रीवसुदेवजीकेइहोप्रादयसोकहतहैं। सबअ
 वतारकोमूलभूतयहहैं। मूर्तिरूपमूर्तितीए
 ओरचतुर्व्यूहप्रादभरणसोनामकहतहैं। चतु
 स्वरूपप्रद्युम्नवासुदेवश्चानिरुद्धओरअनंतजोसं
 कर्षणवकहैं। पीछेंचकारधरोतहोयहजाननो
 खितवेयओरसोमकेयइनहीसहितयहप्रकार
 स्वरूपप्रादभरण। दुष्ट

६४ धर्मसंघर्ष भक्तनकीरहाकारनार्थहत्यादिअनेक
कारनहैं सोइनचार्यहृदयभीतरपुरुषोत्तमहैंति
नकीजन्मअवतारमाहीहैं सोश्रीमद्भागवतमेंक
हेहैं जगतिजननिवासोदेवकीजन्मवादेयदुःखप
रिषतखेदीभिस्स्यन्तधर्मस्थिराद्विरजघ्नसमि
तः श्रीमुखेनरुनपुरावनितातावद्वयंकामदेव १ इति
वचनातयाप्रकारदेवकीविऊरतेजन्मवातजिमें
पूर्वदिशातेंचंद्रसूर्यप्रगटोद्युअवचोरहंकहतहैं
होकावृद्धिवातायत्तत्रस्थाप्यतेप्राप्यतेनयः
तथैतेरवतःहृत्सौनवतारैवगम्यतेअथाकोअ
याप्रकारचतुर्व्यूहकोरचिकेंआपुश्रीहृत्सउन
केभीतरस्थापितविगजतहैंतहांकोईकहेजोग
सेश्रीहृत्ससंयुक्तवृद्धहैं सोचतुर्व्यूहकोपूजनकरि
येंइतनेश्रीहृत्सहीकोभयोंयाप्रकारकोईसंदेहकरे
तहांकहतहैंजोजइपिवृद्धकरिआवतश्रीहृत्समि
लेहैंतऊइनचारिवृद्धअवतारकीउपासनापूजन
श्रीहृत्सअवगाहेनजायकाहेनैपूणपुरुषोत्तम
हृत्ससर्वमेंहैंओरसबतेन्याउरहैंतातेवृद्धहैंसोप
रुषोत्तमकेआगपाकारीहैंजितनीप्रभुकीआगपाहैंति
तनोकार्यकरिकेफेरिअपनेधाममेंपधारगेओरश्री
हृत्सतोनिपलीलाविनोदकरतहैंतातेवृद्धकीउपा
सनाकरिवर्गलोकनयासुखफलमोहादिचारप्रका
खीमिलेमाहृष्यामिष्यमायुज्यमाखेद्यओरभ
क्तिरसकीप्राप्तिनाहीतातेंसर्वोपरश्रीहृत्सहीतिनही
कीन्यारीभक्तिकहेमिलमभक्तिफलकीन्यूनता
प्राप्तहोतहैंयाप्रकारजगतमेंजीवसत्संगधेनाश्री
हृत्सकेमाहात्म्यकोजानतनाहीहैं सोकहतहैं
७ अतएवजेनामहाप्राहृततेवदेतिहीअंशकार्य

मूल रूपे कल्पयेत् जगतां तां पाया को अर्थो त्ववश्री ह
रिगो इति कहत है जो या प्रकार अंस जो चतुर्व्यूह सो अ
नेक प्रकार प्रकार की लीला जगत में करत है मथुरा
त भाजि पें स्विहूं सो करत है कास्की दहल करत है अ
नेक प्रकार के धि चार करत है मिलि कै प हली ला दे री
वै कितने जन जीव जो अग्यानी है सो मोद मोद के वस
ने प्रादुर्गत की जानी श्री हृष्ट को जानत है सो अवक
लिके जीव की कहा है अवतार दिसा में को ई एक भग
वदीय प्रभु को जानत है और जगत में को ई न जानत
काहे ते अंतावनार की लीला कार्य देखि सब को ई य
ह कहनो जो श्री हृष्ट जे यह कार्य कीयो सो मूल रूप
श्री हृष्ट को नाम मिथ्या कल्पना करि अज्ञान सो क
हत है ताही ते सब न को ना समयो एक जगद्विभक्त
हते सो आपने छुटो नाने भति श्री हृष्ट की होनी अ
ति दुर्ध्व भंदे श्री हृष्ट को केवल आनंद मय सत्त्व
कलीला कर्ता जाने दोहो रजे सो कार्य ते में वृद्ध
की लीला जाने यह भाव दूर है तव श्री हृष्ट में भाव
उपजे सो श्री हृष्ट के से है सो अवतारों वरन न करत है
यहो कह ॥ हृष्ट लुकेव से लीला करोति सरूपिणी
भूभा ररण चक्रे कला भासेव सर्वथा देया ह्य अ
थ श्री हरिगो इति कहत है जो श्री हृष्ट तो सदा सर्वदा
वृज भक्त ने के संग लीला करत है सरूप सो लीला क
हि वे में ना ही आवत है जो निज जन श्री आचार्य
जी महा प्रभु के है अंतरंगीति न के मन में अनुभव क
रि वे के योग है ताते सरूप लीला कहै माना दिवि हा
रा दिया भक्ति श्री हृष्ट तो सदा सर्वदा चंदावन में वि
राजत है और पृथ्वी पर दे न रास की पाप होत
सो भूभा ररण नाथ कला धनार श्री हृष्ट

तो भावि देवता न की प्रभुता करत है पा भोति वृज में नि
एक रूप लीला है कला अश्रिष्ट को कार्य करत है
तो पामाने दान तु स्व रूपेण ति निश्रय वृज स्थ एव स
ने पुण्यो वा क्षपा पर १० या ११ अथ श्री हरी राजी
त हत है सो पामाने दान तो सदा वृज में लील व
तो एसे श्री हरी ही ते हो ३ श्री स्व रूप आदि अंश कला
के आश्रय ते निश्रय हो ३ एक श्री हरी वृज स्थ यही
स्वरूप सो हो ३ पद सिद्ध जस वी पानि श्रय जो न नो
एसे श्री हरी सदा वृज ही में सत ते निरंतर स्थिति है
ओर जो पुरी मधुपुरी तथा द्वारिका में स्थिति नो स्वरूप
पद निन की दृष्टा वों फल सो दाहि है पुष्टि मार्ग को प
लना ही है ता ते जो जीव मथु रास्थ श्री हरी को आश्रय
करत है निन को ही श्री हरी अथ नो आनंद दान ना ही
देन है उन पुरी के स्वरूप दरावे सोई फल मया दामाणी
यस दान करत है सो भगवती नामे कहें है ते यथा मां
प्रपद्यंते स्मां तथैव भजाम्यहं ता स्वरूप की ना भाव सो
जीव प्रभु को आश्रय करे निन को ते सोई फल सिद्धि
होत है प्रभु ही ना ही भाव सो ना जीव को भजत है ते सोई
फल प्राप्ति होत है अथ अंग कहत है १० स्तोत्र तत्रा
पि रूप भेदेन क्रीडति स्म तथा स धर्म सा त्र स्व मया द
रहित केवल वृज ११ या १२ अथ श्री भोति श्री हरी
अपने अनेक स्वरूप धरि क्रीड जगज में द्रोखे करत
है जहा जे सो स्थल है तहां ते सोई स्वरूप है तहां ते सो
इस है ता ते वृज में धर्म स्वरूप अंग वृज धिना धर्म
स्व मया दाम दित है ता का मया दाम को दान है श्री
वृज में धरमी स्वरूप केवल पुष्टि पुष्टि मया दाम दित
अमया दालीला को लेख बे दानी त रा सो रसात्मक
स्वरूप सदा सदा वृज में विहार करत है अथ अंग

दुत है ॥ ११ ॥ लोक ॥ सर्वधर्मविशिष्टं नृमर्यादं पुरे सतं
उद्धृत्वा लोनुयात्नीला केवलेन च जेहता ॥ १२ ॥ या के
अर्थ ॥ सर्वधर्मसहित मर्यादा पुरस्वातम मथुरा द्वारि
कापुरी में विराजते हैं ॥ ओ ॥ उद्धृत्वा लोनुयात्नीला उद्धृत
रमणसे केवल पुष्टि पुष्टि पुरस्वातम सो व्रजमें लीला
रत है ॥ ताते मधुपुरी द्वारिकापुरी के सहस्रमें ओ व्रजमें
के सहस्रमें वह तही फेरें ॥ उनके फलमें हरे फेरें ॥ ताते व्र
जस्थ स्वरूपकी भावेना कर्ममें है ॥ अब ओ कहत है ॥
क परमानंदरूपा साक्षात् कनीलादिभेदतः सर्वत्र सली
लात्वे गदभावेन वर्णितं ॥ १३ ॥ या के अर्थ ॥ अब श्री ह
रिगुजी व्रजस्थ स्वरूपकी लीला धारत है ॥ जो व्रजमें श्री
यसो दोहों संग लाहते श्री कृष्ण के सेहें परमानंदरूप ह
वाली लीला आदि पोंगु विसोय दस गरी लीला सब
गोसरूप ही है ॥ सो श्री गुसाई जी गुसास ग्रंथमें कहें हैं ॥
ताभाव सो सगरी लीला रूप ही जाननी ॥ सो गदस्य
हभाव वणनमें न आवें ॥ अंतर्गी भत न के मनमें अनुभव
करनमें योग्य है ॥ सो स्वरूप स्वरूप व्रजमें विराजत है ॥
व ओ कहत है ॥ १४ ॥ लोक ॥ कामरूप तपाइ से न यो नहि
नियामकों एता हें ॥ मूल रूप मूल लीला समन्वित ॥ १५ ॥
या के अर्थ ॥ व्रजमें श्री कृष्ण के सेहें कोटि कामरूप रजभ
क्तों को सुख दानार्थ प्राटे हैं ॥ साक्षात् मनमथ मनोय ॥
भक्ति रासपंचाध्याई में कहें हैं ॥ ऐसे कोटि कामरूप तहां
वय अवस्था के नियम नाही है ॥ जो कियो हो सो तव स
हो न करे ॥ यह नियम नाही है ॥ जन्म तही रस दान की
ऐ सो श्री भागवतमें कहें हैं ॥ जयति जननिवासो देव

तिनको कामकी वृद्धि करत है और श्रीगुणों की पाल
ना की गे है नामें कहें हैं माननी मानहरणों श्रीयसोदा
जीके श्रीगोपाल नाम लत है और श्री स्वामिनी को मा
न हमना वत है मानहरते या भाति वाक्कनी लाही में
एक काला वद्विन्न समतली लाकर तहें पद विरद्ध
मो अथ स्व रूप वृज में है सो गुमद रूप में श्रीगु सोई जी क
हते है एता दुसरे श्री हृदय मूल मूल लीला समन्वि
त वृज में है जेसे श्री हृदय मूल रूप सदा एक सम वृज में
लीला करत है तेसे मूल रूप सदा लीला करत है
वृज यह कहि के पद जतारे जेसे श्री हृदय नित्य है ते
से श्री हृदय की लीला मूल रूप एक सम है या भाति सर्व
लीला संयुक्त वृज में विराजत है चक्र और हं कहत है
१५ श्लोक चित्ति निरंतरं स्थाप्यं मेव मेवा स्वमार्गगा त
न्मिदं प्रमाणे चित्ते नापि विधीयतां १५ पा को अ
श्री हृदय इजी अपने भाई श्री गोपेश्वरी सो कहत है
जो ऊपर बदेगा से श्री हृदय के सर्व के मूल रूप सात्मक
इनको अपने चित्त में निरंतर स्थापन करत है और ए
से सात्मक श्री हृदय की सेवा अपने स्वमार्ग में है ना
तं चित्त में निरंतर गण से प्रभु की लीला संयुक्त अनुभव
करावे सो मानसी से वक्षे सिद्धार्थ सरीस्यो चित्त सो न
नुज वित जा सेवा नित्य नेम पूर्वक वतें यहे सो सि
द्धांत मुक्त बली मे श्री आचार्य जी महाराज कहें हैं
मेवेदा सदा कार्य मानसी सा परामता चेतस्तत्स्वर्णमे
वा तन्मिधेत नु वित जा इति वचना श्री हृदय की से
वा तनुज वित जा सदा नित्य नेम पूर्वक तव मान
सी सिद्धि दोइ यह पुष्टि मार्ग की रीति है अब और कहत
है १५ श्लोक निवेदनानुसंधानं विधेयता इमे सह
संयोग एव कर्तव्यो विश्वासः स्थाप्यतां इहः १६ पा

को अथो गये श्री हृत्सो भाव प्रगल्भ हो ज्ञानार्थतादृसी
वैलक्ष्ण्यो मिलिके निवेदन को अनुसंधान को रंजित
सत्संग जं नित्य नेम सो को और भाव दी प्रके कहे को
वचन को अपने मन में इह विस्वास एवं चात्र कपटी
वत्तव गये श्री हृत्सो स्वस्मानंद को अनुभव होइ अ
वत्रो ह्वत तं रं रं लोक सुख धपा पगधी नो दीना
नामनुपे लके स्वकीयानां मन्यभावात् कण्ठि वनं स्व
ता ११ या को अथ श्री हृत्सो से हैं दूपा करिके अपने हो
प्रके आधीन हैं भाव दीय गारे हो भक्त विस्वात्तर कर
णमय डोलते पाछे लागे गये श्री हृत्सो प्रसिद्ध ही हैं
अर्जुन को रथ द्वाकत हो पांडव नके आग्या कारी भग
एव भक्त न सो तो एक लेण उन विना रथो ना ही जात
हो या भांति श्री हृत्सो दूपा करिके अपने भक्त नके आध
न हो ताते जो यद्युष्टि मार्ग में श्री आचार्य जी द्वारा सर
न होय नि साधन होय दैन्य करि रहे हैं ऐसे भक्त की उ
पेला कब हूं श्री हृत्सो ना ही करत हो और जे संसारा मत
जी कनो किक वैदिक में महा दुख पावत हो तिन की
उपेला ही प्रभु की गद्दे काहे ते संसार में होय फल दे
मुख और दुख सो पाप को फल इ दुख और पुन्य को
फल इ सुख लो वित्त तिन की उपेला हो और अपने
स्वकीय निज भक्त को अन्यथा भाव को ईकार में क
व हूं श्री हृत्सो ना ही करत हो स ए भाव की रता ही क
रत हो आगे हो और ला करत हो और द्वा गार ला हूं
करा वे गो स्वत आ पु भक्त न की रता करत हो ऐसे ही
पाल श्री हृत्सो हो अथ और हूं कइत हो रता जो अपन
जी प्रवृत्ति सुचित गुणायथा दरो मति सो ले वे पा
त दर्श स्वये य जो रथ या को अथो जे संधर्म मा
वति भये ते छित सुद्ध होत हो निश्चय

भजनके भावदेखिके भावकी रक्षा करत है धर्ममार्गते
चित्तकी शुद्धभावते प्रभुवस तेसे पाखंडकी येते मति
जो बुद्धिको नास सर्वथा होइ है ॥ अब और कहत है ॥ १८ ॥
॥ मार्गप्रवर्तकाचार्य चरणेषु निरंतर विश्वासः सुद
दकार्यस्तत्सर्वफलप्राप्ति ॥ १९ ॥ ॥ अर्थ ॥ विशेषत
वेगो बड़ न द्यासके पत्रते जानीयो ॥ विमदिकं यह पुष्टि
मारीयके प्रवर्तक तो श्रीवध्नभाचार्यजी है ॥ निनके दो
पचरण कमलको द्रढ आश्रय करनो ॥ मनमें द्रढ आ
श्रय द्रढ विश्वास जावै प्रवर्तको होशो ॥ सो सदा निरं
तरता करि सारो फलतिनको निश्चय प्रदीति दुष्टो
जो यामें संदेह नाही है ॥ नाने सर्वोपर सिद्धत यह है जो
श्रीआचार्यजीके चरण कमलको द्रढ विश्वास करनो
विशेष समाचार गोवर्द्धन द्यासके पत्रते जानीयो ॥ १९ ॥
॥ श्रीहरि इजी हत अष्टत्रिंशत्पत्रताकी
टीका श्रीगोपबन्धुजी हत संपूर्ण ॥ ३८ ॥ अब ऊपर पुष्टि
मार्गमें सेव्य प्रभु श्रीहरि सात्मक स्वस्वको वर्ननकी नो
तिनकी सेवा करनी ॥ भावदीयको संग करनो ॥ सो प्र
कार आगे कहत है ॥ श्लोक ॥ सत्संगेन प्रभो चित्तं स्थि
यनीयं निरंतर ॥ पूर्वशुभाभा मर्या नामनुसंधानमाद
गत ॥ १ ॥ ॥ अर्थ ॥ अब श्रीहरि इजी कहत है जो
सत्संग करि प्रभु जो श्रीहरि निनको अपने चित्तमें स्था
पन करे निरंतर सो नवल ग्रंथमें श्रीआचार्यजी महा
प्रभु कहै है निवेदन नुसन्तव्यं सर्वथा तादृशैरपि ॥ आभा
ति निवेदनको सुगुण तादृसी पुष्टि मारीय भावदीय
वसंग मिलिके करे ॥ तब चित्तमें निरंतर भाव निरंतर
स्थिति होय निश्चय ॥ सो एकादस स्कंधमें भगवान्
निरंतर आपुन पने श्रीमुख सा कहै है ॥ उद्धवजी प्रति
कहे है ॥ श्लोक ॥ निरोधयति मायोगो न सारं धर्म उद्धव

नखाध्यायतपस्यागोनेषापूर्तेनदृष्टाणां तानिपजं
हामिनीथीनिनिपसायमाप्यावहैसत्संगम्यसंगाप
होदिमांनप्रतिवदनान्भागवोन्कहतहैजोमेस्तनेम
धनतेनाहीवसहोतहोयोगतथासांख्यनखाध्यायतप
स्यापनेषावृतादिपराधृतीथीनिपमइत्यादिआर्य
नकसाधनतेमोकोनिरोधनाहीकरतहैजेसंयतंग
मोकोरोकरइतहैताकेवलहोइजातहैतातेसत्संग
बलेवडोपदार्थहैतातेपुष्टिमागीयनैसधकोयत
गतिंतरकहैतेहोआरपर्वतोपुसवध्नभवुलद्वग
नामनिवेदनसुन्योहैत्यप्राप्तमहामंत्रताकेनाम
कोअर्थसहितअनुसंधानआहृपुर्ववरांजोनाम
हैश्रीहृदकोमोसारेवेदयाज्ञकोमोरपमगात्म
कहैएसेश्रीहृदकीमिसरनहोपदनामश्रीयात्रा
पजीष्माप्राप्तभयोइयाभानिभक्तोवपिनाममंया
मआहृपुर्ववरांजोनाम
हैलोभाक्तेस्वनेसम्यविद्वयमिजिलिद्वं
स्वदिसमाधानेइहमेववसक्या
गकसेवकतेसम्यक्प्रकाशयतंतनीजिह्वेइह
प्रकाशपुष्टिमागीगीजितेनमिजिह्वेइह
करइतिनिष्कयभूतपुष्टिमागीभनगतीइह
यसवाहीपममाधनइहोनद्वं
हैममेवप्रतीतेइहमालेइह
मेवगाराइहजल्पनइह
हैइहकइहमेवप्रकाशइह
पमइहमेवप्रकाशइह
गाराइहमेवप्रकाशइह
नेएवप्रकाशइहमेवप्रकाशइह
इहमेवप्रकाशइहमेवप्रकाशइह

प. २

भजनके भावदेहि के भावकी एता करत है धर्ममार्गते
चितकी शुद्धभावते प्रभुवस तेसे पाखंडकी येते मति
जो बुद्धिको नास सर्वथा होइ है श्रवण और हं क हन हो ॥ १५ ॥
॥ मार्ग प्रवर्तकाचार्य चरणेषु निरंतर विश्वासः सुद
दकार्य सतत सर्व फलिष्यति ॥ १६ ॥ याको अर्थ ॥ विसेष
वर्गो वर्द्धनदायक पत्रते जानीयो ॥ विमधिकं यह पुष्टि
मार्गीयके प्रवर्तक तो श्रीवद्वत्भाचार्यजी है तिनके हो
पचारण कमलको द्रढ आश्रय करनो ॥ मनमें द्रढ आ
श्रय द्रढ विश्वास जावै भवको होइ हो ॥ सो सदा निरं
तरता करि सगरो फल तिनको निश्चय ही सिद्ध होइ
जो ॥ यामें संदेह नाही है ॥ तानें सर्वा परसिद्धांत यह है जो
श्रीआचार्यजीके चरण कमलको द्रढ विश्वास करनो
विशेष समाचार गोवर्द्धनदायक पत्रते जानीयो ॥ १६ ॥
इति श्रीहरिइजी हत अष्टत्रिंशत्पत्रताकी
टीका श्रीगोपेक्षजी हत संपूर्ण ॥ ३८ ॥ अब ऊपर पुष्टि
मार्गमें सेव्य प्रभु श्रीवल्लभात्मक स्वरूपको वर्ननकी नो
तिनकी सेवा करनी ॥ भगवदीयको संग करनो ॥ सो प्र
कार आगे कहत है ॥ श्लोक ॥ सत्संगेन प्रभो चित्तं स्थि
यनीयं निरंतरं ॥ पूर्वशुभानामर्थानामनुसंधानमाद
रान् ॥ १७ ॥ याको अर्थ ॥ अब श्रीहरिइजी कहत है जो
सत्संग करि प्रभु जो श्रीवल्लभ तिनको अपने चित्तमें स्था
पन करे निरंतर सो नवल ग्रंथमें श्रीआचार्यजी महा
प्रभु कहै है निवेदननुसन्तर्क्यं सर्वथा तादृशैरपि ॥ याभा
ति निवेदनको समान तादृसी पुष्टि मार्गीय भगवदीय
वसंग मिलि के करे ॥ तब चित्तमें निरंतर भगवत्तन निरं
र स्थिति होय निश्चय ॥ सो एकादस स्कंधमें भगवत्तन
निरंतर आपुत्र पने श्रीमुख सो कहै है उद्धवजी प्रति
कहे है ॥ श्लोक ॥ निरोधयति मायोगो न सारब्धं धर्म उद्धव

होहिमां॥ इति वचनात् भगवान्कहत है जो मे इत्तने सा
धनतेनाही वस होत है॥ योग तथा संख्यनखाध्यायतप
त्याने श्रवतादि प्रसिद्ध तीर्थ नियम इत्यादि और अ
नेक साधनते मोको निरोधनाही करत है जे सै सत्तंग
मोको रोक रहत है ताके वख होइ जानत है ताते सत्तंग
बडो बडो पदार्थ है ताते पुष्टि माणीय वैभव को सत्त
ग निरंतर कहत है॥ और पूर्व जो गुरु वक्ष्य भकुल दारा
नाम निवेदन सुन्यो है त्रष्टाक्षर महामंत्र ताके नाम
को अर्थ सहित अनुसंधान आदर पूर्वक करै जो नाम
है श्री कृष्ण को सो पागे वेद सास्त्र को मार पार मरणात्म
क है॥ ऐसे श्री कृष्ण की संभारन हो॥ यद्नाम श्री आचा
र्य जी दया प्राप्त भयो है या भाति भोक्ता करि नाम में पा
म आदराखे त्रष्ट प्रहरणीयो करे त्वक् और कहत है
ऐसो॥ भगवत्सेवनं सम्यग्विधेयमिति निश्चले वै
श्रवादिसमाधानं इत्यसे वैवर्क्या॥ रायाकुंभे॥ भ
गवत्सेवा करै सम्यक् प्रकार अत्यंत प्रीति पूर्व और ना
प्रकार पुष्टि मार्ग की रीति है तारीति पूर्वक भगवद्सेवा
करै इति निश्चय यह पुष्टि माणीय भगवद्दीय को निश्च
य सेवा ही परम साधन है सो नवमस्कंध में भगवान्क
हे है॥ मत्सेवया प्रतीतं च सालोक्यादिव तुष्टं नैष्ठिति
सेवया पूर्णा कुतान्य न काल विलुप्तं॥ रत्न तीर्थ स्कंध में व
हे है अष्टौ वकीयंत न काल कहे जिघासया पाप यद
प्यसाधु॥ ले भे गति धात्रे चित्त तो न्याकं वा दया लु
शरणं वृजे म॥ २॥ अष्टम स्कंध साखानांतरो मंला वसे च
ने॥ एवमा राधने विलो॥ सर्वव्यामात्मनश्च हि॥ ३॥ इत्या
दि वचन को नाम विचार भगवद्सेवा सर्वोपर मुख्य

धर्मज्ञानिप्रीतिपूर्वकनित्यनेमसौचरं श्रीरमहाप्रसादा
दिप्रसादीवस्त्रातिसोचनेतितनोवैश्वकीसमाधा
नकरे जेसंप्रीतिपूर्वकवैश्वकीसेवाकरे तेसंप्री
तिपूर्वकताइसीभाषदीयकोप्रसादादिवस्तुसोसमा
धानकरे याप्रकारपुष्टिमार्गमेंवैश्वकरहेतोप्रभुहृष
करे श्रवश्रीरहंकहतहेलो अतः प्रभोमप्रतिदि
वदनेकार्यकरणोतसेवेवैवदिसंतुष्टः सुखस्यः प्र
भुर्भवेत्प्राप्तिको अथ प्रभुप्राप्तिकरं प्रार्थनादेन्यहोय
वीनरीकरिप्रभुकोदयात्रावै भक्तिवीरद्विहोय सो
श्रीगुणाईजीविजसिमैंकहेहो लो कयदेन्यतहोपाहे
तुजिहोपाहेप्रावपिताहोपावुराधेशाययातदेन्य
मामुयात १ प्रीतिसंगमराहित्याद्यर्थसर्वमनोरथः नि
रूपत्रयतासिद्धिजीवामिसिद्धिसाप्रसन्नचित्तेनदुष्टः
वचसापिदुष्टः कायेनदुष्टक्रियाचदुष्ट जनेनदुष्टो
भजनेनदुष्टोममापराधः कतिधाविचार्यो विज्ञतो
नापराधेवापाखंडेवांसयदुक्तयः पर्यवस्येतिबुद्धे
तिनजानेहंविमदधी ४ वलिष्टापिमहोपात्वनरु
पापेतिदुर्वला तस्याईश्वरधर्मत्वादेयानाजीवधर्मेतः
५ त्वहो नविहीनस्यत्वहीयस्यतुजीवितं यथमेवय
यानाथदुभंगाया नवंकय ६ याभांति अनेकभावसो
प्राप्तिकरैमहादुष्टहो तुममेरेप्रभुसो श्रीआचार्यजी
द्वारासंबंधभयोहो सोमोपरद्वपाकरो याभांतिदेन्यता
नेप्रभुकोदयात्रावै भावकीवृद्धिहोइकाहेते भाववृ
द्धिकोकारनएकदेन्यताप्राप्तिहीहीहो याभांतिदेन्यहो
७ श्रीहृक्षकीसेवाकरे तवश्रीहृक्षसंतुष्टहोय याभां
तिदेन्यताहोइवाकरे प्रभुसंतुष्टहोइजाइतावैश्वकी
प्रभुसुखस्यहो कवहस्येवामिप्रतिबंधनकरे वत्वहो
गादिबाधानकरे जन्मभरिप्रभुकीसेवानिरविघ्नता

सो होय सो श्रीगुसांजी कहै है सुखसेवो एसे वैभवकों मह
प्रभुजी सुखसेव ही हो अथ वचो रह कहत है सो सा सुग्राध
स्ये वैवशी करण साधनो दुष्टसेवो प्रवृत्तों भाष्यवतो ज
नामता ॥ ४ ॥ या जो अर्थ श्रीहृत्सुखसे है अन्ततु ग्राध है
असादिशि वादिको उचो खानको दिव्यमं अनेव साध
न समाधमै कवहुं गारि होत है अंर जीवतो अनेक हो
य करि भयो दुष्ट होय हो है तिनको दुग्राध है तिनको
दुग्राध है वडे दुष्टो गी अयेने हृदयमें वा न्यनो करत है
आसान करत है मुनी जन्म जन्म यत्न करत है तिनको दु
ग्राध है प्रभु है तो जीवकी कदावात है तउ जो देवी जीव
श्री आचार्य जी मह प्रभु द्वारा सरण आगे हो प्रारपुष्टि मा
की रीति अनुसार भावदमे वा करत है है न होय पदी
साधन करि गये दुग्राध श्रीहृत्सुखसे भक्तनको वस हो
त है सो श्रीहृत्सुख जीव कहत है जो यदुष्टि मा मा श्री आ
चार्य जी द्वारा सरन वायके मार्ग की रीति अनुसार भाव
से वा करत है सो परम मापकं भगवद्जन है परम व
ड भागी है उन ही हो जन्म सुफल है सो हृत्सुखसे असे श्री
गुवसे वज्रि है है हो का देवो सुगमनुष्यो वा फलोगं
वैरथ्य भजन्मुहुर्यराण्यजिमात्मा दृष्टाव्य ॥ ५ ॥
वधे रुद्रवाक् नारायण पास्ये न वंजन् न विभ्रति ॥
गी पकान्ति रेख पितु लार्थे नृनिः प्रदेवता मनुष्य
असुरयस्तं धवोदिको डोय मुवुह स्वावां न वेत्ताव
मरुकी सेवाय रेसमन्तावे तास्मान्को उं नाही तद
श्री नारायण श्रीहृत्सुख की भक्ति सर्वोपजति त्वं अ
पवर्ग जो मोह नयान्क तु यही जने तमे अन्तमभने
वमानको ड नाही होत होना तस्माद् नमः वदाम
एव हि सेवता अत्र न्यति मस्ति न वदियति किं यत
॥ ५ ॥ या जो अर्थ अव श्रीहृत्सुख जी श्री

करत है जो दृढ मन करि के सर्वोपर श्री कृष्ण तिनकी
प्राप्ति प्रीति पूर्वक कर्तव्य है सो श्री भागवत में कहै है
हृत्ता हृत्वा को त दान तपो नेत्या न सो च न वृत्तानि च
प्रीत्यते मलयामता हारिण्यदि डं वनं ॥ २३ ॥ वजी कहै
दान वृत्त तपो हो मज प स्वाध्याय संयम श्रेयो विभि वि
श्रान्ति हृत्ते भक्ति हि साध्यते ॥ २४ ॥ एका ह्य रं कंध में श्री दु
सर्वार्थ तत्सर्व भक्तियोगेन मद्रक्त लभते जसा स्वर्गो
पवर्गो मदाश्च कथं विद्या दिवां वृत्ति ॥ २५ ॥ भोति श्री कृष्ण ही
की भक्ति सर्वोपर है एत त प सो च जो क्रिया वृत्त हो मज प
स्वाध्याय संयम इत्यादि हस्ति भक्ति विना वि डं वना है
सगरो ताते निय काल हो श्री कृष्ण चंद की भक्ति सेवा ही
मन लगाने के कर्तव्य है चो इहो हमारे आगे वत मान
है जो जो हम को जीत है अखिल कार्य सो धि से करि इस
रे पत्र में लिखे है सो वाचि के जानो गोपाल का श्री विठ्ठल
प्रभो दो सस्य मदास मदा स्थितः तन्न तप वृत्त तो खिलो वि
ल च्छले ख कि म धि के ई पा ॥ श्री गो दु ल नाथ
जी विष्णु श्री विठ्ठल राय जी तिनको दास स्याम दास सहि
ता हिस मस्त सेवक वै स क्य ह स्या चा जानो गो प्रति
तर विजा एस हिन लिखी अखिल समाचार कदा के हो
य सो सर्व लिखी कि म धि के ई श्री इ रि डो इ
एके नजी ली स मो लिखा ॥ की टी का श्री पे ॥
श्री कृत सं ॥ ३६ ॥ अव ऊपर कहै जाय ह पुष्टि मार्ग में
हृत्स की सेवा सर्वोपर है साधन फल ही कर्तव्य है सो
म करत हो परम भाग्य है सो आगे कहत है श्री प
रा प्रकारो वै स्व दुख विनिवेदन म हन राखे चलिते
जेषु भव सुख ॥ १ ॥ श्री अव श्री हरि राइ जी अप
दे भाई श्री गोपेश्वर जी सो कहत है जो मैं अपनो दुख
द्वारा निवेदन करत हो कहै ते तुम सर्व लायक है

प्रिय आताहो ताते दुख सुख तुम विना ओर दुसरो किनसे
 कहो ओर तुम इच्छो जी पास होते तो दुख में सदा ही कहते
 ओर मोको दुख ही नही तो तुमारे संगति ताते यदुपत्र दारामे
 दुख जानो गो महातरणी है आया जाकी ऐसे भगव
 हीय मे पास ते अपने कार्यो चलो सो दूराये मोको द
 डिके अवतन के मिलन की आसामो को ना ही है ओर
 तुम हं इहा ते इच्छो ताते पत्र दार आपनो दुख लिखे हो
 सो वाचिके समाचार जानो गो जी श्लो ग जाना मिति
 न मार्ग स्थ धर्म किंचित् स्यादस्ता त तदसिद्धि न हन्ते
 रां को मे इति किरिष्यति इ या को अर्थ श्री हरि राजी
 कहते है जो श्री आचार्य जी श्री गुसांजी की रूप वल
 ते किंचित् कछु थोडो सो अपने यद निज मार्ग पुष्टि मार्ग
 के धर्म सिद्धि न भयो कहते परम भगव हीय सो तो अप
 ने कार्यो पर देमाणे ओर अष्ट प्रहर दुसरा दोय ते
 यद पुष्टि मार्गीय धर्म सर्वो पासो सिद्धि भयो ताक
 रिके मेरे हृदय मे अत्यंत दुख ले स भयो है सो यद
 कले समेरे इच्छि गे सो मोको जानि ना ही यद
 त कहते मे सब कस साधन सुधर्म का किं रहित हो
 ओर अने कदोय भयो हो ताते मेरे दुख देखिके मे
 दुख ले सको इति गे ताते मेरे धीर ज हृदय मे
 ना ही रहत है अपने छुज देखिके ले सको पावत हो
 य अव मे वे सो हो सो आगे कहत हो सो श्लो प्राय
 पायंद मुख हं इति ए इति चिंतिता छपा लक्षण पु
 रामे कुरु ते ही न वत्सल इ या को अर्थ श्री हरि रा
 जी दिव्यता होय के कल दार अपने सेवक नको पुष्टि

अपने मुख

सो कह कहो

की पाखंडीया को मुखिया जानत है काहेतै हरि नो
सर्वदुखदृती पामदया लक्ष्मी नवत्सल है तउ मेरी उपे
दा की नीहे ताते में जानत है जो मो को मदा पाखंडी
जानि के मेरी उपेदा की नी मेरो त्याग की ये है सो श्रव
में कदा कसं या भांति है न्य कर्तव्य है सो श्रीगुसांइजी
कहे है चिते न दुष्टे वचसापि दुष्ट को है न दुष्ट क्रिया
च दुष्ट जाने न दुष्ट भजने न दुष्टो ममापराध दिनधा
विचार्य १ जाना मिमंदा भाग्यो हं दयै र्थे गोबुले ग्यः
नत्वे ले रास्त्र हि सुखं स्वभावं कुरुते तथा २ श्रीगुसां
इजी श्रीगोवर्द्धन नाथ जी सो कहत है जो मे चित करि
के दुष्ट हो वानी करि के दुष्ट हो काया सीर करि दुष्ट हो
क्रिया करि दुष्ट हो पाखंडी तियो दुष्ट न साहेत वरन
हो ए सो मेरो अपराध कहो तो ई विचारो गो ताते अपरा
ध मति विचारो श्रीगोरो मदा मंदा भाग्य है सो मिंया तुं ज
न्यो है गोबुले ग्य हं संधान जो अगो तो गाय गोप गो
पी सो ए अज की रक्षा करी है तुम ही गोबुल के रक्षक
प्रभु हो ए सो पामदया लक्ष्मी तुम गो स्वभाव है सो छे डि
ही गोबुल भरो जो भक्तन को त्रे स अब सदन लागो
मातुम ईश्वर हो कर्तुं अर्जुन अन्पथ कर्तुं सब सामर्थ्य पुन
हो तुम चाहो सो करो ताते तुम को कह कहिये मे मंदा भा
गी हो जो इत नो अस्तुम को भयो अपनो उह दयाल
स्वभाव पर मेरे ली ए तुम को कटार हो नो पक्षो भक्त
के दुख को सहन लागो या भांति है न्य पुष्टि मागि मे माध
न है भगवदी गेहै एणारे है हो पतितन को राजा
हो पतितन को इस हो पतितन को नायक इत्यादि है
न्य करि जीवन को स्वरूप प्रगट करि सो भगवान् ज्यो
न्य एण्डे नव दुष्ट भरो ताही ते श्री आचार्य जी महा
प्रभु कहै हैं जीवो स्वभाव तो दुष्टा इति वचनात्

यामांति श्रीहरिराजजी श्री आचार्यजी श्रीगुसांईजी वि
 भाव अनुसार कहत हैं जोसे पाखंडीमें मुख्य होन्ने
 सोमोको प्रभु अपने चित्तमें चिंतन करिके जद्यपि श्री
 हरि दयाल हैं कृपाल हैं हीन वत्सल हैं तऊ मेरी उ
 पेक्षा कीण है तहां कोई कहें जो प्रभु जो श्री हरि तो
 भक्त की उपेक्षा नाही करते हैं यह सास्त्र पुराण श्री
 भावतगीतामें प्रसिद्ध है श्री अनुमते के से जानी जो
 मेरी उपेक्षा यामांति कोई प्रति उन करै तहो कहत हैं
 अश्लोका उपेक्षित विद्वान् तदीधेय्युपेक्षते अंत
 कं यामिसरां वनस्थ इव विस्मता धृयाः अथ श्री
 श्रीहरिराजजी कहत हैं जोमें याते जात्यो जो हरि भगवा
 न मेरी उपेक्षा कीण है जोमोको पुष्टि मासीयत दीयमोको
 छोड़ि दीये सोमें आगे वडेन के श्रीमुखद्वारा शास्त्रवाती
 सुनी है जो भगवान्त प्रसन्न भए कब जानिये जब भग

अवकिनकी सरन करूं

यह नुम प्रभुको देख्यो दृग्ये

को पाखंडी या को सुखिया जानत है काहेतै हरि नो
 सर्वदुखदृष्टोपामदयालु दीनवत्सल है तउ मेरी उपे
 दा की नी है ताते मे जानत है जो मो को मदा पाखंडी
 जानि के मेरी उपेदा की नी मेरो त्यागवीयो है सो श्रव
 में वरक संया भांति है न्य कर्तव्य है सो श्रीगुसांईजी
 कहै है चिते न दुष्टो ववसापि दुष्टकाहे न दुष्टक्रिया
 च दुष्ट जाने न दुष्टो भजने न दुष्टो ममापराध दिनधा
 विचार्य १ शोनामि मंदभाग्यो हं द्यैथे गोबुलेभ्यः
 न त्वत्तेरा स्रक्षिष्यत्वं स्वभावं कुरुते तथा २ श्रीगुसां
 ईजी श्रीगोवर्द्धननाथजी सो कहत है जो मे चितकरि
 के दुष्ट हं वानी करि के दुष्ट है काया से रकरि दुष्ट है
 क्रिया करि दुष्ट है पाखंडी तिसो दुष्ट न सहित करत
 हो ए सो मेरो अपराध कहो तो ई विचारो गो ताते अपरा
 धमति विचारो श्रीगो मेरो मंदभाग्य है सो भियातै ज
 न्यो है गो बुलेभ्यः यद्दसंधं नो श्रीगो तो गाय गोप गो
 पीसारे अजकी रक्षा करी है तुम ही गो बुल के रक्षक
 प्रभु हो ए सो मंदया लतुमो स्वभाव है सो छे डि
 दीयो कठोर भो जो भक्तन के लेस अब सदन लागे
 सो तुम ईश्वर हो कतुं अब कतुं न्यथा कतुं सब सामर्थ्य पुन
 हो तुम चाहो सो करो ताते तुम को कह कहिये मे मंदभा
 गी हो जो इतने श्रम तुम को भयो अपने उद्वेग्याल
 स्वभाव परे मेरे कीरे तुम को कठोर हो नो पक्षो भक्त
 के दुख को सहन लागे या भांति है न्य पुष्टि मागे मै माध
 न है भावदी ग है न्य कारणे है हो पतित न को राजा
 हो पतित न को इस हो पतित न को नायक इत्यादि है
 न्य करि जीवन को स्वरूप प्रगट करि सो भावांजसो
 न्यारे पडे न वदुष्ट भरे ता ही ते श्री आचार्यजी महा
 प्रभु कहै हैं जीवो स्वभाव तो दुष्टा इति वचनात्

इजीश्री आचार्यजीश्रीगुसांईजीके
अनुसार कहत हैं जोसे पाखंडीमें सुख होये
तैसे चिंतन करिके जद्यपि श्री
याल हैं वृपाल हैं दीन वत्सल हैं तऊ मेरी उ
हाकीणें न हो कोई कहें जो प्रभु जो श्री लख तो
वरी उपेक्षा नाही कहत हैं यह साक्ष्य पुराण श्री
भागवत गीता में प्रसिद्ध है श्री अनुमते के से जानी जो
मेरी उपेक्षा या भांतिकोई प्रतिजुत करे तहो कहत हैं
अश्लोक ॥ उपेक्षितश्चिद्विगण नदीधेरयुपेत्यते अत
कंयामि सराणं वनस्थ इव विवृता ॥ ४ ॥ अथ श्री
वृषीहृदिगीश्री कहत हैं जोसे याते जान्यो जो हरि भगवां
न मेरी उपेक्षा कीणें जो मोको पुष्टि माणीयत दीय मोको
छोड़ि दीये सोसे चांगे वडे न के श्री मुखद्वारा शास्त्रवातो
मुनी हैं जो भगवांन प्रसन्न भगे कव जांनिये जब भग
वदीय मिलाय होइ श्री भगवांन उदासीन भगे कव जां
निये जब भगवदीय छोड़ि जाइ नाते में जानत हैं जोसे
री भावांन उपेक्षा करि सोको छोड़ि गये हैं तो अवमं
हाव हैं कि न की सरन जाऊं यह चिंता मोको बडी हृदय
में भरै है जो भगवांन भगवदीय होउ मेरी उपेक्षा की
ये अव कि न की सरन वरूं सो जेसे कोई गंभीर मन में
न लिपे है तव विनकी श्री जाइ कह गेल सहे नाही
तव बडी चिंता होइ तेसे सो को चिंता बहुत भरै है त
हो कोई कहें जो प्रभु ने उपेक्षा करी तव भगवदीय उपे
क्षा की छोड़ि गये तो यह होय तुम प्रभु ही को तुम जे
न तहो सो यह भक्ति मार्ग की रीति कहत हैं प्रभु तो निह
य है तुम प्रभु को देख ठहरये या भांतिकोई कहें तहो
कहत हैं ॥ श्लोक ॥ प्रभोरपि न वेदोषो गुण न्येष्टि
नो मपि विस्मय दोय निव्यं ग्रहीयाद्गुणं यच्च

०१ श्रीहरिराज्ञी कहत है जो प्रभु को दोष तोर
चकनाही है यह सगरो दोष मेरो है जो मेरे गुण को ले
सज्जाही है और दोष न खते सिखा पर्यंत मेरे में भरो है
जो अपनो दोष मे विमरिणयो हो और गुण नाही है सो
कपने को मदा गुण खंत जानत हो यह गुणान्त मे
रे मेरे मेरो दोष सगरो दोष है और प्रभु तो सदा गुण सं
युक्त है मोक्षो च जान करि भूमायो है अब और कह
त है पदो को ॥ अब श्रीहरिराज्ञी कहत है जो जिसे सं
ह भेय था भूषण वस्त्र पुष्प को पहरावे और वह भू
षण को धासा तो नही है तब दया भूषण वस्त्र पुष्प भेय
हूय है स्वादिना प्रेत समांज रुह संसृता हूय
है तो सेई भाव विना सेवा कथा हि भाव जो कहा सो
मेरे भाव नाही है ताते सो को सेवा कथा कहें जे
सेयु स्य को प्राणी खाए होय तो भेय सक आहो स्वा
दिना विना दूयते ताते भाव होय ताके कथा हि सेवा
दिके रस को अनु भवन होय भाव विना क्रिया वन
सो कहा सो मेरे भाव नाही है ब्रह्म नीवडा अर्थ कहु
कहत हो ताकरि मे को कहु कहा पल सिद्धि है कहु ना
ही ताते सो को दुख होत है अब और कहत है श्लो
प्रायक येव नैषा स्तियति तिष्ठति नोद्गदि नवानु भाव
वसुते निजं तागाभिधं मापि ७ या ॥ अब ताते जी
व श्रीचक्षु की कथा हि सेवा दिमें यह जीवनाही स्थि
ति है तब भाव हूय मो कहते तिष्ठे गो भाव होय द
रा भवन करे तब हूय मे भाव सिद्ध होय सो श्रीभाग
वत द्वितीय स्कंध में श्रीभुवदेव जीव है श्लोक प्रवि
ष्ट कर्ण रंध्रेण खना भाव सरोरुहं धुनीति समलं प्रस
सलीलस्य यथाशरात् १ सप्तम स्कंधे भुववाक्यं त
स्माजो विंदमाहात्म्य भाव हर स सुंदर अणुयात्की

नेनेनित्यं स ह्यर्थो न संशयः । २ इति वचनात् भग
वानकी कथा के सी निर्मल है जैसे गांजा जल लावे
लेय आसपास के सर्व पवित्र होइते सै ही कहै कहावे
और जो सुने पाछे अनमोदन करे सो सर्व सुद्ध होइता
तै श्री हरि राइ जी कहत होतिया श्रवन विना हृदय में
भाव के सति है सर्व ध्यान तिष्ठे और जहां तहां लो कित
हृद संवंधी कार्य मे ते मन को त्याग न होइ तहां तो ईश्वर
कहावे स्वइय को अनुभव कहातें होइ कहातें मन क
रि के भाव सिद्ध होइ हों सो मन तो लो कित संसार दिमें
आवे सभयो अनुभव कहातें सिद्ध होइ सो संन्यास नि
र्णय में श्री आचार्य जी महा प्रभु कहें हैं विषया कांत दे
हाना नावेश सर्वथा हो जा की देह हृदय में विषया दि
को भावना कामना भरी है ता के हृदय में भाव रावे स
कहां तें होइ सर्वथा ही न होइ सो मेरे में मन नो कछु लो
किक वैदिक त्यागना ही हूं ता करि अनुभव कहातें होय
अवग्रह कहत होइ ७ लो ॥ सेवानु प्रतिबंधो वा भोग
इमादि नाथ के गोद विना दिकाराति कथं सामान सी
मेवेत् ८ पा को अ ॥ और भगवद सेवानु ना विन जा
ही में अनेक प्रतिबंध हैं परी इन्द्रिय के विषय की काम
ना उदेत वसेवा करत मे उद्देग होइ जो कव से वा करि लु
को पीछे ध्यान पांन करं या भांति प्रथम विषया दिकार
भोग की कामना हीइ तव मन मे उद्देग होइ से वा मे म
न न लागे तव प्रभु को धुरो लागे तव प्रतिबंध होइ
जामें से वा ही न बनि आवे तव ग्रहा दिकार्य वितड
या दिक से आसति होइ तव मांन सी कहातें सिद्ध
इगी सो सेवा परम में श्री आचार्य जी महा प्रभु कहें हैं
उद्देग प्रतिबंधो वा भोगो वा स्यात्तु वाध के इति वचना
त हृद संवंधी ध्यान पांन विषय भोग संसार सति प

हमै वा मै बाधक है उद्गावरावत है तव तनु जावित जा
मेवान भई लौकिक संसारासक्त भयो तव मो न सीया
को कहते सिद्ध होइगी सो या प्रकार में लौकिक भोग
में आसत है तिन को मानसी तो परम दुर्भे भई तनु
जावित जा सेवाना ही सिद्ध है पावन और कहत है श्री
कृष्ण तात पादेषु या ते सुदुर्भगस्प परो सता तत्सु सर्व
युयाते सुदुर्भगस्प परो सता तत्सु सर्व
इति कहत है जो मेरी यह व्यवस्था है ताते श्री आचार्य
जी श्रीगुरुजी तथा श्रीगोकुलनाथ जी तथा श्रीक
ल्याणराजी यह सारे पिता समान हैं श्री आचार्य ज
सारे प्रगट कर्ता श्रीगुरुजी यह पुष्टि मार्ग के प्रकाश
कर्ता ए सारे धर्म भदुल तथा सारे पुष्टि मार्गीय वे
प्रवर्षिता ही हैं यह भाव श्रीगोकुलनाथ जी द्वारा नाम
निवेदन भयो है सो मेरे गुरु चरण पिता ही हैं और क
ल्याणराजी इस रीति त चरण जगत प्रसिद्ध हैं ताते
में तात चरण जगत प्रसिद्ध हैं ताते में तात चरण तेन्या
रे इति स्थिति हो को परोक्ष है सो या समय में या दुख में मेरी
कोन सहाय करेगो ताते में वडो दुर्भाग्य ही है मेरे भाग्य
वृभगे है और सत जो तुम सगरी वस्तु के जानन वारि हो
तथा पुष्टि मार्गीय भागवदीय सर्व गुण युक्त तिन
ते में इति स्थिति हो तुम हो इति स्थिति हो भाव दीय प्रो
ते इति स्थिति है सो श्रवण में कहा करु ताते यह जो न ते ही
जो दूरा भागी हो या दुख में मेरे या सत पुरुष को ईना ही
है जो मेरे चकउसमाधान करे ताते में कहा करु दुय
हू पावत हो श्रवण और कहत है श्री श्रीभागव
त चित्तानु न विना संगतः सता मनस्थो त्वं तविले
पान्न वा शरण भावनं १० या श्रवण श्रीकोई क
हे जो तुम तो वडे सजान हो सत्संग ना ही है तो कहा

अथ श्रीभागवतको अवलोकन करौ। ताई कहैं स
कल चिंता देख लें स हरि होइगों। या भांति कोई कहैं तहां
श्रीहरिजी कहत है जो एकाग्र हवि होय तव श्री
भागवत की खवरि पड़े मन तो में चिंता लें सक स्विंदु
खित हृदय होय रघो है ता कहि श्रीभागवत को भाव
मा को कहैं तें ही सीगों। और ता इसी भाव ही सत पुस्य
होय वे श्रीभागवत को भाव दृषा करि हेवता वे तव
जानो जाय अके लो में हृदि हृदय चित युक्त श्रीभागव
त में के सें होइगों संतोष तहां कोई कहैं जो हरि की सर
न की भावना करौ श्री आचार्य जी मरा प्रभु विवे कध
में कहैं हैं ऐसे को वा सुसखे वा सर्वथा सराणं हरि
तथा भगवद्गीता में भगवान् अर्जुन प्रतिकहे हैं सर्व
धर्मो न परित्यज्य मामेकं सराणं व्रजेत्। अहं त्वा सर्वपा
पेभ्यो मोक्षयिष्यामि मा शुचः। या भांति सरन की भाव
ना ते स गरो कार्य सिद्धि होइगों या भांति कोई कहैं तहां श्री
हरिजी कहत है जो मेरे मन में अर्जुन विक्षेप होय
रघो है ता कहि साराण की भावना कहैं तें होइ १६ अव और
हैं कहत है श्लोक। वातो न्तरुति प्रेमा अशत रस
नो जेय महत्व मत्प्राप्तो कानां प्रपत्त्या ह्यन्य नासनं
१७ या अर्जुन तहां कोई कहैं जो श्रीराम व्रजेतो अशत

७३ हे जो अष्टाक्षर को जपना ही वनत तो हे न्य भाव
करे तो ना ही करि प्रभु प्रसन्न होइ गो सो श्री आचा
नी कहै है हे न्य ते ही तो ध्यान देखे होय तो भाग्य न सं
षपाये या भांति कोई कहै त हो कहत है जो लौकिक में
लोभान में अपनी महत्त्व दे बड़ाई है ता में यह ममता
जो मे बहुत समझत हो मे मे बहुत धर्म है ता करि के हे न्य
ता की ना स है सो लोचन की बड़ाई यह महत्त्व ता में उन्न
त फूल्यो फिरत है ता करि के हे न्य ता ना स है सो लोक
न की बड़ाई यह महत्त्व फूल्यो फिरत है ता करि के हे न्य ता
ना स है ता ते में वहा करु अवचोए कहत है सो नि
वेदनानुसंधान राइ सन स मे कथं के वंते शरण सर्व
त्यागा भावाच्च दुश्चरं १२ या तो य श्री अव कहै जो नि
वेदन को अनुसंधान राखो ता ही करि सर्व सिद्धि है
त हो श्री हरि राइ जी कहत है सदा भक्ति पुष्टि मागीय
भाव दीयति न को में ते जि दीयो अव निवेदन को अ
नुसंधान के से करु निवेदन को अनुसंधान के से
करु निवेदन को अनुसंधान के से १३ भगवद् ग्यसो
मिलि के कते व्य है सो श्री आचार्य जी महा प्रभु न वर
त ग्रंथ में कहै है निवेदन तु स्मर्तव्यं सर्वथा ता इ स
पिः १३ त्याग दिव च न करि भाव दीय विना अकेले में
के से हो त हो कोई कहै जो केवल प्रभु की सज्ज करि
श्री हस्त श्रय में श्री आचार्य जी महा प्रभु सर्व माग
प्रगट करि सन सिद्धि की है सो ई करो या भांति की
ई कहै त हो श्री हरि राइ जी कहत है केवल सन
तो सब लो विवक्षित तीर्थ वृत्त कर्म इत्यादि
सर्व त्याग मन में हो इत व सन द्रव्य हो सो मेरो सन तो जो
विवक्षित कार्य में लगि हो है सर्व त्याग को अवभाव है
ता ते सन कहत होइ मो को तो केवल श्री हस्त की श्रव

नपरमदुर्लभहैं तातेसेवहाकहा ॥ १५ ॥ अथवा ॥ १६ ॥
हैं श्लोक ॥ चोचेलचित्तमः शुचद्रुहानपदाश्रयः
वैकधैर्यतद्गुणमवाधीरस्यमेव ॥ १७ ॥ अथवा ॥ १८ ॥
हन्तहैं जोसेरोचितलौकिकसंभवेधीका

प्रतिचंचलहोयराहोहैं ताकरिवें श्रीहरिचरण
लमें आश्रयद्रुहनाहीहैं सो आश्रयनोवोदात
महैं आश्रयकोसाधनविवेकधैर्योसोऊसिद्धि
हीहैं तो आश्रयकीकहाकहैं श्रीआचार्यजीमहा
भुविवेकधैर्योसोऊसिद्धिनाहीहैं तो आश्रयकीकहा
हैं श्रीआचार्यजीमहाप्रभुविवेकधैर्योअयमेंनीना
कारकहैं सोसाधनमेरेमेकहैं विवेकधैर्यसतत
तथाअमः इतिवचनातविवेकधैर्यकीनि

रहाकरेंतवश्रीहरिकों आश्रयद्रुहो
धीरमेंराजाहैं सोअज्ञा

नैसिद्धिहोइताकरिवें आश्रय

वयोएकहन्तहैं श्लोक ॥ तावोवदनुभावे

सिद्धिनिः ह्नावजभुवद्रुहचरण

हैं हता ॥ १९ ॥ अथवा ॥ अथवा ॥ श्रीहरिइनीकहन्त

अवकोईकहें जोकधुनाहीबनेतोवजलीलाकी

ताकरिवनुभवहोइगोयाभांतिकोईक

तहोश्रीहरिइनीकहन्तहैं जोभावकोंचैनुभवकों

नीलासामग्रीकोसंवेधीदेखेतेहोय

होतेपौनिकासिकैवाहिरपदसमस्थितहोइहो

कैभावउत्पन्नहोययाभांतियपनपेवोनिसों

ताकरिवरतहैं नभयोहैन्यते

योसोदेहानुसं

कीलीलातनपहोइकेकहन्तहैं हतः वह

भूमिकहैं तहोश्रीहरिसगरीलीला

प. ७४

कलंगवरीहैं एसी वज्रभूमिकहाहैं वज्रभूमिके दोरों
चरणारविंदकहाहैं धजावजादिघोडसचिन्ह गोप
हैं १ जेव २ मधु ३ धनुष ४ त्रिकोण ५ अर्धचंद्र ६ बा
कार ७ एवाम चरणवेदिन्हैं धज १ अकुस २ कम
ल ३ वज्र ४ साधीय ५ अष्टदोण हैं जेव ७ ऊर्ध्वखाद
सुलस हैं दलगाचरणकमलके घोडसचिन्हमें युक्त
वज्रभूमिकहाहैं १४ अव अव्योएकहतहैं स्तो कजो
लक्ष्मणदासार्थो पुलिंदी भाव पोषकः हरे श्रीयमुना
दया लीलासविता रिका १५ या अव उद्गोलक
हाहैं कलदास इनको नाम एसे गिराजजी परमदया
लजी पुलिंदिनी सारिकी वों भावको पनकी गे गिरि
राजके संगति पुलिंदी कों भाव उत्पन्न भयो ऐसे गिर
राजजी सर्वो गति प्रभु की सेवा करत हैं सर्व रितुमें प्रभु
को सुख देत हैं गाय सुख पावत हैं ऐसे गिराजजी कहा
हैं भावको पोषक श्री श्रीयमुनाजी कहाहैं वृमारी
के मनो स्थ प्रानकर्ता श्रीयमुनाजी नंदविंराजत हैं ए
से देख कहहैं यमुनाजी कहाहैं सेवे सेहैं लीलासवि
तारिका हैं इनके आश्रयते श्री कृष्ण की लीला को अ
नुभव होइ एसी श्रीयमुनाजी कहाहैं अव्योएक
हतहैं १५ स्तो हते बेणुवायै वी समाष्ट शब्द स्थि
तः वजन अथ करं भोज प्रोद्धिता कृगवांगणा १६ या
अव श्रीहरिराजजी कहत हैं जो यह वेणु को
एव श्रीकृष्ण को वेणु नाद करि समस्त वज्रभक्तन को ए
व श्रीकृष्ण को वेणु नाद करि समस्त वज्रभक्तन को ए
स दर्शन करत हैं स्यावर जंगम अधार सखों प्रति हैं
उत्तम कृष्ण वज्रकहाहैं सर्वोपर श्रीकृष्ण वज्रके नाथ
अपने करं भुज से पोषत हैं सगरी गाइन को सुख
देइ पालन करत हैं एसी गायकहाहैं अनेक गाय

के गुण सम हृष्टी हस सहित लोक हों अव और क
 त हो स्तोका । अनंत जीला धारा स्ते पुना । का विपिन
 । विनु नाद परा वृत्त भुजा रुद्र वृत्ति ए १५
 अनंत जीला जहा भक्तन के सग श्री हिस करत हैं
 वंदन के दुम सुंदर नामे ते वैनु नाद सुनि मधुका
 रा श्रवत हैं ऐसे वृत्त कहा है और वे गुनाद के
 रन में परा यण पंदी ब्रह्मादिकी साखा भुजा रूप
 पर आरु होइ वे ठे है प्रपनी वंचल स्वभाव त्याग क
 न की नाई वे ठे है ऐसे पत्नी कहा है । जो गुल गी
 जस्य वृज भक्त श्रुति स्यात् कुमारिका सगरे हिन
 त भुगल गीत गाय गाय के निर्वीह करत हैं ॥
 तांग विहगा पुनयो वनि स्मिन् वृक्षे लणात्तदुदि
 कल वे गुगी तो । आरु घवे दुम भुजा न रक्षि प्रव
 एवति मिलि हृदयों विगतान्य वच । शिया
 त गावत है ताई भाव में श्री हरि इजी मग हो प्र
 भावना करत है अव श्री और हूँ कहत है स्तोका
 वराणा भोज रे गुध क्रव ज स्थिता दधिनि
 र्हेते प्रवण मंगला । १५ । यावो अयो २
 इजी कहत है निवृज स्त्री के चरण
 वज में स्थिति है । सो मो को कहा । निसे उइ वजी
 । आसा सहो चरणे गुनु धाम है स्यात् वंद
 गुत्तम लतो यधीना पाद स्युजं
 त्या भेजे मुकुंद वदो श्रुति निर्विमग्यं
 होय कहै और प्रातः काख दधिमयन
 न को परम माल रूप से कहै है
 स्तोका । गोपो समुत्पायनि
 न्य च दधिन्य मेखान्त
 नुजो विकय जुजं कंका

५. वस्तुनहाकुंडलतियत्कपोलाहणकुंकुमायनोउ
३५ प्रीतिनामपरविंदलोचनें रजागनादिवनसपत्र
ध्वनिभूदधिमश्रुतिमेयशब्दमिश्रतोनिगच्छतेये
नदीसामसंगलंयाभावमेंमग्रहोइश्रीहरिगिजी
कहतहैं॥१५॥ यवचोएंकहतहैं॥ श्लोक॥ यमुनावा
लुकादेहसंबंधः कजलस्यसिः वदुर्मुखत्वसातमे
तदीयत्वेचमेहुतः॥१६॥ या॥ ॥ यवश्रीहरिगि
जीकहतहैं जोश्रीयमुनाजीकीवालुकाकहाहोए
सीवालुकाकेसंबंधतेथजो कि कदेहहोय तथा
श्रीयमुनाजीकोजलपरमलीलासश्चमृतश्रम
जलतातेजलओरवालुकाकेरंचकसंबंधतेथले
कि कदेहसिद्धिहोइसीजलओरवालुकाकहो॥ सो
श्रीगुसाईजीयमुनापृष्ठकेपदीमेंकहतहैं॥ तवतदग
तवालुकासंकलनिजोगागतामुहाकरियो॥ य
श्लोकानुसारभावविष्टभरहै याभातिवृजकीली
लाकोअनुभवविप्रयोगभावसोकरिपौरहैयकरत
हैं जोतैनिंतरवदुर्मुखहीहोताहीनेमोकोपुष्टिपर
गीयभावदीयकोमिलाएसोकहा॥ यहजुपरकहेसोभा
वतदीयकेसंगतिसिद्धिहोइसातदीयतोजहोयह
भावकीजोग्यताहोयतिनकेसंगस्थितिहोतहैं मेरे
सेततवदुर्मुखहो॥ ततैमोकोभगवदीयकोमिखाप
कहो॥१७॥ यवचोएंकहतहैं॥ श्लोक॥ परमानंदरूप
स्थितितेकिंदुःखसंततो पावकाभावतोनेबदुदृष्ट
चार्यसंश्रयः॥१८॥ या॥ ॥ यव परमानंदश्रीगोवर्द्धन
श्रीसातद्वरूपश्रीविहरनाथजीयहमुष्टिमागसे
परमानंदरूपश्रीहृदयसात्मकसेबहोएसेजीकहमो
तेदुष्टहो॥ ताकरिकेमेरेचितमैनिंतरदुखरहितहैं
दुष्टकीसोतिप्रभुबिनाकेसेहोय एकमेरेभाव

नाहीहैं और दूसरे को एक भागवदीय के भाव के पोषण न
तो नाहीहैं और श्रीवध्वभाचार्यजी के चरण कमल के
दृष्ट आश्रय में मैं नाहीहैं ताकारिकें मे निंतर दुख को पा
वत हों अथवा और कदत हों १७ लोक। विषयाभिनिवेश
न पेदाण विराति प्रभो जानो छिशा प्रतं सर्व साधना भ
व वाहन १२१ या को अर्थ। श्रीहरिराज्ञी कदत हें मे के
मे हों विषयावेश करिकें न सो हों सो प्रभु मो को विषया
व स देखि के मेरे हृदय में नाही वास करत हों सो श्री आद्य
र्यजी महा प्रभु संन्यासनि गेय ग्रंथ में कहें हैं विषया
क्रान्ते हाना नावेशः सर्वथा हरिः या भांति विषय को
आवेश देखि के प्रभु हृदय में नाही स्थित होत हें और
विषय के आवेश ने देखि दर्शन की इच्छा आति नाही
होत हें तो प्रभु हृदय में वे से आवेगो या भांति सर्व साध
न के अभाव करिकें तुम ऐसन मुख में नाही आयस
कत ता करिकें भाव कदतें सिद्ध होय ता मे मे विषया
वरी साधन न करि रहित सो हों भगवद्भाव को ले स हें
मे नाहीहैं अथवा और कहत हों १८ लोक। निःसाधनत्वे
भावे तु विद्यमाने प्रयोजकं तद्भावं केवलं ये हो या ये व
न चान्पथा १२२ या को अर्थ। मे के सो हें श्रीहरिराज्ञी क
दत हें भाव विता नि साधन होय वे गोपों सो सत्कार्य भ
गवद्भर्म हों छोट्टीयो हें सो अरे सो निःसाधन अ प्रयोज
क हों तो मे कछु सामर्थ्य नाहीहें सो प्रसिद्धि ही जगत में
धन हों भगवद्भर्म सारी नाही करत हें सो कहां निःसा
धन हों ते मे ईश्वर सारी की नाई लोकिता सति नि साध
न में हों ता करिकछु सिद्धि नाहीहों वा दतें जगत में
कोई स्वतः कर्म सेवा अण प्रभु की नाही करत ता ते
हानि साधन हों भातें भगवान् ने तद्रूप तद्भाव भगो वि
ना सत्कार्य हो हों सो वे दल दोय रूप ही हों सो ए से मे हें

नपथावनायके नाही करत हो। एसी ही धरूप में ही
हैं ते में मे भाव है नाही है। २२। अब और कहत है। हो
क॥ मरी रे नाथ मगत स्थ क्रिया का वात्र से सति यथा
धो व धिरी म को विदुतः। एंगु सुना ना। २३। या को अ
मरी में सामर्थ्य होय तो क्रिया लौ किक च लौ किक
वने ते से भाव दिना पकल साधन जु होई ना को दृष्टा
त कहत है ते से ग्रंथ है सो को न प्रकार देखे। ओर अब
कहा सुने। ओर गी को कहा बोले। ओर हस्त विना क
क्रिया करे। ओर पग विना कैसे चले। ते से ही उन मन
जो है। तन भाव से रहितः। लौ किका सति सो भा
प्रक ए पावे। अत्यंत दुर्लभ। ओर भाव वि
य फल की सिद्धि नाही है। सो भाव ही पगारे है।
वगरे। भजिस बि भाव भाविव रहेव। कोटि साध
कोऊ तऊ न माने सेव। २४। धर्म के तदु मा र मा गो को न
मा रा प्रीति। पुरुष ने त्रिष भाव उप जो सवे उलटीरी
ति। २५। वसन भयण पलटि पहरे भाव सो सयोग। उल
टि मुद्रा दर्शयं कनि वरुण स धे है य। २६। वेद विधिके ने
म ना ही प्रीति की पहचानि। वृज बधु वस करि मोहन
सर चतुर सुं जान। २७। या प्रकार भाव ही ते सव सिद्धि हो।
सो मेरे मे भाव हूँ को ले सना ही है। ना ते मे को कहु हूँ सि
ना ही है। सो मेरे मे भाव हूँ को ले सना ही है।
कहु हूँ सिद्धि नाही है। लौ क॥ अवा सका म विलसो
हरि एणे पेहनो भव। विष्णु गामि सहा संत का मति मे
विद्याति। २८। या को अर्थ। भगवद का
मनो रथ प्रभु सेवा संबंधी ता करि रहित हो। प्रभु की
में एक क्षण हम न सोने नाही लागत है। ओर लौ किक
सना विषया है तथा ते देह के भरण पोषण मे देह संव
धी भरण पोषण में यद चिंता करि ग सित हो। ता करि

जिज्जीव्ययोमेरीउपेक्षाकीऐहैमेरीबुद्धिनाहीलेन
हमेंमहादोषकोसमुद्रहोतातेमेरोन्यागकीऐहैऔर
एकदोषमहामेमेहैसर्वोपरभागीहैतातेप्रभुमोकोछो
इसोसतजननेभगवदीयहैसोसदाईरवाभावकरि
करिहिनहैजेसेविभीषणकोमननैपदसोंप्रहारकी
योतऊविभीषणबिनतीकीयोभलीवातकहीऔरलक्ष्म
दासनेश्रीगुसाईजीकेहसनबंदकीयोपरंतुश्रीगुसाई
जीहृषदासकोभलोईकीऐवहरीतिसोभावदीयरहै
तोप्रभुप्रसन्नहोशसोमेभावदीयकीस्तामेतत्परहोत
नेमेरोन्यागप्रभुकीऐहैसोअवमेकहाजार्जऔरकहा
करअवमेकोनगतिहोनहाहोयहबेहोदुखमेमेहै
अवऔरहूकहतहै॥२॥श्लोकविस्तवैषिणास्माक
मधिकारहतापुनःछतंयुवतिवशेनकार्यमेकमनी
हृशंरुद्धयाकोअथभगवद्धर्मसंबंधीदुखतोमेरेहृ
यमेवीहोनहताऔरलौकिकगवहुवत्रायवैप्रा
भयोहैसोकहतहैतोहमारोअधिकारीविरक्तवेशज
गतमेंजाकीबहुतवडाईहैऔरमेंअवहुतहृपापात्रनो
निबैवाकोसंगकीगोअपनेपासगव्योसोविरक्तअधि
कारीकामनीजोपाएत्रीकोदेखिकेसोहितहोतभयो
सोपदकलिमेंयुवतीमहामोहनीहैकाहूकोधीएज
ज्ञानविवेकराखतनाहीहैतातेयुवतीबसअधिका
रीहोतभयोअथवाविरक्तहोइकेअधिकारलीजोता
करिकेयुवतीकेबसमयोकोमहृयमेंबहतभयोअ
वऔरहूकहतहैश्लोक।कस्याश्चित्तरुनिग्रामविध
वायाश्चसाम्मान्दुष्टेनस्थापिनोगमःपतितश्चन
थोयइताहृयाकोअथयाप्रकारयुवतीकेवसहो
इकोईकालमेंसमयपायसंबंधकरतभयोसोको
इयदवातकोजानतनाहीसोबहविधवास्त्रीके
साविषयहोतभयोसोबहस्त्रीकोगभरहिगयो

प. ताकरि के व ह स्त्री और मेरी अधिकारी महामन में दुखी
७ भयो जो अब के सी हो इणी पाछे और अधिन करि होऊ
मिलि के गर्भ गिरावत भये सो यह बात सर्वदोर प्रसिद्धि
जा निवेसे सब को आवत भये अब और हुं कहत हो लो
॥ मरण को भयो मध्ये कस्य चित्पान्त से शयो मूले
न प्रेम जीना म्ना महापति निर्धारिता २७ या ॥ अब और
अहं दे के गर्भ गिरायो सो मृत कहो इ के गिरायो ताकरि
के रज मे हा विम्वो खबरि भये सो मृत्यु समाप्त दुख हो
न भयो या मे संसय नाही और कहो तां डे में लिखो सो प्रेम
जीव सख मो संग रहो सो अनेक यत्न करि के मेरी आय
त दुख निवारन करत भयो राजद्वार को समाधान की
यो और मेरी अज्ञान करि साधन कीयो सो जानो गो अब
और हुं कहत हो लोक विश्वास कस्य कर्तव्य इति लिखि
मनो मम ग्रह कार्य न चलति मनुष्याणां मभावतः २८
या ॥ अब और ताते मे सी वार्ता देखि के अब विश्वास को
न को करिये लोक दुख संबंध के लीये यह स्थ को छो
डि विरक्त ममान विवै सख को संग लीयो ता को तो यह हा
ति होत भये अब को न को आपने पास राखिये अब को
न को विश्वास करिये सो मनुष्य मिलत नाही हें सो य
ह व डो इ दुख है पर हे समे जा न्यो मनुष्य चहिये सो
मिले नाही और विश्वास का ह्वे मर आवत नाही
और विश्वास बिना सुख नाही होत है री अब और
हुं कहत हो लोक अतः शिगोपि कार्य लु
स्मृतः सदा प्रायणः प्रेम जीना म्ना
वत २९ या ॥ अब और
अनिही नि प्रे
रह मा रोय
ही होत है हमारी
रि के सर्व और ते मन में

हे गयो भगवद्दीधमरे संगमै एव प्रेम जी ही है सो केव
 ल विरक्त की ना ही रहत है जित नीवन त है तित नीह
 मारी रहत करी लौकिक ते न्यारी रहत है हे प्रहस्य प
 तु विरक्त वत जे सैं विरक्त के धर्म सास्त्र मे कहै है तद्व
 त रहत है एसी इन की दिसा है इन के संग ते कछु कम
 नै काने रहत है तद्वत रहत है सो अवगमै पाय
 ने बलिवे को विचार कीयो है सो मो को महा दुख भयो है
 सो आगे कहत है ३२ यो श्लोक ॥ अस्तित्वं युजते तस्मात्
 श्रेष्ठ्या बहु समाहितः तां तो पराधसवोपि मया क्रो
 धवशातमः ॥ ३३ ॥ यो श्लोक ॥ अथ या प्रकार प्रेम जी रमेरे पा
 सने चले अथ मे को न प्रकार सो निर्वाह करे गोता
 ते या प्रकार समान कछु कअपनो दुख नुम को कि
 विसे सो बो होत करि के जानियो कहां ताई लिखे
 है सो बो होत करि के जानियो कहां ताई लिखे ॥
 वात नो लिखवे में ना ही आये सो मे लिख्यो सो मेरे
 अपराध तमा करियो ॥ ओर अधिकारी विरक्त जंतु
 मारे पास अस्तित्व सो या उ को अपराध तमा कर
 रियो काहे ते जीव हे सो दोष निधान है ताते क्रो
 ध मति करियो काहे ते नुम परम चतुरता इसी है
 ताते रया क्रोध के वसना इसी होय तो ये उ वडे
 होय है ताते नुम क्रोध वसति रह जियो यह क्रोद
 है सो उ चा डाल को ख रूप है भगवद् धर्म मे बोध क
 है क्रोध ते भगवद् वा वे स हरि होइ जात है अथ और
 स्व रहत है ३४ यो श्लोक ॥ इहानि तु रज्जा पूर्वमणि
 तिस्तु सवैया भवहि सर्व बलि
 श्रुत ३१ या तो अर्थ ॥

प. ७८ तं ह म प र ह स मे अ ने क भां ति के दु ख पा व त हे मे रो चि
त ठि काने ना ही हे ता ते क दु मे री वा तो अ प ने म न मे
म ति र न्या ई थो आ र तु स प्र भु के सा नि ध्य हे स ग म
प्र भु सं व धी तु म को का र्य क र्त्त व्य हे ता ते तु म चि त
को ठि काने रा खि यो प्र स न्न म न रा खि यो आ र य
ह वि रू त्त आ धि का री के अ प र जे से पू व कृ पा रा ख त
ह ते ता ई भां ति या अ प र जे ह रा खि यो म न मे क दु
हो य या के म ति वि वा र्थि यो ए क र स अ प ने म न की
रू त्त म व थो आ ह र खि यो आ र दो य ज ने अ प
ने ध र्मे त था से व क ह रू वा स व सो मि लि के स
व दे न्या र न्या र स मा चा र स व वे गि ही प त्र लि खि के
प रा ध्यो अ व आ र ह्म न हे ३० श्लो का अ ति प्र स
न्या चि त्त य या त स्य स्थि र भवेत् मुखे रो पि स मी ची
ना मु र दो ष वि व र्जि त ॥ अ या तो अ आ र य ह वि
रू त्त आ धि का री को स मा धा न भ ली भां ति सों क र्थि यो अ
त्यंत प्र स न्न ता सों या की प्र सं सा क रि या के चि त्त को
स मा धा न क र्थि यो अ त्यंत प्र स न्न ता सों या की प्र सं सा
क रि या के चि त्त को प्र स न्न क र्थि यो क ह ने इ ह ने दु ख
पा ड्के ग यो हे सो तु म क दु उ हां क हो गो तो म न मे म
ह दु ख पा वे गो सो म न के ले ज मे क दु भा व ध र्म ना
ही व नि आ व त हे ता ते ए सी भां ति रा खि यो ना चि
त मे प्र स न्न हो य त व जा को चि त्त स्थि र हो इ गो आ र
तु म क दु क हो गो तो य ह दु ख पा वे गो आ र तु म को मुख
र ता हो य हो इ गो आ र क दु क हे ते तु मा रे हा थ क दु मि
ले गो ना ही आ र य ह मुख र ता हो य हे सो स व हो य न
मे मुख र हे ता ते ह ह्म स मे घ न श्री आ चा र्य जी पे य ही
मा ग्यो जो मुख र ता हो य जा य त ते मुख र ता हो य न हो
दु य ही य त्त स र्व थो क र्थि यो लौ कि क वा नी वो ल त

मं निरोध ही मनसों कलौ उचित हो ॥ अथ व और इव
हृत्तं ह्येनो ॥ वैद्यकेन प्रहेत्याकं विशेष परि तोषणत
भावत्संगा त्वदुवस नितः पुनस्तथित ॥ अथ या को अ
थो अथ यद्विरक्त अधिकारी हो सो अपने घर मे वैद्य ह्ये
गरी अथ यदो गस्ती जानत हो ताते अपने घर के काम के
हं ताते विषय भली भांति सो या को परि तोष करियो ॥ अ
थो दोष मन में मति विचारियो काहे ते साख पु
गण में कहे हो जा जीव को जे सी गति हो ये जे संग
मे जे से ही कार्य में जीव तत्पर हो जाइ जे संग करि
कंदुव जो गेह पर की छंदे पाछे गिरे ते से जीव भग
वद धर्म के में संग करि जे तत्पर हो जा संग विना दुस
ग होय ते फिर गिरे ताते जीव को कहे होय हो प्रभु की इ
छाज हो सो होत हो तहां ते सो संग ते सो साधन
व निश्चायत हो ताते तम अपने हृदय में कहु होय मति
वरियो सर्व प्राणी मान को भलो मन में धारन करियो
या प्रकार सिद्धा जीव अपने मन में धरें ता को कल्याण
हो ॥ ३३ ॥ इति श्री ह रिण्ड जी कृत सिद्धा पत्र चाली समे
ता की ही का श्री गोपे वर जी कृत संपूर्ण ॥ अथ या प्रकार
ऊपर के सिद्धा पत्र में अपने सुख तुम को पत्र द्वारा निवेद
न कर्यो ता वस्तु मांरे मन में दुख आयो हो जा काहे ते
तुम से ये संबंधी परम हितकारी हो ताते अवय ह पत्र मे
पारो पछि माणीय सिद्धांत वर्णन करत हो सो वाचि
कं अपने मन में धारन करियो और जे पुष्टि माणीय भ
गवदीय है तिन के धारन करियो ॥ अथ ॥ लौकि
क संकलन कार्य प्रभु सेवा पयोजना तपां सर्वत्र पूर्व हि प्र
क्षिप्तो न लौ किकं श्यामो अर्थ ॥ अथ श्री हरिण्ड जी
पुष्टि माणीय धर्म सर्वोपकारत है जो भाव दीय हो स
जितनो लौकिक कार्य हो सो प्रभु की सेवा में विनियो

तुल्य. ११२६

करे यह सब सेवा मुख धर्म है घर उभा वर सेवा
हयें बंधी कुटुंब इंदिय यह सब भाव
नथा का उमरे हयों
लभति पुत्र होइ यह भाव सौ करे जे से निरोध ल
श्री आचार्य जी कहते हैं भाव इस से वामें प्रतिवं
ता को त्याग करे अनुकूल होय ता को संग्रह करे जहां
जहां मन की इति हो जे सुने जो देखें सो प्रभु की ल
लाही की रा भांड जाने अपने प्रभु की ही चिंतन करे
सर्व छोड़ि के जे से पूर्व ऊपर का हि आगे हैं कि तुल्य कि
क मन में न विचारें तव प्रभु प्रसन्न होय तहां को इस
देह करे जो लोकितो अन्त प्रकृत है और लोकिक की
रो दिना वनना इना ही है ता नें लोकिक समय लोकिक
रे भाव सेवा के विसे सेवा करे तो निर्वाह होय सो लोक
कि क सकल छोड़ि सो क हा प्रयोजन है प्रभु तो ह्याल
हैं थोड़े सो वचन बहुत माने गो या प्रकार कोई से देह
रे लोकित में लगावें तहां कहत है लोक न रोवते ह
रे लोक लोकिक सति प्रनः तरे पिना वशान स न
सिद्धि पिलो कि को श्यामो अर्थ अन श्री हरि रा इजी
कहत है अपने स्वकीय मत है सो लोकिक करे तो प्रभु
को ना ही युहाय तव प्रभु उपेक्षा करे उदासी न होइ
जाइ तव से वामें मन को उद्देश होइ अनेक कार्य ममन
जे तव प्रभु प्रतिबंध करे तो भगवद सेवा तव नि आ
तो सेवा फल है श्री आचार्य जी महा प्रभु कहते हैं उद्देश
तिबंधो भा भोगो न्याय तु वाधन बाधक तो परि
भागे भोगो पक्ष तथा पर यह सब के मूल देखें बंधी
ग है वान पान विषय इंदिय न को सुख देह को सु
ग्रह न दै तव भगवद सेवा भली भांति सो वने
रे सो सेवा भोग ममन न राखें तथा देखें बंधी
ममन को राखे तो से वामें उद्देश होइ पाव्य

इ प्रतिबंधवरै सो सेवा ऊनवनो और प्रभुको देखे
नौ विकसो व्यासति होय कार्य करे सो उकार्य
सो नाना प्रकार के दुख काहे को पावै। ता
को सर्वथा दीन करे। प्रभु की से
करै। यह निश्चय सिद्धांत है अ
सुभाव प्रभो स्थापान चो

श्र
इयाको । प्र वे इभावको स्था
ए ति काइ को दिखाइवे
ना दिन चनेक

गार करै न पपाट आछी आछी बात
यह सक्त्त चतुर्ग ई जाननो। जा दिन को ई न होइ
धारन करै नो श्रीगुसाईजी आगरे पधार
तव गव्ये छव पदायो। अपने घर सेवा चतुर्ग सो करि
तहं श्रीगुसाईजी चित्रावन वंत कहे। तातें चतुर्ग ई
सो सेव्य प्रयोजक मिथ्या है। तामें कछु फल सिद्धि ना
ही है। तामें कछु फल सिद्धि ना ही है। वे बल प्रतिष्ठा मात्र
है सो लोक प्रतिष्ठा भाव झावकी ना सक्ता है प्रभु स
वे के स्वरूप की जानत है अंतर जामी है तहां मन को व
पटव छु चतुर्ग ना ही है। सो विवेक धेया श्रय ग्रंथ में
श्री आचार्य जी महो प्रभु कहें हैं सर्वत्र सर्वत स्पंदि
सर्व सामर्थ्य मेव च। इति वचनान् प्रभु सर्वदोर साम
र्थ्य युक्त है या भाव सो करै सो जानिके वे सो ई फल देइ
तातें जो भाथे प्रतिष्ठाय कवहुं कपट सयुक्त न करनो
जितनी भीति वधी है तितनी पुष्टि मार्ग की मर्यादा
शीति सो करनो। लोविक वैदिक कछु कामना मन में
न राखनी। अब और कइत है लोक। सुभावेने
नदी यंतु लोविक साधये स्वयं तत्साधित म विज्ञे
न सर्व सिद्धि नाम न्यथा। ४ या तो अतः तहां कोई क

हैं जो शुद्ध भाव प्रभु में राखि सर्व प्रभु में निवेदन करें
पाए लो। कि कइया हि विना सेवा को न प्रकार करें
यह संदेह होइ तहां कहत हैं जो यह वेद सब सुद्ध भा
वते प्रभु में मन लगाना न पर होइ जो को से वा कर
त हैं ए सो शुद्ध भाव प्रभु में देखि लो। कि क वैदिक स
ब लो का ये सिद्ध करत हैं सो संत दास की वार्ता में प्रसि
द्धी वर्णन है जो चोवीस टका की पूजी में प्रभु सर्व कार्य
सिद्ध करते पद्मनाभ दास के छोला में सब ल पदार्थ सिद्ध
कते ताते शुद्ध भाव सो करें तहां कोई कहै जो लो किक
वैदिक वारे लो क विद्म करें तहां देखें करें यह संदेह
होय तहां कहत हैं जो श्री आचार्य जी भक्ति चरित में क
हे हैं सेवा यां वा कथा यां वा यथा एति हे दा भवेत् पाव
जीवन सप्ता सो न क प्रीति मति मेम ॥ १ ॥ बाध संभावना
यांतु नैक ते वा स ईष्यते हरि सु सवे तो रक्षा करि प्यति
न संगाय ॥ २ ॥ प्रभु के कार्य में सेवा हि सेंद्रु ट भाव है य स
वे दोर ते प्रपनो मन राकांत करि लेइ न काहू की भली
चुरी न देखे ए से भक्त की निश्चय प्रभु सर्व श्रोते रक्षा क
रे जे धर्म वरीय को दुर्वाया के श्राप ते रक्षा करि ताते
निर्विघ्न सो मन लगाना प्रभु के धर्म में न पर होइ अन्य
या श्रोत कार्य जीव को नाही कते यह एक प्रभु ही यह
लोच में पायी है वही जान राखे न व श्राहू कहत हैं
४ ॥ लोक ॥ आध श्राव को हि कते व्यस्त ही बेलो किक व्यय
अनासक्त लो किकंतु वई ते न च बाधते ५ ॥ या वो अश्र
अव श्री हरि राइजी कहत हैं जो मुख्य तो यही हैं जो लो
किक वैदिक न करे तो छुटे आवय्य कहो य सो लो किक
क करें नामें आसक्ति न होय आसक्त मन की होय
यही बाध कहै आसक्त विना अनेक लो किक दितनी
हूवत सो बाधक सब थाही न करें सो श्री आचार्य जी
कहे हैं ग्रंथ सर्वात्मना त्याज्ये तद्ये तद्ये तत्तं न सक्यते हृष्टा

गुणविशेषः संसारमोचकः १२

हैं अथाय तो भजे हूँ पूजया श्रवणादिभिः ध्यावतोपि
श्रवणा होय ते सदा २॥ शक्तिवचनात् ॥ जो तीर्थ
त भक्त होय तो सर्वथा प्रापूर्वक प्रभु को भजन न जो त्याग न हो
इसके तो सगरो धर श्री हृदय की सेवामें विनियोग करो ॥
आवृत्त एसी करे नामें हरिमें तिरंतर चित रहें ॥ पा प्रकार
हैं तो बाधक न होइ न ही तो बाधक करे ॥ आगे कहत हैं
श्लोक ॥ अन्यथा वृद्धमाप्येतदाधतेन दुपेक्षया ॥ हृदयमे
वैकव्यये मुख्यं चेन्नो निधीयतां ॥ ६ ॥ या को अर्थ ॥ लौकिक
क वैदिक में जो चित बहुत ही बढे सो प्रभु नो अंतः करन
में कि राजत हो जवलौकिक में उद्देग आसक्ति देखे तब
उपेक्षा करि उदासी न होय जाय ॥ सो संन्यास निर्णय में
श्री आचार्य जी महा प्रभु कहें हैं विषयाकां तदेहानां
नावेस सर्वथा हरे तवलौकिक विषय में आसक्ति मन
की इंदिय की देहा से प्रभु देखे ॥ तब अपने भगवद्भाव
स्पर्शकों अविस्वामे ते ये चिते शताकों सर्वथा प्रभु
की लीला को स्वरूप को भगवद्गुण को आवेस कवहुं नव
हैं भावदुर्मकर न उद्देग मन में रहें ॥ पाछे प्रतिबंध होइ
तब बहुरि जाय केवल लौकिको सक्ति होय ॥ तब प्रभु
वाको उपेक्षा करि न्याग करि दे शताते अन्यथा लौकिक
विषय ते आसक्ति मन न करे प्रभु की सेवा संबंधी कार्य
नो नि प्रभु संबंधी विषय धारण करे ॥ जो फलाने उछ
मको यह वदियों ता अर्थ यत्न करे ॥ फलानी सो मयी
प्रभु आरो गो तो आछो ॥ फलानी चागा वस्त्र आभय
वस्त्र प्रभु में विनियोग होय तो भली ॥ पा भक्ति हरि
विषय करग होय ॥ जा प्रकार सोई वार्ता मन में धरे
॥ कि था हृदय सी सुने ॥ जाके सुने ते लौकिक में दे राग
होइ ॥ और प्रभु के धर्म में अजराग द्रव होइ ॥ ताते

१० तस्य हे जो भाव दीपको संग होइ सो सगारा भाव अ
 २ नाइ वदे जा को लोवित संग होइ सो जल वन
 को नासक है तिन के संग ते भगवद्भाव रूप
 न दिन सी तल होय ताते भगवद्दीपको संग नित्य
 तेव है और यह पृष्ठ मार्ग में आरत है सोई
 है ताते प्रभु के दरसन की आर्ति होय मन में लै सरा
 सो निरोध लक्षण में वदे है लोक लै स्पमानान्ज
 न हृष्टा हृष्टा युक्तो यदा भवेत् तदा सर्वस्य नंदं हृदि स्थं
 गतिं वंदी सर्वानंदमयस्यापि हृत्पानंदमुदुक्षेभः ॥ १ ॥
 चनाम जसे काष्ठ के भीतर अग्नि है मथन ते वा
 से एव ईश्वर दर्शनार्थ लै सकरे तो वाहर प्रादे
 नंद सना तो प्रभु सर्व ठोरे और हृत्पानंदमुदुक्षेभः
 न ही पर हृत्पानंद रहे ताते हरि दर्शन की आ
 स्थापन करे ॥ १ ॥ सो लोवा स्वास्थे न जौ दि
 दाति करुणानिधि ॥ १ ॥ शिवितं कुरुते पि
 धरि १० ॥ या को अर्थ ॥ ते मन नि
 सि लौजिक आर्ति को दुख स एक
 ति करै तव प्रभु तो करुणानिधि
 रको अनुभव सदा इकरावै गे न
 हो जे सो भगवान् न उद्वेग जी प्रतिकहे है त्वं तु
 न्यज्यसे हस्व जनबंधु मेया विश्रामनः
 हृदि चरस्व गा ॥ १ ॥ हे उद्वेग तो सर्व त्याग करि दे
 न बंधु को स्नेह मरा आवेय फल स मेरा तिस बरार
 हरि राखि कै विचार तुम को कहु भय नार्ह है ताते
 हरि राजा कहत है जो तदीपको अपनी चिता तथ
 संवंधी यह लोक परलोक की कहु चिंताना ही क
 है काहेतै तुम जे संपिता पुत्र को पालन की चिंत स
 पुत्र को कहु भय नार्ह या प्रकार प्रभु अपने भक्त व

[illegible]

